मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट 2009-12
राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय

भारतीय रिज़र्व बैंक

इस रिपोर्ट में व्यक्त निष्कर्ष, विचार और निर्णय पूर्ण रूप से आर्थिक नीति और अनुसंधान विभाग (डी ई पी आर) के लेखक स्टाफ-सदस्यों के हैं अतः उनका भारतीय रिज़र्व बैंक के आधिकारिक विचारों से साम्य होना आवश्यक नहीं है।

भारत में - ₹ 515 (सामान्य)
- ₹ 555 (डाक खर्च सहित)

विदेश में - 16 अमरीकी डॉलर (हवाई डाक कुरियर खर्च सहित)

© भारतीय रिज़र्व बैंक 2012
सर्वाधिकार आरक्षित। स्रोत का उल्लेख किये जाने की शर्त के अधीन उद्धरण की अनुमति है।

आई एस एस एन 0972-8759

संजय कुमार हंसदा द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई 400001 के लिए प्रकाशित और उनके द्वारा
ऍल्को कॉरपोरेशन, ए-2/72, शाह एण्ड नाहर इंडस्ट्रीयल एस्टेट, लॉअर परेल, मुंबई 400013 में अभिकल्पित और मुद्रित

प्राक्कथन

वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप सभी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और उभरती बाज़ार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं (ई एम डी ई) में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय से संबंधित मुद्दे पर नवीकृत प्रकाश में विचार किया जाने लगा है। जहाँ संकट के प्रारंभ में राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय-दोनों ही स्तरों पर राजकोषीय और वित्तीय नीतियों के बीच गहरा समन्वय देखा गया, अंतिम दौर में, अलग-अलग देशों ने आर्थिक संवृद्धि, मुद्रा-स्फीति और वित्तीय स्थिरता संबंधी अपनी चिंताओं से निपटने के लिए अलग-अलग कार्यनीतियां अपनाई। भारी मंदी के परिणामस्वरूप, व्यापक विस्तार के साथ राष्ट्रिक कर्ज समस्याओं के उभरने तथा निरंतर बने रहने के कारण यूरो क्षेत्र में वसूली के अवसर जोखिम पूर्ण हो गये थे। हालांकि हाल ही में संयुक्त राज्य अमरीका में हुए राजकोषीय क्लिफ डील तथा यूरो क्षेत्र में की गई नीतिगत कार्रवाइयों से वैश्विक संवृद्धि में सामान्येतर जोखिमों में कमी हुई है तथा वैश्विक वित्तीय स्थितियों में सुधार हुआ है किन्तु यूरो क्षेत्र में नीति-कार्यान्वयन में शिथिलता तथा संयुक्त राज्य अमरीका और जापान में राजकोषीय नीतियों में अनिश्चितताओं की वजह से गिरावट के कतिपय जोखिम अभी भी बढ़े हुए हैं। इन परिस्थितियों में, एक इष्टतम राजकोषीय-मौद्रिक संम्मिश्रण सुनिश्चित करने के लिए विश्वसनीय राजकोषीय समेकन योजनाओं एवं समन्वयन कार्यनीतियों की आवश्यकता होना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।

इसके विपरीत, यूरोप के बाहर की उभरती बाज़ार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं, जिन पर 2007-09 के वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं के बाह्य झटकों का अपेक्षाकृत कोई असर नहीं हुआ था, उन्हें मुद्रास्फीति को नियंत्रण में रखने के लिए वसूली प्रक्रिया को मज़बूत बनाने की चुनौती का सामना करना पड़ रहा है जो उनकी निभावशील (एकमॉडेटिव) मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों को जारी रखने के लिए आवश्यक है। यूरो क्षेत्र में संकट की मौजूदगी के कारण वे पूंजीगत प्रवाह में अस्थिरता के प्रति अति संवेदनशील हो गये हैं क्योंकि वित्तीय बाजारों में जोखिम से बचने की प्रवृत्ति का आकस्मिक दौर शुरू होने से उन्हें अपने संविभागों को सुरक्षित आश्रय वाली आस्तियों की ओर मोड़ना पड़ा जिससे इन अर्थव्यवस्थाओं की आर्थिक गतिविधियां बड़े पैमाने पर प्रभावित हुई। वैश्विक सुधार की क्षीण संभावनाओं, पण्य कीमतों और पूंजीगत प्रवाह में अस्थिरता की पृष्ठभूमि में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय उभरती बाज़ार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए और अधिक चुनौती पूर्ण हो रहा है जिससे समष्टि आर्थिक नीति के निर्माण की राह में चुनौतियां खड़ी हो रही हैं।

अन्य उभरती बाज़ार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की भांति भारत भी, वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान प्रभावित हुआ था जिसके कारण 2008-09 में इसके वास्तविक सकल देशी उत्पाद में गिरावट आ गई थी। कुल मांग को पुनः प्रवर्तित करने तथा संवृद्धि प्रक्रिया को समर्थन देने के लिए किये गये परम्परागत और गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति उपायों तथा राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों के इस्तेमाल में उक्त नीति के प्रति प्रतिसाद देखा गया था। सरकारी बाजार उधारों में सहवर्ती उछाल को भी प्रभावी ढंग से अतिरिक्त मौद्रिक/चलनिधि प्रबंध उपायों द्वारा निर्विघ्न रूप से संभाल लिया गया था। सुदृढ़ संवृद्धि प्रक्रियाओं के साथ और मुद्रास्फीतिकारी दबावों के पुनः उभर आने के साथ, अक्तूबर 2009 तक जारी निभावशील मौद्रिक नीति को जनवरी 2010 और अक्तूबर 2011 के मध्य अंशतः छोड़ने का अनुमान लगाया गया था, जब कि 2010-11 में राजकोषीय समेकन की प्रक्रिया पुनः आरंभ हो चुकी थी। 2011-12 के द्वितीयार्ध में आर्थिक संवृद्धि के कम होने संबंधी जोखिम के पुनः उभर आने के कारण यह आवश्यक हो गया था कि मौद्रिक नियंत्रण संबंधी रुख को विराम दिया जाए; राजकोषीय क्षेत्र में, राजकोषीय घाटा बहुत अधिक बढ़ जाने के कारण सरकारी वित्तीय साधनों की स्थिति खराब हो गई थी जिससे अनुशंसित राजकोषीय समेकन की राह से उल्लेखनीय रूप से विचलन के संकेत मिले थे। 2012-13 के दौरान अब तक, आर्थिक मंदी के जारी रहने और मुद्रा स्फीति के नियंत्रण से मौद्रिक नीति को अनुमान के अनुसार आसान बनाने में मदद मिली थी; साथ ही सरकार ने राजकोषीय घाटे को नियंत्रित करने संबंधी उपाय किये। साथ ही साथ, वैश्विक वित्तीय और यूरो क्षेत्र कर्ज संबंधी संकट के परिणामस्वरूप, अधिकांश निकायों की यह राय थी कि तीनों उद्देश्यों के बीच गहरे अंतर्संबंधों को ध्यान में रखते हुए वित्तीय स्थिरता और राष्ट्रिक कर्ज बर्दाश्त करने की क्षमता को शामिल करने के लिए मूल्य स्थिरता से परे केंद्रीय बैंकिग के अधिदेश को व्यापकता प्रदान की जाए। इससे भारत में चल रहे कर्ज प्रबंध के लिए सांस्थानिक प्रबंध पर पुनर्विचार किये जाने की आवश्यकता को बल मिला है।

इस पृष्ठभूमि में, यह महसूस किया गया था कि राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर, वैश्विक वित्तीय संकट के पश्चात् राजकोषीय प्रभुत्व की वापसी के संदर्भ में दोनों, अर्थात् सामयिक प्रासंगिकता और आगे आने वाली चुनौतियों के अनुसार राजकोषीय और मौद्रिक समन्वय के गति-

सिद्धांत पर विचार करने का यही सही समय होगा। तदनुसार, 2009-12 की इस रिपोर्ट का विषय ''**राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय**'' रखा गया था। समष्टि आर्थिक सिद्धान्त के विकास की खोज के पश्चात् तथा प्रमुख उन्नत एवं चयनित उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में हुए अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों के मद्दे नज़र इस रिपोर्ट में भारत में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का उसके समष्टि आर्थिक और मौद्रिक निहितार्थ, रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर उसका प्रभाव और राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के लिए मध्यावधि-दृष्टिकोण और साथ-साथ कर्ज और नकदी प्रबंध हेतु सांस्थानिक व्यवस्था का गहनता से मूल्यांकन किया गया है।

यह रिपोर्ट कार्यपालक निदेशक श्री दीपक मोहन्ती के समग्र पर्यवेक्षण और मार्गनिर्देशन के अंतर्गत परामर्शदाता श्रीमती बलवीर कौर के नेतृत्व में आर्थिक और नीति अनुसंधान विभाग के अधिकारियों के एक दल द्वारा तैयार की गई है। मुख्य दल में डॉ. मृदुल सागर, श्री सोमनाथ चटर्जी, डॉ. पार्थ रे, श्री धृतिद्युति बोस, श्रीमती दीपा एस राज, डॉ. अनुपम प्रकाश, श्री इद्रजीत रॉय, श्री अर्ध्य कुसुम मित्रा, डॉ. राजीव जैन, श्रीमती संगीता मिश्रा, श्रीमती आरती मुखर्जी, श्री बिनोद भोई, श्री सुनील कुमार, डॉ. सौरभ घोष, श्रीमती संगीता दास, कु. इंद्राणी मन्ना, श्री राकेश कुमार, श्री धीरेंद्र गजभिये, श्री बिचित्रानन्द सेठ, श्री जी.वी.नाधानएल, श्रीमती पी.बी. राखे, श्री डी.के. राउत, श्री प्रभात कुमार और श्री आनंद प्रकाश एक्का शामिल थे। श्री राजीब दास और श्री भूपाल सिंह ने भी इस रिपोर्ट का प्रारूप तैयार करने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। अन्य विभागों के अधिकारियों, विशेष रूप से कु. जे.एम. जीवानी और श्री एन.रामसुब्रमणियन के मूल्यवान योगदान की अत्यंत सराहना की जाती है। समकक्ष समीक्षा दल में डॉ. हिमांशु जोशी, डॉ. महुआ रॉय, श्री सीताकांत पट्टनायक और डॉ. अभिमान दास शामिल थे।

इस रिपोर्ट में उठाये गये अनेक मुद्दे विकसित और बहस करने योग्य हैं । वे वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए विभिन्न नीति प्राथमिकताओं के बीच संघर्ष से निपटने की प्रक्रिया के संबंध में अतर्दृष्टि प्रदान करते हैं। युवा अर्थशास्त्रियों के इस दल ने एक उत्तम संतुलन का खाका तैयार करने की चुनौती हाथ में ली है जिसे साहस, दृढ़ निश्चय और स्पष्टवादिता के साथ पूरा किया गया है। मैं उनके प्रयासों की अपने हृदय की गहराई से प्रशंसा करता हूँ ।

सुबीर गोकर्ण
उप गवर्नर

31 दिसंबर 2012

विषय सूची

पृष्ठ सं.

प्राक्कथन

अध्याय 1 : रिपोर्ट का विषय 1-7

अध्याय 2 : राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय: सिद्धांत और अंतर्राष्ट्रीय अनुभव..... 8-43

I. प्रस्तावना..... 8

II. समष्टि आर्थिक सिद्धांत 9

III. राजकोषीय-मौद्रिक समन्वयः अंतर्राष्ट्रीय अनुभव 13

IV. वैश्विक वित्तीय संकट और राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय..... 32

V. समापन टिप्पणी 42

अध्याय 3 : भारत में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय: एक निर्धारण 44-69

I. प्रस्तावना..... 44

II. मौद्रिक नीति संबंधी राजकोषीय अनिवार्यता..... 44

III. विभिन्न प्रणालियों के अंतर्गत राजकोषीय और मौद्रिक नीति के बीच पारस्परिक क्रिया..... 48

IV. मुद्रास्फीति प्रबंध में राजकोषीय और मौद्रिक नीति समन्वय 54

V. सरकारी व्यय की चक्रीयता 59

VI. कर्ज-घाटा गति सिद्धांत और मौद्रिक प्रबंध 62

VII. समापन टिप्पणी 68

अध्याय 4 : राजकोषीय परिचालन और रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र 70-94

I. प्रस्तावना 70

II. राजकोषीय नीति और केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र..... 71

III. रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र और राजकोषीय परिचालन 75

IV. राजकोषीय-मौद्रिक अंतरापृष्ठ और रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र ; कुछ मुद्दे 81

V. वैश्विक वित्तीय संकट और रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र 91

VI. समापन टिप्पणी 94

पृष्ठ सं.

अध्याय 5 : राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय और सरकारी कर्ज और नकदी प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्थाएं: एक मध्यावधि दृष्टिकोण 95-114

I. प्रस्तावना 95

II. राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय: मध्यावधि के लिए दृष्टिकोण 97

III. कर्ज और नकदी प्रबंध से संबंधित संस्थागत व्यवस्था-क्वो वैडिस? 104

IV. समापन टिप्पणी 113

अध्याय 6 : पाठ (लेसन्स) और भावी चुनौतियां 115-123

चयनित संदर्भ ..... I-X

बॉक्स की सूची

बॉक्स सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
II.1	मौद्रिक नीति के लिए राजकोषीय चिन्ताएं और चुनौतियां	37
II.2	संकट के बाद की अवधि में वित्तीय स्थिरता व्यवस्था	40
III.1	कर्ज का मुद्रीकरण : वैचारिक बहस	45
III.2	भारत में कर्ज का मुद्रीकरण	46
III.3	मौद्रिक और राजकोषीय नीति पारस्परिक क्रिया और चूजे का खेल (गेम ऑफ चिकन)	52
III.4	मुद्रास्फीति और सरकारी वित्तः क्या यह भारत में स्वतः स्थायी चक्र है ?	60
III.5	कर्ज-घाटा गति सिद्धांत और मौद्रिक प्रबंध : अनुभवजन्य साक्ष्य	67
IV.1	सरकारी नकदी शेष में भारी मात्रा में अधिशेष का आविर्भाव	77
IV.2	केंद्रीय बैंक पूंजीः मुद्दे और परिप्रेक्ष्य	80
IV.3	मौद्रिक लक्ष्यों (1998 से पूर्व) को पूरा करना और बहुल निर्देशक दृष्टिकोण अवधि के दौरान निर्देशात्मक पूर्वानुमान (1998 के पश्चात्)	82
IV.4	सिक्का-ढलाई मुनाफा और केंद्रीय बैंक लाभ	86
IV.5	भारत में अवरुद्धता लागत	90
IV.6	गैर-परपरागत मौद्रिक नीति उपाय और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंक तुलन पत्र	91
V.1	भारत में कर्ज और मौद्रिक प्रबंध के पृथक्करण के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं संबंधी दृष्टिकोण विकसित करना।	105
V.2	भारत में केंद्र सरकारी नकदी प्रबंध	111
V.3	सरकारी नकदी प्रबंध और चलनिधि प्रबंध के बीच संघर्ष	112

चार्ट -सूची

चार्ट सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
III.1	उच्च मुद्रास्फीति के बीच उच्च राजकोषीय घाटे और बृहत खुला बाजार खरीद के कारण मौद्रिक दबाव	46
III.2	समग्र मुद्रास्फीति में खाद्य और ईंधन का भारित अंशदान	56
III.3	मुद्रास्फीति अस्थिरता और परिवर्तनशील अंशदान	57
III.4	ईंधन में उत्पाद-वार अल्प वसूली	57
III.5	ईंधन की अंतर्राष्ट्रीय और देशी कीमतों में उतार-चढ़ाव	58
III.6	ईंधन स्फीति पर राजकोषीय नियंत्रण	58
III.7	उर्वरक-कीमतें और सब्सिडी	59
III.8	सरकारी व्यय और सकल देशी उत्पाद की संवृद्धि दरें	61
III.9	सकल देशी उत्पाद और सरकारी अंतिम उपभोग व्यय के चक्रीय घटक	61
III.10	सकल देशी उत्पाद अनुपात और सकल देशी उत्पाद में सरकारी अंतिम उपभोग व्यय के चक्रीय घटक	61
III.11	सरकारी व्यय का उधार राशियों द्वारा वित्तपोषण किये जाने में निरंतर वृद्धि	63
III.12	बढ़ते हुए ब्याज का प्राथमिक राजस्व शेष में उलटाव से भुगतान	63
III.13	सकल राजकोषीय घाटे का विदेशी वित्तपोषण सीमित रहना	64
IV.1	रिज़र्व बैंक तुलन पत्र आकार	75
IV.2	आरक्षित निधियों और सरकार को राशियों का अंतरण	85
IV.3	सिक्का ढलाई मुनाफा प्रवृत्तियां	88
IV.4	रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर पूंजी प्रवाहों का प्रभाव	89
V.1	केंद्र सरकार के मुख्य घाटा संकेतक	97
V.2	आरक्षित मुद्रा के स्रोत	99
V.3	व्यापक मुद्रा के स्रोत	99
V.4	संवृद्धि दर, मुद्रा स्फीति दर और मांग दर	100
V.5	पैरामीटर स्थिरता जांच	104

सारणियों की सूची

सारणी सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
3.1	खाद्य, ईंधन और मूल मुद्रास्फीति के बीच जोड़े-वार ग्रेंजर कारणता जांच	57
3.2	बाजार उधार, घाटे, आरक्षित मुद्रा और मुद्रास्फीति	66
3.3	सरकारी कर्ज और आरक्षित मुद्रा के बीच सह-समन्वयन के लिए सीमाओं की जांच	68
3.4	आरक्षित मुद्रा के लिए त्रुटि सुधार मॉडल	68
4.1	एक रूढ़-शैली के अनुसार अंकित केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र	71
4.2	चयनित देशों में राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून-मुख्य विशेषताएं	73
4.3	रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का क्रम-विकास-चयनित संकेतक	76
4.4	रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में सरकारी लेन-देन	78
4.5	रिज़र्व बैंक का पूंजी आधार	80
4.6	केन्द्र सरकार के निवल बाज़ार उधार-पूर्वानुमानित बनाम वास्तविक	84
4.7	विदेशी मुद्रा अनिवासी (खाता)/योजना के लिए विदेशी मुद्रा गारंटी से उत्पन्न राजकोषीय सदृश लागत	91
5.1	ग्रेंजर कारणता जांच	103

संक्षिप्ताक्षर

ए डी एफ	-	संवर्धित डिकी-फुलर
ए.डी आर	-	आस्ति विकास आरक्षित निधि
ए पी एम	-	नियंत्रित मूल्य प्रक्रिया
ए आर डी एल	-	स्वतः प्रतिगामी वितरित अंतराल
बी आइ एस	-	अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक
बी ओ ई	-	बैंक ऑफ इंग्लैंड
बी ओ आर	-	बैंक ऑफ रशिया
सी ए एस	-	केंद्रीय लेखा अनुभाग
सी बी	-	केंद्रीय बैंक
सी डी एस	-	ऋण चूक स्वैप
सी ई एन वी ए टी	-	केंद्रीय मूल्य वर्धित कर
सी एफ आई एम	-	कार्यान्वयन निगरानी के लिए समन्वयन ढांचा
सी एफ एस ए	-	वित्तीय क्षेत्र आकलन समिति
सी जी एफ एस	-	वैश्विक वित्तीय प्रणाली संबंधी समिति
सी जी आर ए	-	मुद्रा और स्वर्ण पुनर्मूल्यन खाता
सी एम बी एस	-	नकदी प्रबंध संबंधी बिल
सी एन बी	-	चेक नैशनल बैंक
सी आर	-	आकस्मिक आरक्षित निधि
सी आर आर	-	आरक्षित नकदी निधि अनुपात
डी एफ एच आई	-	भारतीय मितीकाटा और वित्त गृह
डी एम	-	ड्यूश मार्क
डी एम ओ	-	कर्ज प्रबंधन कार्यालय
डी एस एस	-	कर्ज स्वैप योजना
ई सी	-	यूरोपीय कमीशन
ई सी बी	-	यूरोपीय केंद्रीय बैंक
ई ई ए	-	विदेशी मुद्रा समकरण खाता
ई एफ सी	-	आर्थिक और वित्तीय समिति
ई एफ आर	-	विदेशी मुद्रा उतार-चढ़ाव आरक्षित निधि
ई एफ एस एफ	-	यूरोपीय वित्तीय स्थिरता सुविधा
ई एम डी ई एस	-	उभरती बाज़ार और विकासशील अर्थ व्यवस्थाएं
ई एम ई एस	-	उभरती बाज़ार अर्थ व्यवस्थाएं
ई एम यू	-	यूरोपीय मौद्रिक यूनियन
ई आर एम	-	विनिमय दर प्रक्रिया
ई एस ए एस	-	यूरोपीय पर्यवेक्षण प्राधिकारी
ई एस एम	-	यूरोपीय स्थिरता प्रक्रिया
ई एस आर बी	-	यूरोपीय प्रणालीगत जोखिम बोर्ड
ई यू	-	यूरोपीय संघ
एफ सी एन आर ए	-	विदेशी मुद्रा अनिवासी खाता
एफ ई डी	-	फेडरल रिज़र्व बोर्ड
एफ आई आई एस	-	विदेशी संस्थागत निवेशक
एफ एल एस	-	उधार (ऋण) योजना का निधीयन
एफ एम डी	-	वित्तीय बाजार विभाग
एफ पी सी	-	वित्तीय नीति समिति
एफ आर बी एम	-	राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध
एफ एस ए	-	वित्तीय सेवा प्राधिकरण
एफ एस बी	-	वित्तीय स्थिरता बोर्ड
एफ एस डी सी	-	वित्तीय स्थिरता और विकास परिषद्
एफ.एस.एल आर सी	-	वित्तीय क्षेत्र विधान सुधार आयोग
एफ एस ओ सी	-	वित्तीय स्थिरता निगरानी परिषद्
एफ टी पी एल	-	कीमत स्तर संबंधी राजकोषीय सिद्धांत
एफ टी टी	-	वित्तीय लेन-देन कर
जी 20	-	बीस का समूह
जी डी पी	-	सकल देशी उत्पाद
जी ई ए आर	-	संवृद्धि नियोजन और पुनर्वितरण
जी एफ सी ई	-	सरकारी अंतिम उपभोग व्यय
जी एफ डी	-	सकल राजकोषीय घाटा
जी ओ आई	-	भारत सरकार
आई आई एफ सी एल	-	इंडिया इंफ्रास्ट्रक्चर फाइनेंस कंपनी लिमिटेड
आई एल ए एफ	-	अंतरिम चलनिधि समायोजन सुविधा
आई एम एफ	-	अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष
आई आर ए	-	निवेश पुनर्मूल्यन खाता

आई टी	-	मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण
एल ए एफ	-	चलनिधि समायोजन सुविधा
एल ओ एल आर	-	अंतिम ऋण दाता
एल पी जी	-	तरलीकृत पेट्रोलियम गैस
एल टी आर ओ	-	दीर्घावधि रेपो परिचालन
एम.	-	कुल मौद्रिक राशि
एम 3	-	व्यापक मुद्रा
एम ए पी	-	पारस्परिक निर्धारण योजना
एम ओ एफ	-	वित्त मंत्रालय
एम ओ यू	-	सहमति ज्ञापन
एम पी सी	-	मौद्रिक नीति समिति
एम एस एम ई एस	-	सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम
एम एस एस	-	बाजार स्थिरीकरण योजना
एम टी एफ एस	-	मध्यावधि वित्तीय रणनीति
एम टी एम	-	बाज़ार भाव पर दर्शाना
एन ए बी ए आर डी	-	राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक
एन ए आई आर यू	-	बेरोजगारी की मंद वृद्धि दर
एन बी एफ सी एस	-	गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियां
एन बी एफ सी-एन डी एस आई	-	गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियां -जमाराशियां न लेनेवाली-प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण
एन डी ए एस	-	निवल देशी आस्तियां
एन डी टी एल	-	निवल मांग और मीयादी देयता
एन एफ ए एस	-	निवल विदेशी मुद्रा आस्तियां
एन एस एस एफ	-	राष्ट्रीय अल्प बचत निधि
एन टी एम ए	-	राष्ट्रीय खजाना प्रबंध एजेंसी
ओ डी	-	ओवर ड्राफ्ट
ओ ई सी डी	-	आर्थिक सहयोग और विकास संगठन
ओ एम ओ एस	-	खुले बाज़ार के परिचालन
ओ पी ई सी	-	पेट्रोलियम निर्यातक देशों का संगठन
ओ टी सी	-	काउंटर पर
पी बी सी	-	पीपल्स बैंक ऑफ चाइना
पी डी एस	-	प्राथमिक व्यापारी
पी आर ए	-	विवेक सम्मत विनियमन प्राधिकरण
क्यू ई	-	मात्रात्मक सुलभता
क्यू एफ ए एस	-	अर्ध राजकोषीय क्रियाकलाप
आर बी आइ	-	भारतीय रिज़र्व बैंक
आर सी एफ	-	मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट
आर एच एस	-	राइट हैंड पैमाना
आर एम एस ई	-	मूल औसत सम-स्थिति त्रुटि
एस ए आर बी	-	साउथ अफ्रीकन रिज़र्व बैंक
एस ए आर एस	-	भयंकर संवेदनशील श्वसन लक्षण
एस सी बी एस	-	अनुसूचित वाणिज्य बैंक
एस डी एम	-	राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध
एस जी पी	-	स्थिरता और संवृद्धि पैक्ट
एस एल आर	-	सांविधिक चलनिधि अनुपात
एस एम ओ एस	-	विशेष बाज़ार परिचालन
एस ओ ई एस	-	राज्य-स्वामित्ववाले उद्यम
एस पी वी	-	विशेष प्रयोजन माध्यम
एस एस एम	-	एकल पर्यवेक्षीय व्यवस्था
टी ए आर पी	-	समस्याग्रस्त आस्ति राहत कार्यक्रम
टी एस ए	-	खजाना एकल खाता
यू के	-	युनाइटेड किंगडम (यू.के.)
यू एस	-	संयुक्त राज्य अमरीका
वी ई सी एम	-	वेक्टर त्रुटि सुधार मॉडल
डब्ल्यू एम ए	-	अर्थोपाय अग्रिम
डब्ल्यू पी आई	-	थोक मूल्य सूचकांक
जेड एल बी	-	नगण्य न्यूनतर सीमा

यह रिपोर्ट इंटरनेट पर भी देखी जा सकती है
यू आर एल : www.rbi.org.in

1 रिपोर्ट का विषय

वैश्विक वित्तीय संकट 2008 के प्रति सक्रियतावादी राजकोषीय प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय पर एक नवीकृत संकेंद्रण (फोकस) किया गया है। इन परिवर्तनों से वैश्विक स्तर पर उच्चतर राजकोषीय प्रभुत्व की आशंका बढ़ गई है, विशेष रूप से तब, जब केंद्रीय बैंकों ने वित्तीय बाजारों मे सुचारू हालात कायम करने के लिए और वैश्विक संकट से प्रभावित अर्थव्यवस्थाओं में कुल मांग को प्रोत्साहित करने के लिए गैर परंपरागत मौद्रिक नीति उपायों का सहारा लिया है। भारतीय अनुभव यह दर्शाता है कि नियम-आधारित राजकोषीय विधान भले ही कम हो गये हों किन्तु राजकोषीय प्रभुत्व समाप्त नहीं हुआ है। अर्थ व्यवस्था के खुलेपन तथा सरकारी बाजार उधारों में वृद्धि से उत्पन्न बहुत बड़ी चुनौतियों के बीच राजकोषीय-मौद्रिक अंतरापृष्ठ (इंटरफेस) के बदलते हुए गति सिद्धांतों से रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र प्रबंध में लचीलापन आया है। हाल के वित्तीय संकट से प्राप्त अंतर्राष्ट्रीय अनुभव को ध्यान में रखते हुए, जो कर्ज प्रबंधन, मौद्रिक प्रबंधन और वित्तीय स्थिरता रखने के साथ ही साथ भारत में विशिष्ट परिस्थितियों को प्रभावित करेगा, मध्यावधि में मौद्रिक नीति के लिए राजकोषीय घाटे, उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल से उत्पन्न पथ के निहितार्थ पर एक व्यापक मार्गदर्शन उपलब्ध कराया गया है।

1.1 वैश्विक वित्तीय संकट के प्रभाव के पश्चात् राजकोषीय प्रभुत्व के लौटने के साथ राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का ध्यान समष्टि आर्थिक सिद्धांत और नीति व्यवहार में आकृष्ट होना जारी हैं। चूंकि राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों ही नीतियां कुल मांग और आर्थिक क्रियाकलाप को अनुकूल बनाने के लिए संभवतः एवजी/स्थानापन्न को प्रभावित कर सकती हैं, समष्टि आर्थिक नीति-निर्माण की इन दोनों भुजाओं के बीच समन्वय आवश्यक हो जाता है। किसी केंद्रीय बैंक के लिए विस्तारकारी राजकोषीय नीतियां कुल मांग दबावों को बढ़ा कर अथवा घाटों के मुद्रीकरण की अपेक्षा द्वारा मुद्रास्फीति कारक चिंताएं बढ़ा सकती हैं। कभी-कभी बाजार वित्त से घाटों की भरपाई करना दीर्घावधि ब्याज दरों को कम रखने की राह में बाधा उपस्थित करते हुए निवेश तथा आर्थिक संवृद्धि के लिए सहायक बन जाता है। दूसरी ओर, एक कठोर मौद्रिक नीति से बाजार ब्याज दरों तथा सरकारी उधारों पर ब्याज भुगतानों में वृद्धि हो सकती है जिससे राजकोषीय घाटा बढ़ सकता है। मौद्रिक नीति का प्रभाव सिक्का-ढलाई मुनाफा तथा सरकार के मुद्रास्फीति कर राजस्व पर भी पड़ सकता है। हाल ही के दिनों में, केंद्रीय बैंकों की वित्तीय स्थिरता चिंताओं पर यूरो क्षेत्र में राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता के मुद्दे हावी हो रहे हैं। ऐसा या तो बैंकिंग प्रणाली के स्वास्थ्य पर राष्ट्रिक कर्ज की समस्या के प्रतिकूल प्रभाव द्वारा हो रहा है अथवा मौद्रिक प्रबंध पर राजकोषीय प्रभुत्व की परंपरागत चिंताओं के माध्यम से हो रहा है।

1.2 हाल के वर्षों में रिजर्व बैंक में नीति-निर्माण के संचालन हेतु राजकोषींय- मौद्रिक अंतरापृष्ठ भी एक सिद्धांत रहा है, और इस विषय पर कुछ नीति संबंधी विश्लेषणात्मक मुद्दों पर मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट (आर सी एफ) के पिछले अंक सहित बैंक के पिछले प्रकाशनों में प्रकाश डाला गया है।[1] मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट के इस अंक के लिए राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय को विषय के रूप में चुनने का निर्णय अनेक बातों पर सोच-विचार करने के बाद लिया गया है।

1.3 प्रथम, 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट के प्रति सक्रियतावादी राजकोषीय प्रतिक्रिया के पश्चात्, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों ने राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता को काबू में रखने की एक अतिरिक्त चुनौती का सामना किया। ऐसी आंशका है कि केंद्रीय बैंकों द्वारा चलनिधि प्रबंधन कार्यों के संचालन का संभावित रूप से परोक्षतः सार्वजनिक कर्ज के रूप में मुद्रीकरण किया जा सकता है। यह

1 मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट के पिछले अंकों में राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय से संबंधित जिन विभिन्न विषयों पर चर्चा की गई है, वे इस प्रकार हैः (i) भारत में राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण का इष्टतम स्तर ('इष्टतमता' की परिभाषा 5 प्रतिशत की मुद्रास्फीति दर प्राप्त करने के अनुसार की गई है) (राजवित्तीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध अधिनियम 2003 से पूर्व);(ii) सरकार और केंद्रीय बैंकों के बीच प्रतिपक्षी संबंध (अर्थात् क्या केंद्रीय बैंक सरकार को ओवर ड्राफ्ट/ऋण उपलब्ध कराता है अथवा क्या उसे प्राथमिक और द्वितीयक सरकारी प्रतिभूति बाजार में परिचालित करने की अनुमति है और उस सीमा तक है कि केंद्रीय बैंक के लाभ सरकार को अंतरित किये जाते हैं) और कीमत स्तर का राजकोषीय सिद्धांत; तथा (iii) सैद्धांतिक सहारा देना, 1935 से लेकर 2005 तक की अवधि के दौरान बहुराष्ट्रीय अनुभव और भारतीय अनुभव (केन्द्र और कुछ राज्यों द्वारा राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान अधिनियम और सार्वजनिक ऋण प्रबंधन तथा मौद्रिक प्रबंधन कार्यों के पृथक्करण संबंधी विषयों सहित)।

मुद्रीकरण 1970 तक की महामंदी के बाद राजकोषीय प्रभुत्व काल के दौरान व्याप्त परंपरागत प्रत्यक्ष मुद्रीकरण की सीमा से कहीं अधिक होगा। द्वितीय, भारत की ओर रुख करते हुए, यह निर्धारण करने की आवश्यकता है कि राजकोषीय घाटे के स्वतः मुद्रीकरण को हटाने और रिज़र्व बैंक द्वारा प्राथमिक सरकारी प्रतिभूति बाज़ार में प्रत्यक्ष अभिदान की प्रथा का परित्याग करने और एक नियम आधारित राजकोषीय नीति लागू करने से क्या वास्तव में मौद्रिक नीति के संचालन में राजकोषीय प्रभुत्व कम हुआ है। तृतीय, भारत में राजकोषीय मौद्रिक समन्वय के विकसित चरणों से रिज़र्व बैंक के सामने उसके अपने तुलन पत्र प्रबंधन में नई चुनौतियां खड़ी हो गई हैं। चूंकि मौद्रिक नीति ने अपनी परिचालन क्रियाविधि मौद्रिक लक्ष्य से बदल कर बहुल संकेतक दृष्टिकोण कर दी है, उसे पूंजी प्रवाहों का प्रबंध एक अधिक खुली अर्थव्यवस्था में करना पड़ा और अपनी चलनिधि समायोजन सुविधा को सरल-सहज बनाना पड़ा। चतुर्थ, पिछले कुछ वर्षों में, जहाँ राजकोषीय घाटा और मुद्रास्फीति का स्तर काफी अधिक रहा है, संरचनात्मक तत्वों तथा ब्याज दरों-दोनों ही कारणों से निवेश कम हुआ था। इस संदर्भ में, सरकार द्वारा सितंबर 2012 से घोषित सुधार उपायों और बारहवीं योजना प्रलेख[2] में यथापरिकल्पित संवृद्धि दर बढ़ाने की अनिवार्यताओं के मद्देनज़र जहाँ समष्टि आर्थिक और वित्तीय स्थिरता बनाए रखनी होगी वहीं राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों का सावधानीपूर्वक अंशांकन (कैलीब्रेशन) करने की आवश्यकता होगी। अंततः, वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप राष्ट्रिक कर्ज प्रबंधन, मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता के बीच पारस्परिक क्रियाएं सुदृढ़ बनाने की दृष्टि से इस बात की आवश्यकता है कि भारत में मध्यावधि पर कर्ज प्रबंधन के लिए संस्थागत व्यवस्था की प्रकृति का पुनरीक्षण किया जाए।

1.4 तद्नुसार, वर्तमान रिपोर्ट का उद्देश्य विशेष रूप से हाल के पिछले दिनों में भारत में यथा विकसित राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विभिन्न रूपों की जांच करना है और उसके लिए इस बात को ध्यान में रखना है कि विशेष रूप से समष्टि आर्थिक दृष्टिकोण एवं नीति प्राथमिकताओं की दृष्टि से मध्यावधि पर क्या परिवर्तन संभावित है। अगले अध्याय में कुछ उन्नत और उभरते हुए बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विकास-क्रम की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है और राजकोषीय- मौद्रिक अंतरापृष्ठ के लिए हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के निहितार्थ का निर्धारण किया गया है। अध्याय 3 में इस संबंध में भारतीय अनुभव प्रस्तुत किया गया है जो इस बात को ध्यान में रखते हुए है कि पिछले दो दशकों में मौद्रिक नीति के राजकोषीय प्रभुत्व में नरमी आई है, हालांकि भारी राजकोषीय घाटे, दबी हुई मुद्रास्फीति और कर्ज गति सिद्धांतों का आरक्षित मुद्रा में डाला जाना जारी है। अध्याय 4 में मौद्रिक नीति कार्यों की व्यवस्था में बदलाव और राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विभिन्न चरणों के अनुसार पिछले वर्षों में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में हुए उल्लेखनीय परिवर्तन की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है। अध्याय 5 में, भारत में राजकोषीय-मौद्रिक कर्ज प्रबंध समन्वय की संभावना की जांच की गई है। यह जांच विशेष रूप से वैश्विक वित्तीय संकट की पृष्ठभूमि के सम्मुख, निर्धारित राजकोषीय रोडमैप की संकट-उपरांत वापसी और कर्ज प्रबंधन के लिए संस्थागत व्यवस्था पर नवीकृत विचारधारा के संदर्भ में की गई है। समापन अध्याय में, हाल के अनुभव को ध्यान में रखते हुए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर और भारत में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के लिए कुछ मुख्य पाठों (लेसन्स) और भावी चुनौतियों की पहचान कराई गई है। विभिन्न अध्यायों में विश्लेषित मुख्य प्रश्नों के साथ अध्यायों की व्याप्ति (कवरेज) को नीचे निर्धारित किया गया है।

राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय सिद्धांत और व्यवहार में कैसे विकसित हुआ है? राजकोषीय-मौद्रिक अंतरापृष्ठ के लिए हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के निहितार्थ क्या रहे हैं?

1.5 इन प्रश्नों पर विचार करते हुए, अध्याय 2, ''राजकोषीय-मौद्रिक समन्वयः सिद्धांत और अंतर्राष्ट्रीय अनुभव'', समष्टि आर्थिक प्रामाणिकता निर्धारित करते हुए प्रारंभ होता है। इस प्रामाणिकता ने 1930 के वर्षों में भारी मंदी के दौरान अर्थव्यवस्थाओं में कुल मांग में कमी का समाधान करने और द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् पुनर्निर्माण प्रक्रिया में सहायक होने में अग्रणी भूमिका अदा की थी। बेरोजगारी के उच्च स्तर पर मौद्रिक नीति के बेअसर होने के साथ राजकोषीय घाटों का प्रत्यक्ष मुद्रीकरण और ब्याज दरों को कम रखना निर्धारित चैनल थे जिनके द्वारा केंद्रीय बैंकों को राजकोषीय प्रभुत्व को मौन स्वीकृति देनी पड़ी। 1970 के वर्षों में उच्च मुद्रास्फीति और काफी अधिक बेरोजगारी की सहवर्तिता की अवधि के दौरान कीन्स के नीति निर्धारणों की असफलता के साथ तेल कीमत के धक्कों और बहुपक्षीय नियत विनिमय दर प्रणाली के ध्वस्त हो जाने के बीच

2 राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा यथा अनुमोदित।

मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण दृष्टिकोण अपनाकर मौद्रिक नीति स्वतंत्रता प्राप्त करनी पड़ी थी। फिर भी, मौद्रिक नीति का राजकोषीय नीति के साथ समन्वय करना होता है, विशेष रूप से ऐसे मामलों में जहाँ राजकोषीय घाटों के स्वतंत्र रूप से पूर्व निर्धारित अंतर-कालिक पथ, अनिश्चितताओं और उद्देश्यों की संख्या उपलब्ध स्वतंत्र साधनों से अधिक हो जाती है। 1990 के वर्षों में विकसित 'कीमत स्तर का राजकोषीय सिद्धांत' द्वारा प्रत्यक्ष प्रभावी कीमत स्तरों के लिए राजकोषीय नीति की अंतः शक्ति को प्रस्तुत किया गया था, जिसके द्वारा कीमत स्थिरता के मौद्रिक नीति लक्ष्य पर राजकोषीय दबाव के अन्य चैनल को पहचाना गया। विशेष रूप से, यूरोपीय मौद्रिक संघ (ई एम यू) के गठन के पश्चात्, और वित्तीय स्थिरता उद्देश्य को पूरा करने की आवश्यकता के मद्देनजर खुली अर्थव्यवस्था विस्तार ने भी, जो 2008 के पश्चात् वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान अधिक स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया था, हाल के वर्षों में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के समन्वयन को समर्थन दिया है।

1.6 राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के संदर्भ में चयनित उन्नत अर्थव्यवस्थाओं का अनुभव यह दर्शाता है कि 1970 के वर्षों की उच्च मुद्रास्फीति के बाद अगले दो दशकों के दौरान मौद्रिक नीति के संचालन में केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता का मुद्दा महत्वपूर्ण हो गया है। 1990 के वर्षों के दौरान, कई देशों ने मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण अपनाया, जब कि राजकोषीय नीति वर्धमान रूप से नियम-आधारित बन गई। ये परिवर्तन मौद्रिक नीति परिचालन क्रियाविधियों में अनुरूप बदलाव में परिलक्षित हुए थे, जब कि जैसे ही राजकोषीय नियम चलन में आए, सरकारी उधारों में कमी हो गई। यू के और कुछ अन्य उन्नत देशों में कीमत स्थिरता[3] पर जोर दिये जाने के बीच 1990 के वर्षों के दौरान केंद्रीय बैंकों और सरकारों के बीच नीति समन्वयन तंत्र में आगे और सुधार हुआ है। 1990 के शुरू के वर्षो में, अनेक ओ ई सी डी देशों ने सार्वजनिक कर्ज नीति पर राजकोषीय प्राधिकरणों और केंद्रीय बैंकों के बीच परामर्श और समन्वय के लिए समितियां गठित कर ली थी । उसी समय, सरकारी कर्ज का प्रबंध करने के लिए परिचालन जिम्मेवारी अधिकांश स्वतंत्र कर्ज प्रबंधन कार्यालयों को उनके स्वयं के सुस्पष्ट उद्देश्यों के साथ सौंपी गई थी। परिचालन ढांचे का यह पुनः निर्धारण सुस्पष्ट मुद्रास्फीति अधिदेशों के साथ केंद्रीय बैंकों की स्वतंत्रता के साथ अक्सर साथ-साथ चला। फिर भी, यह निष्कर्ष निकालना कठिन है कि 1990 के वर्षों से केंद्रीय बैंकों के अधिक स्वतंत्र बन जाने के साथ क्या वास्तव में राजकोषीय प्रभुत्व की मात्रा में उल्लेखनीय रूप से कमी हुई है। जहाँ तक ई एम डी अर्थव्यवस्थाओं का संबंध है, राजकोषीय नीति प्रभुत्व अक्सर उस महत्व का परिणाम होता था जो सामाजिक-आर्थिक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए अपनी-अपनी अर्थव्यवस्थाओं के लिए उनके द्वारा निर्धारित किया जाता था। तथापि, दक्षिण अफ्रीका, भारत, ब्राजील और रूस जैसी बड़ी अर्थव्यवस्थाओं ने अंततः इस बात को माना है कि मौद्रिक नीति-लक्ष्यों के अनुसरण और उनकी प्राप्ति के लिए राजकोषीय समेकन आवश्यक था। संकट की अवधि तक के लिए किये गये विश्लेषणात्मक निर्धारण से यह ज्ञात हुआ है कि राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकरणों के बीच समन्वय तंत्र में सुधार करके उन्नत और उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं ने चक्रीय उतार-चढ़ाव से निपटने के लिए राजकोषीय और मौद्रिक-दोनों ही नीतियों का इस्तेमाल किया था।

1.7 संकट-पूर्व अवधि के दौरान अनुकूल आर्थिक और वित्तीय स्थितियों से कुछ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की कर्ज-वृद्धि पर पर्दा पड़ गया था जो संकट के दौरान प्रबलित हो गई थी। हाल के वित्तीय संकट से मौद्रिक नीति और राजकोषीय/कर्ज प्रबंधन नीतियों के बीच समन्वयन के बारे में कुछ परंपरागत प्रश्न प्रबलित हो गये। संकट के दौरान राजकोषीय शेष राशियों और राष्ट्रिक कर्ज का निर्माण देखा गया था। क्योंकि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और ई एम डी अर्थव्यवस्थाओं -दोनों को ही करों में कटौती और उच्चतर सार्वजनिक खर्च के अनुसार कार्रवाई करनी थी। यह स्थिति संकट के बाद की अवधि में भी जारी रही, विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में। संकट के दौरान, प्रमुख केंद्रीय बैंकों ने समंजनकारी मौद्रिक नीतियों का पालन करने के लिए अपने तुलन पत्रों का इस्तेमाल किया। संकट के पश्चात् राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के संबंध में जो बहस उभर कर आई है वह यह है कि क्या राजकोषीय प्रभुत्व अथवा मौद्रिक प्रभुत्व हावी रहेंगे। इसकी पूरी संभावना है कि यदि राजकोषीय प्रभुत्व प्रचलित रहता है तो मौद्रिक प्रभुत्व के अंतर्गत सन्निकट ब्याज दरों को कम रखने की आवश्यकता होगी। तथापि, राजकोषीय नीति का निभाव मौद्रिक नीति द्वारा तभी तक किया जा सकता है जब तक मुद्रास्फीति अपेक्षाएं स्थिर रहती हैं। इसलिए, यह आवश्यक है कि विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं वाले देश ऐसी विश्वसनीय मध्यावधि राजकोषीय समेकन योजनाएं तैयार करें जिनसे मध्यावधि

3 हाल ही में, जनवरी 2012 में यू एस व जनवरी 2013 में जापान ने 2 प्रतिशत का निर्देशात्मक मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारित किया।

राजकोषीय निरंतरता के साथ संवृद्धि में समर्थक वसूली के लिए अल्पावधि आवश्यकताओं के बीच एक संतुलन सुनिश्चित किया जा सके। राजकोषीय प्राधिकरणों के साथ केंद्रीय बैंकों की पारस्परिक क्रिया के महत्वपूर्ण होने की संभावना है - न केवल मुद्रास्फीति अपेक्षाओं को स्थिर रखने के लिए मौद्रिक नीति के निर्बाध संचालन के दृष्टिकोण से बल्कि राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता और वित्तीय स्थिरता के परिप्रेक्ष्य में भी। इस अध्याय में यूरो क्षेत्र में राष्ट्रिक कर्ज संकट से संबंधित ताजा चिंताओं और एक 'राजकोषीय समझौता' के माध्यम से बजटीय अनुशासन लागू करने के लिए परिकल्पित नियमों के एक सेट को अपनाते हुए यूरोपीय मौद्रिक संघ (ई एम यू) के आर्थिक स्तंभ को सुदृढ़ बनाने, आर्थिक नीतियों के समन्वयन को मजबूती प्रदान करने और यूरो क्षेत्र में शासन सुधारने के लिए किये जा रहे प्रयासों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है।

क्या भारत में मौद्रिक नीति का राजकोषीय प्रभुत्व राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) के बाद कम हुआ है? क्या विधान से घाटों का मुद्रीकरण बंद हो गया है? क्या भारत में बड़े राजकोषीय घाटे मुद्रास्फीतिकारी हैं? क्या सरकारी खर्च यथाचक्रीय अथवा प्रतिचक्रीय है? क्या कर्ज घाटा गति सिद्धांत मौद्रिक नीति पर प्रभाव डालता है?

1.8 अध्याय 3, 'भारत में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वयः एक निर्धारण' में, जो भारत में मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के लिए संस्थागत व्यवस्था मे परिवर्तन के माध्यम से राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का निर्धारण करता है, इन प्रश्नों पर विचार किया गया है। व्यवस्था परिवर्तन, जिसमें पहले तदर्थ खजाना बिल को बंद करते हुए स्वचालित मुद्रीकरण पर नियंत्रण किया गया था और बाद में राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) अधिनियम के अंतर्गत सरकार द्वारा प्राथमिक निर्गमों को अभिदान देने से रिज़र्व बैंक को रोकने से मौद्रिक नीति का राजकोषीय प्रभुत्व कम हुआ है, किन्तु समाप्त नहीं हुआ है। विशेष रूप से दमित मुद्रास्फीति, घाटों और एक दूसरे पर मुद्रास्फीति पोषण (फीडिंग) के कारण प्रभुत्व के नये रूप उभर आए हैं। बड़े राजकोषीय घाटों के कर्ज घाटा गति सिद्धांत संभाव्य रूप से व्यापक अर्थ में मुद्रीकरण के कारण बन सकते हैं। यह इस वजह से कि रिज़र्व बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की निवल खरीद के मामले में खुला बाजार परिचालन आरक्षित मुद्रा का निर्माण करते हैं। क्या इस प्रकार का मुद्रीकरण मौद्रिक नीति प्रभावोत्पादकता को कम करता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि क्या खुला बाजार परिचालनों का मौद्रिक नीति उद्देश्यों के साथ मतभेद है। व्यवहार में, यह निश्चय करना हमेशा आसान नहीं होता है कि खुला बाजार परिचालनों का कौन सा भाग चलनिधि अथवा मौद्रिक स्थितियों को प्रभावित करता है और खुला बाजार परिचालनों के कौन से भाग की वजह से कर्ज निलामियां होती हैं। पिछले आठ वर्षों (2004-05 से 2012 -13) में सरकारी बाजार उधारों में लगभग दस गुना वृद्धि हुई है। इस अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक ने भारी मात्रा में खुला बाजार परिचालन खरीद का संचालन किया था। जब तक राजकोषीय घाटा भारी रहेगा, राजकोषीय नीति प्रभुत्व के बने रहने की संभावना है। जिस सीमा तक खुला बाजार परिचालन रिज़र्व बैंक के मौद्रिक विस्तार लक्ष्यों को प्रभावित नहीं करते हैं, राजकोषीय प्रभुत्व मौन हो जाता है। किन्तु, जब मुद्रास्फीति तत्वों के अनुरूप, सीमा से अधिक खुला बाजार परिचालनों के माध्यम से प्रणाली में अतिरिक्त चलनिधि का संचार किया जाता है तो राजकोषीय प्रभुत्व मौद्रिक स्थिरता के लिए अहितकर बन जाता है। वह मौद्रिक नीति परिचालनों का अतिक्रमण कर सकता है, क्योंकि वह गेम ऑफ चिकन के लिए एक खेल-सैद्धान्तिक सेटिंग उपलब्ध कराता है।

1.9 भारी मात्रा में राजकोषीय घाटों ने भारत में मुद्रास्फीति को अनेक प्रकार से प्रभावित किया है। प्रथम, उस सीमा तक कि ये घाटे अर्थव्यवस्था में कीमत अनम्यता को परिलक्षित कराते हैं जिसकी वजह से कीमतें प्रशासनिक तौर पर तय की जाती हैं - जैसे कि ऊर्जा कीमतें, अर्थात् डीज़ल, बिजली, कोयला अथवा उर्वरक की कीमत- वे संभाव्य रूप से मुद्रास्फीतिकारक रहती हैं, तथापि अल्पावधि में उनका परिणाम दमित मुद्रास्फीति के रूप में होता है। इस प्रकार की कीमतों में अक्सर अचानक भारी संशोधन करने की आवश्यकता होती है जब सब्सिडी युक्त खर्चों के कारण एक अस्थिर राजकोषीय स्थिति निर्मित हो जाती है। इन असतत परिवर्तनों से न केवल मुद्रास्फीति बढ़ती है किन्तु इनका प्रभाव मुद्रास्फीति अपेक्षाओं पर भी पड़ता है। द्वितीय, भारी राजकोषीय घाटों का उपयोग जब पूंजी खर्च के बजाय चालू खर्चों के वित्तपोषण में किया जाता है तो वह निवेश को प्रभावित करता है और आपूर्ति अनुक्रियाओं में विलंब होता है जो मध्यावधि मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के लिए आवश्यक है। वे संभावित उत्पादन को भी कम करते हैं जिससे मौद्रिक नीति को सरल बनाना अधिक कठिन हो जाता है। तृतीय, बाजार उधारों से बड़े राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण से ब्याज दरों पर उसके प्रभाव तथा अर्थव्यवस्था में साख की उपलब्धता के परिणामस्वरूप निजी निवेश

की भरमार हो जाती है। इससे आवश्यक आपूर्ति अनुक्रियाएं और धीमी हो जाती हैं। चतुर्थ, रिज़र्व बैंक के पास जमा सरकारी नकदी शेष में वृद्धि से कभी-कभी भारी राजकोषीय घाटे की अनुक्रिया में चलनिधि की स्थिति काफी तंग हो जाती है। यदि यह खुला बाजार परिचालन खरीद के साथ होता है तो जो मौद्रिक प्रभाव होगा वह स्फीतिकारक हो सकता है। वेक्टर एरर करेक्शन मॉडल (वी ई सी एम) इस्तेमाल करते हुए इस अध्याय में जो प्रायोगिक कार्य प्रस्तुत किया गया है, वह यह दर्शाता है कि मुद्रास्फीति का दीर्घावधि प्रभाव सरकारी राजस्व पर की तुलना में सरकारी खर्च पर कहीं अधिक होता है। उच्च मुद्रास्फीति से उच्चतर सरकारी खर्च की स्थिति बन सकती है, जिससे उच्चतर मुद्रास्फीति होने के परिणाम स्वरूप एक स्वतः स्थाइत्व चक्र बन सकता है।

1.10 राजकोषीय नीति की एक महत्वपूर्ण प्रतिचक्रीय भूमिका होती है जिसे महा मंदी की स्थिति में कीन्स द्वारा अनुशंसित करने के बाद देखा-परखा गया और व्यवहार में लाया गया है। हालांकि, उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के मामले में सरकारी खर्च अक्सर यथाचक्रीय पाये जाते हैं। यथाचक्रीय राजकोषीय नीति का आशय यह होता है कि तेजी के समय में राजकोषीय नीति विस्तारकारी होती है और मंदी के समय वह संकुचनकारी होती है। राजकोषीय नीति का आदर्श लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह चक्रीय मंदी के दौरान, जब राजस्व कम हो जाते हैं और 'सामाजिक' खर्च बढ़ जाते हैं, अधिक उधार ले और तेजी के दौरान कर्ज को घटाए। राजकोषीय नीति को इस बात का प्रयास करना चाहिए कि वह कारोबार चक्र उतार-चढ़ावों को धीमा करे, विशेष रूप से तब, जब कर-आधार पर अथवा खर्च पर झटके अस्थायी हो अर्थात् स्थायी न हो। ऐसा प्रायः नहीं होता है। इन सबसे समष्टि आर्थिक अस्थिरता, निवेशों में मंदी बढ़ती है, संवृद्धि में कमी होती है, आय और धन संपदा का पुनः वितरण गरीबों से दूर हो जाता है तथा अर्थव्यवस्था में कल्याण का सामान्य स्तर घट जाता है। इससे भारी घाटा पूर्वग्रह उत्पन्न होता है एवं कर्ज-स्थायीत्व एवं चूक का जोखिम उपस्थित हो जाता है। दीर्घावधि (1950-51 से 2011-12 तक) के लिए इस अध्याय में प्रस्तुत प्रायोगिक साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि भारत में राजकोषीय खर्च, दीर्घावधि और अल्पावधि- दोनों में ही यथाचक्रीय है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि सरकार के अंतिम उपभोग प्रायः स्फीतिकारक रहे हैं, कुल मांग में चक्रीय उतार-चढ़ावों को नियंत्रित करने में उसकी अपनी सीमाएं हैं। इससे मौद्रिक नीति पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है। किन्तु, वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान 2008-09 में प्रतिचक्रीय राजकोषीय विस्तार का उत्तरदायित्व लिया गया था।

1.11 कर्ज-घाटा गतिसिद्धांत की मौद्रिक नीति के साथ अनेक प्रकार से पारस्परिक क्रिया होती है। सरकार उसके खर्चों का वित्तपोषण या तो कर के माध्यम से कर सकती है अथवा करेतर राजस्व के माध्यम से अथवा चल रहे घाटों द्वारा कर सकती है, जिनका वित्तपोषण कर्ज के माध्यम से किया जाता है। जिस तरीके से कर्ज उगाहे जाते हैं उसका भी संबंध मौद्रिक नीति से होता है। इसके अलावा, कर्ज वित्तपोषण का प्रभाव भावी राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों पर भी पड़ता है। उसका प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि बैरो-रिकार्डो तुल्यता है अथवा नहीं, जिसके अनुसार अपेक्षित है कि कर्ज का वित्तपोषण भावी कर और करेतर राजस्व, धारित राशियों (होल्ड) से किया जाना चाहिए। यदि कर्ज भावी राजस्व धारा में पर्याप्त रूप से नहीं जुड़ पाता है तो भावी जिम्मेवारियों को पूरा करना कठिन हो सकता है। एक स्वतः प्रतिगामी वितरित अंतराल (ए आर डी एल) मॉडल का प्रयोग करते हुए, घाटा, कर्ज और मुद्रा के बीच संबंध के गति सिद्धांत का प्रायोगिक तौर पर विश्लेषण करते हुए उक्त अध्याय में इस बात को दर्शाया गया है कि केंद्र और राज्यों के संयुक्त सरकारी कर्ज और आरक्षित मुद्रा में परिवर्तन के बीच दीर्घावधि सह-संपूर्ण संबंध है।

पिछले वर्षों में राजकोषीय प्रभुत्व ने किस प्रकार रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र को प्रभावित किया? क्या प्रत्यक्ष राजकोषीय दबावों और भारतीय अर्थव्यवस्थाओं में बढ़ते हुए बाह्य खुलेपन से तुलन पत्र प्रबंधन में रिज़र्व बैंक की स्वायत्तता प्रभावित हुई है? संकट के प्रति नीति अनुक्रिया का रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर क्या प्रभाव पड़ा था?

1.12 अध्याय 4, 'राजकोषीय परिचालन और रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र' बदलते हुए राजकोषीय-मौद्रिक गति सिद्धांतों के संदर्भ में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में मोड़ बिंदुओं का पता लगाने का प्रयास करते हुए इन मुद्दों पर विचार किया गया है। ऐतिहासिक रूप से, सामाजिक नियंत्रण (1968-1990) की अवधि के दौरान भारत में राजकोषीय प्रभुत्व की मौजूदगी थी। सरकार के बैंकर के तौर पर, सुधार-पूर्व काल के दौरान रिज़र्व बैंक के लिए योजना प्रक्रिया में सरकार के संसाधन अंतराल को भरने का एक महत्वपूर्ण विकास लक्ष्य था। इस चरण के दौरान रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का आकार उल्लेखनीय रूप से बढ़ गया जो सरकार के प्रति इसके बढ़ते हुए

निभाव और अनुवर्ती मुद्रास्फीति पर नियंत्रण पाने के लिए उसके मौद्रिक नीति साधनों के इस्तेमाल को दर्शाता है। 1980 के वर्षों के दौरान राजकोषीय स्थितियां काफी बिगड़ गई थी, जिनकी वजह से राजकोषीय घाटे का मुद्रीकरण करना पड़ा और जिसके परिणामस्वरूप 1990-91 में भुगतान संतुलन का संकट खड़ा हो गया।

1.13 अर्थव्यवस्था के खुल जाने के पश्चात् विदेशी मुद्रा भंडार में अभिवृद्धि के मौद्रिक प्रभाव को निष्प्रभावी करने के लिए बैंकों की आरक्षित निधि अपेक्षाओं में वृद्धि की वजह से 1990 के वर्षों के पूर्वार्ध के दौरान रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का आकार विस्तार जारी रहा। सुधार के बाद की अवधि को राजकोषीय प्रभुत्व के मन्दन की ओर धीरे-धीरे खिसकने के रूप में देखा गया है, जिसके परिणामस्वरूप रिज़र्व बैंक को मौद्रिक नीति संचालन में अत्यन्त लचीलापन प्राप्त हो गया है जैसा कि अधिक बाजारोन्मुख मौद्रिक नीति संचालन क्रियाविधियों की ओर बढ़ने के माध्यम से दर्शाया गया है। अप्रैल 1997 से तदर्थ खजाना बिलों को बंद करने के माध्यम से सरकारी घाटे के स्वतः मुद्रीकरण के बंद होने और उसके साथ ही सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास से रिज़र्व बैंक धीरे-धीरे आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सी आर आर) कम कर रहा है, जिसके परिणामस्वरूप 1990 के वर्षों के द्वितीयार्ध के दौरान तुलन पत्र का आकार छोटा हो गया।

1.14 बाज़ार आधारित सरकारी उधारी कार्यक्रम के उभरने, प्राथमिक सरकारी प्रतिभूतियां जारी करने में रिज़र्व बैंक की भूमिका समाप्त हो जाने, विभिन्न दीर्घावधि निधियों में उसके अंशदान में भारी कमी होने तथा केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र और राजकोषीय नीतियों के बीच अंतरापृष्ठ में एक नव युग की शुरूआत हुई। 2001 और 2007 के बीच रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के आकार में वृद्धि हुई, जिसमें विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप करते हुए देशी अर्थव्यवस्थाओं पर भारी पूंजी प्रवाहों के अस्थिरतापूर्ण प्रभावों को नियंत्रित करने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा किये गये प्रयास परिलक्षित होते हैं। पूंजी आगमन में वृद्धि रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में एक नया आयाम जोड़ती है, क्योंकि रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर निवल देशी आस्तियों में कमी के समीप ही निवल विदेशी आस्तियां संचित हो गई थी। बाजार स्थिरीकरण योजना लागू किया जाना राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकरणों के बीच अंतरापृष्ठ में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर था जिसके अंतर्गत अवरुद्धता प्रयोजनों के लिए सरकारी प्रतिभूतियां जारी की गई थी, जिसके साथ राजकोष द्वारा भी अवरुद्धता की लागत का अंश वहन किया गया था। 2008 में वैश्विक वित्तीय संकट के प्रारंभ के बाद स्थिति में बदलाव आया जिसके अंतर्गत पूंजी प्रवाह में उलटाव हुआ। यह ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान अनेक केंद्रीय बैंकों की गैर-परंपरागत मौद्रिक नीतियों और मात्रात्मक सुलभता उपायों के परिणामस्वरूप उनके तुलन पत्र के विस्तार के विपरीत रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र के विस्तार के विपरीत रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र 2008-09 में, परंपरागत और गैर-परंपरागत उपायों के व्यापक उपयोग के बावजूद संकुचित था। आस्ति की ओर, विनिमय दरों के स्थिरीकरण के लिए विदेशी आस्तियों में कमी करते हुए प्रतिसंतुलन की तुलना में खुला बाजार परिचालनों और चलनिधि निभाव के माध्यम से देशी आस्तियों का विस्तार अधिक था। देयता की ओर, आरक्षित नकदी निधि अनुपात में कमी और बाजार स्थिरीकरण योजना जमा राशियों के मोचन के कारण बैंक आरक्षित निधियों और सरकारी जमाराशियों मे गिरावट के कारण तुलन पत्र संकुचित हो गया। उसके बाद से रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में उल्लेखनीय रूप से विस्तार हुआ, जिसमें उसके चलनिधि प्रबंध परिचालन परिलक्षित हुए, जिनका उद्देश्य, सरकार के बाजार उधार कार्यक्रम को समर्थन देते हुए और साथ-साथ मुद्रास्फीति को नियंत्रण में लाकर वसूली प्रक्रिया को मजबूत बनाना है।

वैश्विक अनिश्चितताओं, बारहवीं पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज में परिकल्पित संवृद्धि लक्ष्य को प्राप्त करने की अनिवार्यताओं, भारत सरकार द्वारा अक्तूबर 2012 में निर्धारित राजकोषीय रोड मैप और नकदी तथा कर्ज प्रबंध के संचालन में संस्थागत व्यवस्थाओं में प्रस्तावित परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए हम भारत में राजकोषीय- मौद्रिक कर्ज प्रबंध समन्वय के दृष्टिकोण को किस रूप में देखते हैं ?

1.15 केंद्र सरकार को नियम-आधारित राजकोषीय समेकन की राह पर लौटने की आवश्यकता होगी क्योंकि उसका राजकोषीय घाटा-सकल देशी उत्पाद अनुपात 2008-09 से सामान्यतया उच्च स्तर पर बना हुआ है। बारहवी योजना (2012-13 से 2016-17) दस्तावेज में औसत लक्षित संवृद्धि दर 8.0 प्रतिशत निर्धारित की गई है और 2011-12 की बचत दर की तुलना में, इसके साथ ही, सार्वजनिक क्षेत्र बचत दर में लगभग 3.5 प्रतिशत की बढ़ोतरी का अनुमान लगाया गया है। मध्य-सितंबर 2012 से शुरूआत करते हुए भारत सरकार ने राजकोषीय घाटे पर काबू पाने तथा निवेश वातावरण में सुधार लाने के लिए अनेक उपायों की घोषणा की है। अक्तूबर 2012 के अंत में वित्त मंत्री ने सरकार के इस निर्णय

की घोषणा की कि बारहवी पंचवर्षीय योजना के दौरान राजकोषीय समेकन योजना अपनाई जाएगी जिसके अंतर्गत राजकोषीय घाटे को क्रमशः कम करते हुए 2012-13 में जी डी पी के 5.3 प्रतिशत से 2016-17 में जी डी पी के 3.0 प्रतिशत पर ले आया जायगा। इसके अलावा, सरकार अपनी सीमा के भीतर एक कर्ज प्रबंध कार्यालय स्थापित करने जा रही है जिससे भारत में नकदी और सार्वजनिक कर्ज प्रबंध में संस्थागत परिवर्तन हो सकता है जो रिज़र्व बैंक की सीमा में आएगा। तद्नुसार अध्याय 5, 'राजकोषीय मौद्रिक नीति समन्वय और सरकारी कर्ज और नकदी प्रबंध' के लिए संस्थागत व्यवस्थाएं- एक मध्यावधि दृष्टिकोण; सुधार के पश्चात् की अवधि में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच संबंध का निर्धारण करता है। इस संदर्भ में एक अनुभवजन्य प्रयोग द्वारा मांग दर के साथ एक अनुक्रमिक कार्य का अनुमान लगाया गया है- जो मौद्रिक नीति का परिचालन लक्ष्य है और मौद्रिक नीति दर के लिए सामान्यतया परोक्षी के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है- आश्रित परिवर्ती और मुद्रास्फीति अंतराल (अर्थात, थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति दर और उसके प्रवृत्ति घटक के बीच अन्तर), उत्पादन अंतराल (अर्थात् डी-टेंडेड अथवा सकल देशी उत्पाद के चक्रीय घटक) सकल देशी उत्पाद में केंद्र के राजकोषीय घाटे का अनुपात (एक-अवधि अंतराल के साथ) और व्याख्यात्मक परिवर्ती के रूप में एक-अवधि अंतराल मांग दर। अनुमानित समीकरण राजकोषीय घाटे के विकसित होते हुए पथ के निहितार्थ, उत्पादन अंतराल और मध्यावधि में मौद्रिक नीति के लिए मुद्रास्फीति अंतराल के संबंध में व्यापक दिशा-निर्देश उपलब्ध कराता है।

1.16 इस अध्याय में कर्ज प्रबंधन के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं के संबंध में भी बहस अथवा पुनर्विचार पर सार प्रस्तुत किया गया है जो वैश्विक वित्तीय संकट से उत्पन्न हुआ था। भारत में, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार में पहले ही एक मध्यस्थ कार्यालय की स्थापना की जा चुकी है और रिज़र्व बैंक से भारत सरकार को कर्ज और नकदी प्रबंधन कार्यों के हस्तांतरण को पूरा करने के लिए भारतीय सार्वजनिक कर्ज प्रबंध एजेंसी के संबंध में एक बिल पेश करने का प्रस्ताव विचाराधीन है। इसके बावजूद, हाल के वित्तीय संकट से प्राप्त अंतर्राष्ट्रीय अनुभव को ध्यान में रखते हुए कि वह कर्ज प्रबंधन, मौद्रिक प्रबंध और वित्तीय स्थिरता बनाये रखने के साथ ही साथ भारत में विशिष्ट परिस्थितियों पर हावी रहेगा, इस अध्याय में ऐसे कुछ मुद्दों पर विशेष रूप से विचार किया गया है जो इस संबंध में एक अलग दृष्टिकोण रखने की आवश्यकता पर बल देते हैं।

2 राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय: सिद्धांत और अंतर्राष्ट्रीय अनुभव

बहुदेशीय अनुभव यह दर्शाता है कि 1980 के शुरूआती वर्षों तक मौद्रिक नीति पर राजकोषीय नीति का प्रभुत्व रहा जिसके अंतर्गत केंद्रीय बैंकों द्वारा सरकारी घाटों के वित्तपोषण में अक्सर मुद्रास्फीतिकारक पूर्वग्रह दिखाई दिया। 1980 के वर्षों में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक नीति के लिए बढ़ती हुई स्वतंत्रता के साथ उभरते बाजारों सहित अनेक देशों के केंद्रीय बैंकों द्वारा नियम आधारित राजकोषीय नीति की ओर रुख किया गया और मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण अपनाया गया। उसके द्वारा धीरे-धीरे राजकोषीय-मौद्रिक मिश्रण बेहतर बनता गया जिसके द्वारा देश बाजार आधारित मौद्रिक और कर्ज प्रबंधन प्रथाओं को व्यवहार में लाने लग गये । कुछ केंद्रीय बैंकों, जैसे यूरोपीय केंद्रीय बैंक ने मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच प्रत्याशित समन्वय के किसी भी रूप को स्वीकार नहीं किया क्योंकि उसका यह मानना था कि उससे उसकी स्वतंत्रता तथा कीमत स्थिरता के लिए उसके अधिदेश को क्षति पहुँच सकती है। राजकोषीय- मौद्रिक समन्वय ने एक नये चरण में प्रवेश किया जब वैश्विक वित्तीय और यूरो क्षेत्र में राष्ट्रिक कर्ज संकट के कारण केंद्रीय बैंकों ने गैर-परंपरागत उपाय अपनाए और दीर्घावधि प्रतिभूतियों की खरीद तथा अक्षत ऋण के माध्यम से अपने तुलन पत्रों को विस्तार दिया, जिसके कारण राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच का अंतर अस्पष्ट हो गया, जब कि सरकारों ने अनेक वित्तीय संस्थाओं के बेल आउट्स और राष्ट्रीयकरण का कार्य हाथ में लिया था, जिसकी वजह से राजकोषीय-वित्तीय नीतियां अस्पष्ट हो गई थीं। राष्ट्रिक और बैंकिंग क्षेत्रों के बीच प्रतिकूल प्रति सूचना लूप के चलते वैश्विक सुधार और वित्तीय स्थिरता के लिए खतरा पैदा हो गया इसलिए गैर-परंपरागत मौद्रिक नीतियों से सही समय पर बाहर आ जाना सबसे महत्त्वपूर्ण चुनौती है क्योंकि उन्नत देशों में राष्ट्रिक कर्ज के स्तर बहुत बढ़ गये हैं एवं संवृद्धि-चिंताएं व्याप्त हैं। कर्ज स्तरों को स्थिर करने अथवा उचित ब्याज दरों पर ही सही, घाटों का वित्तपोषण करने में सरकार की अयोग्यता के चलते मौद्रिक नीति को राजकोषीय प्रभुत्व के एक नये चरण से संघर्ष करना पड़ रहा है। इसलिए इस बात की आवश्यकता है कि एक इस्टतम राजकोषीय-मौद्रिक मिश्रण सुनिश्चित करने के लिए ऐसी विश्वसनीय राजकोषीय समेकन योजनाएं और समन्वय रणनीतियां हों जो संवृद्धि, मुद्रास्फीति और वित्तीय स्थिरता से सामंजस्य रखने वाली हो।

1. प्रस्तावना

2.1 समष्टि आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच पारस्परिक क्रिया का होना सभी विभिन्न देशों में सिद्धांत और व्यवहार में एक केंद्रीय और साथ ही अधिक जटिल संबंध है। मांग के दबावों को स्थिर करने, भारी घाटों तथा उच्च मुद्रास्फीति से निपटने के लिए राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकरणों की ओर से व्यापक सहमति वाले समर्थक समन्वय प्रयास में मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों की सापेक्ष प्रभावोत्पादकता के बारे में 1960 के वर्षों में शुरूआती बहस के साथ शुरू करते हुए उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं।

2.2 1960 और 1970 के वर्षों में, मौद्रिक अर्थशास्त्र पर फिलिप्स कर्व पैराडिम का प्रभुत्व था। बुनियादी आधार वाक्य यह था कि वहाँ केवल अल्पावधि ही नहीं बल्कि मुद्रास्फीति और उत्पादन के बीच एक दीर्घावधि तालमेल भी था। इससे इस दृष्टिकोण को बल मिला कि केंद्रीय बैंक निरंतरता के आधार पर उच्चतर संवृद्धि प्राप्त कर सकते हैं, यदि वे मुद्रास्फीति को कुछ और बढ़ने दें। हालांकि इस तर्क की कमियों को 1970 के वर्षों के स्टैगफ्लेशन द्वारा स्पष्ट किया गया था। इन गतिविधियों से मौद्रिक नीति के एक मुख्य उद्देश्य के रूप में कीमत स्थिरता पर एक नवीकृत प्रकाश पड़ा। अनुवर्ती दशकों में, उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में भी कीमत स्थिरता के उद्देश्य को प्राप्त करने की दृष्टि से सुधार दिखाई दिया, जैसा कि उन्नत देशों के मामले में हुआ था। इस बात पर मतैक्य हुआ दिखाई देता है कि राजकोषीय- मौद्रिक समन्वय के लिए इस बात की आवश्यकता है कि कम और स्थिर मुद्रास्फीति सुनिश्चित करने के लिए कार्य किया जाए जो संवृद्धि और स्थिरता में सहायक है। हालांकि, हाल के वैश्विक वित्तीय संकट सहित संकट की अनेक घटनाएं घटित होने को देखते हुए यह स्पष्ट हो गया है कि मौद्रिक नीति के लिए आस्ति कीमतों और ऋण चक्रों को बाह्य गतिविधियों के रूप में लेना संभव नहीं है, जबकि वास्तविकता में, वे नीति के रुख से उल्लेखनीय रूप से प्रभावित होते हैं। इसलिए इस बात को समझने में काफी अधिक अकादमिक दिलचस्पी है कि किस प्रकार समष्टि आर्थिक, राजकोषीय और मौद्रिक नीतियां एक साथ मिल कर वित्तीय असंतुलनों की समस्या को कम कर सकते हैं।

2.3 इस अध्याय का उद्देश्य राजकोषीय- मौद्रिक समन्वय के संबंध में समष्टि आर्थिक सिद्धांत में विकास का पता लगाना है और आर्थिक संवृद्धि तथा मुद्रास्फीति के व्यापक समष्टि आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए इस क्षेत्र में उन्नत और उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के अनुभव की जांच करना है। इस अध्याय में वित्तीय स्थिरता के बढ़ते हुए महत्व को भी प्रस्तुत किया गया है, जिसका विशेष रूप से, संकट के बाद की अवधि के दौरान राजकोषीय मौद्रिक समन्वय से संबंध है। इस अध्याय का चार खंडों में विभाजन किया गया है। खंड I में ट्रिनबर्जन और थील के परंपरागत लक्ष्यों तथा साधनों का वर्णन किया गया है और विशेष रूप से उद्देश्यों की बहुलता, संबद्ध तालमेल, बदलती हुई सापेक्ष नीति क्षमताओं और उद्देश्यों को पूरा करने के लिए स्वतंत्र साधनों की भारी कमी की स्थितियों में राजकोषीय- मौद्रिक समन्वय की चुनौतियों की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है। खंड II में, यूरो क्षेत्र और उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को शामिल करते हुए सभी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अनुभव की गयी चुनौतियों में सामान्य और भिन्न-भिन्न, दोनों पर प्रकाश डालने की दृष्टि से राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय में अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों को शामिल किया गया है। खंड III हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के बाद राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के संदर्भ में उभरने वाले मुद्दों पर केंद्रित है। विशेष रूप से, यह खंड सार्वजनिक वित्त की दोषपूर्णता और वित्तीय क्षेत्र के बीच की नकारात्मक प्रतिसूचना और संक्रामक मुद्दे पर प्रकाश डालता है, जिसे उन्नत देशों, विशेष रूप से यूरो क्षेत्र में प्रत्यक्षतः देखा गया है। इसमें राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकरणों के बीच समन्वय के लिए भी संभव व्यवस्था करने के लिए आगे का रास्ता निर्धारित किया गया है जो फेस टू फेस और आर्म्स लेंग्थ समन्वयन है। खंड IV में, इस रिपोर्ट के शेष अध्यायों में यथाचर्चित और भारतीय परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिक विषयों पर सैद्धांतिक विकास और सभी देशों के अनुभवों, दोनों का विश्लेषण करते हुए अध्याय का समापन किया गया है।

II. समष्टि आर्थिक सिद्धांत

परंपरागत प्रामाणिकताः निभावशील मौद्रिक नीति द्वारा समर्थित राजकोषीय नीति के नेतृत्व में समष्टि आर्थिक प्रबंध

2.4 ऐतिहासिक रूप से, 1930 के वर्षों की महामंदी के संदर्भ में उभर कर आई कुल मांग में कमी का समाधान करने के लिए समष्टि आर्थिक नीति के हस्तक्षेप की आवश्यकता है। चूंकि जहां सरकारों ने करों और व्यय के राजकोषीय नीति साधनों के माध्यम से कुल आर्थिक गतिविधि को विनियमित किया है, वहीं केंद्रीय बैंकों ने अतिरिक्त चलनिधि प्रदान करते हुए ब्याज दरों को प्रभावित करने के माध्यम से संभाव्य रूप से ऐसा कर दिखाया जिसके द्वारा निवेश मांग बढ़ गई जो समष्टि आर्थिक परिणाम को इस्टतम स्तर तक पहुँचाने के लिए नीति-निर्माण की दो भुजाओं के समन्वयन के लिए उठी थीं। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् की महामंदी के अंतर्गत आर्थिक शिथिलता की समस्या को हल करने तथा पुनर्निर्माण आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए राजकोषीय नीति की अग्रणी भूमिका हेतु परंपरागत कीन्स नीति निर्धारण की आवश्यकता हुई। मौद्रिक नीति ने या तो सरकारी घाटों के निधीयन के माध्यम से राजकोषीय नीति को सहारा देते हुए अथवा विकासात्मक खर्च के लिए प्रत्यक्ष वित्त प्रदान करने के माध्यम से उसे सहायता देकर एक द्वितीयक की भूमिका अदा की थी। तदनुसार केंद्रीय बैंकों, जैसे कि यू एस फेडरल रिज़र्व बोर्ड (फेड) का इस अवधि के दौरान मध्यवर्ती लक्ष्य ''सरकारी बांडों के मूल्य को बनाए रखना'' के प्राथमिक उद्देश्य के साथ दीर्घावधि में ब्याज दरों को निम्न स्तर पर रखना था। मूल रूप से, एक सक्रिय राजकोषीय-निष्क्रिय मौद्रिक अंतरापृष्ठ दो तत्वों पर आधारित था। प्रथम, जब ब्याज दरें मौद्रिक उपायों के माध्यम से कम नहीं की जा सकी, चलनिधि जाल के साथ मौजूद उच्च बेरोज़गारी दरों की स्थिति में मौद्रिक नीति प्रभावोत्पादकता का कम होना दृष्टिगत हुआ था। द्वितीय, केंद्रीय बैंकों ने भी मौद्रिक नीति के लिए एक द्वितीयक भूमिका स्वीकार कर ली, जिसके अंतर्गत यह माना गया था कि उपभोक्ताओं और फर्मो के व्यय निर्णय आस्तियों पर प्रतिलाभ की तुलना में प्रत्याशाओं द्वारा अधिक प्रभावित हुए।

2.5 1960 के वर्षों में, अल्प ब्याज मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि के साथ मौद्रिक नीति को पुनः कुछ महत्व मिलना शुरू हुआ। पीगू (1943) ने एक चैनल स्थापित किया, अर्थात्, संपत्ति (वेल्थ) चैनल, जिसके द्वारा धन की वास्तविक मात्रा में परिवर्तनों से कुल मांग को प्रभावित किया जा सकता है, भले ही ब्याज-दरें अपरिवर्तित रहती हैं। इसके अलावा, जैसा कि संयुक्त राज्य अमरीका में अनुभव किया गया, सुचारू मांग प्रबंध में राजकोषीय नीति की ''व्यावहारिक और राजनैतिक संभाव्यता'' को आर्थिक गतिविधि और कर समायोजनों में राजनैतिक निष्क्रियता के प्रति सरकारी खर्चों के सुस्त समायोजन के आधार पर संदेह की दृष्टि से देखा जाने लगा। फिर भी नीति उत्तोलक (लीवर) का झुकाव दो

दृष्टियों से राजकोषीय नीति के पक्ष में ही रहा। प्रथम, पूर्ण रोजगार को बढ़ावा देने के राजकोषीय नीति उद्देश्य की तुलना में मौद्रिक नीति का कीमत स्थिरता उद्देश्य कमतर आंका जाना जारी रहा। द्वितीय, नाम मात्र की प्रमात्रा के माध्यम से वास्तविक परिमाण (वास्तविक ब्याज दरें, बेरोज़गारी दरें और वास्तविक राष्ट्रीय आय की संवृद्धि दर) को नियंत्रित करने में सीमित क्षमता के साथ मौद्रिक नीति को, मुद्रा आपूर्ति संवृद्धि को नियंत्रण में रखते हुए तथा भारी उतार-चढ़ाव पर पूर्ण रूप से रोक लगाकर (फ्रीडमैन 1968) कीमत स्थिरता उद्देश्य की पूर्ति के लिए अत्यधिक उपयुक्त पाया गया । यह समझा गया था कि मौद्रिक नीति एक नकारात्मक ढालू चलनिधि वक्र के साथ मुद्रा आपूर्ति संवृद्धि बढ़ा कर केवल अस्थायी रूप से ही ब्याज दरें घटा सकती है। एक समयान्तराल के बाद ब्याज दरें न केवल उच्चतर स्तरों पर लौटेंगी क्योंकि बढ़ते हुए आय-स्तरों से चलनिधि मांग में बढ़ोतरी होगी, बल्कि और भी बढ़ेंगी जो इस बात को दर्शाएगी कि बढ़ते हुए कीमत स्तर के कारण मुद्रा आपूर्ति की वास्तविक मात्रा में कमी होगी। परिणामतः बढ़ती हुई कीमतों की प्रत्याशाओं के निर्माण से मुद्रास्फीतिकारी मौद्रिक नीति से दीर्घावधि में सांकेतिक ब्याज दर में वृद्धि होगी। फ्रीडमैन ने यह दलील दी है कि वेतन सहित उत्पादक तत्वों की लागत द्वारा उस समय प्रस्तुत बिक्री कीमतों की तुलना में, मांग में अप्रत्याशित वृद्धि के कारण तेजी से वृद्धि होगी जिससे उच्चतर मौद्रिक संवृद्धि से केवल अस्थाई तौर पर ही उसकी 'वास्तविक' दर से कम पर बेरोजगारी में कमी होगी। सांकेतिक वेतन को बढ़ती हुई कीमतों में समायोजन के साथ वास्तविक वेतन अपने प्रारंभिक स्तरों तक बढ़ जाते हैं और जिनके साथ बेरोजगारी अपनी वास्तविक दर पर लौट आती है। इस प्रकार, मौद्रिक नीति उच्चतर मुद्रास्फीति की कीमत पर केवल अस्थाई तौर पर ही बेरोज़गारी दर को उसकी वास्तविक दर से नीचे घटा सकती है, जब कि दीर्घावधि में तालमेल निष्प्रभावी हो जाता है।

2.6 1970 के वर्षों में विनिमय दर प्रणाली में विकार आ जाने और साथ-साथ ही ओपेक तेल कीमत के झटके से संयुक्त राज्य अमरीका और अन्य अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रास्फीति में तेजी से वृद्धि हो गई और बेरोज़गारी की दर काफी अधिक हो गई थी। यह माना गया था कि इन दो परिवर्तियों के बीच फिलिप्स कर्व ट्रेड ऑफ अधिक समय तक नहीं चला। इन गतिविधियों की पृष्ठभूमि में, मौद्रिक नीति को मौद्रिक लक्ष्य-निर्धारण (मॉनेटरी-टारगेटिंग) के माध्यम से मुद्रास्फीति पर नियंत्रण करने का कार्य सौंपा गया था।

राजकोषीय घाटों के बांड वित्तपोषण की उच्च सीमा के अंतर्गत राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के लिए अनिवार्यताएं, नीति सांधनों की कमी और नियम-आधारित नीति निर्माण

2.7 1980 के प्रारंभिक वर्षों में, सरजेंट और वालेस के 'कुछ अप्रिय मौद्रिक गणितीय सिद्धांत' से आधार मुद्रा के निर्माण और बांडों के जारीकरण के माध्यम से राजकोषीय घाटों के वित्तपोषण के संदर्भ में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का एक नया परिप्रेक्ष्य आया (सरजेंट और वालेस, 1981)। तर्क-वितर्क के तौर पर, यदि सरकार आधार मुद्रा के निर्माण तथा बांडों के जारीकरण के संयोजन के माध्यम से राजकोषीय घाटों के वित्तपोषण का अपना अंतर-कालिक पथ स्वतंत्र रूप से निर्धारित करती है, राजकोषीय घाटे में होने वाली किसी वृद्धि से आधार मुद्रा में संवृद्धि को रोकने के लिए जनता के पास रखे हुए बांडों के वास्तविक स्टॉक में तदनुरूपी वृद्धि आवश्यक हो जाएगी। यदि बांडों पर ब्याज दर अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर की तुलना में उच्चतर होगी तो परिणामतः अर्थव्यवस्था के सापेक्ष बांडों के वास्तविक स्टॉक की उच्च सीमा हो जाएगी, क्योंकि बांडों का वास्तविक स्टॉक अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ेगा। यह देखते हुए कि राजकोषीय घाटे में होने वाली किसी भी वृद्धि का वित्तपोषण आधार मुद्रा में वृद्धि के माध्यम से किया जायगा, दीर्घावधि में, मुद्रास्फीति को नियंत्रण में लाने की मौद्रिक नीति की योग्यता समाप्त हो जाएगी, मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण शासन के अंतर्गत होते हुए भी । इसके अलावा, वर्तमान अवधि के दौरान घाटों का बांडों के माध्यम से वित्तपोषण करने से भविष्य में ब्याज का भार, घाटा और बयाज-दरें बढ़ सकते हैं, जिससे भविष्य में घाटे के मुद्रीकरण का बल मिलेगा।

2.8 टिनबर्जन और थील के परंपरागत लक्ष्य-साधन दृष्टिकोण को विस्तार देते हुए, ब्लाइंडर (1983) ने राजकोषीय मौद्रिक समन्वय के पक्ष में तर्क दिया हैं, क्योंकि, वास्तविकता में, लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपलब्ध स्वतंत्र नीति साधनों की तुलना में लक्ष्यों की संख्या अधिक हो जाती है और राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकरणों के अलग-अलग उद्देश्य हो सकते हैं, परिचालन मॉडल और अर्थव्यवस्था के पूर्वानुमान भी भिन्न हो सकते हैं। विशिष्ट रूप से, एक अर्थव्यवस्था के उद्देश्य (उत्पादन के स्तर, मुद्रास्फीति, उत्पादन में निवेश का अंश, वितरणात्मक/आवंटनीय क्षमता उद्देश्य इत्यादि), उन्हें प्राप्त करने के लिए आवश्यक स्वतंत्र नीति साधनों (कर, सरकारी व्यय और मुद्रा आपूर्ति) की संख्या की तुलना में कई गुना अधिक पाये गये। गेम सैद्धांतिक अध्ययन दर्शाता है कि यदि सरकार (बेरोज़गारी में कमी को लक्ष्य करते हुए) और केंद्रीय बैंक (मुद्रास्फीति में कमी को लक्ष्य करते हुए) अलग-अलग उद्देश्यों

का अनुसरण करते हैं और अन्य प्राधिकरण की अनुक्रिया पर ध्यान दिये बिना स्वतंत्र रूप से समष्टि आर्थिक स्थितियों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं तो नैश संतुलन से राजकोषीय घाटा और ब्याज दरें दोनों में से किसी भी प्राधिकरण द्वारा वांछित समझी जाने वाली दरों से अधिक होंगी (ब्लाइंडर, 1983; नोरधॉस और अन्य, 1994)। व्यवहार में 'सही' नीति मिश्रण के बारे में अनिश्चितता के रहते हुए और समझौते के अभाव के कारण ब्लाइंडर इस पक्ष में था कि चूंकि केंद्रीय बैंक के पास बहुत बड़ी विवेकाधिकार शक्ति होती है, उसे उसका प्रयोग करते हुए सरकार के अल्पावधि प्रतिफलों (कंसीडरेशन्स) के खिलाफ रोक लगाना सुनिश्चित करना चाहिए। उप-इष्टतम नैश संतुलन को टालने के लिए ब्लाइंडर ने आवंटनात्मक प्रतिफलों पर राजकोषीय नियम आधारित स्वतंत्र निर्धारण का पक्ष लिया। केंद्रीय बैंक को मंदी के दौर में, स्फीतिकारी राजकोषीय घाटे को आश्रय देना होगा, किन्तु, एक बार अर्थव्यवस्था के पूर्ण रोज़गार मानक पर लौट आने और मुद्रा निर्माण के स्फीतिकारी परिणामों को टालने के लिए सरकार द्वारा अपने बजट को संतुलित करने के बाद उसे मौद्रिक विस्तार को उलटना होगा।

2.9 संयुक्त राज्य अमरीका और अन्य देशों जैसे कि जर्मनी (उसके एकीकरण के पश्चात्) में राजकोषीय घाटा और उच्च वास्तविक ब्याज दरों की साथ-साथ उपस्थिति की पृष्ठभूमि में (1962-65) की 'कर कटौतियां,' 1971 की 'नई आर्थिक नीति, 1977 का 'कार्टर स्टिमुलस प्लान' और 'रीगन्स सप्लाई साइड पॉलिसीज') और निजी निवेश तथा संमाव्य उत्पादन की दीर्घावधि संवृद्धि। इस पृष्ठभूमि में नोरधॉस ने एक पारदर्शी और नियम-आधारित मौद्रिक नीति रखने का पक्ष लिया है जो एक ऐसी सीमा उपलब्ध कराएगी जिसके भीतर राजकोषीय नीति अपनी उपयोगिता को अधिकतम कर सकेगी। यह दर्शाया गया था कि परिणामी न्यूनतर राजकोषीय घाटे और वास्तविक ब्याज दरों ने दोनों ही नीति प्राधिकरणों की उपयोगिता में सुधार किया और नैश समाधान की तुलना में उच्चतर निवेश का वातावरण तैयार किया, तथापि यह आवश्यक नहीं है कि उससे मुद्रास्फीति अथवा बेरोजगारी पर प्रभाव पड़ा हो। इसके अलावा, चूंकि केंद्रीय बैंकों ने ठोस और विश्वसनीय नियमों की घोषणा के माध्यम से निजी क्षेत्र वेतन और कीमत निर्धारकों के साथ पारस्परिक क्रिया आरंभ कर दी है, एक निम्न मुद्रास्फीति संतुलन स्थापित हो सकता है। एक गतिशील स्थिति के अंतर्गत, राजकोषीय-मौद्रिक नीति मिश्रण में सुधार दर्शाया गया था, यदि सरकार इस प्रत्याशा में राजकोषीय घाटा कम कर देती है कि अल्पावधि में मौद्रिक विस्तार द्वारा परिणामी संकुचनकारी आवेग प्रतिसंतुलित हो जाएगा। तथापि केंद्रीय बैंक अपनी मौद्रिक नीति अनुक्रिया में तब तक के लिए देरी कर सकता है जब तक उसे इस बात का विश्वास न हो जाए कि परिवर्तित राजकोषीय रुख में कोई परिवर्तन नहीं होगा। दूसरी ओर, एक 'परिणामोन्मुख' नीति ढांचे के अंतर्गत, राजकोषीय घाटे में कमी से, पिछली अवधि में राजकोषीय संकुचन की अनुक्रिया में होने वाली आर्थिक गिरावट को प्रतिसंतुलित करने के लिए अगली अवधि (उसी अवधि के बजाय) में ब्याज दरों के कम होने के माध्यम से मौद्रिक अनुक्रिया उत्पन्न होगी।

मौद्रिक नीति के संबंध में राजकोषीय दबावों के नये चैनल

2.10 1990 के वर्षों में एक वैकल्पिक दृश्य के रूप में उभरते हुए, कीमत स्तर के राजकोषीय सिद्धांत की अभिधारणा सामने आई कि कीमत स्तर प्राथमिक रूप से सरकारी कर्ज और राजकोषीय नीति द्वारा निर्धारित होता है, जिसमें मौद्रिक नीति की अप्रत्यक्ष भूमिका होती है (लीपर, 1991; सिम्स, 1994 (वुडफोर्ड 1994)। यह सिद्धांत मुद्रावादी दृष्टिकोण के विरूद्ध है, जो मुद्रा आपूर्ति को कीमत स्तर और मुद्रास्फीति के प्राथमिक निर्धारक तत्व के रूप में मानता है। कीमत स्तर के राजकोषीय सिद्धांत (एफ टी पी एल) के अनुसार, सरकार द्वारा निर्धारित सिक्का-ढलाई मुनाफा लक्ष्यों के आरोपण के अभाव में भी, राजकोषीय नीति कीमत स्तर कों नियंत्रित करने में केंद्रीय बैंक को बाध्य कर सकती है। एक संतुलन स्थिति के रूप में सरकार के अंतर-कालिक बजट दबाव के साथ, सरकार के भावी प्राथमिक शेष के दिये गये अनुक्रम की वर्तमान कीमत के साथ बांडों के सांकेतिक स्टॉक के वास्तविक मूल्य के समीकरण के लिए कीमत स्तर को अंतर्जात रूप से समायोजित करना होगा। बीटर (2000) ने यह दलील दी है कि कीमत स्तर के राजकोषीय सिद्धांत के सामान्य कीमत स्तर का विवाद सार्वजनिक कर्ज पुनर्मूल्यांकन तत्व की भूमिका का निर्वाह कर रहा है जो विरोधाभासों और अनियमितताओं को जन्म दे रहा है। बाद में एफ.टी. पी एल प्रस्तावकों ने स्पष्ट किया कि उक्त सिद्धांत ने अंतर-कालिक बजट दबाव को एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में माना है और आवश्यक नहीं है कि वह कीमत स्तर को निर्धारित करने वाला एक मात्र तत्व हो। उदाहरण के लिए, वुडफोर्ड (2003) ने बताया कि एक ब्याज दर बंधन के अंतर्गत मुद्रा और कीमतें एक साथ चलती है। दूसरों ने इस बात पर जोर दिया है कि 'परंपरागत' एफ टी पी एल सिद्धांत में राजकोषीय नीति विनिर्देश का मुद्रा और कीमत स्तर दोनों के व्यवहार के लिए महत्व है और वे संतुलन में एक साथ चलते हैं (गॉर्डन और लीपर, 2005)। तथापि प्रायोगिक अध्ययन में, 1960 से संयुक्त राज्य अमरीका के लिए धारित एफ टी पी एल सिद्धांत के निष्कर्ष स्वरूप कॉक्रेन (1998) ने मिश्रित परिणाम दर्शाये हैं, जबकि केन्जोनेरी और अन्य (2001)

ने युद्धोपरांत यू एस आंकड़ों के आधार पर यह संकेत दिया है कि राजकोषीय नीति नहीं, बल्कि मौद्रिक नीति कीमत स्तर का निर्धारण करती है। फिर भी, एफ टी पी एल के अंतर्गत कीमत स्तर पर राजकोषीय नीति के प्रभाव को मान्यता देते हुए इस बात का समर्थन किया गया है कि मुद्रास्फीति को, जिसे अब तक मौद्रिक समस्या के रूप में माना गया था, नियंत्रित करने के लिए बृहत्त राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय की आवश्यकता है।

2.11 राजकोषीय नीति के अन्य चैनल जो मौद्रिक नीति के संचालन को नियंत्रित करते हैं उनमें ब्याज दरों पर राजकोषीय घाटे का प्रभाव और ब्याज स्प्रेड्स, विशेष रूप से, उभरते बाजारों के लिए, शामिल हैं । जहाँ परंपरागत सिद्धांत का तर्क यह है कि उच्चतर राजकोषीय घाटे मध्यवर्ती और दीर्घावधि ब्याज दरें बढ़ाते हैं, प्रायोगिक अध्ययन से मिश्रित परिणाम सामने आये हैं। कुछ अध्ययनों ने कंट्री प्रीमीयम्स पर राजकोषीय परिवर्तियों का प्रभाव स्थापित किया है, जब कि अन्य ने दर्शाया है कि राजकोषीय नीति विनिमय दरों पर अपने प्रभाव के माध्यम से मौद्रिक नीति को नियंत्रित कर सकती है। एक उच्च पूंजी-गतिशीलता और लचीली विनिमय दर स्थिति के अंतर्गत राजकोषीय स्थिति में विकृति से विनिमय दर में अस्थायी वृद्धि हो सकती है। इसके विपरीत, निम्न पूंजी-गतिशीलता के अंतर्गत, राजकोषीय विस्तार के कारण उच्चतर आयातों और चालू खाता घाटा बढ़ने से विनिमय दर में कमी हो सकती है। (झोली, 2005)।

खुली अर्थव्यवस्था विस्तार

2.12 खुली अर्थव्यवस्था स्तरों तक विस्तारित, राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय पर साहित्य ने नीति-उपकरणों के परिचालन के कल्याण निहितार्थों में खोज की (कुल उपयोगिता के अनुसार), जिसने एक मौद्रिक संघ में राजकोषीय- मौद्रिक पारस्परिक क्रियाओं के सूक्ष्म प्रतिष्ठानों को भी उपलब्ध कराया है। यूरोपीय मौद्रिक संघ के निर्माण के पश्चात् राजकोषीय नीति की पुनर्परीक्षा शुरू हो गई है, विशेष रूप से जब यह महसूस किया गया था कि जैसे ही घटक सदस्य देशों की मुद्राओं का विलय हो जायगा, मौद्रिक नीति अपना लचीलापन खो देगी। इसलिए स्थिरीकरण औजार के रूप में राजकोषीय नीति की भूमिका के निर्धारण, अंतर्राष्ट्रीय राजकोषीय सहयोग से कल्याण लाभ और इस प्रकार के लाभों का मौद्रिक नीति व्यवस्था के साथ पारस्परिक क्रिया पर जोर दिया जाना अंतरित हो गया। यह मानते हुए कि राजकोषीय नीति सरकारी खर्च और एकता से अलग वस्तुओं के बीच स्थानापन्न की लोच के माध्यम से परिचालित होती है, अध्ययनों से यह पता चला है कि सभी देशों में राजकोषीय नीति सहयोग से सक्रियतावादी राजकोषीय नीति संभाव्य कल्याण लाभ की ओर अग्रसर होगी, बशर्ते मौद्रिक नीति को एकल मौद्रिक व्यवस्था के अंतर्गत सहकारिता के साथ निर्धारित किया गया हो (लोम्बार्डो और सुदरलैंड, 2004) ।

नीति अधिदेश का कीमत स्थिरता से वित्तीय स्थिरता तक विस्तार ।

2.13 1970 के वर्षों में मुद्रास्फीति में भेद्यता (स्पाइक) से पढ़े पाठ से मौद्रिक नीति के मुख्य उद्देश्य के रूप में कीमत स्थिरता पर नये सिरे से जोर दिया जाने लगा। प्रायोगिक विश्लेषण के साथ, जिसमें मुद्रास्फीति और बेरोज़गारी के बीच किसी दीर्घावधि तालमेल का अभाव दर्शाया गया था, नीति का जोर मुद्रास्फीतिकारी चिंताओं का समाधान करने के लिए मौद्रिक नीति के उपयोग पर अंतरित हो गया। उत्पादन के अपने संभाव्य स्तर के आसपास उसे स्थिर रखने के उद्देश्य के साथ कम और स्थिर मुद्रास्फीति को जारी रहते देखा गया था, क्योंकि मौद्रिक नीति ने कुल मांग पर अपने प्रभाव के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से मुद्रास्फीति को प्रभावित किया। तदनुसार, जहाँ कई केंद्रीय बैंकों ने व्यवहार में उत्पादन को स्थिर रखना जारी रखा, उन्होंने इसे केवल कीमत स्थिरता तक ही सीमित रखने के अपने सार्वजनिक अधिदेश के लिए उपयोगी पाया, चूंकि इससे मुद्रास्फीतिकारी मौद्रिक नीति के लिए राजनैतिक दबावों के प्रति उनकी संवेदनशीलता कम हो गई थी। इस प्रकार, मौद्रिक नीति के महत्व प्राप्त करने से कुछ देशों में संस्थागत परिवर्तन हुए जिसमें स्वतंत्र केंद्रीय बैंकों का निर्माण शामिल है। जहां कीमत स्थिरता मौद्रिक नीति का एक मुख्य उद्देश्य रहा है, उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों ने सामान्यतः अनेक उद्देश्य रखे हैं, विशेष तौर पर, जब आम तौर पर उन्हें आर्थिक विकास को बढ़ावा देने की एक मुख्य भूमिका सौंपी गई है। इसके अलावा, उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में, जो अपेक्षाकृत अधिक खुली हैं, विनिमय-दरें प्रायः एक मुख्य नीति मुद्दा बन कर उभरी हैं। अनुभवजन्य साक्ष्य यह सूचित करते हैं कि उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंक ब्याज-दरें मुद्रास्फीति दर में परिवर्तनों अथवा उत्पादन अन्तराल के बजाय विनिमय दरों में परिवर्तनों पर प्रायः अधिक मज़बूती से प्रतिक्रिया व्यक्त करते है (मोहन्ती और क्लाउ, 2004)।

2.14 उन्नत और उभरती हुई-दोनों ही अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रास्फीति लक्ष्य- निर्धारण संरचना की उपयोगिता वाद-विवाद का विषय बनी हुई है। जहाँ यह बात सत्य है कि अनेक मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण अर्थव्यवस्थाएं 1990 के वर्षों में मुद्रास्फीति को नियंत्रित कर सकी थी किन्तु जिन देशों ने मुद्रास्फीति लक्ष्यनिर्धारण नहीं अपनाया था उनका कार्यनिष्पादन भी इस मोर्चे पर कोई बुरा नहीं था।

विरोधाभासी रूप से, 1990 के वर्ष- जो कीमत स्थिरता का दशक था-उसमें भी वित्तीय अस्थिरता की अनेक घटनाएं देखी गई थी, जिससे यह स्पष्ट होता है कि केवल कीमत स्थिरता ही पर्याप्त नहीं है। शेष विश्व में वैश्वीकरण और अर्थव्यवस्थाओं की वित्तीय एकता ने मौद्रिक नीति के लिए नई चुनौतियाँ खड़ी की हैं। पूंजी प्रवाहों में बड़े पैमाने पर गतिशीलता और विनिमय दरों में बदलाव से दैनिक आधार पर मौद्रिक नीति का संचालन प्रभावित होता है। विनिमय दरों में बहुत बड़े एवं आकस्मिक परिवर्तन भी वित्तीय स्थिरता के निहितार्थों को प्रभावित करते हैं। इन परिस्थितियों के अंतर्गत, मौद्रिक प्राधिकरणों के सामने नई चुनौतियां प्रस्तुत करते हुए, वित्तीय स्थिरता संबंधी प्रश्नों के साथ मौद्रिक नीति का कार्यक्षेत्र मुद्रास्फीति और संवृद्धि के बीच पंरपरागत तालमेल से परे चला जाता है। इन गतिविधियों से इस वाद-विवाद को भी हवा मिली है कि मुद्रास्फीति किस प्रकार वित्तीय स्थिरता में योगदान दे सकती है। जहाँ कीमत स्थिरता का होना वित्तीय स्थिरता के लिए आवश्यक माना गया है, इस बात पर मतैक्य नहीं है कि क्या कीमत स्थिरता वित्तीय स्थिरता की गारंटी के लिए अपने आप में पर्याप्त होगी (कुकिरमैन, 1992, गैमीर और अन्य, 2011; आइसिंग, 2003, मिशकिन, 1996, शेवार्ज, 1995) । एक दृष्टिकोण यह है कि केंद्रीय बैंकों को केवल कीमत स्थिरता पर ही ध्यान केंद्रित करना चाहिए, क्योंकि वित्तीय अस्थिरता के संभाव्य स्त्रोतों का पता लगाना कठिन है। ऐसी धारणा है कि आस्ति कीमत घट-बढ़ की प्रत्याशित पहचान करना कठिन है और भले ही उनकी पहचान हो सकती हो, यह वाद-विवाद का विषय है कि क्या मौद्रिक नीति इन बुलबुलों में छेद कर सकती है (बीन 2003, बर्नेन्क; 2003; बर्नेन्क और गर्टर; 2001; फिलार्डो, 2004)। एक दूसरा दृष्टिकोण इस पक्ष में है कि मौद्रिक नीति को अतिसक्रिय रूप से कड़ा किया जाए और प्रारंभी वित्तीय असंतुलनों की पहचान के लिए केंद्रीय बैंकों द्वारा ऋण और संकलित मौद्रिक राशियों जैसे विभिन्न संकेतकों की निगरानी की जाए (बोरिओ और लों 2002, सीचेत्ती और अन्य 2000, क्रोकेट, 2001)। आम तौर पर, मौद्रिक नीति की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए वित्तीय स्थिरता के संदर्भ में प्रभावी विनियम और वित्तीय संस्थाओं के पर्यवेक्षण को अधिक महत्वपूर्ण समझा गया है।

III. राजकोषीय- मौद्रिक समन्वय: अंतर्राष्ट्रीय अनुभव

2.15 विकसित होते हुए समष्टि आर्थिक सिद्धांत से पूर्ण राजकोषीय प्रभुत्व से मौद्रिक प्रभुत्व तक सातत्यक विस्तारित राजकोषीय-मौद्रिक अंतरापृष्ठ में अन्तर्निहित अनेक दुविधाएं सामने लाई गई हैं और वे भी इस सीमा तक कि उनका विस्तार 1990 के वर्षों में सभी देशों में सुस्पष्ट था । हालांकि, हाल के वर्षों में क्रमशः नीति व्यवस्था में या तो राजकोषीय प्रभुत्व की ज्यादतियां अथवा पूर्ण मौद्रिक स्वतंत्रता परिलक्षित होना बंद हो गया है। जैसी कि 2001 में आर्थिक मंदी और हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के प्रति नीति अनुक्रियाओं द्वारा परिपुष्टि हुई है, राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय ऐसे अवसरों पर महत्वपूर्ण समझा गया है जब दोनों नीतियों में से किसी भी नीति के प्रभाव से अनिश्चितता का वातावरण छा जाता है अथवा जब परंपरागत नीति-निर्माण की सीमाओं तक पहुँच हो जाती है। जहाँ सभी देशों में नीति व्यवस्थाओं के विकल्प से विशिष्ट संस्थागत इतिहास परिलक्षित होते हैं, किसी भी व्यवस्था की प्रभावोत्पादकता राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय की सीमाओं पर निर्भर करती है। जिस सीमा तक राजकोषीय और मौद्रिक नीतियां मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के प्रति अनुक्रिया करती हैं तथा जिस सीमा तक नीति-निर्माता अपनी नीतियों को समन्वित करते हैं, उसका इन नीतियों की प्रभावोत्पादकता के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ होता है। समन्वय के अभाव में, मौद्रिक और राजकोषीय प्राधिकारियों द्वारा लिये जाने वाले स्वतंत्र निर्णयों का परिणाम या तो प्रयासों के द्विगुणन में होता है अथवा जब वे अपने उपकरणों को विपरीत दिशा में निर्धारित कर रहे होते हैं, नकारात्मक बाह्यताएं उभर सकती हैं। इस प्रकार, यह अपेक्षा की जाती है कि राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय से सामान्य तौर पर कल्याण में सुधार होगा, जैसा कि 1990 के वर्षों से बृहत नियंत्रण के चरण में परिलक्षित हुआ था। नीति-निर्माताओं के बीच समन्वय विभिन्न पद्धतियों के माध्यम से होता है, अर्थात् (i) सूचना का आदान-प्रदान, (ii) अन्य नीति-निर्माता के संभावित व्यवहार के भाव के प्रति पारस्परिक अभिस्वीकृति, (iii) नीति-निर्माताओं के बीच संयुक्त रूप से निर्णय लिया जाना (पूर्ण सहयोग, अर्थात् साँठ-गाँठ); (iv) दो नीति-निर्माताओं में से एक को नेतृत्व प्रदान करते हुए और दूसरे को अनुयायी मानते हुए दोनों के बीच आगे बढ़ने के एक अनुक्रम पर सहमति। इस खंड में पिछले वर्षों में चयनित उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का पता लगाया गया है।

उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में नीति समन्वय

2.16 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में, द्वितीय विश्व युद्ध के तुरंत बाद की अवधि के दौरान समष्टि आर्थिक स्थिरीकरण के एक औजार के रूप में राजकोषीय नीति का प्रभुत्व रहा, जबकि उसमें मौद्रिक नीति की भूमिका समर्थक के रूप में थी। 1970 के वर्षों के दौरान मुद्रास्फीतिकारी दबावों के बढ़ने के कारण उन्नत अर्थव्यवस्थाओं

में मौद्रिक नीति को प्रधानता दी जाने लगी। विवेकाधीन उपायों के माध्यम से अल्पावधि में समष्टि आर्थिक स्थिरीकरण के कार्य को हाथ में लेने में राजकोषीय नीति की सीमाएं भी सामने आ गई क्योंकि वैधानिक प्रक्रियाओं में निहित जड़त्व के कारण राजकोषीय नीति के वे विवेकाधीन घटक प्राप्त नहीं हुए जिनसे कारोबार चक्र फ्रीक्वेंसियों पर रणनीतिक रूप से मौद्रिक नीति कार्रवाई करते हुए स्थिति को नियंत्रित किया जा सके। इसलिए वास्तविक प्रतिचक्रीयता को 'एक्सीडेंटल कीन्सीयनिज्म होने के रूप में नोट किया गया, जैसे कि 1982 में यू एस में कर कटौतियां। कारोबार चक्र फीक्वेंसियों पर समष्टि आर्थिक झटकों के साथ स्वचालित स्टेबिलाइज़र्स की पारस्परिक क्रिया की बृहत संभावना के साथ, राजकोषीय नीति के इस घटक के साथ मौद्रिक नीति के समन्वय को नाजुक समझा गया था। तदनुसार, कर दरों, बेरोजगारी लाभ और अन्य पात्रताओं के संबंध में विधानों की मौद्रिक नीति के अनुसार रणनीतिक सेटिंग किये जाने हेतु राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय आवश्यक हो गया। संयुक्त राज्य अमरीका के लिए, तर्कसंगत रूप से आक्रामक मौद्रिक नीति के मामले को बल मिला क्योंकि वहाँ स्वचालित स्टेबिलाइज़र्स कमज़ोर पाये गये थे।

संयुक्त राज्य अमरीका

2.17 1930 के वर्षों की महामंदी से ही यू एस में आर्थिक नीति निर्माण में सरकार और फेडरल रिज़र्व बोर्ड राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के एक ऐसे मिश्रण का पता लगाने में लगे हुए हैं जो आर्थिक संवृद्धि को बनाए रखेगा और कीमतों को स्थिर करेगा। युद्ध के बाद, शुरु की अवधि के दौरान संवृद्धि और रोज़गार पर बल दिया गया जो 1970 के वर्षों तक जारी रहा। किन्तु, यू एस सरकार ने मुद्रास्फीति पर अधिक ध्यान देना शुरु कर दिया जिसके अंतर्गत 1970 के वर्षों के उत्तरार्ध से मौद्रिक नीति को मुद्रास्फीति नियंत्रण का उत्तरदायित्व सौंपा गया।

1979-87 (वॉल्कर अवधि) के दौरान बृहत मौद्रिक स्वतंत्रता

2.18 मुद्रास्फीति को घटाने के लिए आक्रामक मौद्रिक नीति उपायों का प्रयोग करने तथा उच्चतर बेरोजगारी स्वीकार करने की बृहत् तत्परता की पृष्ठभूमि में स्टैगफ्लैशन के बीच फेड ने 1979 में अपनी स्वतंत्रता का पुनः दावा किया। इस अवधि के दौरान फेड की सफल अवस्फीति नीति को देखते हुए एक दृष्टिकोण उभर कर आया कि एक स्वतंत्र केंन्द्रीय बैंक द्वारा सही समय पर कड़ा रुख अपनाए जाने पर, उत्पादन और रोज़गार में हानि की बहुत कम लागत पर समर्थक राजकोषीय नीति के बिना भी मुद्रास्फीति को स्थायी रूप से घटाने के लिए उसकी विश्वसनीयता को बढ़ाया जा सकता है। तद्नुसार, मौद्रिक नीति अन्य स्थानों की तुलना में यू एस में अधिक सुदृढ़ अवस्फीतिकारी बन गई जिसके अंतर्गत फेडरल निधियों की दर 1980 तक 19 प्रतिशत तक बढ़ गई थी। कुछ शुरूआती राजकोषीय अवरोधों के बावजूद राजकोषीय नीति इकनॉमिक रीकवरी टैक्स एक्ट, 1981 के अंतर्गत एक प्रोत्साहन पद्धति में परिवर्तित हो गई थी।

2.19 1980 के वर्षों के दौरान, फेड ने भी परिचालन लक्ष्य के रूप में फेडरल निधि दर रखने की प्रणाली से मौद्रिक लक्ष्यनिर्धारण ढांचे पर अंतरित होने की घोषणा की। नीति दरें निर्धारित करने में फेड के सीमित लचीलेपन के कारण प्रायः ये दरें स्फीतिकारी अपेक्षाओं को स्थिर करने के लिए आवश्यक स्तरों की तुलना में कम पड़ जाती थी और मुद्रा आपूर्ति संवृद्धि आवश्यकता से अधिक हो जाती थी। मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण ढांचे के अंतर्गत उधार ली गई आरक्षित निधियों को प्रत्यक्षतः लक्ष्य किया जाता था ताकि मुद्रा संवृद्धि को बेहतर विधि से स्थिर किया जा सके और मौद्रिक नीति को अधिक प्रभावी बनाया जा सकें।[1] 1980 के वर्षों में मौद्रिक नीति के निर्णय आर्थिक गतिविधि, मुद्रास्फीति, विदेशी मुद्रा गतिविधियों और वित्तीय बाजार स्थितियों पर सूचना के एक व्यापक सेट से अधिक से अधिक प्रभावित होती थी, यद्यपि मौद्रिक नीति का मुद्रास्फीतिकारी और प्रतिचक्रीय प्रकृति का बने रहना जारी रहा।

1987 से मौद्रिक और राजकोषीय नीति

2.20 ग्रीनस्पैन अवधि (1987-2006) के दौरान फेड ने मुद्रास्फीति की दर कम होने की वजह से अपने को अकेला रखने की भूमिका पुनः लागू की, चूंकि यह समझा गया था कि मौद्रिक नीति विरल/मंद मंदियों के साथ कम मुद्रास्फीति और बेरोजगारी की दर को जारी रख सकेगी। विस्तारकारी राजकोषीय नीति और उच्च ब्याज दरों के बीच में कर्ज चुकौती की बढ़ती हुई लागत से 1980 के वर्षों के मध्य में राजकोषीय घाटे में भारी वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप, यह निर्णय लिया गया कि बेलेंस्ड बजट एण्ड इमरजेंसी डेफीसिट कंट्रोल एक्ट ऑफ 1985 और बेलेंस्ड बजट एण्ड इमरजेंसी डेफीसिट

1 इसलिए, संघीय खुला बाजार समिति ने एम $_1$ और एम $_2$ में अपेक्षित संवृद्धि के आधार पर आरक्षित निधि उपायों को लक्ष्य करना शुरू कर दिया। किन्तु मुद्रा और आर्थिक क्रियाकलाप के बीच स्थिर संबंध न होने के कारण संघीय खुला बाजार समिति को 1983 में आरक्षित निधि स्थितियों के मार्गदर्शन के लिए क्रियाविधियों में आशोधन करना पड़ा ।

रीएफर्मेशन एक्ट, 1987 के अंतर्गत राजकोषीय नियम लागू किये जाएं, जिससे 1988 में एक सकारात्मक प्राथमिक ढांचागत संतुलन की स्थापना हुई। ऑम्नीबस बजट रीकन्साइलिएशन एक्ट ऑफ 1993 के अधिनियमन से राजकोषीय समेकन प्रक्रिया मजबूत हुई और 1994 में समग्र बजटीय संतुलन सकारात्मक हो गया।

2.21 फेड ने 1991-92 के दौरान एक संक्षिप्त मंदी के दौर के प्रारंभ तक अपना कठोर मौद्रिक नीति रुख जारी रखा। तद्नुसार, 1992 के अंत में अभीष्ट फेडरल निधि दर घटाकर 3 प्रतिशत करते हुए मौद्रिक नीति को शिथिल किया गया जिसके अंतर्गत मुद्रास्फीति उसी स्तर पर थी, अंतर्निहित वास्तविक फेडरल निधि दर शून्य के आसपास थी। जबकि मुद्रास्फीति दर 2 और 2.5 प्रतिशत के बीच चल रही थी, 1995 के शुरू में वास्तविक नीति दर सकारात्मक हो गई, और फेडरल निधि दर मजबूत होकर 6 प्रतिशत हो गई। मौद्रिक नीति का यह रुख आम तौर पर 2000 तक, हालांकि थोड़े-बहुत समायोजनों के साथ बना रहा। चूंकि बजट घाटे अधिशेष मोड पर अंतरित हो गये थे, सरकार ने 2001 में सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में गिरावट तथा यू एस अर्थव्यवस्था में एक संक्षिप्त मंदी के दौर को देखते हुए कुल मांग को प्रोत्साहित करने के लिए आयकर रियायतों की घोषणा की। फेडरल निधि दर में सार्थक कमी होने से भी विस्तारकारी राजकोषीय पहल को समर्थन मिला। इस दौर के दौरान मौद्रिक नीति परिचालन क्रियाविधि में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। वित्तीय नवोन्मेष के साथ, चूंकि गैर उधार ली गई आरक्षित निधियों और मौद्रिक नीति उद्देश्य के बीच संबंध कमजोर पड़ गया था, फेड उधार ली गई आरक्षित निधियों के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से फेडरल निधि दर के लक्ष्य निर्धारण पर अंतरित हो गया। इसके अलावा चूंकि उधार ली गई आरक्षित निधियों और फेडरल निधि दर के बीच सबंध अस्थिर हो गये थे, फेड ने प्रत्यक्ष रूप से फेडरल निधि दर लक्ष्य निर्धारण की ओर रुख कर लिया।

2.22 2000 के वर्षों के पूर्वार्ध के दौरान, मौद्रिक ओर राजकोषीय, दोनों ही नीतियां विस्तारकारी रही। राजकोषीय अस्थिरता के बारे में चिंताओं के बावजूद समष्टि आर्थिक स्थितियां अगस्त 2007 में संकट के प्रारंभ तक समंजक नीति रुख में किसी प्रकार के उलटाव की आवश्यकता के बिना भी सहायक बनी रही। दिसम्बर 2007 से मंदी के प्रारंभ तथा सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स कॅलैप्स के बाद संकुचन के लक्षण स्पष्ट हो चुके थे इसलिए जब बेरोजगारी की दर दुगुनी यानी 10 प्रतिशत हो गई थी, जिसे बाद में 9 प्रतिशत पर स्थिर किया गया था (बेरोज़गारी की गैर-त्वरणशील स्फीति दर अर्थात् 5.75 प्रतिशत से काफी अधिक) और मुद्रास्फीति की दरें गिरने लगी थी, परम्परागत और गैर-परम्परागत, दोनों ही प्रकार के मुद्रा सुलभता उपायों का इस्तेमाल आवश्यक हो गया था (परंपरागत के अंतर्गत, उत्तर-2008 तक फेडरल निधि लक्ष्य दर शून्य प्रतिशत तक नीचे ले आई गई थी) जबकि (गैर -परंपरागत उपायों के अंतर्गत 2009 के दौरान और 2010 के प्रारंभ में दीर्घावधि खजाना प्रतिभूतियों की सार्थक खरीद और उसके बाद चूंकि बंधक आधारित प्रतिभूतियां परिपक्व हो गई थी/उनका मोचन (रीडीम) हो गया था, फेड के तुलन पत्र को कम होने से बचाने के लिए फेड की पुनर्निवेश नीति की दूसरी बार मात्रात्मक सुलभता तथा आशोधन द्वारा मुद्रा सुलभता) वास्तविक मौद्रिक उपायों के पूरक के रूप में, निवेशक के प्रत्यक्ष ज्ञान को सुनियोजित आकार देने के लिए फेड की सम्प्रेषण नीति बनाई गई थी। इस प्रकार की आस्ति खरीद को, ऋण की लागत कम करते हुए कुल मांग को बढ़ाने, प्रतिभूतियों की बढ़ती हुई कीमतों के साथ घरेलू संपत्ति बढ़ाने और डॉलर के हास के माध्यम से निर्यात मांग बढ़ाने की ओर मोड़ा गया था (येलेन, 2011)। मौद्रिक सुलभता के अनुरूप, संयुक्त राज्य अमरीका ने 2008 की शुरूआत से राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों को सक्रिय किया। यह सक्रियता इस सीमा तक थी कि बजट नियमों में छूट देते हुए त्वरित और अधिक स्थिर राजकोषीय सक्रियतावाद सुलभ कराया गया था जिससे प्रतिचक्रीय राजकोषीय हस्तक्षेप आसान हो गया था (ऑरबेक और अन्य, 2010) ।

2.23 जैसा कि पहले संकेत किया गया, यू एस सरकार ने 2000 के वर्षों के पूर्वार्ध में विस्तारकारी राजकोषीय नीति अपनायी। जिस समय तक वैश्विक वित्तीय संकट का प्रभाव पड़ना शुरू हुआ, स्वास्थ्य सुरक्षा के लिए एक नये पात्रता कार्यक्रम पर भारी कर कटौती तथा सुरक्षा संबंधी क्षेत्रों पर भारी खर्च के कारण राजकोषीय घाटा पहले से ही बहुत उच्च स्तर पर पहुँच चुका था। इसलिए, राजकोषीय घाटा स्थिति में विकृति वित्तीय क्षेत्र में प्रेरित गहन मंदी के प्रति नीति अनुक्रिया में ही परिलक्षित नहीं हुई बल्कि वह संकट पूर्व अवधि में अपनाये गये विस्तारकारी राजकोषीय उपायों के संचयी प्रभाव में भी देखी गयी थी। संकट के दौरान यू एस सरकार द्वारा उपलब्ध कराया गया राजकोषीय नीति प्रोत्साहन प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में सबसे बड़ा समझा गया था और उसका लक्ष्य बुनियादी सुविधा निवेश, कर रियायतों और बेरोजगारी लाभों के माध्यम से समग्र मांग को बढ़ाना था। 2009 में सकल देशी उत्पाद संवृद्धि में राजकोषीय उपायों का योगदान 2 प्रतिशत अंक के लगभग था और 2010 में वह एक प्रतिशत अंक था (लिप्सकी, 2011)। इसके अलावा, लेहमैन ब्रदर्स की असफलता के साथ, यह महसूस किया गया था कि फेड द्वारा किये गये चलनिधि प्रावधान वित्तीय प्रणाली को समर्थन देने के लिए पर्याप्त नहीं होंगे और, इसलिए यू एस राजकोष से समर्थन की आवश्यकता

होगी। विशेष रूप से, चलनिधि निधीयन के अभाव, अंतर्निहित ऋणों के मूल्य के बारे में चिंताओं, और प्रतिभूतिकरण प्रक्रिया की अखंडता से प्रतिभूतिकरण बाजारों की कार्यप्रणाली में बाधा उपस्थित हुई। इन बाजारों को पुनर्जीवित करने के लिए, फेड ने मीयादी आस्ति समर्थित प्रतिभूति ऋण सुविधा स्थापित करने के लिए राजकोष के साथ कार्य किया। इस सुविधा के अंतर्गत जब यू एस राजकोष ने ऋण जोखिम माना तो फेड ने चलनिधि निधीयन की आपूर्ति की। इसलिए, वैश्विक वित्तीय और आर्थिक संकट के दौरान यह देखा गया कि फेड द्वारा अपने तुलन पत्र पर हानि का जोखिम समझे जाने पर प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण फर्मों को मजबूत करने के लिए और राजकोष को सुस्पष्ट समर्थन तथा उन जोखिमों की अभिस्वीकृति देते हुए उन्हें उधार राशियां उपलब्ध करा कर चलनिधि ओर वित्तीय स्थिरता संबंधी चिंताओं को दूर करने के लिए राजकोषीय और मौद्रिक नीतियां आगे-पीछे कार्य करती हैं । नीयर-ज़ीरो पॉलिसी ब्याज दरों की सीमाओं और मौद्रिक नीति की प्रभावोत्पादकता के बारे में अनिश्चितता को समझते हुए यू एस सरकार ने 2010 से समर्थक राजकोषीय नीति रुख बनाये रखना जारी रखा है। दीर्घावधि में बजट घाटों को कम करने के लिए अपनाये गये सुदृढ़ प्रयासों के साथ शीघ्रावधि में संवृद्धि अनुकूल नीतियों को 'जोड़ने' के लिए चाहे गये राजकोषीय कार्यक्रम को मौद्रिक नीति के लिए 'एक मूल्यवान सम्पूरक' के रूप में माना गया था (येलेन, 2011) । सितंबर 2012 में फेड ने अपनी योजना की घोषणा की कि वह सरकार प्रायोजित उद्यमों द्वारा गारंटीकृत 40 बिलियन अमरीकी डॉलर मूल्य की बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों की प्रतिमाह खरीद करेगा। पिछले कार्यक्रम के अंतर्गत खरीद में शामिल की गई खजाना प्रतिभूतियों के साथ, फेड ने घोषणा की कि वह प्रति माह 85 बिलियन अमरीकी डॉलर मूल्य की दीर्घावधि प्रतिभूतियां खरीदेगा। इसका उद्देश्य यह है कि बंधक दरों सहित दीर्घावधि ब्याज-दरों के दबाव को और कम किया जाए ताकि आर्थिक सुधार को प्रोत्साहन दिया जा सके। यद्यपि फेड, बर्नेक (2012) के अनुसार, उन राजकोषीय चुनौतियों को मानता है जिन्हें यू एस अर्थव्यवस्था झेल रही है, आर्थिक सुधार के लिए मौद्रिक नीति का सहायक समर्थन यदि नहीं मिलता तो इन राजकोषीय लक्ष्यों को प्राप्त करना और भी कठिन होता।

2.24 हाल के वर्षों में यू एस राजकोषीय स्थिति में तीव्र गिरावट भी समस्याग्रस्त आस्ति राहत कार्यक्रम (टी ए आर पी) के अंतर्गत बेलआउट्स के लिए आंशिक रूप से जिम्मेवार है, और आंशिक रूप से राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेज 2009 और 2010 के लिए जिम्मेवार है, वैसे ही यू एस मंदी के लिए भी जिम्मेवार है जिसने उसे ऐसी स्थिति में धकेल दिया जिसे यू एस राजकोषीय क्लिफ कहा जाता है। राजकोषीय क्लिफ बजट घाटे में भारी कमी की ओर संकेत करते हैं और परिणामस्वरूप यू एस अर्थव्यवस्था में गिरावट होती है, यदि 2013 की शुरूआत में विनिर्दिष्ट कानून स्वतः समाप्त होने दिये जाते हैं अथवा प्रभाव में आते हैं। इन कानूनों में कर राहत की समाप्ति के कारण कर में वृद्धि, बेरोजगारी बीमा का पुनः प्राधिकार देना और जॉब क्रिएशन एक्ट ऑफ 2010 तथा बजट कंट्रोल एक्ट 2011 के अंतर्गत खर्च में कमी (''पृथक्करण'') शामिल हैं। 1 जनवरी 2013 को कर वृद्धि पर एक सौदे पर हस्ताक्षर करते हुए यू एस राजकोषीय क्लिफ को रोक लिया गया था, यद्यपि खर्च में कटौती के संबंध में महत्वपूर्ण नीति अनिश्चितताएं बनी रहती हैं, जिसे सिक्वेस्टर के रूप में जाना जाता है जो दो महीने के लिए आगे बढ़ा दिया गया है। विश्वसनीय मध्यावधि राजकोषीय समेकन योजना अपनाये जाने को संयुक्त राज्य अमरीका में प्राथमिकता दी गई है।

युनाइटेड किंगडम

2.25 एक सीमित देयता इकाई के रूप में मूल रूप से संस्थापित दि बैंक ऑफ इंग्लैंड (बी.ओ.ई.) की स्थापना सरकार के बैंकर और कर्ज प्रबंधक के रूप में हुई थी। बैंक ऑफ इंग्लैंड के राष्ट्रीयकरण पूर्व दौर में सरकार ने अपने पूर्व दिनांकित उधारों के मौद्रिक वित्तपोषण के लिए इसका आश्रय लिया था। 1946 में बैंक ऑफ इंग्लैंड के राष्ट्रीयकरण के साथ, सरकार इसकी मालिक बन गई और बैंक को निर्देश जारी करने की शक्ति ग्रहण की। फिर भी, व्यवहार में, इसके कार्यों की दृष्टि से कोई बहुत बड़ा अंतर नहीं था और इस प्रकार बैंक का कार्य राजकोष बैंकर, परामर्शदाता, एजेंट और कर्ज प्रबंधक के रूप में जारी रहा।

युद्धोपरांत अवधि के दौरान सक्रिय राजकोषीय नीति

2.26 द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की अवधि के दौरान सरकार का एक चिरस्थायी उद्देश्य यह था कि वह विवेकाधीन प्रोत्साहन अथवा स्वचालित स्टैबिलाइज़र्स के परिचालन के माध्यम से राजकोषीय नीति द्वारा निभाई गई प्रतिचक्रीय भूमिका के साथ कुल मांग के उच्च स्तर को बनाए रखे। बहुत बड़े नकारात्मक उत्पादन अंतरालों को रोकने के लिए एक सक्रिय राजकोषीय रणनीति के प्रयोग के साथ, मांग दबाव उभरने शुरू हो गये, परिणामतः 1960 के अंतिम वर्षों में और 1970 के वर्षों की शुरूआत में सकारात्मक उत्पादन अंतराल उभरे और मुद्रास्फीति में तीव्र वृद्धि दिखाई दी (मैक फारलेन और मोरटाइमर- ली, 1994)। भारी मुद्रास्फीतिकारक दबावों के उभरने

के बावजूद, 1970 के शुरूआती वर्षों में ब्रेटन वुड्स के असफल होने तक युनाईटेड किंगडम में सकल मांग प्रबंध में मौद्रिक नीति को केवल एक सीमांत भूमिका सौंपी गई थी। वह मौद्रिक नीति न होकर एक आय नीति थी जो मांग दबावों को नियंत्रित करने के लिए एक वरीयता प्राप्त औजार थी। मांग दबावों के कारण उच्च मुद्रास्फीति की स्थिति बन गई थी एवं भुगतान संतुलन की स्थिति खराब हो गई थी। चूंकि आय नीति से 1974 में मुद्रास्फीतिकारक दवाबों का हल नहीं निकल पाया था, सकल मांग को नियंत्रित करने के लिए मौद्रिक नीति को बृहत महत्व दिया गया था। 1970 और 1980 के शुरूआती वर्षों में उच्च मुद्रास्फीति की पृष्ठभूमि में मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण प्रस्तुत किया गया था जो 1979 में समष्टि आर्थिक रणनीति का अभिन्न अंग बन गया था। फिर भी, मुद्रास्फीतिकारक दबावों को नियंत्रित करने के लिए सीधे नियंत्रण (कीमतें, वेतन और ऋण) तथा राजकोषीय नीति का प्रमुख नीति साधन बने रहना जारी रहा।

मुद्रा संवृद्धि को नियंत्रित करने के लिए एम टी एफ एस (1980) के अन्तर्गत उधार आवश्यकता में कमी करने पर जोर

2.27 नीति विश्वसनीयता पुनः स्थापित करने की दृष्टि से एम3 संवृद्धि तथा मध्यावधि वित्तीय ऋणनीति (एम टी एफ एस) योजना के अंतर्गत सार्वजनिक क्षेत्र उधारों के लिए वार्षिक लक्ष्य की घोषणा करने की प्रथा 1980 में शुरु हुई थी। उधार लेने की आवश्यकता को धीरे धीरे कम करने को मुद्रा संवृद्धि पर रोक लगाने के एक प्रमुख तत्व के रूप में देखा गया था। सरकारी खर्च योजनाओं को नियंत्रित करने में मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण ढांचा सहायक रहा क्योंकि इसमें सार्वजनिक क्षेत्र मुद्रा निर्माण पर एक सीमा अंतर्निहित होती है। इस प्रकार, मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों को समन्वित करने का एक साधन बन गया। 1980-81 में मुद्रा नीति को कठोर बनाने से मुद्रा स्फीति दर को कम करने में सहायता मिली थी जो 1983 के मध्य में 4 प्रतिशत हो गई थी जबकि उससे पूर्व 1980 के शुरू में उसकी दर 22 प्रतिशत थी। इतना होते हुए भी एम3 के लक्ष्य प्राप्त नहीं किये जा सके थे (बर्नेक और अन्य, 2001)। एम3 का लक्ष्य धीरे-धीरे कम महत्वपूर्ण हो गया था, जबकि संकीर्णतर सकल मुद्रा (एम0) में संवृद्धि को मौद्रिक नीति रुख के उपयुक्त संकेतक के रूप में माना गया, जिसे 1986 के यू के बजट में घोषित किया गया था।

2.28 1980 के वर्षों के पूर्वार्ध में सार्वजनिक क्षेत्र असंतुलनों में गिरावट के बावजूद राजकोषीय नीति कुल मिलाकर 1980 के वर्षों के मध्य तक विस्तारकारक बनी रही। 1980 के वर्षों के द्वितीयार्ध के दौरान सरकार राजकोषीय नीति को सार्थक रूप से कठोर बनाने में सफल रही। 1988-तिमाही 3 से 1990-तिमाही 3 तक मौद्रिक नीति के आक्रामक रूप से कठोर होने के बावजूद, मुद्रास्फीति दर सितंबर 1990 तक 10.9 प्रतिशत के चरम स्तर पर पहुँच गई थी, जब यू के अर्थव्यवस्था को अत्यधिक मंदी की मार झेलनी पड़ी थी। बबल-बस्ट चक्र को रोकने के लिए मौद्रिक लक्ष्य अपर्याप्त पाये गये, जिनका बाद में परित्याग कर दिया गया। वास्तव में देखा जाए तो मौद्रिक नीति लक्ष्यों पर बल दिया जाना 1987 में ही बंद हो गया था जब यू के सरकार ने पाउंड स्टर्लिंग को 3-0 ड्यूश मार्क (डी एम) प्रति पाउंड की एक संकीर्ण सीमा में रखना शुरू कर दिया था । एम3 लक्ष्य से औपचारिक रूप से मुक्त होने के बाद, यू के में मौद्रिक नीति का संचालन विनिमय दर उतार-चढ़ावों को स्थिर करने की ओर अधिक किया जाने लगा था। यू के ने 1990 में यूरोपीय विनिमय दर तंत्र (ई आर एम) को अपना लिया जिससे यह अपेक्षा की गई थी कि मौद्रिक नीति को उससे अधिक स्थिरता और पूर्व सूचनीयता प्राप्त होगी।

1990 के वर्षों के दौरान मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण और समष्टि आर्थिक ढांचे में सुधार

2.29 जर्मनी के एकीकरण के लिए बढ़ते हुए दबाव के साथ 1990 के वर्षों की शुरूआत में युरोप में ब्याज दरें बढ़ गई। चूंकि ई आर एम व्यवस्था के अन्तर्गत पाउंड स्टर्लिंग डी एम में अधिकीलित (पैग) हो गया था, यू के के लिए देशी संवृद्धि चिंताओं के कारण कठोर मुद्रा नीति का पालन करना कठिन हो गया था। इसलिए यू.के. सरकार ने सितंबर 1992 में ई आर एम की सदस्यता छोड़ दी और मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण (आइ टी) अपनाने का निर्णय किया। जब कि आइ टी ढांचे में मौद्रिक नीति की बढ़ती हुई जिम्मेवारी अंतर्निहित होती है, अनिश्चित समष्टि आर्थिक घटनाओं से निपटने के लिए, सिद्धांत रूप में भी, उसने अपने लचीलेपन को वापस नहीं लिया। 1997 तक, मौद्रिक और राजकोषीय, दोनों ही नीतियां एच एम राजकोष और बैंक ऑफ इंग्लैंड के साथ परामर्श करके चांसलर ऑफ एक्सचेकर द्वारा निर्धारित की जाती थी। आइ टी व्यवस्था के अंतर्गत, 1992 और 1997 के बीच यू के अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति व्यापक रूप से स्थिर करने में सफलता प्राप्त हुई किन्तु मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं उच्च रही क्योंकि कीमत स्थिरता के उद्देश्य के साथ राजकोषीय नीति परिचालनों की संभावना का परस्पर विरोध जारी रहा।

2.30 1998 में घोषित किये गये नये समष्टि आर्थिक ढांचे के अंतर्गत चांसलर को मौद्रिक और राजकोषीय, दोनों नीतियों की अंतिम जिम्मेवारी सौंपी गई थी, जबकि परिचालन नियंत्रण एक स्वतंत्र मौद्रिक नीति समिति (एम पी सी) के बीच विभाजित किया

गया था जिसके अंतर्गत मौद्रिक नीति की संपूर्ण जिम्मेवारी सौंपी गई और राजकोष के पास राजकोषीय नीति की जिम्मेवारी रखी गई थी। मौद्रिक नीति की पूर्ण परिचालनगत जिम्मेवारी बैंक ऑफ इंग्लैंड को अंतरित करने के उद्देश्य से बैंक ऑफ इंग्लैंड अधिनियम का अधिनियमन किया गया था, जब कि सरकार ने राजकोष की आरक्षित शक्तियों (सेक्शन 19, बी ओ ई एक्ट, 1998) के अंतर्गत 'अत्यधिक आर्थिक परिस्थितियों' में ही मौद्रिक नीति का परिचालन नियंत्रण अपने पास रखा था। मौद्रिक नीति का परिचालनगत उद्देश्य, अर्थात् मुद्रास्फीति लक्ष्य, हालांकि बैंक ऑफ इंग्लैंड के पास न रह कर सरकार के सीमा-क्षेत्र के अंतर्गत ही रहा। नीति दर निर्णय एक्सचेकर के चांसलर के पास न रह कर बैंक ऑफ इंग्लैंड द्वारा लिये जाने लगे, जैसी कि मई 1997 के पूर्व में प्रथा थी।

2.31 कीमत स्थिरता के प्राथमिक उद्देश्य के अंतर्गत, बैंक ऑफ इंग्लैंड के लिए भी यह अपेक्षित था कि वह संवृद्धि और रोज़गार संबंधी सरकार के अन्य आर्थिक नीति उद्देश्यों को सहायता प्रदान करे। इसका निहितार्थ है कि कीमत स्थिरता को अपने आप में ही एक अंत नहीं समझा गया था बल्कि उसके स्थान पर यह माना गया था कि सरकार के अन्य आर्थिक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए वह आवश्यक है। 1998 में सरकार ने, संवृद्धि और रोज़गार के उच्च एवं स्थिर स्तरों की सुलभता के लिए राजकोषीय नियमों की भी घोषणा की थी। इन नियमों का पालन 'राजकोषीय स्थिरता की संहिता' के मार्गदर्शी सिद्धांतों के अंतर्गत किया जाना था। सरकार की ओर से कर्ज प्रबंध एच एम राजकोष को हस्तांतरित कर दिया गया था, जबकि विनियामक कार्य वित्तीय सेवा प्राधिकरण को सौंपे गये थे। राजकोषीय नीति की सीमाओं को अल्पावधि उपकरण के रूप में मानते हुए फोकस को मध्यावधि और दीर्घावधि उद्देश्यों पर अंतरित कर दिया गया था। सरकार और मौद्रिक नीति समिति (एम पी सी) की भूमिकाओं के बीच एक सुस्पष्ट विभेदीकरण भी कर दिया गया था। इस प्रकार की व्यवस्था का सार तत्व यह सुनिचित करना था कि मौद्रिक नीति निर्णय अल्पावधि राजनैतिक सोच-विचार से प्रभावित न होने पाए और इसलिए वे अधिक विश्वसनीय समझे जाएं।

2.32 नये ढांचे के बारे में एक संभाव्य चिंता राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच प्रभावी समन्वय सुनिश्चित करने में उसकी क्षमता के बारे में थी (बीटर और सिबर्ट, 2001)। किन्तु, संभाव्य समन्वय समस्याओं का समाधान तीन प्रमुख तरीकों से किया गया। प्रथम, समन्वय प्राप्त कर लिया गया था क्योंकि सरकार को मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के लिए उद्देश्य निर्धारित करने थे। एम पी सी ने अपने निर्णय सरकारी पूर्वानुमानों के आधार पर किये थे जब कि जब तक एम पी सी का प्रतिक्रिया कार्य मालूम पड़े चांसलर नीति मिश्रण का निर्णय ले सकता है। (बैंक ऑफ इंग्लैंड)। द्वितीय, नीति की दोनों भुजाओं के उद्देश्य अधिक सुस्पष्ट बनाये गये थे और अधिक पारदर्शी कार्य विधियों के अधीन थे। तृतीय, एच एम राजकोष की ओर से एम पी सी बैठकों में उपस्थित प्रतिनिधि द्वारा मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच समन्वय भी जुड़ गया था। उक्त प्रतिनिधि ने राजकोषीय नीति के संबंध में सूचना उपलब्ध कराई थी (बजट को शामिल करते हुए) । एक स्वतंत्र एम पी सी को कीमत स्थिरता की जिम्मेवारी सौंपने का एक परिणाम यह हुआ कि सक्रियतावादी राजकोषीय नीति के प्रयोग को प्रभावोत्पादकता के साथ निकाल दिया गया था।

2000 में डॉट-कॉम बुलबुले का फूटना: विस्तारकारक मौद्रिक और राजकोषीय नीतियां

2.33 मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण (आई टी) अपनाये जाने के साथ ही 1990 के वर्षों के दौरान मुद्रास्फीति दर कुल मिलाकर नियंत्रण में रही और संवृद्धि प्रवृत्ति से अधिक रही जो 1990 के वर्षों के आई टी दौर के दौरान औसतन 3 प्रतिशत के आसपास थी। सामान्य रूप से यू के में मुद्रास्फीतिकारक प्रत्याशाएं काफी अधिक स्थिर रही, जिससे मौद्रिक नीति में जनता का भरोसा प्रतिबिंबित हुआ। आई टी ढांचे के अंतर्गत, राजकोषीय नीति सैद्धांतिक रूप से, अल्पावधि उद्देश्यों के लिए उपयोग में नहीं लाई जा सकती है। जहाँ मौद्रिक नीति के रुख में कोई बहुत बड़ा अंतर नहीं आया था (1990 के वर्षों के आखीर में मुद्रास्फीतिकारक को छोड़कर), राजकोषीय नीति सार्थक रूप से कठोर बनी रही। किन्तु, 2001 में मौद्रिक और राजकोषीय, दोनों ही नीतियों को संवृद्धि चिंताओं का समाधान करने के लिए शिथिल करना पड़ा था। ये चिंताए डॉट-कॉम बुलबुले के फूटने के साथ उत्पन्न हुई थी। 2000 के वर्षों के मध्य तक राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों ही नीतियां मुद्रास्फीतिकारक रही और इस बात के कोई प्रमाण नहीं मिलते हैं कि मौद्रिक नीति ने मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय रुख के प्रभाव को प्रतिसंतुलित करने का प्रयास किया हो (कमेटी ऑन इकॉनॉमिक अफेयर्स, हाउस ऑफ लॉर्ड्स, 2004)। इस अवधि के दौरान अपनायी गई मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय नीति का प्रभाव केवल चक्रीय तत्वों पर ही नहीं पड़ा बल्कि सार्वजनिक बुनियादी सुविधाओं और अन्य सेवाओं में सुधार पर किये जाने वाले खर्च में योजनाबद्ध वृद्धि में भी प्रतिबिंबित हुआ था।

2005-06 से 2007-08 तक राजकोषीय कठोरता, किन्तु संकट के दौरान उलटाव

2.34 मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण व्यवस्था की विश्वसनीयता को सहारा देने के लिए सरकार ने 2003 में अपनी वचनबद्धता को दोहराया कि वह निवल सार्वजनिक कर्ज को सकल देशी उत्पाद के 40 प्रतिशत से नीचे बनाए रखेगी, जब कि धारणीय निवेश दीर्घावधि प्रतिफलों द्वारा निर्धारित सीमाओं के भीतर उचित रूप से राजकोषीय विवेक के नियंत्रण में रहे, जैसे कि जनसांख्यिकीय और कर्ज धारणीयता। पण्यों की बढ़ती हुई कीमतों के मुद्रास्फीतिकारक प्रभाव को स्वीकार करते हुए 2005-06 से 2007-08 के दौरान प्रस्तुत किये गये सरकारी बजटों में राजकोषीय कठोरता के प्रति कड़ी वचनबद्धता प्रतिबिंबित हुई थी। किन्तु, हाल के वैश्विक संकट के दौरान, समग्र राजकोषीय रुख अल्पावधि में मौद्रिक नीति को समर्थन देने और अर्थव्यवस्था के पथ को निर्बाध बनाने में सहायता हेतु स्वचालित स्टैबिलाइजर्स को अनुमति प्रदान करने का रहा है।

2.35 बैंक ऑफ इंग्लैंड ने अपनी ओर से अवस्फीतिकारक दबावों का सामना करने और आर्थिक सुधार को बढ़ाने के लिए अभूतपूर्व मौद्रिक प्रोत्साहन प्रदान किये। नीति दर को शून्य के आसपास रखा गया था, जबकि उसकी 200 बिलियन पाउंड की आस्ति खरीद (अधिकतर दीर्घावधि सरकारी बाँड) से भी बाँड आय कम करने तथा आस्ति कीमतें बढ़ाने में सहायता मिली, जिसके द्वारा बाजार पर भरोसे को समर्थन मिला तथा घरेलू निवल संपत्ति और कंपनी साख आपूर्ति को सहायता मिली। बैंक ऑफ इंग्लैंड के अधिकांश परिचालन, अर्थात् वित्तीय संस्थाओं को ऋण सहायता, आस्ति-समर्थित प्रतिभूतियों और वाणिज्यिक पत्र की खरीद तथा आस्ति अदला-बदली को राजकोष के समर्थन से हाथ में लिया गया था (आई एम एफ, 2009) । इसके अलावा, आस्ति खरीद कार्यक्रम के सम्पूरक के रूप में, बैंक ऑफ इंग्लैंड और एच एम राजकोष ने जुलाई 2012 में उधार देने की योजना के लिए निधीयन (एफ एल एस) की शुरूआत की। यद्यपि, मात्रात्मक सुलभता (क्यू ई) का प्रभाव मुख्य रूप से मांग और आय के माध्यम से अप्रत्यक्ष था, उधार देने की योजना के लिए निधीयन का उद्देश्य बैंकिंग क्षेत्र के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से जाकर उधार लागत को कम करना और घरेलू तथा कंपनी क्षेत्र को दी जाने वाली उधार राशियों में वृद्धि करना था।

2.36 सारांश में, पिछले वर्षों में यू के में समष्टि आर्थिक नीति ढांचे में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। जहाँ 1960 और 1970 के वर्षों के दौरान मांग प्रबंध पर अपने लगभग संपूर्ण फोकस के साथ राजकोषीय नीति आर्थिक नीति का प्रधान उपकरण थी, मौद्रिक नीति (एक न्यूनतर सीमा के अधीन) और सार्वजनिक सेवाओं के प्रावधान अनिवार्य रूप से अनुकूल तत्व थे क्योंकि एक नियंत्रक तत्व के रूप में चिर स्थायी चालू खाता घाटों का वित्तपोषण जारी रहा। 1980 के वर्षों में पूरा जोर मुद्रास्फीतिकारक दबावों को नियंत्रित करने के लिए सरकारी खर्च के आकार को घटाने पर अंतरित हो गया। मांग प्रबंध में राजकोषीय नीति की भूमिका समाप्त हो गई थी, जब कि मौद्रिक नीति की भूमिका मुद्रास्फीति नियंत्रण और मौद्रिक प्रबंध में बढ़ गई थी, यद्यपि मौद्रिक और विनिमय दर लक्ष्य निर्धारण के शुरूआती चरणों में सफलता की दर सीमित थी। एक स्वतंत्र बैंक ऑफ इंग्लैंड और मौद्रिक नीति समिति (एम पी सी) के साथ मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण व्यवस्था अपनाते हुए मौद्रिक नीति की भूमिका को एक औपचारिक रूप दिया गया था। उसके बाद से, मौद्रिक नीति ने सक्रियता से निम्न मुद्रास्फीति और स्थिर संवृद्धि पाने का प्रयास किया।

2.37 1990 के वर्षों के दौरान, मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण पर आधारित एक सक्रिय मौद्रिक नीति के साथ पूर्ण संयोजन करते हुए राजकोषीय नीति बनाई गई थी। 1998 में लागू किये गये नये समष्टि आर्थिक ढांचे के साथ, राजकोषीय नीति मध्यावधि उद्देश्यों की ओर अधिक उन्मुख हो गई जबकि मौद्रिक नीति चक्रीय कीमत दबावों की अनुक्रिया में वैकल्पिक उपकरण के रूप में बनी रही। हालांकि, वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान, यू के सरकार को 2008-09 में अस्थायी रूप से राजकोषीय प्रोत्साहन उपलब्ध कराना पड़ा था, जिसे भी स्वचालित स्टैबिलाइज़र्स के इस्तेमाल तथा अभूतपूर्व मौद्रिक सुलभता द्वारा समर्थन प्रदान किया गया था। आवश्यक रूप से, जब निजी और बाह्य क्षेत्र प्रेरित संवृद्धि के समर्थन में मौद्रिक नीति का रुख अनुकूल रहा, सरकार ने, प्रतिचक्रीयता राजकोषीय नीतियों के लिए राजकोषीय स्थान बनाने की आवश्यकता को समझते हुए और मुद्रास्फीतिकारक प्रत्याशाओं को मंद करने के लिए 2010 में राजकोषीय निभाव को समाप्त करना शुरू कर दिया। इस तथ्य के बावजूद कि स्वतः आरोपी राजकोषीय अनिवार्यताओं के अंतर्गत अधिक धारणीय राजकोषीय स्थिति प्राप्त करने के लिए एक विवेकी दृष्टिकोण अपनाया गया है, मंद अर्थव्यवस्था को प्रभावहीन बनाने में सहायता पहुँचाने की दृष्टि से राजकोष द्वारा हाथ में लिये गये एफ एल एस कार्यक्रम तथा बैंक ऑफ इंग्लैंड ने मौद्रिक प्रोत्साहन प्रदान करना जारी रखा है।

यूरो क्षेत्र

मौद्रिक संघ में समन्वय ढांचा

2.38 यूरो क्षेत्र में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय एक संयुक्त मौद्रिक प्राधिकरण, अर्थात् दि यूरोपीयन सेंट्रल बैंक (ई सी बी), और

यूरोपीय मौद्रिक संघ (ई एम यू) के अलग-अलग सदस्य राज्यों के साथ राजकोषीय नीतियों के विकेंद्रीकरण द्वारा केंद्रित मौद्रिक निर्माण के एक विशेष मामले का प्रतिनिधित्व करता है। ई सी बी की शासी परिषद मौद्रिक नीति संबंधी कार्रवाइयां निश्चित करती है, जिनका कार्यान्वयन यूरो क्षेत्र के राष्ट्रीय केंद्रीय बैंक करते हैं। ई सी बी कीमत स्थिरता को अपने प्राथमिक उद्देश्य के रूप में पाना चाहता है जबकि यूरो क्षेत्र के सदस्य राज्यों की आर्थिक नीतियों के लिए समर्थन उसका द्वितीयक उद्देश्य है, जैसा कि मास्ट्रिक्ट संधि में घोषित किया गया है। कीमत स्थिरता उद्देश्य के प्रति अपनी वचनबद्धता निभाते हुए मौद्रिक नीति यूरो क्षेत्र स्तर पर सकल उत्पादन का नियंत्रण करती है, जब कि राष्ट्रीय राजकोषीय नीतियां सदस्य देशों में सकल मांग के वितरण का निर्धारण करती है।

2.39 जहाँ ई एम यू की मौद्रिक नीति के लिए अलग अलग देश का विकास महत्व रखता है क्योंकि यूरो क्षेत्र में कीमत स्थिरता रखना उनका दायित्व है, वहीं अलग-अलग राजकोषीय प्राधिकरण अन्य देशों पर अपनी स्वयं की नीतियों के प्रभाव के प्रति उतने संवेदनशील नहीं हो सकते हैं। ई एम यू की शुरूआत से ही, यह आशंका रही है कि यदि ऐसा बाह्यताएं मुद्रास्फीति और ब्याजदरों के मामले में नकारात्मक रूप धारण कर लेती हैं तो समेकित यूरो क्षेत्र का राजकोषीय घाटा कीमत स्थिरता के उद्देश्य की प्राप्ति के अनुरूप अपेक्षित इष्टतम स्तर से अधिक हो सकता है। इसलिए इस प्रकार के ढांचे के लिए मौद्रिक संघ स्तर पर राजकोषीय समन्वय की आवश्यकता होती है (दिक्षित और लेम्बर्तिनी, 2000)। अध्ययनों से यह पता चला है कि इस प्रकार की संस्थागत व्यवस्था के अंतर्गत राष्ट्रीय सरकारें पूर्ण रूप से एक वितरणात्मक खेल में संलग्न हो सकती हैं और जिसके परिणामस्वरूप, यदि नीतियां समन्वित न हों तो अक्षम नतीजे सामने आ सकते हैं (हैगन और मुंडशेंक, 2002)। इसलिए यह समझा गया कि इस प्रकार के नीति ढांचे के लाभ तभी प्राप्त किये जा सकते हैं जब सदस्य अर्थव्यवस्थाओं की आर्थिक नीतियां (राजकोषीय नीति सहित) और उनके आर्थिक ढांचे पर्याप्त रूप से लचीले हों तथा संयुक्त मौद्रिक नीति के लिए अनुकूलनशील हों (वेबर, 2011)।

2.40 एक स्वतंत्र केंद्रीय बैंक और उसकी कीमत स्थिरता उन्मुख रणनीति के साथ यूरो क्षेत्र में एक उच्च पूर्वानुमान वाली मौद्रिक नीति है (आइसिंग, 2005) । इससे आर्थिक, राजकोषीय सहित गतिविधियों जिनका कीमत स्थिरता से संबंध है, की ओर मौद्रिक अनुक्रिया में किसी प्रकार की अस्पष्टता नहीं रहती है। यद्यपि मौद्रिक प्राधिकरण समग्र रूप से यूरो क्षेत्र में समग्र आर्थिक उतार-चढ़ावों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं, राजकोषीय प्राधिकरण देश विशेष की आवश्यकताओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं। फिर भी, अध्ययनों से इस बात का संकेत मिलता है कि यदि राष्ट्रीय राजकोषीय प्राधिकरण एक मौद्रिक नीति के व्यवहार को ठीक-ठीक समझने में कामयाब हो जाते हैं तो वे ऐसी कार्रवाई करेंगे जो अंतर्निहित रूप से 'समन्वित' नीति परिणामों के यथार्थ की ओर ले जाएगी (आइसिंग 2005)। उसका अंतर्निहित राष्ट्रीय स्वभाव होने के बावजूद यूरो क्षेत्र सदस्यों के लिए राजकोषीय नीति का संचालन अनेक दबावों के अधीन रहा है जो अतिरिक्त घाटा क्रियाविधि, पारस्परिक निगरानी क्रियाविधियां और स्थिरता और संवृद्धि पैक्ट (एस जी पी) के अन्तर्गत अनुबद्ध क्रियाविधिक दिशा-निर्देशों से संबद्ध रहे हैं। मास्ट्रिक्ट संधि और अनुवर्ती स्थिरता और संवृद्धि पैक्ट में अनुबद्ध किया गया है कि जब तक कि कोई देश मंदी में न हो, किसी भी देश का राजकोषीय घाटा एक वर्ष में उसके सकल देशी उत्पाद का 3 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। स्थिरता और संवृद्धि पैक्ट से यूरोपीय संघ-वाइड राजकोषीय प्राधिकरण का शून्य भर गया है और राजकोषीय नीति अनुशासन के लिए एक ढांचा उपलब्ध कराया है जिससे यूरो क्षेत्र में स्थिरता, संवृद्धि और संबद्धता को समर्थन मिला है ।

2.41 ई एम यू में विनिमय दर उपकरण के अभाव में, विषम झटकों को समायोजित करने की योग्यता के लिए राष्ट्रीय स्तर पर स्वचालित स्टैबिलाइजर्स की भूमिका ने महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है जिसके द्वारा स्थिरता उन्मुख मौद्रिक नीति की ओर राष्ट्रीय राजकोषीय नीतियों से समर्थन सुनिश्चित किया जाता है। मौद्रिक नीति के संचालन के लिए राजकोषीय अनुशासन के महत्व के संबंध में विभिन्न क्रियाविधियों पर बल दिये जाने के बावजूद उन्हें 'सॉफ्ट इन्फोर्समेंट' के रूप में परिभाषित किया गया है, अर्थात् सदस्य देशों को इस बात के लिए मनाना कि वे निगरानी, संवाद, सूचना का आदान-प्रदान, समकक्ष दबाव और चेतावनी के माध्यम से उचित व्यवहार का अनुसरण करें। यद्यपि सकल देशी उत्पाद के 3 प्रतिशत की राजकोषीय घाटा सीमा का उल्लंघन करने वाले सदस्य राज्यों पर एस जी पी में 'निवर्तक तत्व' के माध्यम से प्रतिबंध लगाया जा सकता है किन्तु अनुभव यह दर्शाता है कि नवंबर 2003 में किये गये वोटिंग प्रोसेस में अपेक्षित अर्हकताप्राप्त बहुमत न होने के कारण 2000 के वर्षों की शुरूआत में प्रमुख ई एम यू राज्यों (जर्मनी और फ्रांस) द्वारा जब इस सीमा का उल्लंघन किया गया तो उन पर कोई भी दंड आरोपित नहीं किया गया था।

2.42 इन गतिविधियों ने ई एम यू में राजकोषीय नीति समन्वय के लिए एक पर्याप्त संस्थागत ढांचे के अभाव की ओर संकेत किया क्योंकि उसने कुल मिलाकर यूरो क्षेत्र के लिए समग्र राजकोषीय नीति रुख की अनेदखी की (ब्लैंकार्ड और गियावाज़ी, 2004 तथा वाईप्लॉज़, 1999)। यद्यपि राजकोषीय जमा शेष का वांछित स्तर दीर्घावधि समष्टि आर्थिक स्थिरता के अनुकूल हो सकता है, अल्पावधि स्थिरता अनिवार्यताएं कारोबार चक्रों के विभिन्न चरणों पर मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के अलग-अलग समूहों की मांग कर सकती है (हैगन और मुंडशैंक, 2002)। इसके अलावा, विश्वसनीय प्रवर्तन तंत्र की अनुपस्थिति में मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच प्रत्याशित समन्वय यथार्थ परिणाम के लिहाज से सफल होना आवश्यक नहीं है। यह तर्क दिया गया था कि प्रत्याशित समन्वय संबंधित आर्थिक क्षेत्रों के लिए मूल उत्तरदायित्वों को अस्पष्ट करने की ओर अभिमुख कर सकता है और जिसके द्वारा सामान्य नीति ढांचे के बारे में अनिश्चितता बढ़ सकती है।

2.43 यूरो क्षेत्र में राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकरणों के बीच सूचना के आदान-प्रदान के मार्ग पूर्ण विकसित हैं। शाषी परिषद अन्य निकायों और संस्थाओं के साथ एक संरचनात्मक तथा आर्थिक स्थिति और ढांचागत सुधार के संबंध में सूचना के खुले आदान-प्रदान का कार्य हाथ में लेती है। इसके अलावा राजकोषीय नीति का दृष्टिकोण कीमत स्थिरता के प्रति ई सी बी के जोखिम निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। किन्तु, मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच समन्वय के इन तत्वों की मौजूदगी के बावजूद मौद्रिक नीति कार्य की प्रणाली विशेष के प्रति कोई पूर्व प्रतिबद्धता नहीं है क्योंकि इससे ई सी बी की स्वतंत्रता को क्षति पहुँच सकती है।

ई सी बी के प्रारंभ के बाद मौद्रिक और राजकोषीय नीतियाँ

2.44 यूरो क्षेत्र में, ई सी बी का लक्ष्य मुद्रास्फीति की दरों को कम, किन्तु मध्यावधि पर 2 प्रतिशत के आसपास रखना है तथा अल्पावधि ब्याज-दरों का निर्धारण करते हुए मौद्रिक नीति का संचालन करना है। उसके द्वारा वह अर्थव्यवस्था को प्रभावित करना चाहता है तथा कीमत स्थिरता उद्देश्य की पूर्ति के लिए कार्य करना चाहता है। यद्यपि मौद्रिक नीति संचालन क्रियाविधि में कोई कड़े नियम निर्धारित नहीं किये गये हैं, ई सी बी ने कीमत स्थिरता के लक्ष्य पर अनन्य रूप से फोकस किये बिना पूर्ण रोज़गार की तुलना में कीमत स्थिरता को स्पष्ट प्राथमिकता देने के साथ कुल मौद्रिक राशियों पर लचीले नियंत्रण रखे हैं।

2.45 ई सी बी के प्रारंभ के बाद से उसने यूरो क्षेत्र में कीमत स्थिरता के प्रति जोखिमों की प्रकृति तथा उनकी सीमा निश्चित करने के लिए द्वि-स्तंभी (टू-पिलर) दृष्टिकोण अपनाया। इस दृष्टाकोण के अंतर्गत, जहाँ कीमत गतिविधियों के अल्पावधि से लेकर मध्यावधि तक के निर्धारक तत्वों के निर्धारण हेतु आर्थिक विश्लेषण किया जाता है, मौद्रिक विश्लेषण में दीर्घावधि हॅरोइज़न पर फोकस किया जाता है। आर्थिक विश्लेषण में अल्पावधि से मध्यावधि पर कीमत गतिविधियों के निर्धारण में सेवाओं और उपादान बाजारों, वस्तुओं में आपूर्ति और मांग के पारस्परिक प्रभाव का निर्धारण करते हुए अर्थव्यवस्था में वास्तविक गतिविधि और वित्तीय स्थितियों पर फोकस किया जाता है। मौद्रिक विश्लेषण मुद्रा और कीमतों के बीच दीर्घावधि-संबंध की जांच करता है और आर्थिक विश्लेषण से उभरने वाले अल्पावधि से मध्यावधि संकेतों की दीर्घावधि पर एक प्रति-जांच के रूप में कार्य करता है। ई सी बी के प्रारंभ के बाद उसके मौद्रिक नीति निर्णयों का एक विश्लेषण यह दर्शाता है कि कीमत स्थिरता एक प्रमुख उद्देश्य रहने के बावजूद निर्णयों में संवृद्धि निहितार्थों की भी अनदेखी नहीं की गई है।

2.46 अपने प्रारंभ के शुरूआती वर्षों में, ई सी बी ने सुस्पष्ट रूप से इस बात पर बल दिया है कि एस जी पी तथा स्थिरता कार्यक्रम के संदर्भ में व्यक्त प्रतिबद्धता के अनुसार सदस्य देशों में राजकोषीय समेकन प्रक्रिया जारी रहनी चाहिए हालांकि 2001 में भू राजनैतिक चिंताओं के कारण संवृद्धि की संभावना कमजोर हो गई थी। स्थायी आधार पर मुद्रास्फीतिकारक चिंताओं से बचने के लिए यह आवश्यक हो गया था कि राष्ट्रीय सरकारें आवश्यक रूप से अधिक निर्णायक तरीके से संरचनात्मक उपाय लागू करें। इससे कुछ सदस्य अर्थव्यवस्थाओं से उत्पन्न राजकोषीय चिंताएं प्रतिबिंबित हुई, जैसे जर्मनी, इटली, नीदरलैंड, यूनान और पुर्तगाल, जिन्होंने ई सी बी के प्रारंभ के शुरूआती वर्षों में मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय नीति अपनायी और 2003 तक इसी रुख को जारी रखा। बाह्य गतिविधियों और यूरो मूल्यवृद्धि से उत्पन्न संवृद्धि चिंताओं के कारण ई सी बी की मौद्रिक नीति 2003 की दूसरी तिमाही तक मुद्रास्फीतिकारक बनी रही। किन्तु, नीति दरें, जुलाई 2003 से दिसंबर 2005 तक अपरिवर्तित रखी गई क्योंकि कीमत स्थिरता का मध्यावधि दृष्टिकोण अनुकूल रहा। हालांकि, अधिकांश सदस्य देशों ने एक मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय नीति अपनाना जारी रखा, कयोंकि संवृद्धि अनुमान से कम रही थी। मौद्रिक नीति के रुख की घोषणा करते समय, ई सी बी ने सदस्य देशों में राजकोषीय नीति की

विश्वसनीयता बनाये रखने की आवश्यकता पर निरंतर बल दिया है। इसके विपरीत, चूंकि प्रमुख सदस्य अर्थव्यवस्थाओं में बजट घाटे से 3 प्रतिशत के एस जी पी लक्ष्य का उल्लंघन हुआ था, मार्च 2005 में एस जी पी में संशोधन किया गया था जिसके अंतर्गत क्षेत्रों के एक दायरे में नियमों में लचीलापन अपनाने की अनुमति दी गई है। यह निर्णय लिया गया था कि ऐसे सदस्य देश के खिलाफ कोई भी अतिरिक्त घाटा क्रियाविधि प्रारंभ नहीं की जायगी जो नकारात्मक संवृद्धि की स्थिति में है अथवा लंबे समय से कम संवृद्धि के दौर से गुजर रहा है। पहले, यह अपवाद केवल ऐसे देशों के लिए बनाया गया था जो मंदी में थे (2 प्रतिशत की नकारात्मक संवृद्धि) जो कि यूरोपीय संघ के सदस्य देशों के बीच बल्कि काफी असामान्य था। सरकारी प्राधिकारियों द्वारा किया गया यह नीति परिवर्तन ई सी बी के एकल मौद्रिक ढांचे के संदर्भ में बहुत कुछ असंगत था।

2.47 तेल बाजार गतिविधियों से उत्पन्न अनिश्चिताओं के कारण कीमत स्थिरता का जोखिम चूंकि उभरना शुरू हो गया था, ई सी बी ने दिसंबर 2005 से मौद्रिक नीति को कठोर बनाया क्योंकि पिछली तेल कीमत की वृद्धि को देशी उत्पादन श्रृंखलाओं के जरिये उपभोक्ताओं पर अंतरित कर दिया गया था, वेतन और कीमत निर्धारण व्यवहार में दूसरे दौर के प्रभाव की संभावना तथा नियंत्रित कीमत और अप्रत्यक्ष करों में और वृद्धि की संभावना थी। इसके अलावा, संवृद्धि में गिरावट के कुछ जोखिम, वैश्विक असंतुलनों के बारे में चिंताओं और उपभोक्ता में विश्वास की कमी के परिणामस्वरूप अधिकांश देशों मे राजकोषीय नीतियां मुद्रास्फीतिकारक रही। मौद्रिक नीति को कठोर बनाने की प्रवृत्ति 2008 की तीसरी तिमाही के अंत तक जारी रही। यूनान, आयरलैंड ओर स्पैन जैसी कुछ सदस्य अर्थव्यवस्थाओं में 2008 के अंत तक सरकारी घाटों में तेजी से विस्तार हुआ जिन्हें ई सी बी द्वारा अपने पोस्ट-पोलिसी परिचयात्मक वक्तव्य में समय-समय पर विशेष रूप से बताया गया है।

संकट के दौरान राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय

2.48 वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन देने के लिए यूरो क्षेत्र में अनेक समन्वित मौद्रिक और राजकोषीय नीति उपाय लागू किये गये थे। संकट के प्रति ई सी बी की अनुक्रिया मानक और गैर-मानक नीति उपायों के माध्यम से थी। वित्तीय बाजार हलचल को गहन तथा व्यापक बनाने के साथ एक संरक्षित समयावधि के लिए वैश्विक और यूरो क्षेत्र मांग में मंदी को ध्यान में रखते हुए ई सी बी ने 8 अक्तूबर 2008 को नीति दर में कटौती की। इस अवधि तक पण्य कीमतों में भारी गिरावट से कीमतों, लागत और वेतन पर संभावित दबाव कम हो गया। बिगड़ते हुए समष्टि आर्थिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए ई सी बी ने मई 2009 तक नीति दरों में कमी करना जारी रखा। संचयी आधार पर, यूरो प्रणाली के मुख्य पुनर्वित्त कार्यों पर ब्याज दरों में 8 अक्तूबर 2008 और 13 मई 2009 के बीच 325 आधार अंक तक की कमी की गई थी।

2.49 संकट की गंभीरता को महसूस करते हुए, ई सी बी ने विभिन्न गैर-पंरपरागत उपायों को अपनाया ताकि गिरती हुई मुद्रा बाजार मीयादी दरों को सुविधा दी जा सके, बैंकों को अपनी उधार दरें बनाये रखने और ग्राहकों को उधार देने हेतु उनका विस्तार करने हेतु प्रोत्साहित किया जा सके, निजी कर्ज प्रतिभूति बाजार के महत्वपूर्ण संवर्गों में बाजार चलनिधि में सुधार करने और बैंकों तथा उद्यमों के लिए निधीयन स्थितियों को आसान बनाया जा सके। रक्षित बांडों की एकमुश्त खरीद सहित वित्तीय बाजार स्थितियों में सुधार के लिए विभिन्न मौद्रिक सुलभता उपायों के उपयोग के बावजूद ई सी बी ने जान बूझकर सरकारी बाँड नहीं खरीदे ताकि विभिन्न देशों के राजनैतिक प्राधिकारियों से अपनी स्वतंत्रता को बचाया जा सके (स्टार्क, 2009)। उसी कारण से ई सी बी ने सरकारी गारंटियों के किसी भी रूप के बिना अपने उपाय लागू किये।

2.50 यूरो क्षेत्र में वित्तीय और आर्थिक संकट के प्रतिकूल प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए सदस्य देशों की राजकोषीय नीतियों ने भी एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। बैंकिंग क्षेत्र के लिए राष्ट्रीय सरकारों के समर्थन का उद्देश्य सम्पूर्ण वित्तीय प्रणाली को स्थिर करना और वास्तविक अर्थव्यवस्था पर और अधिक हानिकारक असर को रोकना था। राष्ट्रीय सरकारों ने अंतर-बैंक उधार के लिए सरकारी गारंटी सहित अनेक प्रकार की वित्तीय सहायता प्रदान की थी। सरकारों ने और भी सहायता प्रदान की थी, जैसे वित्तीय संस्थाओं का पुनर्पूंजीकरण, खुदरा जमा बीमा और आस्ति राहत योजनाएं। इस प्रकार राजकोषीय प्रभाव उच्चतर सरकारी घाटा तथा सकल देशी उत्पाद में कर्ज के अनुपात के रूप में स्पष्ट था। हालांकि ई सी बी ने राजकोषीय अनुशासन की आवश्यकता पर बल दिया जाना जारी रखा। यह भी माना गया था कि यूरो क्षेत्र में राष्ट्रीय सरकारों की राजकोषीय नीतियों में इतनी पारदर्शिता होनी चाहिए कि वे आर्थिक एजेंटों के लिए और मौद्रिक नीति के संचालन के लिए एक पूर्वानुमेय वातावरण बनाये रखने में सहायता करने हेतु निकास रणनीतियों

के लिए एक स्पष्ट और मध्यावधि समय-सारणी उपलब्ध करा सकें (स्टार्क, 2009)।

2.51 संकट के बाद की अवधि में ई सी बी ने यह दोहराते हुए अपने अधिदेश के प्रति वचनबद्धता दर्शायी कि कीमत स्थिरता के दृष्टिकोण में परिवर्तनों की अनुक्रिया में मुख्य ब्याज दरों के स्तर को समायोजित कर लिया जायगा। यद्यपि ई सी बी प्रारंभ में, यू एस और यू के केंद्रीय बैंकों के विपरीत जाकर, वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान कर्ज के मौद्रिक वित्तपोषण से दूर रहा था किन्तु बाद में जब अनेक राजकोषीय स्तर पर तनावग्रस्त सदस्य देशों को दिवालियेपन के जोखिम का सामना करना पड़ा और वे अपने बांडों को बाजार में नहीं बेच सके तो उन्हें सरकारी कर्ज-क्रय कार्यक्रमों में भाग लेना पड़ा । इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बैंकिंग प्रणाली से समान नकदी राशियां निकाल कर सरकारी बांडों की खरीद को प्रतिसंतुलित किया जाना था अथवा अवरुद्ध किया जाना था, उसके द्वारा कीमत स्थिरता के जोखिमों से बचना था। इसके अलावा, यूनान सरकार के आर्थिक और वित्तीय समायोजन कार्यक्रम (ई सी बी और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के साथ यूरोपीय कमीशन से समझौता वार्ता की गई) को उपयुक्त मानते हुए उसने यह सुनिश्चित करने के लिए कि यूनान सार्वजनिक कर्ज की पात्रता बनी रहे, अपनी संपार्श्विक अपेक्षाओं को बार-बार समायोजित किया।

2.52 ई सी बी का बांड खरीद कार्यक्रम यद्यपि अस्थायी समझा गया था किन्तु उसे जारी रखा गया क्योंकि कर्ज-संकट का पूर्ण समाधान अभी शेष था। इसके अतिरिक्त स्थिरता पर नई संधि के एक भाग के रूप में, समन्वय और ई एम यू में अभिशासन के संबंध में मार्च 2012 में अधिकांश यूरोपीय संघ सदस्यों द्वारा राजकोषीय समझौते पर हस्ताक्षर किये गये थे। आर्थिक नीति समन्वय का पालन करते हुए, यह आशा की गई थी कि राजकोषीय समझौते से ई सी बी की कीमत स्थिरता-उन्मुख मौद्रिक नीति के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए अपेक्षित ई यू के राजकोषीय अभिशासन ढांचे को मजबूती मिलेगी। राजकोषीय समझौता, अन्य बातों के साथ-साथ राष्ट्रीय स्तर पर एक संतुलित बजट नियम का अधिदेशात्मक परिचय स्थापित करता है और साथ ही उल्लंघनों के मामले में अतिरिक्त घाटा क्रियाविधि की स्वचालितता को भी मजबूत करता है। ई सी बी (2012) के अनुसार, राजकोषीय अनुशासन में सुधारों के सफल कार्यान्वयन से मौद्रिक नीति को उस समय अन्य नीति क्षेत्रों की नकारात्मक बाह्यताओं के समाधान से छुटकारा मिलेगा जब वह कीमत स्थिरता बनाये रखने के लिए संघर्ष कर रही होगी। यूरो क्षेत्र में मौद्रिक नीति के आवश्यक अनुबंध के रूप में और राष्ट्रिक बांड बाजार को समर्थन देने के लिए ई सी बी ने सितंबर 2012 में एक मुश्त मौद्रिक लेन देन कार्यक्रम की घोषणा की जिसके अंतर्गत वह राष्ट्रीय सरकारों के लिए उधार लागत को कम करने हेतु द्वितीयक बाजार में एक से तीन वर्ष की परिपक्वता वाले असीमित सरकारी बांडों, को खरीदने के लिए तैयार हो गया था, बशर्ते संबंधित देश यूरो क्षेत्र अनुमोदित बेलआउट योजना का पालन करता हो। इस कार्यक्रम से इटली और स्पैन में ऐसे बांडों के प्रतिफल को घटाने में मदद मिली जिन पर सार्वजनिक और निजी स्तर पर भारी कर्ज था।

2.53 जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, कीमत स्थिरता के अधिदेश के अंतर्गत ई सी बी की मौद्रिक नीति स्वतंत्र रूप से निश्चित की गई थी। यद्यपि राजकोषीय और मौद्रिक समन्वय का यूरो क्षेत्र में कोई औपचारिक तंत्र नहीं है, एस जी पी पैक्ट में समग्र समष्टि आर्थिक स्थिरता के लिए राजकोषीय अनुशासन पर सुस्पष्ट रूप से बल दिया गया है। जब कि ई सी बी ने मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय नीति के बारे में अपने सदस्य देशों को समय-समय पर सावधान किया था फिर भी कुछ ई एम यू देशों में घाटे का स्तर बढ़ना जारी रहा जो बाद में यूनान जैसे देशों में वित्तीय संकट के रूप में प्रकट हुआ। राजकोषीय दबाव वाले सदस्य देशों के बांड बाजारों में बिगड़ते विश्वास को देखते हुए ई सी बी को राष्ट्रीय सरकारों के कर्ज को अभिदान देते हुए उनके साथ समन्वय करना पड़ा। वित्तीय संकट के दौरान अपनाये गये समन्वित मौद्रिक और राजकोषीय उपाय बैंकों की निधीयन चिंताओं को दूर करने तथा अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन प्रदान करने की दृष्टि से प्रभावी हो सकते हैं किन्तु इस प्रकार के नीति उपायों के जारी रहने से दीर्घावधि में जोखिम उत्पन्न हो सकते हैं।

2.54 संक्षेप में, यूरो क्षेत्र में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के संबंध में अनेक प्रश्न उठाये गये हैं। प्रथम, इस बात की आवश्यकता है कि सामान्य मौद्रिक प्राधिकरण और राष्ट्रीय राजकोषीय प्राधिकरणों (अलग-अलग देशों की सरकारें) को एक समूह में लेकर, उनके बीच उर्ध्वाधर (वर्टिकल) समन्वय हो। विशिष्ट रूप से, यूरो के बाह्य मूल्य में अस्थिरता से यूरोपीय मौद्रिक नीति के संचालन में चिंताएं उत्पन्न हो सकती है अथवा भिन्न संचारण तंत्र अथवा सामान्य कारोबार चक्र के अभाव के कारण सभी सदस्य देशों में एक सामान्य मौद्रिक नीति के विषम प्रभाव प्रतिबिंबित हो सकते हैं। सदस्यों की राजकोषीय नीतियों का अव्यक्त समन्वय, जो समस्त यूरो क्षेत्र में इष्टतम राजकोषीय नीति-रुख के रूप में परिणाम तक पहुँचाता है और जो सामान्य मौद्रिक नीति से संगत है, यूरो के प्रारंभ से ही एक महत्वपूर्ण चुनौती

रहा है। 1999 से ई एम यू में सर्वाधिक समस्यामूलक मुद्दों में से एक मुद्दा राष्ट्रिक देशों की राजकोषीय नीति और ई सी बी की मौद्रिक नीति के बीच बढ़ती हुई पारस्परिक क्रिया है। 1997 में एस जी पी का कार्यान्वयन, यूरोपीय राजकोषीय रूपरेखा का एक मुख्य आधार है जिससे अतिरिक्त संघर्ष पेश हुए हैं।

2.55 द्वितीय, कड़े शब्दों में कहा जाए तो एक सामान्य मौद्रिक नीति को उप-इष्टतम होना माना जाता है क्योंकि उसका लक्ष्य औसत ई यू मुद्रास्फीति दर के विचलन को लक्ष्य से घटाना है और न कि अलग-अलग विचलनों के औसत को। इसलिए वह देशों के बीच परिवर्तनीयता अथवा विचलनों के वितरण पर विचार नहीं करता है। एक मुद्रास्फीतिकारक अवधि में, औसत मुद्रास्फीति से कम वालों को दंडित किया जाता है और उन पर इस बात का दबाव डाला जाता है कि वे औसत से ऊपर मुद्रास्फीति लक्ष्य पाने के लिए नीति को कठोर बनाएं। इसी प्रकार, मंदी में, औसत से ऊपर मुद्रास्फीति वाले देशों ने उतना ही अवश्य खोया है जितना कि उन देशों ने जिनकी मुद्रास्फीति औसत से कम थी। इससे यह प्रश्न उठता है कि क्या नीति उद्देश्यों की बेहतर ढंग से प्राप्ति हो सकेगी यदि राष्ट्रीय परिस्थितियों (कंट्री सर्कमस्टांसेज) की विभिन्नताओं को भी नीति परिकलनों में प्रविष्ट कर दिया जाए। इसका एक संभव समाधान यह हो सकता है कि राजकोषीय नीति निर्माताओं को इस बात की अनुमति दी जाए कि वे राष्ट्रीय भिन्नताओं की प्रतिपूर्ति के लिए अपने राजकोषीय रुख को समायोजित करें, जब मुद्रास्फीति औसत से कम हो और उसके विपरीत (औसत से अधिक) हो तो उन्हें मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय नीति का अनुसरण करने की अनुमति दी जाए। फिर भी, इसके लिए फिर राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता होती है।

2.56 तृतीय, यूरो क्षेत्र में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का संचालन यू एस से भिन्न रहा है, जिससे इन दो अर्थव्यवस्थाओं में परस्पर विरोधी आर्थिक और वित्तीय संरचनाओं के दर्शन होते हैं। यू एस में जैसा है, उससे भिन्न, यूरोपीय अर्थव्यवस्था में लघु और मध्यम आकार के उद्यम प्रमुख भूमिका निभाते हैं और कुछ बैंकों की स्वामित्व संरचना में वे मुख्य खिलाड़ी हैं। कुल मिलाकर, यूरो क्षेत्र में अर्थव्यवस्था यू एस की अर्थव्यवस्था की तुलना में कम लचीली है। वेतन और कीमतें समायोजन की दृष्टि से काफी धीमी हैं। यूरो क्षेत्र में जहाँ सीमित लचीलेपन से अति आपूर्ति आघात, जैसे तकनीकी परिवर्तन से लाभ उठाने में बाधा उपस्थित हो सकती है, संकट के दौरान इस सुस्ती से अवस्फीतिकारक स्पाइरल की ओर अग्रसर नकारात्मक प्रत्याशाओं के अतिलंगन के खिलाफ कुछ सुरक्षा प्राप्त होती है। ई सी बी ने संकट का समाधान करने के लिए अपनी नीति अनुक्रिया को स्वरूप प्रदान करने हेतु यूरो क्षेत्र अर्थव्यवस्था की संरचनात्मक विशेषताओं को हिसाब में लिया है। गैर-मानक उपायों के भाग के रूप में ई सी बी ने बैंकों को दीर्घावधि के लिए चलनिधि प्रदान की तथा बैंकों को ऑफर की जाने वाली स्थायी जमा सुविधा के माध्यम से उन्हें निधियां उपलब्ध कराई। इसकी वजह से केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र पर बैंकिंग प्रणाली की चलनिधि संबंधी बेमेल स्थितियां अवशोषित हो गई।

2.57 इसके अलावा, केंद्रीय बैंकों की यूरोप्रणाली में चलनिधि संपार्श्व स्वीकार किये गये, केंद्रीय बैंक चलनिधि के लिए बोली लगाने हेतु पात्र प्रतिपार्टियों की संख्या में वृद्धि हुई और इसकी प्रतिपार्टियों की गुमनामी से सुरक्षा प्रदान की। संकट-प्रेरित असाधारण उपायों से सामान्य अवधि के दौरान बैंकिंग प्रणाली की निवल चलनिधि आवश्यकताओं की पूर्ति करने के बजाय केंद्रीय बैंकों की यूरोप्रणाली के अंतर्गत सकल आधार पर चलनिधि आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है। परिणामस्वरूप, यूरो प्रणाली में केंद्रीय बैंक के तुलन पत्रों का काफी विस्तार हुआ जिनके अंतर्गत मुद्रा बाजारों में लगी हुई रोक के कारण मुद्रा प्रवर्धक में गिरावट को प्रतिसंतुलित किया गया, मुद्रा आपूर्ति और वित्तीय मध्यस्थता प्रक्रिया को समर्थन दिया गया। प्रक्रिया में, केंद्रीय बैंक का कार्य जो पंरपरा से 'अंतिम उधारदाता' रहा है वह अब विकसित होकर संकट के दौरान 'अंतिम मध्यस्थता' बन गया है, जिसने बैंकों को ''विपणनयोग्य आस्तियों की फायर सेल और ऋणों को अवधि पूर्व समाप्ति'' से बचाया (जियानोन और अन्य 2010)। यू एस में, विषमता से फेड ने पूंजी बाजारों पर एकमुश्त आस्तियां खरीदी और इस प्रकार उसने बैंक ऋणों के बजाय पूंजी बाजार पर यू एस कंपनियों पर भरोसा जताया।

उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय

2.58 किसी भी अर्थव्यवस्था के लिए, उसके विकास के स्तर पर ध्यान दिये बिना, राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय आवश्यक है। हालांकि, देश-विशिष्ट विशेषताओं, वित्तीय बाज़ारों की गहराई, विनिमय दर व्यवस्था तथा प्रचलित संस्थागत ढांचे पर निर्भर करते हुए सभी देशों के बीच समन्वय का स्वरूप और प्रकृति अलग-अलग हो सकते हैं। उनके बढ़ते हुए आर्थिक महत्व के बावजूद अनेक ई एम डी ई में अब तक अपेक्षाकृत कम विकसित बाजार और कमज़ोर संस्थागत ढांचा है, उनकी प्रति व्यक्ति आय उन्नत

अर्थव्यवस्थाओं में प्रति व्यक्ति आय के मुकाबदले काफी कम है और उनकी जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग आज भी गरीबी में रहता है। इससे समष्टि आर्थिक नीतियों के प्रभावी प्रतिपादन और कार्यान्वयन पर अनेक दबाव आ जाते हैं। उदाहरण के लिए, ई एम डी ई में विकासात्मक जरूरतों के लिए मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय नीति को अपनाने की आवश्यकता पड़ सकती है जिससे मौद्रिक नीति के सामने एक चुनौती खड़ी हो सकती है। इसलिए, इन अर्थव्यवस्थाओं के भीतर से अथवा बाहर से उत्पन्न आघातों को अवशोषित करने के लिए उपयुक्त नीति अनुक्रिया सुनिश्चित करने के संदर्भ में ई एम डी ई में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय की आवश्यकता को महत्वपूर्ण माना गया है। वास्तव में, विगत समय में ऐसी घटनाएं हुई हैं जब सार्वजनिक क्षेत्र की बढ़ती हुई देयताओं ने ई एम डी ई में मौद्रिक नीति के संचालन और परिणामों, दोनों को प्रभावित किया है (उदाहरणार्थ, 2002 में ब्राज़ील)।

ई एम डी ई में मौद्रिक नीति पर दबाव

2.59 ई एम डी ई में केंद्रीय बैंकों को कुछ अलग प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। ये संस्थागत और तकनीकी, दोनों ही प्रकार की होती हैं और मौद्रिक नीति के कार्यान्वयन पर सख्त दबाव के रूप में कार्य करती हैं। जब केंद्रीय बैंक सांविधिक रूप से वित्त मंत्रालय के सीमा क्षेत्र के अंतर्गत होता है तो उसकी स्वतंत्रता का अभाव मुख्य संस्थागत दबाव होता है। ऐसे देशों में जहाँ केंद्रीय बैंक 'सिद्धांत रूप में' स्वतंत्र है, वहाँ अब तक यही वास्तविकता है कि उसे भी विभिन्न राजनैतिक शक्तियों द्वारा धक्का लग सकता है (ड्रेगुटिनोविक, 2009ट । अतः केंद्रीय बैंकों को, विशेष रूप से, समष्टि आर्थिक विघटन की अवधि के दौरान अपनी विश्वसनीयता और स्वतंत्रता के बीच एक संतुलन बनाये रखना होगा। इसके अलावा सांविधिक स्वतंत्रता की मात्रा (डिग्री) पर ध्यान दिये बिना, ई एम डी ई में अधिकांश केंद्रीय बैंकों पर विनिमय दर उद्देश्य के दबाव के कारण परिचालनगत स्वतंत्रता निरूद्ध हो सकती है। गुडफ्रैंड (2004) की दलील है कि विनिमय दर को एक विशेष स्तर पर अथवा एक विनिर्दिष्ट सीमा के भीतर बनाये रखने से घरेलू गतिविधि और मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के उद्देश्य से एक स्वतंत्र देशी मौद्रिक नीति पाने के प्रयास में ब्याज दर जैसे नीति उपकरण के उपयोग के अनुसार प्रायः केंद्रीय बैंक का लचीलापन सीमित हो सकता है। सभी उन्नत देशों और उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं (ई एम डी ई) में इस प्रकार की भिन्नताओं का पता लगाने के लिए अनेक अध्ययन किये गये हैं।

2.60 ई एम डी ई में केंद्रीय बैंकों के सामने अन्य मुख्य समस्या राजकोषीय प्रभुत्व की है। संबंधित साहित्य बताता है कि अनेक ई एम डी ई में दीर्घावधि राजकोषीय अनुशासन का अभाव होता है और उनकी मौद्रिक नीति प्रायः राजकोषीय नीति के वशीभूत होती है, विशेष रूप से तब, जब यह देखा जाता है कि राजकोषीय नीति के पास कोई महत्वपूर्ण पुनर्वितरणशील कार्य हैं। सरकारी बजट घाटों और सार्वजनिक कर्ज के उच्च स्तरों में प्रतिबिंबित एक अस्थायी राजकोषीय नीति मौद्रिक नीति परिचालनों के समक्ष एक अतिरिक्त दबाव प्रस्तुत करती है। इस प्रकार की स्थितियों में, सरकारी उधार कार्यक्रम सुलभ-कराने का उत्तरदायित्व प्रायः कीमत स्थिरता उद्देश्य के विरोध में आ जाता है क्योंकि जब उधार आवश्यकताएं बहुत अधिक होती हैं तो मुद्रास्फीति अपेक्षाओं को नियंत्रित करना कठिन हो जाता है।

2.61 हाल में, मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों की सापेक्ष भूमिका के बारे में एक मतैक्य विकसित हुआ है। जहाँ राजकोषीय नीति से दीर्घावधि निरंतरता पर फोकस रखने की अपेक्षा की जाती है (और राजकोषीय नियम के कुछ रूप द्वारा निरूद्ध होने अथवा स्वचालित स्टैबिलाइजर्स तक सीमित रहने की अपेक्षा की जाती है), वहीं इस बात पर व्यापक सहमति है कि मौद्रिक नीति को कीमत स्थिरता पर फोकस करना चाहिए, किन्तु वह उस दबाव के भीतर रह कर एक स्थिरीकरण भूमिका निभा सकता है। सीचेट्टी (2002) यह तर्क प्रस्तुत करता है कि डराजकोषीय नीति की उचित भूमिका दीर्घावधि संवृद्धि के लिए सुदृढ़ आधार के निर्माण पर फोकस करना है ..... स्थिरीकरण नीतियां केंद्रीय बैंकरों के लिए छोड़ दी जानी चाहिए। इस पृष्ठभूमि में, निम्नलिखित चर्चा राजकोषीय मौद्रिक समन्वय के क्षेत्र में चयनित ई एम डी ई के विविध अनुभवों पर प्रकाश डालती है।

ब्राज़ील

2.62 अन्य अर्थव्यवस्थाओं से भिन्न, ब्राज़ील में राजकोषीय मौद्रिक समन्वय का इतिहास अलग रहा है। उसके केंद्रीय बैंक की स्थापना के साथ, मुद्रा जारी करने का कार्य राजकोष से अंतरित हो गया था, किन्तु केंद्रीय बैंक को बैंक ऑफ ब्राज़ील की आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य करना पड़ा जो कि सरकार का बैंकर था और सार्वजनिक क्षेत्र उद्यमों की ओर से विदेश व्यापार परिचालनों को नियंत्रित करता था। इसके अलावा, सार्वजनिक ऋण के प्रबंध का

उत्तरदायित्व भी केंद्रीय बैंक को सौंपा गया था। यह संस्थागत व्यवस्था 1988 तक जारी रही जब मौद्रिक प्राधिकारी के कार्य क्रमशः बैंक ऑफ ब्राज़ील से केंद्रीय बैंक को हस्तांतरित कर दिये गये और फेडरल पब्लिक डेब्ट का प्रशासन राष्ट्रीय राजकोष को हस्तांतरित कर दिया गया था। जैसा कि ऑर्नेलास और पुर्तगाल (2011) द्वारा विशिष्ट रूप से उल्लेख किया गया है, इनमें से प्रत्येक संगठन के अलग-अलग दायित्वों के कारण यह संघर्ष बना रहा, जिसका समग्र ब्याज दर वातावरण के लिए निहितार्थ रहा। ब्राज़ील के केंद्रीय बैंक का उद्देश्य अर्थव्यवस्था में कीमत नियंत्रण था, जिसके लिए उसने अल्पावधि ब्याज दर को एक साधन के रूप में इस्तेमाल किया। इसके विपरीत, राष्ट्रीय राजकोष को देशी और विदेशी कर्ज का प्रबंध करते हुए यह सुनिश्चित करना होता है कि सरकारी घाटे का वित्तपोषण दीर्घावधि परिपक्वता वाले सर्वोत्तम कर्ज सौदों के माध्यम से हो।

2.63 ब्राजीलियन अर्थव्यवस्था ने मध्य 1980 के वर्षों से लेकर शुरूआती 1990 के वर्षों के दौरान अति मुद्रास्फीति का सामना किया। 1990 के वर्षों के द्वितीयार्ध में मुद्रास्फीति की उच्च पारियों के साथ उच्च बजट घाटे भी थे। आर्थिक स्थिरता के कार्यक्रम के रूप में 1994 में 'वास्तविक योजना' का कार्यान्वयन किया गया जिसने तीन वर्ष से भी कम समय में मुद्रास्फीति को सफलतापूर्वक एकल अंक पर नियंत्रित कर दिया, जबकि सार्वजनिक क्षेत्र का आकार राज्य कंपनियों के निजीकरण के माध्यम से काफी कम हो गया था। हालांकि, स्थिरीकरण नीतियां आम तौर पर विनिमय दर अवलंब के किसी रूप पर आधारित थी जब बाह्य उदारीकरण ने भी अपनी जगह बना ली थी। यद्यपि स्थिरीकरण योजना मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने में सफल थी, मुद्रा मूल्य वृद्धि की उपस्थिति से भुगतान संतुलनों की समस्या खड़ी हो गई थी। स्थिरीकरण प्रक्रिया क्रमिक सिद्ध हुई और जिसकी वजह से राजकोषीय नीति से संबंधित अनेक संरचनात्मक मुद्दों का हल नहीं हो सका जिससे ब्राज़ीलियन अर्थव्यवस्था की दोषपूर्णता इतनी बढ़ गई थी कि उसके प्रति विश्वास का संकट खड़ा हो गया। यह, वास्तव में, एक वास्तविकता बन गया जब अगस्त 1998 में बाह्य कर्ज पर रूस के स्थगन से अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय घबराहट चरम सीमा पर पहुँच गई थी।

2.64 ब्राज़ील के नीति निर्माताओं ने लचीली विनिमय दर, मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण और राजकोषीय उत्तरदायित्व पर आधारित एक नया समष्टि आर्थिक ढांचा प्रस्तुत करते हुए 1998 के संकट का जवाब दिया। जब केंद्रीय बैंक ने अल्पावधि ब्याज दरों में वृद्धि की तो सरकार ने एक अति कठोर राजकोषीय व्यवस्था की घोषणा की। भविष्य में मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं और निवेश निर्णयों की दृष्टि से राजकोषीय नीति के निहितार्थों को पहचान कर मुद्रास्फीति लक्ष्यनिर्धारण (आइ टी) पहले जुलाई 1999 में मौद्रिक नीति ढांचे के साथ एकीकृत किया गया था, जिसके अंतर्गत वित्त मंत्री के प्रस्ताव पर आधारित राष्ट्रीय मौद्रिक परिषद द्वारा मुद्रास्फीति लक्ष्य और सहन अन्तराल निर्धारित किये गये थे। इस समय तक, ब्राज़ील ने भी अस्थायी विनिमय दर नीति अपना ली थी और केंद्रीय बैंक का दृष्टिकोण यह था कि एक अनुकूल मौद्रिक नीति के साथ दीर्घ राजकोषीय मितव्ययिता से कीमत स्थिरता को समर्थन मिलेगा। वस्तुतः, 2000 में राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून अधिनियमित करते हुए राजकोषीय मितव्ययिता का विचार किया गया था, जिसने फेडरल, राज्य और स्थानीय सरकारों पर लागू होने योग्य एक सफल ढांचा प्रदान किया। उसने, अन्य बातों के साथ-साथ राज्य नियंत्रित वित्तीय संस्थाओं सहित सार्वजनिक क्षेत्र के वित्तपोषण पर तीव्र दबाव लागू किये।

2.65 आवश्यक रूप से, मौद्रिक नीति को दबाव मुक्त करने और मुद्रास्फीति लक्ष्यों को प्राप्त करने की उसकी योग्यता को मजबूत बनाने की दृष्टि से राजकोषीय प्रभुत्व को कम करने का प्रयास किया गया। किन्तु, ब्लैंकार्ड (2004) को इस बात के प्रमाण मिले हैं कि 2002-03 के संकटकाल के दौरान राजकोषीय प्रभुत्व जारी रहा और मौद्रिक नीति मुद्रास्फीति को काबू करने में प्रत्युत्पादक बनी रही। ब्राज़ील की अर्थव्यवस्था में भी कर्जदारी का उच्च स्तर रहा जिसमें बहुत बड़ा भाग विदेशी मुद्रा के वर्चस्व वाले सार्वजनिक ऋण का था। इसलिए ब्याज दरों में वृद्धि के जोखिम को महसूस करते हुए चूक की संभावना बढ़ गई जिससे देशी मुद्रा का मूल्यहास हो गया और नये मुद्रास्फीतिकारक दबाव आ गये जिनसे मौद्रिक नीति के उपयोग को नियंत्रित करना पड़ा । वास्तव में देखा जाए तो, वह राजकोषीय नीति थी जिसने उच्च मुद्रास्फीति को नियंत्रित किया।

2.66 हाल के वैश्विक संकट के दौरान केंद्रीय बैंक और सरकार की समन्वित अनुक्रिया से बाजार के रुख में तेजी से सुधार हुआ। विगत समय से भिन्न, केंद्रीय बैंक अस्थायी विनिमय दर के प्रति अपनी वचनबद्धता से डिगे बिना परिस्थितियों का मुकाबला करने के लिए बेहतर स्थिति में नज़र आया था, जब कि सरकार ने बाज़ारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय नीति लागू करने के लिए राजकोषीय स्थान रखा। केंद्रीय बैंक ने भी यू एस फेड (30 बिलियन यू एस डालर) और आइ एम एफ के साथ आकस्मिक

लाइन्स की अपनी व्यापक अंतर्राष्ट्रीय आरक्षित निधियों को सुदृढ़ बनाया, हालांकि उनका कभी भी इस्तेमाल नहीं किया गया था। लेवी (2010) ने वैश्विक गिरावट के प्रति नीति अनुक्रिया को, किये गये उपायों में इस प्रकार वर्गीकृत किया है (i) वित्तीय बाजारों को सुरक्षा प्रदान करना तथा ऋण को समर्थन; (ii) स्वचालित स्टैबिलाइजर्स का पूर्ण उपयोग; और (iii) एकमुश्त राजकोषीय प्रोत्साहन । ब्राज़ील में केंद्रीय बैंक ने प्रथम वर्ग के उपायों का कार्यान्वयन किया था, जबकि वर्ग (ii) की नीतियां वहाँ पहले से लागू थी। इनके अलावा, टैक्स ब्रेक्स और सार्वजनिक क्षेत्र वेतन वृद्धियों के संयोजन सहित विवेकाधीन प्रोत्साहन उपाय और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा सक्रिय रुख भी वैश्विक वित्तीय संकट के प्रभाव को रोकने के लिए किये गये थे।

2.67 केंद्रीय बैंक ने आरक्षित नकदी अपेक्षाओं को 40 प्रतिशत घटा कर अतिरिक्त चलनिधि भी सुलभ करायी, जिससे छोटे बैंकों को अपने मध्यम आकार के कंपनी उधारकर्ताओं की ऋण जरूरतों को पूरा करने तथा व्यक्तिगत साख को समर्थन देने में मदद मिली। हालांकि केंद्रीय बैंक ने समग्र मांग का समर्थन करने में कोई प्रत्यक्ष भूमिका नहीं निभाई थी किन्तु जब ब्याज दरें 15 वर्ष में सबसे कम स्तर पर पहुँच गई तो उसके द्वारा इस स्तर पर किये गये नीति उपायों के परिणाम दिखाई दिये। इसके अतिरिक्त, एक बेहतर सामाजिक अंतरण प्रणाली से स्वचालित स्टैबिलाइजर तंत्र के परिचालन और उसकी प्रभावोत्पादकता में वृद्धि हुई तथा संवृद्धि पर प्रतिचक्रीय प्रभाव पड़ा। सरकार और केंद्रीय बैंक, दोनों की समन्वित नीति अनुक्रिया से ब्राज़ील की अर्थव्यवस्था को संकट से बाहर आकर तेजी से सुधार की ओर अग्रसर होने में सहायता मिली।

दक्षिण अफ्रीका

2.68 1994 में लोकतांत्रिक नियम की ओर दक्षिण अफ्रीका के परिवर्तन से पूर्व उसकी समष्टि आर्थिक नीति पर राजकोषीय नीति को प्रभुत्व था। दि साउथ अफ्रीकन रिज़र्व बैंक (एस ए आर बी) ने पहले सरकारी बांडों का बाजार बनाने के लिए उत्तरदायी एक एजेंसी के रूप में कार्य किया था। किन्तु, 1996 में संवृद्धि, नियोजन और पुनर्वितरण नीति (जी ई ए आर) अपनाये जाने के बाद दक्षिण अफ्रीका में राजकोषीय अनुशासन लागू किया गया था। राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय पर बल देते हुई जी ई ए आर नीति में यह परिकल्पना की गई है कि राजकोषीय नीति का संचालन और वित्तपोषण अस्फीतिकारी तरीके से होगा, जब कि मौद्रिक नीति मुद्रास्फीति का निम्नस्तर प्राप्त करने और उसे निम्न स्तर पर ही बनाये रखने पर केंद्रित होगी। सरकार का लक्ष्य है कि परंपरागत बजट घाटा-जी डी पी अनुपात घटा कर प्रति वर्ष 3 प्रतिशत से कम कर दिया जाय। एक मध्यावधि व्यय ढांचा भी लागू किया गया था जिसके अनुसार प्रत्येक राजकोषीय वर्ष के द्वितीयार्ध में एक मध्यावधि बजट नीति विवरण प्रकाशित किया जाता है।

2.69 दक्षिण अफ्रीका के नये संविधान के अंतर्गत, एस ए आर बी को परिचालन स्वतंत्रता की गारंटी दी गई थी। मौद्रिक नीति के उद्देश्य और उसका ढांचा भी 1990 के वर्षों के दौरान सार्थक रूप से बदल गया। उसने मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण से शुरूआत की, जबकि मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण बाद में लागू किया गया।

2.70 1990 के वर्षों के दौरान प्रारंभ किये गये राजकोषीय समेकन उपायों से भी वर्धमान मौद्रिक नीति स्वतंत्रता सुनिश्चित की गई। सरकार के कर्ज का प्रबंध करने के लिए 1999 में राष्ट्रीय राजकोष की स्थापना की गई थी। चूंकि कर्ज प्रबंधन अधिक सक्रिय बन गया था, सरकार ने बाजार के साथ एक पारदर्शी संबंध रखना प्रारंभ कर दिया था। एस ए आर बी और अन्य एजेंसियों के साथ घनिष्ठ समन्वय से, सरकारी बांड बाजार के विकास के लिए ढांचागत कानूनी और आधारभूत दबावों का भी समाधान किया गया था।

2.71 फरवरी 2000 में मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण अपनाये जाने से राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच आगे और समन्वय होना जरूरी हो गया। उसके ढांचे के अंतर्गत मौद्रिक नीति परिचालन, एस ए आर बी के साथ परामर्श करके सरकार द्वारा निर्धारित मुद्रास्फीति लक्ष्य प्राप्त करने के लिए वैध रूप से स्वतंत्र एस ए आर बी द्वारा संचालित किये जाते हैं।

2.72 1994 से राजकोषीय नीति का फोकस समेकन पर रहा है और इसलिए वह सामान्य रूप से उद्देश्य में प्रतिचक्रीय रहा है। चक्रीय उलटाव की अवधि के दौरान सरकार के राजकोषीय अनुशासन से 2006 और 2007 में सीमांत अधिशेष प्राप्त करने में मदद मिली। एक बेहतर राजकोषीय नीति मिश्रण से उत्पादन और कीमत स्तर परिवर्तनीयता भी कम हो गई। यद्यपि नीतियों का कोई प्रत्याशित समन्वय नहीं रहा है, यह देखा गया है कि मौद्रिक नीति राजकोषीय नीति के प्रति प्रतिक्रिया करती है किन्तु राजकोषीय नीति कभी भी मौद्रिक नीति के लिए कोई समस्या नहीं रही है। राजकोष और केंद्रीय बैंक के बीच एक समझौता ज्ञापन के रूप में समन्वय की कुछ व्यवस्था है, जिसके अंतर्गत तीन स्थायी समितियों का प्रावधान है। गवर्नर

और वित्त मंत्री के बीच नियमित रूप से द्विपक्षीय बैठकें आयोजित की जाती हैं जिनमें चर्चा का विषय सुस्पष्ट राजकोषीय-मौद्रिक नीति मिश्रण न होकर आम तौर पर समग्र रणनीतिक और तकनीकी मुद्दों पर केंद्रित होता है।

2.73 वैश्विक वित्तीय संकट के बाद की अवधि के दौरान राजकोषीय प्राधिकारियों ने एक मजबूत प्रतिचक्रीय नीति के साथ अनुक्रिया की। इससे घटे हुए मुद्रास्फीतिकारी दबावों के अनुरूप उपयुक्त मौद्रिक नीति द्वारा सम्पूरित एक बड़ा राजकोषीय प्रोत्साहन आवश्यक हो गया। एस ए आर बी ने दिसंबर 2008 और नवंबर 2010 के बीच नीति दरों में तेजी से कमी की। बाद में जुलाई 2012 में एस ए आर बी ने फिर नीति दर कम की क्योंकि बाह्य कारणों जैसे राजकोषीय मितव्ययिता उपाय और यूरो क्षेत्र में बैंक डिलीवरेजिंग से संवृद्धि चिंताएं उभर आयी थी। उद्देश्य यह रहा है कि देशी संवृद्धि चिंताओं से निपटा जाए और मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं का सुनियंत्रण सुनिश्चित किया जाए। इसी प्रकार, हाल के वर्षों में राजकोषीय नीति का लक्ष्य संवृद्धि की आवश्यकताओं और राजकोषीय निरंतरता बनाये रखने के बीच एक अच्छा संतुलन स्थापित करना है। संक्षेप में, एस ए आर बी एक लचीले मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण ढांचे के भीतर रह कर मौद्रिक नीति का संचालन कर रहा है जो मुद्रास्फीति के अतिरिक्त, संवृद्धि, नियोजन और वित्तीय स्थिरता पर मौद्रिक नीति कार्रवाइयों के निहितार्थों पर विचार करता है।

रूस

2.74 यूनियन सोवियत सोशेलिस्ट रीपब्लिक (यू एस एस आर) के विघटन के साथ रूस में राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय-ढांचे में सार्थक परिवर्तन हुआ। 1991 में, दि स्टेट बैंक ऑफ दि यू एस एस आर भंग कर दिया गया था और नया नाम बैंक ऑफ रशिया (बी ओ आर) रखा गया। 1992 में एकल केंद्रीयकृत फेडरल राजकोष प्रणाली की स्थापना के बाद बैंक ऑफ रशिया को अब फेडरल बजट के लिए नकदी सेवाएं उपलब्ध कराने की आवश्यकता नहीं रही थी। जुलाई 1993 में, रूबल क्षेत्र की समस्याओं के कारण रूस को रशॅन रूबल लागू करना पड़ा और 1993 पूर्व के रूबल का विमुद्रीकरण किया गया। ''दीसेंट्रल बैंक ऑफ दि रशॅन फेडरेशन'' (बैंक ऑफ रशिया) संबंधी कानून (अनुच्छेद 22) के अंतर्गत बैंक ऑफ रशिया को फेडरल, क्षेत्रीय और स्थानीय सरकारी ढांचों से स्वतंत्र रह कर कार्य करने का प्रावधान किया गया है। हालांकि, बी ओ आर दि स्टेट डूमा ऑफ दि फेडरल असेंबली ऑफ दि रशॅन फेडरेशन के प्रति उत्तरदायी है। जहाँ बी ओ आर का मुख्य कार्य रशॅन रूबल को संरक्षण प्रदान करना तथा उसकी स्थिरता सुनिश्चित करना है वहीं एकल-राज्य मौद्रिक नीति फेडरल सरकार के सहयोग से निर्मित और कार्यान्वित की गई है।

2.75 वित्त मंत्रालय के एक एजेंट के रूप में, बी ओ आर ने सरकारी प्रतिभूति बाजार का विकास किया। प्रारंभिक अवधि के दौरान सरकार के राजकोषीय घाटे के आकार और अस्थिरता के कारण मौद्रिक नियंत्रण कमज़ोर हो गया था। कभी-कभी बड़े ढांचागत दबावों से निपटने के लिए किये जाने वाले उपाय कठोर मांग प्रबंध नीतियों की अपेक्षा के विरोध में पाये गये। 1993 के द्वितीयार्ध में उच्चतर व्यय और निम्नतर कर राजस्वों के कारण घाटा बढ़ गया और जिससे केंद्रीय बैंक की ओर से सरकार को अधिक ऋण उपलब्ध कराना पड़ा। 1994 में भारी घाटे के कारण भी केंद्रीय बैंक द्वारा वित्तपोषण किये जाने की आवश्यकता पड़ी जो 1993 के अंत की स्थिति के अनुसार आधार मुद्रा के स्टॉक की लगभग द्विगुणित राशि के बराबर था। केंद्रीय बैंक ने निर्देशित ऋणों को नियंत्रित करने का प्रयास किया था किन्तु उसकी निवल देशी आस्तियां 1994 के दौरान चौगुनी से अधिक थी। राजकोषीय चिंताओं को समझते हुए निवेशक रूबल मूल्यवर्ग वाली आस्तियों से हटना शुरू हो गये थे और अक्तूबर 1994 में एक विदेशी मुद्रा संकट खड़ा हो गया।

2.76 इस संकट के कारण कठोर राजकोषीय और ऋण नीतियां बनीं और केंद्रीय बैंक द्वारा खरीदी गई विदेशी मुद्रा 1995 में मौद्रिक संवृद्धि का मुख्य स्रोत बनी । 1995 में बी ओ आर ने फेडरल बजट घाटे के वित्तपोषण के लिए ऋण देना बंद कर दिया और अर्थव्यवस्था के अलग-अलग क्षेत्रों को भी केंद्रीकृत ऋण बंद कर दिये। इन नीतियों से एक विनिमय दर आधारित मौद्रिक नीति अपनाया जाना सुलभ हो गया। इस समय तक, सरकारी प्रतिभूति बाजार तर्कसंगत रूप से सुविकसित हो गया था। राजकोषीय घाटे का घटा हुआ मौद्रिक वित्तपोषण किये जाने और निर्देशित ऋण की प्रथा समाप्त कर दिये जाने के साथ बी ओ आर अप्रत्यक्ष उपकरणों के इस्तेमाल पर अंतरित हो गया और विशेष रूप से उन पर, जो उसके मौद्रिक नीति परिचालनों में बाजार आधारित थे। यद्यपि प्रत्यक्ष मुद्रीकरण 1995 में बंद कर दिया गया था, वर्धमान पूंजी बहिर्वाहों की आधार मुद्रा संवृद्धि पर प्रभाव तथा सरकारी घाटों का वित्तपोषण अधिकांशतः बी ओ आर द्वारा विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों की बिक्री से प्रतिसंतुलित हो गया था। मध्य 1998 तक विनिमय दर नीति का इस्तेमाल चिरस्थायी राजकोषीय घाटे के मुद्रास्फीतिकारक

प्रभाव को कम से कम करने में किया गया था। इस अवधि के दौरान नीतिविकल्पों का उल्लेख करते हुए गैदर (1999) ने ध्यान दिलाया है कि :-

> 1997 के शरत्काल और अगस्त 1998 के बीच रूस की सरकार के सामने दो संभाव्य रणनीतियों के बीच विकल्प था। पहला यह प्रदर्शित करना था कि उसके पास वह राजनैतिक इच्छा शक्ति है, ताकि सख्त बजट दबावों को आरोपित करते हुए तेल और गैस क्षेत्रों जैसे बड़े उद्यमों के साथ अपने संबंध सुधार कर बजट को कठोर बना सके। दूसरा यह था कि मुद्रास्फीति निवारक नीतियों को बढ़ावा देने के प्रयास का परित्याग करना छोड़ दिया जाये। दुर्भाग्यवश, बजटीय नीति को कठोर बनाने संबधी प्रयास को पर्याप्त राजनैतिक समर्थन नहीं मिला था। परिणाम अपरिहार्य थाः नरम बजट दबावों, नरम बजट नीति और नरम मौद्रिक नीति का जारी रहना।

2.77 1995-97 के दौरान मौद्रिक स्थिरीकरण की ओर नीति उपायों के इस्तेमाल के बावजूद मुद्रास्फीति से नकद जमाराशियां कम हो गई और जिससे 1998 में बजट घाटे का वित्तपोषण करना अधिक कठिन हो गया था। ई एम डी ई की ओर विस्तारित नकारात्मक बाजार रुख के अतिरिक्त, अर्थव्यवस्था में नकद जमाराशियों के अभाव के कारण सरकार के लिए इस बात का बड़ा भारी दबाव था कि वह अपने घाटे के वित्तपोषण के लिए घरेलू रूसी बाजार से किस प्रकार उधार राशियां प्राप्त करे। सरकार को रूबल मूल्यवर्ग के कर्ज की पुनः संरचना करने की एकतरफा कार्रवाई करनी पड़ी, जब कि बाह्य कर्ज भुगतानों पर 90 दिन का अधिस्थगन लगाने से बाजार-विश्वास को और क्षति पहुँची। संकट के दौरान, बी ओ आर ने विदेशी मुद्रा बाजार में बहुत अधिक हस्तक्षेप किया किन्तु रूबल के मूल्यहास को सीमिति न कर सका। चूंकि बी ओ आर द्वारा बैंकों तथा सरकार, दोनों को बड़े पैमाने पर समर्थन से रूबल पर दबाव गहरा गया था अतः बी ओ आर ने विनिमय दर सीमा को समाप्त कर दिया और 1999 में अस्थिर विनिमय दर प्रणाली को अपना लिया।

2.78 संकट के दौरान रूबल के महत्वपूर्ण मूल्यहास के बाद निर्यात प्रेरित सुधार आया था ; अंतर्राष्ट्रीय तेल कीमतों में वृद्धि का भी उच्चतर निर्यातों में योगदान रहा। सरकार और बैंकों को रूबल ऋण में कटौती करने के माध्यम से मौद्रिक नीति को सार्थक रूप से कठोर बनाया गया था और बी ओ आर के विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों के आहरण द्वारा कमी के माध्यम से बाह्य कर्ज की चुकौती की गई थी। 2000 और 2001 में तगड़े कर संग्रहण, तेल क्षेत्र के योगदान और रूस की सरकार द्वारा लागू किये गये व्यय नियंत्रण द्वारा समर्थित राजकोषीय समेकन का कुछ प्रमाण था। राजकोषीय समेकन से न केवल मौद्रिक नीति पर दबाव कम हुआ, बल्कि उससे मुद्रास्फीति की दर में भी कमी हुई थी। रूबल के मूल्य पर अधिशेष भुगतान संतुलन के निहितार्थ को समझते हुए बी ओ आर ने विदेशी मुद्रा बाजार में बड़े पैमाने पर खरीद की जिससे अतिरिक्त मौद्रिक कठोरता टालने को आंशिक रूप से ही निष्फल किया जा सका था। 2002 में राजकोषीय स्थिति फिर खराब हो गई क्योंकि विशेष रूप से क्षेत्रीय स्तर पर खर्चों में तेजी से वृद्धि हुई थी। बी ओ आर की हस्तक्षेप नीति से, जिसका उद्देश्य डॉलर के मुकाबले रूबल में क्रमशः अवमूल्यन करना था, 2002 में मुद्रास्फीति लक्ष्य से भारी विचलन को टालने में सहायता मिली थी, हालाँकि मुद्रा संवृद्धि लक्ष्य से अधिक बनी रही थी।

2.79 बाद के वर्षों में, बी ओ आर ने मुद्रास्फीति घटाने और रूबल मूल्यवृद्धि को नियंत्रित करने के उद्देश्य से द्विलक्षीय नीति का अनुसरण जारी रखा था, जब कि राजकोषीय नीति एक चुनौती बनती जा रही थी क्योंकि सरकार ने तेल राजस्व का आंशिक उपयोग करते हुए विभिन्न विचाराधीन सुधारों के लिए वित्त प्रदान करने का निर्णय लिया था। इस प्रकार राजकोषीय-मौद्रिक नीति मिश्रण में विरोधाभास सुस्पष्ट रूप से प्रमाणित थे। मौद्रिक नीति कुल मिला कर 2004 और 2005 में समंजनकारी थी, जब कि राजकोषीय नीति 2004 में नरम थी। आधार मुद्रा संवृद्धि में बढ़त के प्रभाव को पहचानते हुए, चूंकि सरकार ने अपने तेल राजस्व को अधिक व्यय करना शुरू कर दिया था और मुद्रास्फीति भी अपनी लक्ष्य सीमा से ऊपर थी, बी ओ आर ने अपनी हस्तक्षेप नीति को आशोधित किया तथा सीमित रूबल मूल्यवृद्धि की अनुमति देना प्रारंभ कर दिया। मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय रुख 2007-2008 में जारी रहा, यद्यपि इस बात की पहचान हो गई थी कि ऐसे समय में जब मांग के दबाव पहले से ही मजबूत हों तो प्रचक्रीय राजकोषीय शिथिलीकरण से कीमतों तथा रूबल पर दबाव बढ़ सकते हैं।

2.80 राजकोषीय नीति में शिथिलीकरण तथा तेल राजस्व में संकुचन के बाद, वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान राजकोषीय स्थिति और अधिक बिगड़ गई थी। तेल कीमतों में तेजी से गिरावट और रूबल पर दबाव से रूबल मूल्यहास की प्रत्याशाओं में एक्सपोजर्स

का बचाव करने के लिए एक ठोस अभियान चलाया गया था। बी ओ आर ने प्रारंभ में, कम ब्याज दरों पर भारी चलनिधि उपलब्ध कराते हुए (इंजेक्शन) इस बहिर्वाह को सुलभ बनाया, जबकि रूबल के तेजी से मूल्य ह्रास को रोकने तथा रूसी बैंकिंग प्रणाली के प्रति विश्वास की आकस्मिक हानि टालने के लिए बड़ी अंतर्राष्ट्रीय आरक्षित निधियों से भी आहरण (ड्रा-डाउन) किये गये थे। किन्तु, जब आरक्षित निधियों के ड्रा-डाउन की नीति वर्धमान रूप से अधारणीय बन गई तो बी ओ आर को रूबल के भारी अवमूल्यन के साथ-साथ, नीति दरों में वृद्धि के माध्यम से जनवरी 2009 में मौद्रिक नीति को कठोर बनाने के लिए बाध्य होना पड़ा । संकट के बाद की अवधि में, रूसी सरकार ने बजट 2011-13 में की गई घोषणा के अनुसार साधारण छँटनी करते हुए राजकोषीय समेकन की योजना बनाई। जहाँ बी ओ आर ने कठोरता चक्र की भी शुरूआत की थी वहीं बैंकों के पास उपलब्ध अतिरिक्त चलनिधि से मुख्य बी ओ आर नीति दरें बिना किसी बंधन के जारी रही। किन्तु, जैसा कि आइ एम एफ (2011) द्वारा विशेष रूप से उल्लेख किया गया है, बी ओ आर में अभी भी मुद्रास्फीति पर लगाम लगाने के लिए निर्णयात्मक मौद्रिक कठोरता नीति का अभाव है। संक्षेप में, रूस में राजकोषीय नीति का प्रभुत्व देखा गया है जो केन्द्रीय बैंक की द्वि-उद्देशीय योजना अर्थात् मुद्रास्फीति पर नियंत्रण और स्थिर विनिमय दर सुनिश्चित करने की राह में बहुत बड़ी चुनौतियां खड़ी कर रहा है। इससे आगे बढ़ते हुए, रूस ने 2015 तक संतुलित बजट प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया है जिससे मौद्रिक नीति का प्रभावी कार्यान्वयन किया जा सकेगा।

चीन

2.81 चीन में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय ढांचा अधिकांश ई एम डी ई की तुलना में अधिक बंधा हुआ है। पीपल्स बैंक ऑफ चाइना (पी बी सी) ने 1983 में एक केंद्रीय बैंक के रूप में शुरूआत की थी किन्तु स्टेट कौंसिल ने 1995 में उसकी स्थिति की पुष्टि की । पी बी सी को मौद्रिक नीति के कार्यान्वयन का कार्य सौंपा गया ; वह कानून के अनुसार स्वतंत्र रूप से कारोबार परिचालन कार्यान्वित करता है और वह स्थानीय सरकारों, विभिन्न स्तरों पर सरकारी विभागों, सार्वजनिक संगठनों अथवा किसी व्यक्ति द्वारा हस्तक्षेप किये जाने से मुक्त है। किन्तु पी बी सी को वार्षिक मुद्रा आपूर्ति, ब्याज दरों, विनिमय दरों और उसे सौंपे गये अन्य महत्वपूर्ण मुद्दों के संबंध में निर्णय लेने के लिए स्टेट कौंसिल की सहमति मांगनी पड़ती है। मौद्रिक नीति कार्य के एक भाग के रूप में, पी बी सी से यह अपेक्षा की जाती है कि वह मुद्रा के मूल्य की स्थिरता बनाये रखे और उसके द्वारा आर्थिक संवृद्धि को बढ़ावा दे।

2.82 पी बी सी ने 1985 से मुद्रास्फीति की अनुक्रिया में ब्याज दरों को समय-समय पर समायोजित किया है, किन्तु ये समायोजन अपर्याप्त थे क्योंकि पी बी सी के अन्य कार्यों, विशेष रूप से वित्तीय दबाव वाले राज्य-स्वामित्व के उद्यमों (एस ओ ई) द्वारा लिये गये उधारों ने मौद्रिक नीति पर दबावों के रूप में कार्य किया। अधिकांश ब्याज दरें, पी बी सी द्वारा स्टेट कौंसिल के साथ सामंजस्य करके नियंत्रित की गई थी। नया कानून लागू करने से पहले, राज्य के बैंकों को पी बी सी की ओर से दिये गये ऋणों का बहुत बड़ा भाग स्थानीय सरकारों द्वारा प्रभावित था। किन्तु, 1955 में केंद्रीय बैंक कानून पारित होने के साथ, मौद्रिक नीति और ऋण आवंटन की प्रक्रिया को प्रभावित करने में स्थानीय सरकार की भूमिका अस्वीकार कर दी गई। उसी समय, राज्य स्वामित्व वाले उद्यमों (एस ओ ई) को राजकोषीय दृष्टि से उत्तरदायी बनाने और राज्य के समर्थन के बिना वाणिज्यिक व्यवहार्य बनाने हेतु उनके लिए कठोर बजट दबाव निर्धारित किये गये थे।

2.83 पी बी सी सरकार के राजकोषीय एजेंट के रूप में भी कार्य करता है और सरकार की वित्तपोषण आवश्यकताओं का प्रमुख स्रोत रहा है। इसलिए, मौद्रिक और राजकोषीय नीति समन्वय महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि सरकार का बांड बाजार मुद्रा आपूर्ति के समायोजन के लिए केंद्रीय बैंक हेतु सबसे महत्वपूर्ण चैनलों में से एक है। जहाँ पी बी सी का परंपरागत दृष्टिकोण मौद्रिक आधार का इस्तेमाल परिचालनगत लक्ष्य के रूप में और मुद्रा आपूर्ति का मध्यवर्ती लक्ष्य के रूप में करना रहा है, अभी हाल ही में मुद्रा और बैंक उधार, दोनों की वृद्धि दरें सुस्पष्ट मध्यवर्ती लक्ष्यों के रूप में इस्तेमाल की गई हैं (गुडफ्रैंड ओर प्रसाद, 2005) ।

2.84 मुद्रा संवृद्धि पर सरकारी कर्ज के निहितार्थों का निर्धारण करते हुए विश्व बैंक (1990) ने विशिष्ट रूप से कहा है कि पी बी सी, वित्त मंत्रालय और राज्य योजना आयोग को शामिल करते हुए वास्तविक संवृद्धि के लिए अर्थव्यवस्था की संभावना के भीतर मौद्रिक संवृद्धि को रखने में सक्षम एक ऋण नियंत्रण कार्यक्रम की आयोजना प्रक्रिया का विगत दिनों में कोई परिणाम सामने नहीं आया था। इसलिए, उद्यमों और क्षेत्रों की मांग पर आधारित ऋण योजना ने मौद्रिक नीति को एक मुद्रास्फीतिकारक झुकाव प्रदान किया। जब कभी बढ़ते हुए बजट घाटे को पूरा करने के लिए बैंकिंग प्रणाली से बाहर वित्तपोषण कम पड़ गया तो केंद्रीय बैंक ऋण के लिए वित्त मंत्रालय का परिणामी अनियोजित आश्रय लिये जाने से अतिरिक्त मौद्रिक विस्तार और मुद्रास्फीति को बल मिला। अत्यधिक

विस्तारकारक मौद्रिक नीति प्रायः नियंत्रण करने और सरकार की बढ़ती हुई वित्तपोषण आवश्यकताओं के प्रतिसंतुलन में असफलता में प्रतिबिंबित हुई। उदाहरण के लिए, 1984-85 में ऋण के तीव्र विस्तार के बाद और 1985 की पहली तिमाही में 50 प्रतिशत की वार्षिक दर पर व्यापक मुद्रा संवृद्धि के चरम स्तर पर पहुँचने के बाद पी बी सी ने उभरते मुद्रास्फीतिकारक और भुगतान संतुलन के दबाव की अनुक्रिया में प्रतिबंधात्मक मौद्रिक नीति रुख अपनाया। किन्तु, सरकार द्वारा मध्य 1986 में वर्धित आर्थिक संवृद्धि में गिरावट से संबंधित चिंताओं के कारण उक्त प्रतिबंधात्मक मौद्रिक नीति रुख को उलटना पड़ा। परिणामस्वरूप, उच्चतर संवृद्धि दर के साथ मुद्रास्फीतिकारक दबाव थे और अर्थव्यवस्था अत्यधिक तेज (ओवरहीट) होना शुरू हो गई। उसके बाद, इस आवेरहीटिंग प्रवृत्ति का समाधान करने के लिए दोनों प्राधिकरणों ने समन्वित प्रयास किये। जहाँ सरकार ने राजकोषीय मितव्ययिता उपाय अपनाये, पी बी सी को एक कठोर मौद्रिक नीति का अनुसरण करने की अनुमति दी गई थी। उसके परिणामस्वरूप, संवृद्धि और मुद्रास्फीति, दोनों 1990 तक स्थिर हो गये थे। फिर भी, केंद्रीय बैंक कानून, 1995 के अधिनियमन के बाद भी मौद्रिक नीति की अप्रधानता जारी रही।

2.85 2002 में, नयी सरकार ने पहले की सरकार द्वारा अपनायी गयी नीति से भी अधिक सशक्त संवृद्धि-अनुकूल रणनीति अपनायी और बैंकों के माध्यम से वित्तपोषण होने योग्य स्थानीय बुनियादी संरचना परियोजनाओं के माध्यम से जॉब-संवृद्धि पर फोकस किया। पी बी सी के प्रतिबंधों के बावजूद, 2003 की पहली तिमाही में मौद्रिक नीति काफी अधिक मुद्रास्फीतिकारक हो गई थी। इसके अलावा, भंयकर संवेदनशील श्वसन लक्षण (एस ए आर एस) के उत्पादन प्रभाव के संबंध में चिंताओं ने पी बी सी को व्यापक मुद्रा संवृद्धि लक्ष्य तथा ऋण विस्तार को बढ़ाकर क्रमशः 18 प्रतिशत और आर एम बी 2-0 ट्रिलियन करने के लिए प्रेरित किया। इस अवधि के दौरान पी बी सी उच्चतर मुद्रास्फीति का जोखिम लेने के लिए तैयार था, जिसका चीन के वैधानिक निकाय, नैशनल पीपल्स कांग्रेस द्वारा अनुमोदन किया गया था। मध्य 2003 में, पी बी सी और नव निर्मित चाइना बैंक रेगुलेटरी कमीशन ने मुद्रास्फीतिकारक मौद्रिक नीति की चिताएं समान रूप से साझा कीं। तद्नुसार, पी बी सी ने संपत्ति क्षेत्र को उधार देने पर नियंत्रण करने के लिए जून 2003 में नीति दिशानिर्देश प्रस्तावित किये, जिन्होंने ओवरहीटिंग के संकेत दर्शाये थे। तथापि, अगस्त 2003 में स्टेट कौंसिल द्वारा अधिक विनिर्दिष्ट विनियम घोषित किये गये थे जो पी बी सी द्वारा प्रस्तावित विनियमों की तुलना में कम प्रतिबंधात्मक थे।

2.86 हाल के वर्षों में, पी बी सी ने संकलित मौद्रिक राशि को मध्यवर्ती लक्ष्यों के रूप में इस्तेमाल करते हुए अपनी मौद्रिक नीति के माध्यम से अनवरत ठोस संवृद्धि के साथ मुद्रास्फीति को कम स्तर पर संतुलित करने का प्रयास किया है, किन्तु प्रशासनिक नियंत्रणों और विनिमय दर नीति का मौद्रिक नीति की क्षमता पर प्रभाव अभी भी जारी है। एशियाई संकट के बाद से राजकोषीय नीति अधिक अतिसक्रिय रही है क्योंकि महत्वपूर्ण परियोजनाओं पर खर्च करने के लिए स्थानीय सरकारों को आगे उधार देने के लिए विशेष बांड जारी किये गये थे। 2005 के बजट में, हालांकि, राजकोषीय नीति रुख ''अतिसक्रिय'' से हट कर ''तटस्थ'' की ओर हो गया था। राजकोषीय नीति अधिकांशतः राजकोषीय समेकन पर सरकार के मध्यावधि फोकस द्वारा निर्देशित होती है जिसका उद्देश्य आकस्मिक देयताओं पर संभावित भावी खर्चों के लिए जगह बनाना होता है, जैसे बैंकिंग क्षेत्र के अधिक अनर्जक ऋण और जनसंख्या में वृद्धि के साथ उच्चतर सामाजिक व्यय की आवश्यकता।

2.87 यद्यपि चीन में राजकोषीय विवेक पर बल दिया जाता रहा है, किन्तु एक मुद्दा जिसका असर मौद्रिक नीति के स्वतंत्र संचालन पर है, वह चीन में बैंकिंग प्रणाली के माध्यम से राज्य स्वामित्व वाले उद्यमों (एस ओ ई) के वित्तपोषण के संबंध में है जो बैंकिंग के विकास, राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों में बाधा डालता है। इसलिए, पी बी सी के लिए परिचालनगत स्वतंत्रता पर प्रायः बल दिया जाता रहा है ताकि उसे अन्य सरकारी एजेंसियों से अनुमति लिये बिना अल्प सूचना पर अपने नीति उपकरणों को आक्रामक रूप से उपयोग में लाने का अधिकार प्राप्त हो सके। इस संदर्भ में, गुडफ्रैंड और प्रसाद (2006) ने प्रभावी उपकरण स्वतंत्रता के लिए दो मुख्य पूर्वापेक्षाओं का सुझाव दिया है। पहला, पी बी सी को सकल बैंक आरक्षित निधियों का पूर्ण नियंत्रण सौंपा जाना चाहिए, और दूसरा, चीने बैंकिंग प्रणाली को ब्याज-दर घट-बढ़ के खिलाफ वित्तीय रूप से सख्त बनाया जाना चाहिए, जिसे बैंकिंग क्षेत्र से एस ओ ई के लिए राजकोषीय नीति समर्थन को अलग करके प्राप्त किया जा सकता है।

2.88 यद्यपि राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के संबंध में ये संरचनात्मक मुद्दे अभी भी मौजूद हैं, निर्यात मांग और गिरते हुए निजी निवेश पर वैश्विक कारणों के प्रभाव को न्यूनतम करने के लिए संकट के दौरान मुद्रास्फीतिकारक राजकोषीय और मौद्रिक नीतियां प्रारंभ की गई थी। आई एम एफ (2009 बी) में विशिष्ट रूप से कहा गया है कि सार्वजनिक कर्ज को कम करने संबंधी राजकोषीय अनुशासन के एक दीर्घ ट्रेक रिकार्ड की वजह से चीन वह स्थान प्राप्त कर पा रहा है जिसकी राजकोषीय समर्थन के सार्थक विस्तार

के लिए आवश्यकता होती है। इस अवधि के दौरान पी बी सी की उदारतापूर्ण नरम मौद्रिक नीति से भी संवृद्धि को समर्थन मिला तथा निवेश में तेज वृद्धि के वित्तपोषण के लिए आवश्यक संसाधन जुटाने में सहायता मिली थी। इसके अलावा, अप्रैल 2012 से बड़ी सीमा के साथ विनिमय दर की अनुमति दिये जाने से भी केंद्रीय बैंक के लचीलेपन में वृद्धि होने की संभावना है जिससे अर्थव्यवस्था में मौद्रिक स्थितियों में बदलाव आएगा। संक्षेप में, चीन में राजकोषीय नीति की, देशी अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने और प्रोत्साहित करने में अधिक प्रत्यक्ष और सक्रिय भूमिका जारी है, जब कि अर्थव्यवस्था में चक्रीय झुकावों की स्थिति का सामना करने के लिए समय पर और प्रभावी कार्रवाई करने तथा वित्तीय स्थिरता बनाये रखने की भूमिका मौद्रिक नीति को सौंपी गई है।

IV. वैश्विक वित्तीय संकट और राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय

वैश्विक वित्तीय संकट की उत्पत्ति के लिए महामंदी, वैश्विक असंतुलन और अभिशासन की हानि जिम्मेवार

2.89 इसे व्यापक रूप से माना जाता है कि वैश्विक असंतुलनों की वृद्धि से वैश्विक वित्तीय संकट की उत्पत्ति होती है, जो क्रमशः उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में 2000 के प्रारंम्भिक वर्षों में, अत्यधिक खुली मौद्रिक नीति के परिणामस्वरूप थी। डॉट-कॉम बुलबुले के फूटने के बाद यू एस में मौद्रिक नीति शिथिल कर दी गई थी, जिसके अंतर्गत जून 2003 में मौद्रिक नीति दरें घटाकर एक प्रतिशत तक कर दी गई थी और उन्हें जून 2004 तक उसी स्तर पर रखा गया था, उसके बाद मौद्रिक निभाव से ही क्रमशः आहरण का प्रावधान था। यू एस में कम ब्याज दरों से प्रत्यक्ष रूप से देशी उत्पादन से अधिक मांग में न केवल वृद्धि हुई बल्कि आस्ति कीमतों में वृद्धि के परिणामस्वरूप अप्रत्यक्ष रूप से धन-संपदा के माध्यम से भी ऐसा हुआ। अतिरिक्त देशी मांग यू एस के बढ़ते हुए चालू खाता घाटे में विभाजित हो गई। इसे समुचित रूप से एशिया में पर्याप्त चालू खाता अधिशेषों द्वारा समतुल्य कर दिया गया, विशेष रूप से चीन और मध्य पूर्व में तेल निर्यातक देश और रूस, जिन्होंने सस्ती दरों पर वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति द्वारा यू एस में मांग को पूरा किया था।

2.90 स्थिर आर्थिक संवृद्धि और कम मुद्रास्फीति के अनुसार अनुकूल समष्टि आर्थिक वातावरण से बेहतर उपज की खोज, उधार देने के मानकों में छूट और जोखिमों के कम मूल्यन को प्रोत्साहन मिला (मोहन, 2009)। वित्तीय स्थिरता बनाए रखने के लिए किसी औपचारिक अधिदेश के पूर्ण रूप से वंचित होने की स्थिति में सार्वजनिक नीति की प्रवृत्ति रही कि उसने जहाँ तक आर्थिक संवृद्धि मजबूत रही और मुद्रास्फीति कम रही, बढ़ते हुए वैश्विक असंतुलनों और अनुचित वित्तीय लीवरेजिंग की अनदेखी की, जैसा कि महामंदन की स्थिति में विशेष रूप से देखा गया है और यह स्थिति लगभग डेढ़ दशक तक विद्यमान रही। केंद्रीय बैंकों ने वित्तीय असुरक्षितता की कीमत पर मुद्रास्फीति को बहुत अधिक फोकस किया है। शिथिल ऋण शर्तों को स्थान देकर एवं बढ़ते हुए कर्ज द्वारा मौद्रिक नीति निर्माताओं ने इस प्रकार विफलता के जोखिमों में वृद्धि की। इसके अलावा, अनेक केंद्रीय बैंकों ने काफी पारदर्शी होने के प्रयास किये थे और उन्होंने अपने नीति रुख में, विशेष रूप से मौद्रिक नीति के भावी दौर के संबंध में वित्तीय बाजारों का प्रगामी मार्गदर्शन किया। इस प्रकार के प्रगामी मार्गदर्शन से वित्तीय बाजारों को अतिरिक्त राहत मिली तथा जोखिमों की अंडरप्राइसिंग में मदद मिली।

2.91 अनुभवजन्य साक्ष्य से यह पाया गया है कि 2002-2006 के दौरान यू एस मौद्रिक नीति परंपरागत टेलर रूल द्वारा प्रस्तावित आधार की तुलना में अधिक खुली थी, जो कई मामलों में इस अवधि के दौरान सरकारी कार्यक्रमों द्वारा समर्थित थी और जिससे गृहनिर्माण में तेजी का संचार हुआ (टेलर, 2009) । टेलर यह भी तर्क देता है कि ई सी बी द्वारा नीति दरों को नरम बनाये जाने के कारण एक सीमा तक उसका असर यू एस की मौद्रिक नीति के निर्णयों में भी दिखाई दिया, यद्यपि यूरो क्षेत्र में मौद्रिक सुलभता का जोखिम उतना अधिक नहीं दिखाई दिया जब कि चालू खाता स्थिति आम तौर पर अधिशेष में रही। ओ ई सी डी द्वारा किये गये अध्ययन में अन्य देशों में मौद्रिक अधिकता का समर्थनकारी साक्ष्य भी पाया गया था, जिसमें यह दर्शाया गया था कि किसी भी देश में जितनी अधिक मात्रा में मौद्रिक अधिकता होगी, आवासीय निर्माण में भी उतनी ही अधिक तेजी होगी। यह देखा गया था कि आवास निर्माण बाजारों में तेज वृद्धि और विफलता (बस्ट) का असर वित्तीय बाजारों पर भी पड़ता है क्योंकि आवास-निर्माण की गिरती हुई कीमतों से बाजार चूक के दोष और मोचन निषेध की ओर प्रेरित होता है। ये प्रभाव सब-प्राईम बंधक उधार के इस्तेमाल सहित, विशेष रूप से समायोजनीय दर आवास ऋण जैसे अनेक जटिल तत्वों द्वारा विस्तृत किये गये थे, जिनसे अधिक जोखिम की ओर बढ़ा गया ।

2.92 यू एस में इसे ऐसे सरकारी कार्यक्रमों द्वारा प्रोत्साहित किया गया था जो गृह स्वामित्व को बढ़ावा देने के लिए डिज़ाइन किये गये थे। सरकार प्रायोजित एजेंसियों, अर्थात् फैनी मे एण्ड फ्रेडी मैक को बंधक-समर्थित प्रतिभूतियां, विस्तृत करने और खरीदने के लिए प्रोत्साहित किया गया था, जिनमें वे प्रतिभूतियां भी शामिल थी जो जोखिम वाले सब-प्राइम बंधकों से निर्मित थी। जहाँ विधान

अर्थात् फेडरल हाउसिंग एंटरप्राइज़ रेगुलेटरी रिफोर्म एक्ट, 2005 इन अधिकताओं को नियंत्रित करने के लिए प्रस्तावित था, उसे कानून में पारित नहीं किया गया था। संकट और भी अधिक गहरा हो गया जब यू एस सरकार (अधिक विनिर्दिष्ट रूप से राजकोष और फेडरल रिज़र्व) ने मध्य-सितम्बर 2008 के आस पास लेहमैन ब्रदर्स के दिवालियापन को रोकने के लिए हस्तक्षेप न करने का निर्णय लिया था। एक विचारधारा के अनुसार हाल के वित्तीय संकट में बाजार और साथ ही साथ राज्य का ढह जाना प्रतिबिंबित होता है, क्योंकि निजी और सार्वजनिक दोनों ही क्षेत्रों में शासन असफल हो गया था (रेड्डी, 2009)।

सभी देशों में नीति अनुक्रिया में उच्चतर समन्वय आवश्यक बनाया जाना

2.93 चूंकि संकट का प्रभाव वित्तीय से लेकर संपदा क्षेत्र (रीयल सेक्टर) तक विस्तारित हो गया था, एक व्यापक दायरे में मौद्रिक और राजकोषीय नीति उपाय इस तरीके से हाथ में लिये गये थे कि उनसे संकट-पूर्व समष्टि आर्थिक परंपरानिष्ठा से सुस्पष्ट रूप से प्रस्थान के संकेत मिले और महामंदी से प्राप्त हुए मूल्यवान पाठ प्रतिबिंबित हुए। प्रारंभ में, चूंकि वित्तीय प्रणाली में विश्वास गिरकर ऐतिहासिक निम्नता पर आ गया था और एक दिवसीय मुद्रा बाजार में चलनिधि का अभाव हो गया था तो केंद्रीय बैंकों ने सर्वप्रथम कार्रवाई की और बाजार का विश्वास पुनः स्थापित करने के लिए, विशेष रूप से बीस के समूह (जी 20ट के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कुछ समन्वित उपाय भी किये गये थे।

परंपरानिष्ठ मौद्रिक नीति, शून्य सदृश ब्याज दरों द्वारा निरुद्ध, गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति उपायों के सामने झुकना

2.94 पिछले अनुभव के विपरीत, यू एस, यूरो क्षेत्र, जापान तथा अन्य अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों ने कीमत स्थिरता के प्रति गिरावट जोखिम का विरोध करने के लिए और कुछ मामलों में तो एकमुश्त अपस्फीति से बचने के लिए अपनी मामूली नीति दरों को कम करते हुए अत्यन्त निचले स्तरों पर लाकर भी मुद्रास्फीतिकारक मौद्रिक नीति चलाना जारी रखा। प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में नीति दरें चलनिधि जाल (लिक्विडिटी ट्रैप) के सन्निकट अथवा नगण्य न्यूनतर सीमा (जेड एल बी) स्तर पर होने के बावजूद मौद्रिक नीति की प्रभावोत्पादकता बनाए रखने की आवश्यकता को महसूस करते हुए केंद्रीय बैंक ब्याज दरों के भावी दौर के बारे में सार्वजनिक प्रत्याशाओं को आकार देने के लिए संप्रेषण नीतियों का प्रयोग करते हुए अपने तुलन पत्रों को विस्तार देते हुए (मात्रात्मक सुलभता) और दीर्घावधि बांडों की लक्ष्यित खरीद के माध्यम से अपने तुलन पत्रों की संरचना में परिवर्तन करते हुए केंद्रीय बैंक गैर-मानक अथवा गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति अनुक्रिया विकल्प को सक्रिय करने की ओर प्रेरित हुए। दीर्घावधि कर्ज बांड खरीदने के साथ ही राजकोषीय और मौद्रिक नीति के बीच की विभाजन रेखा अस्पष्ट हो गई थी। इस प्रकार, 1930 के वर्षों की महामंदी के दौर से भिन्न, 2007-09 के वैश्विक वित्तीय संकट ने, विशेष रूप से मौद्रिक नीति के गैर परंपरागत उपकरणों के साथ राजकोषीय नीतियों के घनिष्ठ समन्वय को आवश्यक बना दिया। गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति उपायों के तुलन पत्र प्रभाव की विस्तार से चर्चा अध्याय 4 में की गई है।

2.95 मौद्रिक नीतियां संचालन के वैकल्पिक तरीकों पर फोकस करते हुए साहित्य में जेड एल बी के अनेक समाधान खोजे गये हैं, जैसे मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण के स्थान पर कीमत स्तर लक्ष्य निर्धारण (स्वेन्सन, 2003) अथवा विनिमय दर लक्ष्य निर्धारण (मेकुलम, 2000)। साहित्य में अन्य तत्व वित्तीय वातावरण पर एक फोकस के साथ जेड एल बी का समाधान दर्शाते हैं। उदाहरणों में केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र का विश्लेषण शामिल है (औरबैक और ऑब्स्टफेल्ड, 2005) चलनिधि आस्तियों की खरीद के माध्यम से जेड एल बी से संघर्ष करना (गुडफ्रैंड, 2000) और नकद धारिताओं और जमाराशियों पर कर लगाते हुए नकारात्मक अल्पावधि बाजार ब्याज दरों का विरोध करना [बीटर और पनिगिर्तजोगलु (1999) और गुडफ्रैंड (2000)] राजकोषीय नीति के बारे में भी, अनेक अध्ययनों द्वारा जेड एल बी स्थिति पर विजय पाने के लिए एक उपाय के रूप में उपकरणों के इस्तेमाल के लिए अनेक अध्ययनों में परीक्षण किया गया है, जैसे राजकोषीय प्रवर्धकों का विश्लेषण (क्रिस्टियानों, ईचनबॉम और रिबेलो, 2009; कोगन, क्विक, टेलर और वीलैंड, 2009; रोमर और बर्नस्टीन, 2009)

एक भिन्नता के साथ कीन्जीयन पुनः प्रकटीकरण की तरह विशाल राजकोषीय प्रोत्साहन कार्यक्रम

2.96 इसके बावजूद कि मौद्रिक नीति रक्षा की प्रथम पंक्ति बन रही है तथा केंद्रीय बैंक प्रथम उधारदाता बनते जा रहे हैं, ऋण बाजारों की अनुक्रिया धीमी थी। तदनुसार, केंद्रीय बैंकों द्वारा की गई किसी कार्रवाई से लाभ में कटौती को टालने के लिए राजकोषीय उपाय अभिनियोजित किये गये थे। संकट के बाद की अवधि में अधिकांश उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक नीति दरें शून्य सदृश होने के

साथ और वैश्विक वित्तीय संकट के मान (स्केल) तथा विस्तार को समझने के बाद राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों को सक्रिय करने वाली कीन्जीयन रणनीति का पुनः प्रकटीकरण हुआ था। देशी मांग को प्रोत्साहित करने तथा बैंकों का पुनः पूंजीकरण करने के लिए विशाल राजकोषीय पैकेजों के साथ सरकारों ने हस्तक्षेप किया। दिसंबर 2007 से 'महामंदी' की शुरूआत में यू एस में राजकोषीय नीति सक्रियता देखी गई (फरवरी 2008 में अस्थायी रूप से कर-छूट, जुलाई 2008 में प्रथम गृह खरीद टैक्स ऋण, अमरीकन रीकवरी और रीइन्वेस्टमेन्ट टैक्स एक्ट जिसमें फरवरी 2009 में कर कटौतियां, व्यक्तियों और राज्यों को अंतरण, सरकारी खरीद एक साथ मिला दिये गये थे और अस्थायी रूप से, 2009 के ग्रीष्मकाल में 'कैश फोर क्लंकर्स' कार्यक्रम[2]), इसी प्रकार, यू.के (अस्थायी उपभोग कर छूट) और चीन (बड़े पैमाने पर सार्वजनिक कार्य परियोजनाएं) में भी राजकोषीय नीति सक्रियता देखी गई। उल्लेखनीय है कि सभी देशों में ये राजकोषीय सक्रियता अनुक्रियाएं अभूत पूर्व रूप से समन्वित था, फलस्वरूप 2009 में वैश्विक जी डी पी का 1-7 प्रतिशत संयुक्त राजकोषीय प्रोत्साहन प्रदान किया गया (खातीवाडा, 2009)। इससे मंदी की भयानकता मात्र ही प्रतिबिंबित नहीं हुई बल्कि अति सक्रिय राजकोषीय नीति की संभाव्य प्रभावोत्पादकता के बारे में भी कुछ आशावाद परिलक्षित हुआ है।

2.97 यह, संकट से पूर्व के दशकों के दौरान व्याप्त आधुनिक आर्थिक दृष्टिकोण के विरोध में था, जिसमें एक गिरावट से अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहित करने में विवेकाधीन राजकोषीय नीति की प्रभावोत्पादकता के प्रति संदेह व्यक्त किया गया था, रिकार्डियन समानता परिप्रेक्ष्य में विश्वास दर्शाते हुए, राजनैतिक प्रभावों के बारे में राजकोषीय नीति कार्यान्वयन विलंबों और आशंकाओं की पहचान की गई। कारोबार चक्रों में परिवर्तनों के प्रति अनुक्रिया करने में विवेकाधीन प्रोत्साहनों की तुलना में गैर विवेकाधीन राजकोषीय नीति, स्वचालित स्टैबिलाइजर्स के अनुसार, अधिक प्रभावी मानी गई। यह समझा गया था कि सरकार के आकार में वृद्धि के साथ स्वचालित स्टैबिलाइजर्स का प्रभाव बढ़ा। इसके अलावा कर्ज के उच्च स्तरों को घटाने एवं उन्हें स्थिर करने की आवश्यकता महसूस की गई जिससे राजकोषीय नियमों को लागू करने और आर्थिक नीति-निर्माण में स्वतंत्र परिषदों का मार्ग प्रशस्त हुआ। परिणामस्वरूप, 2009 की शुरूआत में, 80 देशों ने राष्ट्रीय अथवा अधिराष्ट्रीय राजकोषीय नियम लागू किये थे (कोटरली, 2009) ।

2.98 यू एस, यू के और अन्य अनेक देशों मे आगे-पीछे परिचालित किये गये विशाल राजकोषीय प्रोत्साहन कार्यक्रमों से उनकी प्रभावोत्पादकता के बारे में वाद-विवाद को बढ़ावा मिला है। अध्ययनों में इस बात की ओर संकेत किया गया है कि 'प्रोत्साहन' के लिए उनकी प्रभावोत्पादकता केवल और उसी स्थिति में कारगर सिद्ध हो सकती है जब वे बढ़े हुए कर्ज के भुगतान के लिए भविष्य में करों की अपेक्षाओं को उत्पन्न न करें (कोक्रेन, 2011)। शीघ्रता से विशाल राजकोषीय खर्चों की जिम्मेवारी लेने की संभाव्यता के बारे में भी आशंकाएं पैदा हुई थी। चूंकि राजकोषीय घाटों में भारी बढ़ोतरी हो गई थी, ऋण गारंटियां बढ़ गई और केंद्रीय बैंकों ने जोखिम वाली निजी आस्तियां खरीदी, संकट के बाद की स्थिति के दौरान परंपरागत राजकोषीय प्रभुत्व का प्रश्न फिर उभर कर सामने आ गया है। इस प्रकार, मौद्रिक नीति-निर्माण पर राजकोषीय दबावों का शिंकजा कसना शुरू हो गया है। फिर भी, महामंदी की स्थिति के दौरान राजकोषीय सक्रियता ने अनेक अध्ययनों से अनुभवजन्य वैधता की ओर ध्यान आकर्षित किया है, जिसमें यह पाया गया है कि राजकोषीय नीति प्रोत्साहन उपाय जेड एल बी एपीसोड की अवधि घटाने में प्रभावी रहे हैं। उन्होंने यह भी दिखाया है कि मौद्रिक नीति द्वारा प्रतिक्रिया न कर सकने के कारण जेड एल बी अवधि के दौरान राजकोषीय प्रवर्धकों में वृद्धि हुई थी।

2.99 सामान्य उद्देश्यों के अनुसरण में समस्त विश्व में केवल दो प्रकार की नीतियों का ही समन्वय नहीं हुआ था बल्कि मौद्रिक और राजकोषीय विस्तार का मान (स्केल) भी अभूतपूर्व रहा है, जिससे सुपरिचित संघर्ष विरोधाभासी रूप में पुनः प्रदीप्त हो उठे (सुब्बाराव, 2009)। विशाल राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेजों और बढ़ते हुए राजकोषीय घाटों के कारण केंद्रीय बैंकों द्वारा मौद्रिक संचारण और चलनिधि प्रबंध के लिए सहवर्ती निहितार्थों के साथ उच्च सरकारी उधार कार्यक्रम आवश्यक हो गये थे। केंद्रीय बैंक का चलनिधि प्रबंध, और विशेष रूप से उसके गैर-परंपरागत उपायों के राजकोषीय और वितरणात्मक, दोनों ही परिणाम निकले थे। उदाहरण के लिए, युनाइटेड किंग्डम की मात्रात्मक सुलभता के ठोस राजकोषीय परिणाम निकले थे। यह महसूस किया गया था कि केंद्रीय बैंक के परिचालनों के लिए उसके बाजारों का विकल्प उसके राजकोषीय निहितार्थों पर इतना अधिक आधारित नहीं होना चाहिए, किन्तु उसके बजाय उस सीमा तक उनके हस्तक्षेप से सापेक्ष कीमतें विकृत हो सकती हैं और उनका वितरणात्मक असर हो सकता है जिसका लाभ उधारकर्ताओं के अन्य सेट के स्थान पर एक सेट को मिलेगा (गुडहार्ट, 2010)।

2 यह एक फेडरल स्क्रैपेज (रद्दी धातु) कार्यक्रम था जिसके अंतर्गत यू एस के निवासियों को नये ईंधन-सक्षम वाहन खरीदने के लिए आर्थिक प्रोत्साहन देने की मंशा थी । इस कार्यक्रम को यू एस अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन के रूप में प्रवर्तित किया गया था।

परिधीय यूरोप में राष्ट्रिक कर्ज संकट में राजकोषीय-वित्तीय सहबद्धता के दर्शन

2.100 वैश्विक वित्तीय संकट ने 2011 में उसके पांचवें वर्ष में अपने आपको पूर्णतया एक अलग अंदाज में प्रस्तुत किया। वह निजी कर्ज से खिसक कर राष्ट्रिक स्थान में प्रवेश कर गया। 2009 के दौरान संकट और उपलब्ध विकल्प सुस्पष्ट रूप से परिवर्तित हो गये। जैसा कि पहले चर्चा की गई है, प्रचलित कम ब्याज दरों की दृष्टि से केंद्रीय बैंकों के पास ब्याज दरों को कम करने की अधिक स्वतंत्रता नहीं थी और उसे अपरंपरागत तुलन पत्र नीतियों का सहारा लेना पड़ा। विभिन्न देशों द्वारा नीति अनुक्रिया में स्थिरता प्रदान करने तथा प्रोत्साहन देने के लिए सार्वजनिक खर्चों को मुख्य रूप से दर्शाया गया था। इसने भावी किसी भी संकट प्रबंध के लिए बहुत कम नीति स्थान छोड़ा है। वैश्विक वित्तीय संकट के राष्ट्रिक कर्ज संकट में रूपांतरण में मार्च 2008 में बीयर स्टीन्स के बचाव ने इसे सुस्पष्ट रूप से परिवर्तन बिंदु अंकित किया। सामान्यतया, उसने नीति-निर्माताओं के बारे में अपेक्षाएं रखी कि वे बैंकों को पर्याप्त वित्तीय समर्थन प्रदान करेंगे ताकि वे बैंक के ऋणदाताओं का बेलआउट कर सकें। चूंकि जनवरी 2009 में एंग्लो आइरिश बैंक के राष्ट्रीयकरण के साथ राजकोषीय प्रतिबद्धताओं के दबाव स्पष्ट हो गये थे, राष्ट्रिक और वित्तीय क्षेत्र के बीच की विभाजन रेखा अस्पष्ट हो गयी थी।

2.101 राजकोषीय - वित्तीय सहबद्धता इस तथ्य द्वारा उदाहरण बन गई है कि 2008-09 के दौरान, यूरो क्षेत्र में अपने देशी वित्तीय क्षेत्र द्वारा अनुभव किये गये तनाव की अनुक्रिया में प्रत्येक राष्ट्रिक के कीमत-लागत अंतर अधिकांशतः विकसित हो गये थे। राजकोषीय समस्याएं, क्रमशः वित्तीय क्षेत्र और संवृद्धि पर प्रतिकूल प्रतिसूचना प्रभाव डालनी शुरू हो गई थी। उच्चतर राष्ट्रिक कीमत-लागत अंतर के कारण देशी बैंकों की उधार लेने की लागत में वृद्धि हो गई थी और सार्वजनिक ऋण की धारिता पर पूंजीगत हानि उत्पन्न हो गई थी जिससे संवृद्धि में निम्नतर योगदान हो पा रहा था।

गहराते यूरोपीय संकट में बैंकिंग क्षेत्र के साथ राष्ट्रिक जोखिम का पारस्परिक प्रभाव विशेष रूप से दिखाई दिया

2.102 2011 के द्वितीयार्ध से यूरो क्षेत्र में बैंकिंग क्षेत्र के साथ राष्ट्रिक जोखिम का पारस्परिक प्रभाव क्रमशः खराब होता गया था और वित्तीय स्थिरता चिंताएं काफी बढ़ गई थी। राष्ट्रिक ऋण जोखिम और बैंकिंग क्षेत्र कमजोरी के बीच गहरा संबंध प्रतिबिंबित करते हुए, कुछ यूरो क्षेत्र देशों (स्पेन, इटली और फ्रांस) में राष्ट्रिकों और बैंकों पर ऋण चूक स्वैप (सी डी एस) कीमत-लागत अंतर में घट-बढ़ में उच्च सहसंबंध दिखाई दिया। सरकारों, चलनिधि की तंग स्थिति और सरकारी गारंटियों की घटी हुई क्रेडिटेबिलिटी की तुलना में ऋण जोखिमों में वृद्धि के माध्यम से राष्ट्रिक कर्ज समस्याओं और बैंकिंग क्षेत्र के बीच संबंध प्रमाणित हो गया था। जैसा कि कमेटी ऑन दि ग्लोबल फाइनेंशियल सिस्टम (सी जी एफ एस) 'पनेत्ता' रिपोर्ट (2011) में विशेष रूप से कहा गया है, राष्ट्रिक ऋण-साख में गिरावट से तीन चैनलों में से एक के माध्यम से वित्तीय क्षेत्र को हानि पहुँच सकती हैः (i) बढ़ा हुआ प्रतिपक्षी जोखिम, सरकार के पार्श्विक के मूल्य में कमी के कारण रेपो और डेरीवेटिव मार्केट से ऋण तक पहुँच में कमी तथा नये बांड निर्गमों के माध्यम से निधीयन की बढ़ी हुई लागत; (ii) बैंकों और उनके उधारकर्ताओं की अंतर्निहित अथवा सुस्पष्ट सरकारी गारंटी के मूल्य की हानि, और; (iii) उत्प्रेरित राजकोषीय समेकन से अल्पावधि में निजी क्षेत्र कर्ज की गुणवत्ता पर भार और ऋण मांग को क्षति पहुँच सकती है। इसके अलावा, जब राष्ट्रिक कर्ज एक ''जोखिम मुक्त'' से एक ''ऋण जोखिम'' उपकरण की ओर बढ़ जाता है तो उससे प्रतिकूल समष्टि आर्थिक और वित्तीय शाखा-प्रशाखाएं फैल सकती हैं (कैरूआना, 2011)। इसे ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रिकों के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वे उनके द्वारा जारी लिखतों की विश्वसनीयता पुनः अर्जित करें, अर्थात् उनकी श्रेष्ठ प्रतिभूति होना अथवा जोखिम मुक्त स्थिति होना, क्योंकि मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता के प्रति खतरों का सामना करने वाले केंद्रीय बैंक परिचालनों की सफलता के लिए राष्ट्रिक ऋण-शोधन क्षमता का होना एक पूर्वापेक्षा है।

2.103 अन्य प्रश्न अपने बैंकों को काफी अधिक वित्तीय समर्थन उपलब्ध कराने की पर्याप्त राजकोषीय क्षमता की उपलब्धता का है। उच्च जोखिमों और अनिश्चितताओं को देखते हुए, कुछ बैंकों को भी, विशेष रूप से, वे जो थोक निधीयन पर काफी अधिक निर्भर हैं और जोखिम भरे सार्वजनिक कर्ज के प्रति बेनकाब हो चुके हैं, अधिक पूंजी की आवश्यकता हो सकती है। राष्ट्रिकों के लिए, वित्तीय प्रणाली हेतु बैकस्टोप के रूप में कार्य करने हेतु यह महत्वपूर्ण है कि अच्छे समय में राजकोषीय सुरक्षित भंडारों में वृद्धि की जाए। परंपरागत रूप से, बैंकों की चलनिधि समस्याओं का समाधान करने के लिए केंद्रीय बैंकों को जिम्मेवार ठहराया जाता है, जब कि ऋण शोधन क्षमता की समस्याओं अथवा बैंक की असफलता का समाधान सरकार को करना होता है। यदि एक असफल हो रहे बैंक का परिसमापन करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और बाजार अधिक पूंजी उपलब्ध कराने के लिए तैयार नहीं है तो उसके बाद केवल करदाता निधीयन का ही सहारा होता है।

2.104 करदाता निधीयन के मामले में अथवा (आंशिक रूप से) असफल बैंकों के राष्ट्रीयकरण के मामले में सरकार के संबद्ध प्रतिनिधि को समाधान प्रयोग की जिम्मेवारी सौंपी जाए। हालांकि जी 20 के नेताओं ने इस प्रश्न पर उपलब्ध विकल्पों की एक श्रृंखला पर चर्चा की थी किन्तु वे एक मत नहीं हो सके थे। जहाँ कुछ देशों ने बैंकिंग लेवी अपनायी है, अन्य इस बात पर विचार कर रहे हैं कि बैंकिंग प्रणाली में सुधार करने के लिए सरकारी हस्तक्षेप से संबद्ध किसी भार में भली प्रकार से और बृहत रूप से हिस्सा बँटाने के लिए वित्तीय क्षेत्र को किस प्रकार उत्तरदायी ठहराया जाए। यूरोपीय कमीशन (ई सी) ने 28 सितंबर 2011 को 27 ई यू सदस्यों के लिए वित्तीय लेनदेन कर (एफ टी टी) के लिए प्रस्ताव पेश किया है। उन 11 सदस्य राज्यों[3] के लिए जिन्होंने एफ टी टी अपनाने के लिए सहमति दी है, ई सी ने 14 फरवरी 2013 को उक्त कर विवरण निर्दिष्ट करने का प्रस्ताव लागू किया है जिससे यह आशा की जाती है कि प्रति वर्ष 30-35 बिलियन मूल्य का राजस्व पैदा होगा।

2.105 बैंकों और राष्ट्रिकों के बीच की सहलग्नता तोड़ने के लिए हर्मन वैन रोम्पी, यूरोपीय कौंसिल के अध्यक्ष ने आवश्यक रूप से तीन कार्रवाइयां करने का सुझाव दिया है: (i) राजकोषीय शासन के लिए मजबूत ढांचे की पूर्णता और उसका पूरा-पूरा कार्यान्वयन; (ii) बैंकिंग क्षेत्र के लिए प्रभावी एकल पर्यवेक्षी व्यवस्था (एस एस एम) की स्थापना और कैपीटल रीक्वायरमेंट्स रेग्युलेशन एण्ड डाइरेक्टिव का लागू होना; तथा (iii) यूरोपीय स्थिरता प्रक्रिया के माध्यम से प्रत्यक्ष बैंक पुनर्पूंजीकरण के लिए परिचालनगत ढांचे की स्थापना। इस दिशा में काफी अच्छी प्रगति की गई है।

राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के जोखिमों की मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व के रूप में समाप्ति

2.106 जहाँ 1990 के वर्षों में केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता की ओर बढ़ती हुई प्रवृत्ति के दर्शन हुए वहीं एक दृष्टिकोण यह भी उभर रहा था कि केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता और राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों में समन्वय के अभाव से चलनिधि जाल की स्थितियों से निपटने में समस्या खड़ी हो सकती है (क्रुगमैन, 1998)। वैश्विक वित्तीय संकट के समाधान के लिए शुरू किये गये राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के प्रकाश में इस दृष्टिकोण को समर्थन मिला है, जिसके द्वारा आगे राजकोषीय नीति के साथ आगे-पीछे के क्रम में मौद्रिक नीति को कार्य करने की आवश्यकता और केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता के प्रश्न के बीच एक वाद-विवाद पुनः प्रदीप्त हो रहा है। राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय की अनिवार्यताओं के बावजूद इस बात के लिए सावधानी बरतनी होगी कि सरकार के साथ पारस्परिक क्रिया से नीति निर्माण की प्रभावोत्पादकता को कोई हानि न हो जिससे कि जनता को उसका कुपरिणाम भुगतना पड़े। उस संदर्भ में अग्रांकित व्यवस्थाएं करना महत्वपूर्ण हो गया है: केंद्रीय बैंक और कार्यपालक तथा वैधानिक शाखाओं के बीच प्रभावी संवाद और परामर्श सुनिश्चित करना और सरकार के अधिदेश से बाहर के प्रश्नों पर, निजी और सार्वजनिक तौर पर सरकार को केंद्रीय बैंक की सलाह के संबंध में सीमाएं निर्धारित करना। इसके अलावा, वित्तीय स्थिरता के निरीक्षण के लिए, संकट के बाद विकसित की जा रही संस्थागत व्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों के अधिदेश का उल्लंघन करने की एक अंतर्निहित प्रवृत्ति है।

2.107 एक संबंधित प्रश्न जिसे विशेष रूप से संकट के बाद की अवधि में उठाया गया है वह मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व का है। संकट से पूर्व, अधिकांश देशों में राजकोषीय प्रभुत्व का कम होना जारी रहा क्योंकि राजकोषीय अनुशासन केंद्रीय स्थान ग्रहण कर रहा था। किन्तु, संकट का सामना करने के लिए उन्नत अर्थव्यवस्थाओं द्वारा असाधारण राजकोषीय विस्तार से, जो वास्तव में ढांचागत राजकोषीय घाटों में परिवर्तन ला रहा है, इस आशंका को बढ़ावा मिला है कि मौद्रिक नीति के पास इस बात के अलावा कोई विकल्प नहीं होगा कि वह निरंतर बढ़ते हुए सरकारी उधारों को मध्यावधि में स्थान दे। उदाहरण के लिए, ई सी बी को कुछ यूरोपीय देशों में राष्ट्रिक कर्ज संकट का समाधान करने के लिए असामान्य निभाव दर्शाना पड़ा था।

2.108 ऐसी चिंताएं यूरो क्षेत्र तक सीमित नहीं हैं। यह व्यापक रूप से महसूस किया जाता है कि यह तो उस प्रवृत्ति की शुरूआत मात्र है जिसके द्वारा राजकोषीय नीतियां एक बार फिर विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक रुख पर अपना अधिपत्य जमाना प्रारंभ कर देंगी। राजकोषीय घाटों का गुब्बारा फूल कर इतने अधिक स्तरों पर जा पहुँचा जितना शान्ति के समय में यू एस, यू के और यूरो क्षेत्र में कभी भी नहीं दिखाई दिया था । यद्यपि 2 जनवरी 2013 की राजकोषीय क्लिफ डील से यू एस में तेज राजकोषीय संकुचन के आसन्न जोखिमों की स्थिति टल सकती थी किन्तु दीर्घावधि कर्ज

3 बेल्जीयम, जर्मनी, एस्तोनिया, यूनान, स्पेन, फ्रांस, इटली, आस्ट्रिया, पुर्तगाल, स्लोबेनिया और स्लोवाकिया

के बारे में चिंताएं बनी हुई हैं। विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं में ताजा राजकोषीय गतिविधियों को देखते हुए कीन्स की रूढ़िवादिता की वापसी संबंधी भूतपूर्व यू एस राष्ट्रपति का दृष्टिकोण लागू होता प्रतीत होता है, जिससे आने वाले वर्षों में राजकोषीय अनिवार्यताओं द्वारा धीरे-धीरे मौद्रिक नीति का संचालन प्रेरित होने लगेगा (बॉक्स II.1)।

2.109 वर्तमान में, स्थिति नियंत्रण में है क्योंकि इन राजकोषीय घाटों का वित्तपोषण करना अब तक कोई समस्या नहीं रहा है। संकट के परिणामस्वरूप अत्यधिक जोखिम विमुखता ने 'सुरक्षा अभिमुखता' और 'चलनिधि अभिमुखता' की ओर प्रेरित किया, जिसने क्रमशः यह सुनिश्चित किया कि राजकोषों के लिए काफी क्षमता थी। इस मामले में भी, हाल की अवधि में राजकोषों पर प्रतिफल दृढ़ होना आरंभ हो गया है, जो कुछ जोखिम वहन क्षमता की वापसी की सूचना देता है। चूंकि केंद्रीय बैंक बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को समर्थन देने के लिए भारी मात्रा में चलनिधि उपलब्ध करा कर असाधारण मौद्रिक निभाव दर्शा रहे हैं, अधिशेष चलनिधि स्थितियों से सरकार को उधार लेने में सहायता मिली है।

2.110 राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय में, आमने-सामने की चर्चा को निष्प्रभ करते हुए, हाल के समय में 'स्वतंत्र संव्यवहार' समन्वय मुख्य समन्वय तंत्र बन गया है। यदि राजकोषीय प्राधिकारियों को मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य, तथा राजकोषीय नीति नियमों के बारे में मौद्रिक प्राधिकारियों को पर्याप्त समझ हो तो आमने-सामने की

बॉक्स II.1
मौद्रिक नीति के लिए राजकोषीय चिंताएं और चुनौतियां

समस्त उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में हाल के वैश्विक वित्तीय संकट से महत्वपूर्ण राजकोषीय निहितार्थ सामने आये थे। यद्यपि प्रतिकूल जनसांख्यिकीय प्रोफाइल और अन्य देशी उत्तरदायित्वों के कारण संकट से पहले भी कुछ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में राजकोषीय गिरावट एक सामान्य लक्षण था, वह संकट के दौरान और भी बदतर हो गई। संकट के दौरान राजकोषीय असंतुलनों और कर्ज में वृद्धि मुख्य रूप से स्वतः कर और खर्च नीति अनुक्रियाओं के कारण धीमी संवृद्धि तथा प्रतिचक्रीय विवेकाधीन राजकोषीय उपायों की वजह से थी। परिणामस्वरूप, विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में 2008 से राजकोषीय असंतुलनों और कर्ज के स्तरों में तीव्र वृद्धि हुई है। उदाहरण के लिए, यू एस में, सरकार का सामान्य घाटा जो 2007 में संभाव्य जी डी पी में अनुपात के रूप में 2.2 प्रतिशत था वह बढ़ कर 2010 में 7-0 प्रतिशत हो गया, जब कि जी डी पी में अनुपात के रूप में सरकारी कर्ज 2007 के 43-9 प्रतिशत से बढ़ कर 2010 में 94-4 प्रतिशत हो गया। आई एम एफ के अनुसार, सरकार का कर्ज- जी डी पी अनुपात यू एस के लिए मध्यावधि में 100 प्रतिशत से भी अधिक रहने की संभावना है। अधिकांश अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के लिए भी मामला इसी प्रकार का है। 18 ओ इ सी डी देशों के अध्ययन के आधार पर, सेचेत्ती और अन्य (2011) ने पाया कि जी डी पी के लगभग 85 प्रतिशत की अवसीमा से अधिक सरकारी कर्ज जारी रखने योग्य नहीं है और वह संवृद्धि में बाधक सिद्ध हो सकता है। तद्नुसार, राजकोषीय असंतुलन और कर्ज का वर्तमान स्तर संकट-पूर्व की स्थिति की तुलना में काफी अधिक अधारणीय प्रतीत होता है। संकट-पूर्व की अवधि के दौरान, राजकोषीय और कर्ज धारणीयता कोई बहुत बड़ा प्रश्न नहीं था क्योंकि प्रचलित ब्याज दरें संवृद्धि दरों से कम थीं। किन्तु, आने वाली अवधि में यह स्थिति भिन्न होने की संभावना है क्योंकि विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में ब्याज दरें बढ़ सकती हैं जब कि संवृद्धि की संभावना में गिरावट रहेगी। इसके अलावा, राजकोषीय समेकन पर कम संवृद्धि की नकारात्मक प्रतिसूचना से राजकोषीय असंतुलनों में वृद्धि की संभावना है। संकट के बाद की अवधि में बहुत ही अधारणीय राजकोषीय परिदृष्य में केंद्रीय बैंक दो प्रकार की ऐसी चुनौतियों का सामना कर रहे हैं जिनका उनकी मौद्रिक नीति के संचालन के लिए निहितार्थ हो सकता है। प्रथम, विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में सरकारी कर्ज के साथ केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्र न केवल मौद्रिक नीति की विश्वसनीयता का मुद्दा उठाते हैं बल्कि वे यह भी दर्शाते हैं कि उन्हें बाजार जोखिमों के प्रति अरक्षित छोड़ दिया गया है, अर्थात् ब्याज दर जोखिम और ऋण जोखिम। ये पहलू मौद्रिक नीति की राह में संघर्ष खड़े कर सकते हैं। द्वितीय, विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में राजकोषीय और कर्ज धारणीयता मुद्दों का मौद्रिक नीति में महत्वपूर्ण निहितार्थ होता है और केंद्रीय बैंकों की विश्वसनीयता को अधिकांशतः राजकोषीय प्राधिकारियों के साथ समन्वय के उनके प्रकार के आधार पर निर्धारित किये जाने की संभावना होती है। यद्यपि संकट के दौरान केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र का विस्तार परंपरागत उपायों की तुलना में अधिक प्रभावी सिद्ध हुआ था किन्तु उसे बाजार जोखिमों से संबंधित चिंताओं तथा आगे भविष्य में समर्थन के नैतिक संकट और निधीयन बाजारों के बहिर्गमन की संभावना के कारण दीर्घावधि के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए। वास्तव में, एक विशेष आस्ति वर्ग को समर्थन देने के लिए केंद्रीय बैंकों द्वारा तुलन पत्र विस्तार को एक राजकोषीय उपाय के रूप में प्रारंभ करना माना गया है। प्लोज़र (2011) के अनुसार, ''एक बार जब कोई केंद्रीय बैंक राजकोषीय नीति के संचालन का जोखिम उठाता है तो उस पर निजी क्षेत्र, वित्तीय बाजारों अथवा सरकार की ओर से उसके तुलन पत्र का उपयोग अन्य राजकोषीय निर्णयों के स्थानापन्न के रूप में करने के दबाव बढ़ेंगे। ये दबाव केंद्रीय बैंक के लिए मौद्रिक नीति के संचालन में उसकी स्वतंत्रता को क्षति पहुँचा सकते हैं और उसके द्वारा कीमत स्थिरता प्राप्त करने में मौद्रिक नीति की प्रभावोत्पादकता कम हो सकती है।'' बी आई एस (2011) ने भी उस जोखिम की मुख्य-मुख्य बातें बताई हैं कि संकट के दौरान प्रारंभ किये परिचालनों को राजकोषीय नीति उपक्रमणों को निधि प्रदान करने की मंशा के रूप में महसूस किया जा सकता है, उसके द्वारा केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता को हानि पहुँच सकती है। मोहन्ती और टर्नर (2011), गग्नोन और हिंतेशवीगर (2011) और प्लोज़र (2011)

(जारी...)

(...समाप्त)

राजकोषीय असफलताओं को हल करने के लिए उच्चतर मुद्रास्फीति निर्माण की नीति के रूप में सरकारी कर्ज के मुद्रीकरण की संभावना को हाइलाइट करते हैं। संकट के बाद की अवधि में, यह उपयुक्त होगा कि केंद्रीय बैंकों को - गैर-परंपरागत उपायों को वापस लेते हुए निकासी का उत्सव मनाना चाहिए। वस्तुतः, यू एस फेडरल और यूरोपीय केंद्रीय बैंक ने 2009 के आखीर में और 2010 के प्रारंभ में निकासी रणनीतियां अपनाने की अपनी मंशा व्यक्त कर दी थी। किन्तु, यूरो क्षेत्र में गहराते कर्ज संकट और यू एस में आर्थिक स्थितियों में गिरावट के कारण ऐसी रणनीतियां फिलहाल स्थगित रखी गई थी। वर्तमान वित्तीय और आर्थिक स्थितियों को देखते हुए केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्र उपायों को समाप्त किया जाना कठिन प्रतीत होता है। इसके अलावा, केंद्रीय बैंक तुलन पत्र नीतियां उनकी प्रकृति से विनिर्दिष्ट बाजारों को ध्यान में रख कर बनाई जाती हैं और वहाँ विकृति का जोखिम है। परिणामस्वरूप, केंद्रीय बेंकों को अपने नीति उद्देश्यों को प्राप्त करने के विरूद्ध इन विकृतियों की लागत के बीच कठिन तालमेल का सामना करना पड़ सकता है। सरकारी बांडों की धारिता उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों के लिए शुभसूचक नहीं हो सकती है क्योंकि वह राजकोषीय प्राधिकारियों और कर्ज प्रबंधकों के साथ उनके भावी संबंधों को जटिल बना सकती है (मोहन्ती और टर्नर 2011)। इसके अतिरिक्त, विस्तारित तुलन पत्र विभिन्न जोखिमों के माध्यम से केंद्रीय बैंकों के लिए चुनौती प्रस्तुत कर रहे हैं। विश्वसनीय दीर्घावधि राजकोषीय समेकन योजना का अभाव मौद्रिक नीति के संचालन पर और दबाव डाल सकता है। विश्वसनीय राजकोषीय योजनाओं की अनुपस्थिति में, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बढ़ती उम्र की समस्याओं के कारण सार्वजनिक कर्जों में वृद्धि जारी रह सकती है। उसके परिणाम के रूप में ब्याज दर में वृद्धि का जोखिम है। उसी समय, बढ़ती उम्र से भावी संवृद्धि में कमी हो सकती है, जिसकी वजह से आगे राजकोषीय और कर्ज निरंतरता की हानि हो सकती है। इसके लिए, अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में व्यय और राजस्व स्तरों के अनुसार बड़े नीति परिवर्तनों की आवश्यकता है, उस मामले में उन्हें अपने कर्ज को अधारणीय स्तरों तक बढ़ने से रोकना होगा। जब कि आर्थिक स्थितियों में गिरावट के कारण व्यय और कर वृद्धि में कटौती के लिए अधिक गुंजाइश नहीं हो सकती है, राजकोषीय समेकन के लिए एक मध्यावधि-विश्वसनीय योजना आवश्यक है। जब तक मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं नियंत्रण में रहती हैं तब तक के लिए मौद्रिक नीति समंजनकारी रह सकती है। जैसे ही मुद्रास्फीति प्रत्याशा की प्रक्रिया बढ़ती है, केंद्रीय बैंक का नीति फोकस मौद्रिक नीति को कठोर बनाने की ओर अंतरित हो जाता है और तब केंद्रीय बैंक और सरकार के बीच अपने-अपने हित के लिए संघर्ष (कॉन्फ्लिक्ट ऑफ इंटरेस्ट) की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

हाल के वर्षों में मात्रात्मक सुलभता प्रारंभ की गई है और उन्नत देशों में उच्च स्तरों पर प्रत्याशित बाजार उधार मुद्रास्फीति के लिए उर्ध्वमुखी जोखिम आसन्न हैं जिनके लिए उच्चतर नीति दरों की आवश्यकता है। इससे, क्रमशः उच्च ब्याज दर वातावरण का निर्माण हो सकता है जो पहले से ही उच्च कर्ज तथा घटी हुई संवृद्धि स्थितियों का सामना कर रही उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के भविष्य के लिए शुभ नहीं होगा। इस प्रकार, मौद्रिक नीति की रचना और उसके कार्यान्वयन में राजकोषीय नीति और कर्ज प्रबंध निर्णयों की वर्धमान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका होगी। इस संदर्भ में सेचेत्ती (2011) यह तर्क प्रस्तुत करता है ''भविष्य मेंकेंद्रीय बैंक की परिचालनगत क्रियाविधियां अधिक साधनों और अधिक विकल्पों के साथ अधिक जटिल होगी। इसके अलावा, आने वाले वर्षों में, उन परिचालनगत क्रियाविधियों के लिए मौद्रिक नीति और राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध की पारस्परिक क्रिया एक बहुत बड़ी चुनौती होगी। इसलिए ऐसे केंद्रीय बैंकों को अपनी मौद्रिक नीति के कार्यान्वयन के समय कर्ज प्रबंधकों की गतिविधियों को साथ रखने की आवश्यकता होगी जो उच्च कर्ज भार वाली अर्थव्यवस्थाओं और ऐसी अर्थव्यवस्थाओं जिनमें उनके उच्च कर्ज भार के कारण कार्रवाई की गई हो, में स्थित हैं।'' बढ़ते हुए कर्ज तथा विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र की राजकोषीय चिंताओं द्वारा प्रस्तुत चुनौतियों का सामना करने के लिए, केंद्रीय बैंकों की विश्वसनीयता के लिए, अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक नीति और सुधार समिति (2011) ने इस बात पर जोर दिया है कि एक ऐसी संप्रेषण रणनीति विकसित करने की आवश्यकता है जो राजकोषीय प्राधिकारियों से केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता के बारे में व्याप्त चिंताओं पर कार्यवाही करे। आगे बढ़ते हुए, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं को ऐसी विश्वसनीय मध्यावधि राजकोषीय समेकन योजनाएं तैयार करनी चाहिए जो राजकोषीय निरंतरता के साथ अल्पावधि संवृद्धि भंगुरता के बीच एक संतुलन सुनिश्चित कर सके, जब कि मौद्रिक नीति राजकोषीय समायोजन को समर्थन दे सकती है और मध्यावधि मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं के अच्छी तरह से स्थिर हो जाने तक समंजक बनी रह सकती है। केंद्रीय बैंकों की राजकोषीय प्राधिकारियों के साथ पारस्परिक क्रिया के मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को स्थिर करने के लिए मौद्रिक नीति के निर्बाध संचालन के परिप्रेक्ष्य से ही महत्वपूर्ण होने की संभावना नहीं है बल्कि वित्तीय स्थिरता के परिप्रेक्ष्य में भी वह महत्वपूर्ण है। राजकोषीय प्राधिकारियों के साथ समन्वय की प्रक्रिया में, केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता पर कोई समझौता नहीं होना चाहिए और इसलिए उसके लिए एक सुनिर्दिष्ट ढांचे की आवश्यकता है। संक्षेप में, उन्नत देशों में मौद्रिक नीति की भावी विश्वसनीयता इन पर आश्रित है (i) संकट के दौरान, पहले से ही खरीदी गई सरकारी कर्ज प्रतिभूतियों के संबंध में चिंताओं को किस प्रकार दूर किया जाता है और (ii) उन्नत देशों में भावी राजकोषीय योजनाओं की रूपरेखा किस प्रकार प्रस्तुत की जाती है, उनमें जी डी पी के प्रति सकल कर्ज अनुपात को सहने योग्य स्तरों तक घटाने के लिए एक समय-सीमा विनिर्दिष्ट की जानी चाहिए और मध्यावधि संवृद्धि संभावनाओं में जोड़ते हुए राजकोषीय नीति उपाय शामिल होने चाहिए। इन दोनों पहलुओं के लिए केंद्रीय बैंकों, राजकोषीय और कर्ज प्राधिकारियों को एक घनिष्ठ समन्वय दृष्टिकोण का अनुसरण करने की आवश्यकता होगी।

चयनित संदर्भ

सेचेत्ती, स्टीफन जी., एम. एस. मोहन्ती और फैब्रीजिओ ज़ामपोली (2011), ''दिरीयल इफेक्ट्स ऑफ डेब्ट,'' बी आइ एस वर्किंग पेपर नं. 352

प्लोज़र, चार्ल्स । (2011), ''सम ऑब्ज़र्वेशन्स ऑन फिज़कल इंबेलेंसेज़ एण्ड मॉनिटरी पॉलिसी'' दि फिलेडेल्फिया फेड पॉलिसी फोरम ऑन ''बजट्स ऑन दि ब्रिंकः पर्सपेक्टिव्ज़ ऑन डेब्ट एण्ड मॉनिटरी पॉलिसी,'' फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ फिलेडेल्फिया, दिसंबर 2

(अन्य संदर्भों के लिए, रिपोर्ट के अंत में अध्याय 2 की पूर्ण सूची देखें)

व्यवस्था के बिना भी बातचीत की गुंजाइश है। चरम् परिस्थितियों में (जिसे सार्जेंट्स ''अनप्लेजेंट मोनेटरिस्ट अर्थमेटिक'' के रूप में परिभाषित किया जा सकता है) संयुक्त रूप से निर्णय लेने की ओर परिवर्तन आवश्यक साबित हो सकता है। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों में समन्वय से सकल मांग को प्रोत्साहित करने के लिए इन दोनों नीतियों की संयुक्त कार्रवाइयों का महत्त्व प्रतिबिंबित होता है। दीर्घ अनुसंधान से इस बात पर सर्व सम्मति उभरी है कि मौद्रिक नीति और राजकोषीय नीति को अलग करने से वे नीति पारस्परिक क्रियाएं अनदेखी रह जाती हैं जो संतुलन निर्धारित करने के लिए महत्वपूर्ण हैं (डैविग और लीपर, 2009) ।

सार्वजनिक नीति के एक महत्वपूर्ण उद्देश्य के रूप में उभरती हुई वित्तीय स्थिरता

2.111 संकट के बाद की अवधि में, आर्थिक नीति उद्देश्यों की क्रम-स्थिति में वित्तीय स्थिरता ने केंद्रीय स्थान पर कब्जा जमा लिया है, विशेष रूप से संकट से प्राप्त इस प्रमुख पाठ के बाद कि वित्तीय स्थिरता को कीमत स्थिरता और समष्टि आर्थिक स्थिरता के वातावरण में भी जोखिम में डाला जा सकता है। वैश्विक वित्तीय और आर्थिक संकट के उत्पत्ति ग्रंथ ने दर्शाया है कि कीमत स्थिरता और समष्टि आर्थिक स्थिरता की विस्तारित अवधियां नीति निर्माताओं को पेट के सबसे मुलायम भाग में मदमस्त पड़ी हुई वित्तीय अस्थिरता के प्रति अंधा बना सकती हैं। यह सुस्पष्ट हो गया है कि मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों पर समन्वय के अतिरिक्त सरकार और केंद्रीय बैंक को भी इसी तरह वित्तीय क्षेत्र संबंधी मामलों पर समन्वय की आवश्यकता है। इसके विपरीत संकट से पूर्व की अवधि में, नीति निर्माता-मौद्रिक प्राधिकारी और सरकार ने वित्तीय क्षेत्र में प्रकट घटनाओं के प्रति समन्वित विधि से प्रभावी तौर पर कभी भी अनुक्रिया नहीं की क्योंकि वित्तीय स्थिरता को केंद्रीय बैंकों के डोमेन पर एक विषय के रूप में लिया जाता था।

2.112 संकट से प्राप्त पाठ ने एक सशक्त वाद-विवाद को जन्म दिया है कि क्या वित्तीय स्थिरता को केंद्रीय बैंकों का एक सुस्पष्ट अधिदेश बना दिया जाना चाहिए। अगस्त 2007 से पूर्व, अधिकांश केंद्रीय बैंकों ने औपचारिक अथवा अनौपचारिक रूप से अपने अधिदेश में मौद्रिक नीति को सुस्पष्ट अधिदेश में सेट करने के साथ ही वित्तीय स्थिरता को भी शामिल कर लिया है। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् इस विषय पर वाद-विवाद था कि क्या केंद्रीय बैंक प्रणालीगत वित्तीय स्थिरता के प्रभारी होंगे, और यदि नहीं तो प्रणालीगत विनियामक के साथ उसके संबंध को किस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है। केंद्रीय बैंकों को यह जिम्मेदारी सौंपे जाने के पक्ष में एक तर्क यह दिया जा रहा था कि वित्तीय स्थिरता उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए वे उपयुक्त विकल्प हैं क्योंकि अनेक अर्थव्यवस्थाओं में वे बैंकिंग क्षेत्र विनियामक थे और उन्होंने अंतिम ऋण दाता (एल ओ एल आर) की भूमिका निभाई थी। इस संकट से सभी देशों में विनियामक प्रणालियों में कुछ स्पष्ट कमियाँ और असंगतियां (सामने आई) तथा वित्तीय विनियम और पर्यवेक्षण में स्पष्ट रूप से अपने-अपने हितों का संघर्ष उजागर हुआ है।

2.113 अब यह वर्धमान रूप से मान लिया गया है कि विनियामक संरचना की अनपेक्षा, वित्तीय स्थिरता के संरक्षण के लिए विनियामकों के मध्य और विनियामकों तथा सरकारों के बीच समन्वय की आवश्यकता है। अधिकांश अधिकार क्षेत्रों में संकट के बाद विनियामकों के मध्य उत्तरदायित्वों तथा अधिदेशों के अंतरण (शिफ्टिंग) पर फोकस रहा है। दि फाइनेंशियल स्टेबिलिटी ओवर साइट कौंसिल, जो यू एस में बनाई गई है, फेड के विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे, दि बैंकिंग इंश्योरेंस ओवरसाइट, दि सिक्योरिटीज़ एण्ड एक्सचेंज कमीशन्स इत्यादि के विभिन्न तत्वों को एक साथ प्रस्तुत करती है। इस प्रकार का एक प्रणालीगत जोखिम बोर्ड यूरो क्षेत्र में भी बनाया गया है। भारत में दिसंबर 2010 में वित्तीय स्थिरता और विकास परिषद (एफ एस डी सी) की स्थापना की गई थी, जिसका उद्देश्य वित्तीय स्थिरता, वित्तीय क्षेत्र विकास और अन्तर विनियामक समन्वय बनाए रखने के लिए एक तंत्र को मजबूत बनाने तथा उन्हें सांस्थानिक स्वरूप प्रदान करने हेतु एक निकाय की स्थापना करना है। इस प्रकार की परिषदें समष्टि विवेकपूर्ण विनियम और व्यष्टि विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण के लिए उत्तरदायित्वों के विशिष्ट संयोजन को संभाल सकती हैं तथा वित्तीय प्रणाली की सुरक्षा के लिए उच्च विवेकपूर्ण मानदंडों हेतु सिफारिशें कर सकती हैं (बॉक्स II.2)

2.114 प्रणालीगत जोखिम बोर्डों का निर्माण भी समष्टि विवेकपूर्ण निगरानी के कार्य के लिए सांस्थानिक व्यवस्थाओं का निर्माण किये जाने के बराबर है, ताकि केंद्रीय बैंक मौद्रिक नीति निर्माण पर फोकस कर सकते हैं। भारत सहित ई एम डी ई के देशों ने ब्याज दर नीति की संपूर्ति के लिए तथा कारोबार चक्र पर वित्तीय स्थिरता के संरक्षण के लिए समष्टि विवेकपूर्ण साधनों के अभिनियोजन का प्रयोग कर लिया है। संकट पूर्व के चरण में समष्टि विवेकपूर्ण विनियम को व्यवहार में लाने की जिम्मेवारी केंद्रीय बैंक के पास निहित थी। संकट के बाद,

बॉक्स II.2
संकट के बाद की अवधि में वित्तीय स्थिरता व्यवस्था

विभिन्न देशों में संकट के बाद, वित्तीय स्थिरता के लिए शासन व्यवस्थाओं में प्रमुख सुधार लाने की प्रवृत्ति दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। यू एस में डॉडफ्रैंक वॉल स्ट्रीट रिफोर्म और कंज्यूमर प्रोटेक्शन एक्ट का कार्यान्वयन जुलाई 2010 में किया गया था। यूरोपीय संघ (ई यू) में, यूरोपीय पार्लियामेंट ने व्यष्टि-और समष्टि दोनों ही विवेकपूर्ण क्षेत्रों में नई शासन व्यवस्थाओं के संबंध में सितंबर 2010 में कानून लागू किया था। फ्रांस और आयरलैंड ने भी अपनी पर्यवेक्षण व्यवस्थाएं क्रमशः मार्च और अक्तूबर 2010 में पुनः तैयार की थी, और मैक्सिको ने जुलाई 2010 में एक नया अंतर-एजेंसी ढांचा प्रारंभ किया था।

यू एस में डॉड-फ्रैंक अधिनियम के अंतर्गत राजकोष सचिव की अध्यक्षता में और, केंद्रीय बैंक तथा समस्त विनियामक एजेंसियों के प्रधानों की सदस्यता के साथ फाइनेंशियल स्टैबिलिटी ओवरसाइट कौंसिल (एफ एस ओ सी) का निर्माण किया गया । एफ एस ओ सी के पास नियम लिखने वाले अथवा प्रवर्तन प्राधिकारी नहीं हैं किन्तु उसके पास अनुशंसा करने की शक्तियां हैं, और कुछ मामलों में सदस्य एजेंसियों द्वारा कार्रवाई की जाने की अपेक्षा करने की शक्तियां हैं। इस अधिनियम के अंतर्गत फेड को पर्यवेक्षण का कार्य सौंपते हुए न केवल सभी बैंकों का पर्यवेक्षण करने की शक्तियां प्रदान की गई है बल्कि उन्हें ऐसे गैर-बैंकों के पर्यवेक्षण का भी अधिकार दिया गया है जो वित्तीय स्थिरता के लिए खतरा उपस्थित करते हैं। फेड को भुगतान, समाशोधन तथा निपटान प्रणाली का निरीक्षण करने के भी अधिकार दिये गये हैं।

ई. यू में अपना राष्ट्रीय आधार बरकरार रखते हुए व्यष्टि विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण के लिए समन्वय को सुदृढ़ करने की मंशा से नया कानून लागू किया गया है। इसके अंतर्गत समष्टि विवेकपूर्ण-नीति के लिए एक केंद्रीकृत ढांचा भी बनाया गया है। व्यष्टि विवेकपूर्ण नीति के संबंध में वर्तमान परामर्शदात्री समितियों के स्थान पर तीन नये यूरोपीय पर्यवेक्षी प्राधिकरण (ई एस ए) आ गये हैं और उनके मध्य सहयोग को बढ़ावा देने के लिए एक संयुक्त समिति का निर्माण किया गया था। समष्टि विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण के संबंध में, वित्तीय प्रणाली और अधिकतर समष्टि आर्थिक ढांचे में तथा वित्तीय प्रणाली के भीतर की गतिविधियों से स्थिरता के लिए उत्पन्न प्रणालीगत जोखिमों को रोकने अथवा उन्हें कम करने में योगदान देने के लिए मई 2012 में यूरोपीय प्रणालीगत जोखिम बोर्ड (ई एस आर बी) का निर्माण किया गया था। ई एस आर बी का किसी नीति उपकरण पर प्रत्यक्ष प्राधिकार नहीं है, किंतु उसे संबंधित उपकरणों को काम में लाने वाले प्राधिकारियों को सिफारिशें तथा प्रणालीगत जोखिमों के संबंध में जोखिम चेतावनी जारी करने की शक्ति प्राप्त है। ऐसी सिफारिशें जिनके साथ ''कार्रवाई अथवा स्पष्टीकरण'' के उत्तरदायित्व होते हैं उन्हें कतिपय परिस्थितियों के अंतर्गत जनता के सामने लाया जा सकता है। ई सी बी का अध्यक्ष ई एस आर बी का चेयरमैन होता है तथा उसमें 27 सदस्य राज्यों के केंद्रीय बैंक गवर्नर, तीन ई एस ए के अध्यक्ष और यूरोपीय कमीशन (ई सी) से एक प्रतिनिधि सदस्य होते हैं। आर्थिक और वित्तीय समिति (ई एफ सी) के अध्यक्ष वित्तीय मंत्रालय का प्रतिनिधित्व करते हुए एक प्रेक्षक के रूप में बैठक में भाग लेते हैं।

ई यू वित्तीय स्थिरता रक्षोपाय की दृष्टि से सदस्य राज्यों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के लिए 7 जून, 2010 को यूरोपीय वित्तीय स्थिरता सुविधा (ई एफ एस एफ) बनाई गई थी। अधिकतम 500 बिलियन की उधार क्षमता के साथ यूरो मंडल (ज़ोन) के लिए स्थायी सुरक्षात्मक उपाय (फायरवाल) के रूप में 8 अक्तूबर 2012 को यूरोपीय स्थिरता प्रक्रिया (ई एस एम) प्रारंभ की गई थी।

ई सी बी को उनका सामान्य बैंक पर्यवेक्षक बनाने की ई यू वित्त मंत्री की सहमति के साथ ही 13 दिसंबर 2012 को यूरोप ने बैंकिंग यूनियन की ओर अपना प्रथम बड़ा कदम उठाया। ई सी बी द्वारा 2014 के प्रारंभ से 200 की संख्या तक के यूरो क्षेत्र उधारकर्ताओं का प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण किये जाने की आशा है।

यू के में व्यष्टि विवेकपूर्ण के अलावा समष्टि विवेकपूर्ण विनियमों के लिए संस्थागत व्यवस्था के अनुसार एक दृष्टांत अंतरण चालू है। सरकार ने ऐसी योजनाओं की घोषणा की है जो 2012 में स्थान लेनी चाहिए (i) विवेकपूर्ण निरीक्षण की जिम्मेवारी वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफ एस ए) से अंतरित करके बैंक ऑफ इग्लैंड के अंतर्गत नये विवेकपूर्ण विनियमन प्राधिकरण (पी आर ए) को सौंपा जाना, और (ii) ''आर्थिक और वित्तीय स्थिरता के लिए संभावित खतरे वाले समष्टि मुद्दों की निगरानी'' के लिए बैंक ऑफ इंग्लैंड के भीतर एक वित्तीय नीति समिति (एफ पी सी) की स्थापना किया जाना। उक्त समिति में राजकोष, अन्य विनियामकों के प्रतिनिधि और राजकोष द्वारा नियुक्त बाह्य सदस्य शामिल होंगे । यह समिति संकट में कार्रवाई के समन्वय का नेतृत्व करेगी।

फ्रांस और आस्ट्रेलिया जैसे देशों के बीच वित्तीय पर्यवेक्षण के समन्वय का कार्य केंद्रीय बैंक के गवर्नर को सौंपा गया है। भारत में, नयी वित्तीय स्थिरता और विकास परिषद् (एफ एस डी सी) के अध्यक्ष वित्त मंत्री हैं।

इस चरण पर, किसी विशेष मॉडल के लिए स्पष्ट मत नहीं है, किन्तु देश विशेष की परिस्थितियों पर निर्भर करते हुए प्रणाली-स्तर पर्यवेक्षण के लिए भिन्न संस्थागत ढांचे विकसित किये जा रहे हैं। फिर भी, एक सामान्य रुख यह उभर रहा है कि प्रभावोत्पादकता और जवाबदेही के परिप्रेक्ष्य में तथा संकट को रोकने एवं उसे नियंत्रित करने के लिए जहाँ वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में वित्तीय क्षेत्र विनियामकों और राष्ट्रिक की संयुक्त भूमिका है, वित्तीय स्थिरता के लिए कार्यपालक जिम्मेवारी एक ही संस्था पर होगी। प्रणालीगत निरीक्षण और विवेकपूर्ण विनियम, दोनों उत्तरदायित्वों के साथ उक्त एकल संस्था बनने के लिए केंद्रीय बैंक सर्वोत्तम स्थिति में है। इसके अलावा, केंद्रीय बैंक, अन्य विनियामकों और सरकार को शामिल करते हुए एक कॉलेजियल व्यवस्था की स्थापना की जाएगी, जिसकी संयुक्त रूप से वित्तीय स्थिरता के प्रति खतरों का पता लगाने की जिम्मेवारी होगी।

अंतर्राष्ट्रीय फोरम पर, प्रणालीगत जोखिम बोर्डों का एक वैश्विक समकक्ष स्थापित करने की संभावना का परीक्षण किया जा रहा है किन्तु इस बात पर अनिश्चितता बनी हुई है कि उसे कैसे स्थापित किया जाए। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इसमें उन मुद्दों पर सावधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता होगी जो विरोधात्मक झटकों का प्रयास करेंगे। विशेष रूप से, देश-विनिर्दिष्ट अनुकूलन के संदर्भ में ऐसे व्यावहारिक सोच-विचार जिनमें लचीलेपन की आवश्यकता होती है, वैश्विक स्थिरता और राष्ट्रीय राष्ट्रिकता के हितों का संतुलन करने संबंधी मुद्दे खास हैं।

एक समष्टि विवेकपूर्ण नीति ढांचे के विकास उसका उद्देश्य और क्षेत्र, उसकी शक्ति के सेट और उपकरण तथा अन्य अभिशासन निर्धारित किये जाने पर काफी अधिक प्रयास किये जा रहे हैं।

राजकोषीय समेकन, वित्तीय पुनः संरचना, संवृद्धि पुनः प्रवर्तन की अल्पावधि-से-मध्यावधि चुनौतियों को पूरा करने में कठिन नीति तालमेल

2.115 हाल के वित्तीय संकट ने मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों की सापेक्ष प्रभावोत्पादकता के संबंध में वाद-विवाद को फिर से जीवित कर दिया है। शून्य के आसपास पहुँची ब्याज दरों और नियंत्रित परंपरागत मौद्रिक नीति के साथ, राजकोषीय नीति आर्थिक गतिविधि को बढ़ाने में संभाव्य रूप से इतनी अधिक प्रभावी पाई गई थी कि जितनी वो सामान्यतया नहीं होती । यद्यपि संकट के दौरान मौद्रिक नीति के गैर-परंपरागत उपकरणों को प्रयुक्त किया गया था, वित्तीय स्थितियों को सरल बनाने के अभूतपूर्व तरीकों से केंद्रीय बैंक के तुलन पत्रों में पूर्ण रूप से बदलाव आ गया था, जिसके द्वारा समान्य राजकोषीय प्रशासनों की तुलना में संभाव्य रूप से बृहत शाखा विस्तारों के साथ केंद्रीय बैंकों द्वारा वित्तीय प्रणाली पर जोखिमों को अवशोषित कर लिया गया है।

2.116 ब्याज दरों के निम्न स्तरों पर रहने के साथ, संकट से पहले भी मौद्रिक नीति को चुनौती का सामना करना पड़ा । किन्तु अब, जब राष्ट्रिक कीमत-लागत अंतर उच्च है, कारोबारियों और परिवारों द्वारा चुकायी गई दरों को कम करने की मौद्रिक नीति की योग्यता आगे और सीमित होती जा रही है। जिस सीमा तक उच्च सार्वजनिक कर्ज से भावी ब्याज दरों के बारे में अनिश्चितता बढ़ती है, जब सार्वजनिक ऋण/जी डी पी अनुपात में वृद्धि होती है, राजकोषीय-मौद्रिक फीडबैक्स मजबूत होने की संभावना रहती है। ऐसी स्थिति में गैर-परंपरागत मौद्रिक नीतियां अधिक संभाव्य विकल्प प्रतीत होती है। इस प्रकार की रणनीति की सफलता, यद्यपि इस बार पर निर्भर करेगी कि मौद्रिक नीति और कर्ज प्रबंध नीति व्यवहार में कितनी अच्छी तरह से समन्वित है (मोहंती और टर्नर, 2011)।

2.117 आयरलैंड, पुर्तगाल और युनान में विकास द्वारा चिह्नित, यूरोप में राष्ट्रिक कर्ज संकट के दौरान राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच पारस्परिक क्रिया सुस्पष्ट हो गई। राष्ट्रीय और ई यू स्तर पर शुरू किये गये काफी अधिक नीति प्रयासों के बावजूद, संकट से न केवल वैश्विक वसूली के लिए खतरा उत्पन्न हुआ बल्कि यूरो के अस्तित्व के लिए भी ठीक वैसा ही हुआ। दौर की एक श्रृंखला (मई 2010, फरवरी 2011, जुलाई 21, 2011, अक्तूबर 26, 2011, दिसंबर 9, 2011 और जून 28-29, 2012) के माध्यम से प्रमुख नीति पैकेजों की घोषणा की गई है। उक्त संकट ने मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के संचालन के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं के महत्व को काफी बढ़ा दिया है। यूरो प्रणाली जैसे मौद्रिक संघों में सदस्य देश स्वतंत्र राजकोषीय नीतियों का अनुसरण करते हैं किन्तु आवश्यक समायोजन करने के लिए विनिमय दर अथवा मौद्रिक नीति लीवर्स का सहारा नहीं लेते हैं। इससे सदस्य देशों द्वारा उनकी सामूहिक मौद्रिक नीति की स्वतंत्रता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए सुदृढ़ और विश्वसनीय राजकोषीय नीतियों का महत्व रेखांकित होता है।

2.118 सदस्य देशों में राजकोषीय अनुशासन के अभाव के कारण इस बात का खतरा है कि मौद्रिक नीति व्यक्तिगत सदस्यों की राजकोषीय ज्यादतियों की बंधक बन जाएगी। 9 दिसंबर 2011 की यूरोपीय कौंसिल की बैठक ने अंदर ही अंदर नये राजकोषीय नियम के साथ एक राजकोषीय स्थिरता यूनियन के लिए मार्ग प्रशस्त कर दिया। आर्थिक और मौद्रिक यूनियन में स्थिरता, समन्वय और अभिशासन संबंधी संधि-जिसे ''राजकोषीय समझौता'' के नाम से अधिक जाना जाता है- पर 25 ई यू सदस्य राज्यों के नेताओं द्वारा 2 मार्च 2012 को हस्ताक्षर किये गये थे, 1 जनवरी 2013 से लागू हुआ। भविष्य में सरकार के बजट संतुलित अथवा अधिशेष होंगे और वे अनिवार्य रूप से ई यू के स्थिरता और संवृद्धि पैक्ट (एस जी पी) में दी गई परिभाषा के अनुसार देश विनिर्दिष्ट मध्यावधि बजटीय उद्देश्य के अनुरूप भी होने चाहिए और यह अपेक्षा 1 जनवरी 2014 तक राष्ट्रीय विधान में भी अंतरित हो जाएगी। संतुलित बजट नियम से विचलन की स्थिति में एक स्वचालित सुधार तंत्र प्रेरित हो जाएगा। इसके अलावा, भविष्य में यूरो क्षेत्र सदस्यों द्वारा बनाये गये सभी आर्थिक नीति सुधारों पर संयुक्त रूप से चर्चा की जाएगी तथा उन्हें समाभिरूपता तथा प्रतियोगी विषयों के लिए समन्वित किया जाएगा ताकि यूरोपीय कौंसिल की एक वर्ष में दो बार आयोजित की जाने वाली बैठकों में नये यूरो क्षेत्र शिखर सम्मेलनों में सर्वश्रेष्ठ प्रथा के लिए बेंचमार्क स्थापित किये जा सकें। यह भी प्रस्तावित किया गया है कि ई एफ एस एफ तथा ई एस एम के माध्यम से वित्तीय सहायता प्राप्त करने वाले देशों पर तथा वित्तीय अस्थिरता के गंभीर जौखिम वाले देशों पर भी निगरानी व्यवस्था सुदृढ़ की जानी चाहिए। यूरो क्षेत्र सदस्य राज्यों में एकल पर्यवेक्षी व्यवस्था, राजकोषीय समझौते

के अनुसमर्थन के साथ प्रगति और आगे के ढांचागत सुधारों पर चल रहे कार्यों सहित ई एफ एस एफ/ ई एस एम की भूमिका के पास यूरो क्षेत्र के भविष्य की कुंजी है।

V. समापन टिप्पणी

2.119 ऊपर यथा विश्लेषित सभी देशों में समष्टि आर्थिक सिद्धांत के विकास तथा राजकोषीय मौद्रिक समन्वय से यह संकेत मिलता है कि समष्टि आर्थिक सिद्धांत ने व्यवहार में काफी हद तक राजकोषीय मौद्रिक समन्वय को प्रभावित किया है। समष्टि आर्थिक सिद्धांत के विकास ने समष्टि आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आर्थिक नीति की दोनों भुजाओं के बीच समन्वय की आवश्यकता को रेखांकित किया है। हालांकि भारी महामंदी के बाद से विभिन्न चरणों के माध्यम से राजकोषीय मौद्रिक अंतरापृष्ठ की प्रकृति से राजकोषीय प्रभुत्व और मौद्रिक प्रभुत्व की चरम स्थितियों के बीच स्विचिंग विकसित हो गयी है। नीति प्रभुत्व शासन प्रणाली के बावजूद, साहित्य राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच समन्वय की आवश्यकता की ओर ध्यान आकर्षित करता है। व्याख्यात्मक रूप से, राजकोषीय प्रभुत्व के अंतर्गत, मौद्रिक नीति राजकोषीय अपव्यय से उभरने वाले मुद्रास्फीतिकारक दबावों का सामना करने के लिए उपकरण स्वतंत्रता खो देती है। दूसरी ओर, उस स्थिति में भी जब केंद्रीय बैंक सरकारी धाटों के मुद्रीकरण के लिए बाध्य नहीं होते हैं, केंद्रीय बैंक और सरकार के बीच सैद्धांतिक रूप से हित संघर्ष से भी इन्कार नहीं किया जा सकता है, यदि घाटे के स्तर स्वतंत्र रूप से सेट हो जाते हैं। साहित्य इस संबंध में बहुत सारे प्रमाण देता है कि जब राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों ही नीतियां समन्वित होती हैं, समष्टि आर्थिक परिणाम बेहतर निकलते हैं।

2.120 राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के सैद्वान्तिक विकास से ऐतिहासिक अनिवार्यताओं और देश की परिस्थितियों के साथ सामंजस्य में उनके केंद्रीय बैंकों तथा सरकारों के बीच संस्थागत व्यवस्था विकसित करने के लिए उन्नत और उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्थाओं, दोनों के लिए मूल्यवान मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। 1990 के वर्षों के दौरान या तो यू के, जापान और कुछ अन्य उन्नत देशों में सुस्पष्ट रूप से अथवा यू एस जैसे देश में अस्पष्ट रूप से कीमत स्थिरता पर बल दिये जाने के बीच नीति समन्वय व्यवस्था में सुधार हुआ। किन्तु, अल्पावधि उत्पादन हानि प्रतिफल के समाधान हेतु नीति ढांचा लचीला बना रहा । 1999 में ई एम यू के निर्माण से राष्ट्रीय प्राधिकारियों द्वारा पालन की जा रही विकेंद्रीकृत राजकोषीय नीतियों के साथ एक सामान्य मौद्रिक नीति के समन्वय के रूप में नयी चुनौतियां पैदा हो गयी। यद्यपि राजकोषीय मौद्रिक समन्वय पर एस जी पी के अंतर्गत सांविधिक रूप से बल दिया गया था, अनुभव यह दर्शाता है कि निर्धारित सीमाओं का दृढ़ता से पालन किये बिना राजकोषीय नीतियों का अनुसरण करने के लिए क्रियाविधि संबंधी अधिदेशों ने सदस्य देशों को लचीलापन प्रदान किया। संकट से पूर्व की अवधि के दौरान के राजकोषीय अपव्यय के अप्रत्यक्ष प्रभाव वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान आवर्धित हो गये और उनसे यूरो क्षेत्र के कुछ सदस्य देशों में कर्ज की स्थिति अधारणीय स्तरों पर पहुँच गई।

2.121 ई एम डी ई का अनुभव यह दर्शाता है कि राजकोषीय नीतियों की प्रवृत्ति विकास संबंधी चिंताओं को प्रतिबिंबित करते हुए प्रभावी होती है, जब कि केंद्रीय बैंकों में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में स्वायत्तता का अभाव होता है। सभी ई एम डी ई देशों के अनुभव भिन्न रहे हैं। समग्र अनुभव यह दर्शाता है कि मध्य 1990 के वर्षों के मध्य से राजकोषीय नियम अपनाने वाले देशों की संख्या में वृद्धि हो रही है। ये नियम घाटों और/अथवा कर्ज को सीमित करते हैं तथा केंद्रीय बैंकों द्वारा कर्ज के प्राथमिक वित्तपोषण का निषेध करते हैं। इस प्रयास का एक परिणाम यह रहा है कि केंद्रीय बैंकों ने सापेक्ष रूप से अपने आपको इस बात के लिए स्वतंत्र पाया है कि वे स्वतंत्र रूप से मौद्रिक नीति का संचालन कर सकें, केवल राजकोषीय अनिवार्यताओं से ही स्वतंत्र नहीं बल्कि एक पूर्वानुमान योग्य राजकोषीय ढांचे में भी। बृहत नियंत्रण की विशेषता के साथ सुदृढ़ संवृद्धि सहित कीमत स्थिरता के वातावरण में मौद्रिक नीति को राजकोषीय नीति के प्रभुत्व से स्वतंत्रता की गुणवत्ता के समर्थन के रूप में पाया गया।

2.122 संकट के परिणामस्वरूप मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व के बारे में आशंकाएं पुनः उभर कर सामने आ गई। संकट द्वारा आवश्यक रूप से असाधारण राजकोषीय विस्तार के बारे में व्यापक रूप से चिन्ताओं के प्रति सहभागिता है और इस बात को लेकर चिंताएं हैं कि कब और कितने समय बाद इस स्थिति में परिवर्तन होगा। किन्तु, बड़ी चिंता संकट संबंधी चक्रीय घाटों के बारे में नहीं है बल्कि उससे भी कहीं अधिक चिंता अधिकांश उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अस्पष्ट रूप से बड़े पैमाने पर ढांचागत राजकोषीय घाटों के बारे में है। वर्तमान अनुमान यह दर्शाता है कि बुजुर्ग होती हुई जनसंख्या और सिकुड़ते कार्यबल के कारण घनी देश अपने सामाजिक सुरक्षा भुगतान दायित्वों में तीव्र वृद्धि पाएंगे और यह कि इन प्रतिबद्धताओं

के वित्तपोषण के लिए उन्हें साल-दर-साल काफी अधिक राशि उधार लेने की आवश्यकता होगी। इस प्रकार के मामले में, मध्यावधि के अंदर राजकोषीय अनिवार्यताओं द्वारा मौद्रिक स्वतंत्रता सीमित बनी रहेगी। इस बात पर व्यापक सहमति है कि विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में, मौद्रिक नीति के निर्बाध संचालन को सुलभ बनाने के लिए सार्वजनिक कर्ज स्तरों को धारणीय सीमाओं तक घटाना होगा, हालांकि ई एम डी ई देशों को भी, बढ़ती हुई वैश्विक अनिश्चितताओं के कारण अपने सार्वजनिक कर्ज संविभागों की आघात सहनीयता में और भी वृद्धि करने की आवश्यकता होगी।

2.123 प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक नीति नगण्य ब्याज दर सीमा के कारण दबाव में है। राजकोषीय नीति कार्रवाई के लिए स्थान अधिकांशतः समाप्त हो गया है। उच्च उत्पादन अंतराल, उच्च बेरोज़गारी स्तरों, कमज़ोर राष्ट्रिक तुलन पत्रों और स्थिर-मरणासन्न रीयल इस्टेट बाजारों, विशेष रूप से कुछ यूरो क्षेत्र अर्थव्यवस्थाओं में, की दृष्टि से मज़बूत राजकोषीय नियमों और संस्थाओं द्वारा समर्थित राजकोषीय समेकन योजनाओं तथा हकदारी सुधारों को अपनाते हुए राजकोषीय स्थितियों को धारणीय मध्यावधि पथ पर रखे जाने की आवश्यकता है। राष्ट्रिक कर्ज संकट तथा संवृद्धि भी एक दूसरे पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हुए संवृद्धि बनाम मितव्ययिता वाद-विवाद पैदा कर रहे हैं। संवृद्धि और कर्ज धारणीयता सुरक्षित रखने के लिए अल्पावधि के अतिरिक्त मध्यावधि सुधारों को भी नीति कार्रवाई में शामिल किया जाना चाहिए। एक ओर, अर्थव्यवस्था के लिए खराब दृष्टिकोण के कारण कर्ज की स्थिति बिगड़ती जा रही है। यूरो क्षेत्र में 2012 में वार्षिक जी डी पी 0.4 प्रतिशत संकुचित होने का अनुमान है, और 2013 में 0.2 प्रतिशत संकुचन के साथ यह स्थिति जारी रहेगी, जब कि संवृद्धि अंतर का बना रहना भी जारी रहेगा। दूसरी ओर, राजकोषीय समेकन दबावों के कारण अल्पावधि संवृद्धि की संभावनाएं न्यूनतर होने का अनुमान है। समेकन के दबाव के साथ, संरचनात्मक सुधारों पर ध्यान केंद्रित करते हुए संवृद्धि के नये स्रोतों का पता लगाने की आवश्यकता होगी।

3 भारत में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय: एक निर्धारण

व्यवस्था परिवर्तन, प्रथम राजकोषीय घाटों के स्वतः मुद्रीकरण से सीमित मुद्रीकरण तक और उसके बाद राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध अधिनियम प्रेरित आगे और मुद्रीकरण-नियंत्रण से भारत में मौद्रिक नीति विन्यास (सेटिंग) के लिए स्वतंत्रता की मात्रा में काफी अधिक वृद्धि हुई है। किन्तु, नयी व्यवस्था के अंतर्गत राजकोषीय-मौद्रिक समेकन के लिए नयी चुनौतियां उभर कर सामने आयी हैं, जिनके लिए अग्रांकित पर ध्यान देने की आवश्यकता है (i) परंपरागत मुद्रीकरण के बिना भी भारी राजकोषीय घाटों की मुद्रास्फीतिकारक संभाव्यता, (ii) मौद्रिक नीति पर, राजकोषीय खर्च की प्रचक्रीयता के प्रयास में मांग प्रबंध संबंधी दबाव और (iii) कर्ज गति सिद्धांतों के कारण निजी निवेश का बहिर्गमन और मौद्रिक प्रबंध पर प्रभाव। इस पृष्ठभूमि के समक्ष नये राजकोषीय नियमों तथा मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व की कल्याण लागत के पुनर्निर्धारण की आवश्यकता।

1. प्रस्तावना

3.1 इस अध्याय में, भारत में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का निर्धारण प्रस्तुत किया गया है, जिसमें संस्थागत विकास और अनुभवजन्य प्रवृत्तियों तथा विश्लेषण को शामिल किया गया है। इस अध्याय के प्रमाण इस बात की ओर संकेत करते हैं कि यद्यपि अनेक संस्थागत परिवर्तनों से उन्नत राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय सम्पादित करने में सहायता मिली है तथा मौद्रिक नीति का राजकोषीय प्रभुत्व संतुलित हुआ है, नई चुनौतियां उपस्थित हो गई हैं जिन्होंने मौद्रिक नीति की प्रभावोत्पादकता का अधिक्रमण कर लिया है।

3.2 खंड ।। में इस बात पर चर्चा की गई है कि किस प्रकार बड़े राजकोषीय घाटे और परिणामी बड़े बाजार उधार नये रूपों में मुद्रीकरण के जोखिम प्रस्तुत करते हैं और राजकोषीय तथा मौद्रिक प्राधिकारियों के मध्य समायोजन के भार की सहभागिता के एक गेम-थियोरेटिक वातावरण की ओर ले जा सकते हैं। खंड ।।। में संस्थागत ढांचे के विभिन्न चरणों में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विकास को शामिल किया गया है। खंड IV में मुद्रास्फीति प्रबंध में राजकोषीय और मौद्रिक नीति समन्वय पर प्रकाश डाला गया है। खंड V के अंतर्गत सकल मांग प्रबंध के लिए सरकारी खर्च में चक्रीयता तथा उसके निहितार्थ का विश्लेषण किया गया है। खंड VI भारत में कर्ज-घाटा गति-सिद्धांत पर अनुभवजन्य विश्लेषण प्रस्तुत करता है। खंड VII में भारत में मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व को और घटाने के लिए कठोर किन्तु चक्रीय रूप से समायोजित राजकोषीय नियमों के लिए एक मामला बनाने हेतु, इस अध्याय में शुरू किये गये विश्लेषण के नीति निहितार्थों का सार-संक्षेप दिया गया है।

II. मौद्रिक नीति संबंधी राजकोषीय अनिवार्यताएं

मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व संतुलित होता है किन्तु कम नहीं हुआ है

3.3 पिछले दो दशकों में राजकोषीय और मौद्रिक नीति सुधारों की एक श्रृंखला के परिणामस्वरूप भारत में मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व संतुलित हुआ है। इनमें से सर्वाधिक उल्लेखनीय ये थेः (i) सरकारी कर्ज की नीलामी प्रारंभ करते हुए बाजार-निर्धारित ब्याज दर प्रणाली अपनाना, (ii) भारत सरकार और भारतीय रिज़र्व बैंक के बीच दो पूरक करारों के माध्यम से राजकोषीय घाटों के स्वतः मुद्रीकरण को समाप्त किया जाना (iii) राजवित्तीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) अधिनियम, 2003 का अधिनियमन करते हुए कर्ज के मुद्रीकरण पर प्रतिबंध लगाया जाना जिसके अंतर्गत 1 अप्रैल, 2006 से सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गमों में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा अभिदान किये जाने पर रोक लग गई है। इन ऐतिहासिक कदमों से मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व में काफी अधिक कमी हुई है।

3.4 इसी अवधि के दौरान, रिज़र्व बैंक ने दूरगामी मौद्रिक सुधार प्रारंभ किये जिनके अंतर्गत बाजार आधारित सार्वजनिक कर्ज बाजारों का विकास करते हुए मौद्रिक नीति के प्रत्यक्ष उपकरणों के स्थान पर अप्रत्यक्ष उपकरणों को अपनाया गया है। इससे, मुद्रा और कर्ज बाजारों को कम्पायमान करने के लिए नियंत्रित ब्याज दरों पर आधारित वित्तीय दमन के शासन से अर्थव्यवस्था को क्रमशः बाहर निकालने में सहायता मिली है। अब ब्याज दरें अधिकांशतः बाजार द्वारा निर्धारित होती हैं। आगे-पीछे राजकोषीय और मौद्रिक

प्राधिकारियों द्वारा अनुसरण किये गये सुधारों के कारण समष्टि आर्थिक प्रबंध की प्रभावोत्पादकता को सुधारने में सहायता मिली है। किंतु, नई चुनौतियां उभर कर सामने आ गई हैं। राजकोषीय घाटे में योग के अतिरिक्त, विशेष रूप से ईंधन के लिए भारी सहायता राशियों ने मांग समायोजनों को सीमित कर दिया है और चालू खाते पर अपने प्रभाव को विस्तारित कर दिया है। भारी पूंजी आगमनों से चालू खाते के अंतराल का वित्तपोषण किया गया किन्तु पूंजी प्रवाह की अस्थिरता के कारण ब्याज दर और विनिमय दर दबावों में वृद्धि हो गई। उसी समय, खुला बाजार, परिचालन (ओ एम ओ) को, यद्यपि वे अनिवार्य रूप से एक मौद्रिक साधन है, समय-समय पर वित्तीय स्थितियों को व्यवस्थित रखने के लिए भारी बाजार उधार में फैक्टर होना पड़ा था। ऐसी अवधियों में, जब मुद्रास्फीति उच्च थी, इसने क्रमशः मौद्रिक प्रबंध पर दबाव बढ़ाये। इनके लिए, संस्थागत और कानूनी व्यवस्थाओं के अतिरिक्त उपकरणों और प्रथाओं द्वारा उपलब्ध कराये गये व्यापक ढांचे में आगे और परिवर्तन करने का पता लगाने की दृष्टि से राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय से संबंधित मुद्दों का पुनरीक्षण करने की आवश्यकता है। इन परिवर्तनों से स्वतंत्रता, जवाबदेही और बृहत समन्वय के साथ मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों की प्रभावोत्पादकता में सुधार होना चाहिए।

3.5 एक ओर जहाँ वित्तीय दमन के दिनों से एक व्यवस्था परिवर्तन हुआ है। कर्ज की स्वतः मुद्रीकरण व्यवस्था समाप्त हो गयी है। दूसरी ओर, उच्च राजकोषीय घाटों और नियंत्रित कीमत तंत्रों अथवा उपयागिताओं के कीमतीकरण में कीमत अपरिवर्तनीयता के माध्यम से मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व कायम है, जबकि इस प्रभुत्व को कम करने के लिए बड़े कदम उठाये गये थे। कर्ज के मुद्रीकरण में योगदान देने वाले तत्वों के संबंध में वैचारिक वाद-विवाद पर बॉक्स III.1 में चर्चा की गई है।

बॉक्स III.1
कर्ज का मुद्रीकरण: वैचारिक बहस

कर्ज के मुद्रीकरण को समझना एक कठिन विचार है क्योंकि उसे स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया गया है। इसे अनेक प्रथाओं के माध्यम से समझा जा सकता है जो पारदर्शी, पारभासी, अपारदर्शी अथवा प्रच्छन्न हो सकती हैं। दीर्घ काल तक कर्ज के मुद्रीकरण को ''सरकारी कर्ज को मुद्रा में परिवर्तित करने'' अथवा ''जब सरकारी बांड जारी किये जाते हैं तो केंद्रीय बैंक द्वारा उनकी खरीद'' के रूप में समझा जाता था।

दोनो परिभाषाओं के साथ अपनी-अपनी समस्याएं हैं। विशेष रूप से, सरकार नोट छाप कर अथवा कर्ज जारी कर अपने घाटों का वित्तपोषण कर सकती है। पूर्व कथित क्रिया प्रत्यक्ष रूप से मौद्रिक नियंत्रण को क्षीण करती है। आधुनिक विश्व में, जब कि सकल मुद्रा आपूर्ति को नियंत्रित करने का प्रभार केंद्रीय बैंक के पास है, सरकारें विशेष रूप से उनके घाटों का, सरकारी बांड जारी करके वित्तपोषण करती हैं। वे जनता द्वारा, मुद्रा की वर्तमान आपूर्ति से खरीदे जा सकते हैं अथवा मौद्रिक आधार में वृद्धि करके और यहाँ से मुद्रा आपूर्ति करते हुए केंद्रीय बैंक द्वारा खरीदे जा सकते हैं। मुख्य प्रश्न यह है कि क्या केंद्रीय बैंक द्वारा खरीदी गई कोई सरकारी प्रतिभूतियां कर्ज के मुद्रीकरण के बराबर होंगी।

केंद्रीय बैंक चलनिधि प्रदान करने (अथवा अवशोषित करने) के लिए प्रतिभूतियों की खरीद (अथवा बिक्री), खुला बाजार परिचालनों के माध्यम से मौद्रिक नीति का संचालन कर रहे हैं। ऐसा वे इसलिए करते हैं कि मौद्रिक आधार और/अथवा ब्याज दरों को उनके लक्ष्यों के अनुरूप समायोजित किया जा सके। ये परिचालन प्रायः दैनिक आधार पर संचालित किये जाते हैं, कभी-कभी दिन में एक बार से अधिक बार किये जाते हैं। इसलिए केंद्रीय बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद मात्र को ही यदि मुद्रीकरण के रूप में देखा जाता है तो लगभग सभी केंद्रीय बैंक सभी समय में अधिकांशतः ऐसा करते हैं। इसलिए क्या मुद्रीकरण सरकारी प्रतिभूतियों की केंद्रीय बैंक द्वारा खरीद को प्राथमिक बाजारों में ही प्रतिबिंबित करता है और द्वितीयक बाजारों में प्रतिबिंबित नहीं करता है ? यह विभेदीकरण तब तक ही कार्य करेगा जब तक केंद्रीय बैंक सरकारी कर्ज वित्तपोषण को समर्थन देने के लिए खुला बाजार खरीद में संलग्न नहीं होते हैं। यदि केंद्रीय बैंक सरकारी बांडों के प्राथमिक निर्गमों को अभिदान न देते हुए भी बैंकिंग क्षेत्र द्वारा उनकी खरीद को समर्थन देने के लिए चलनिधि प्रदान करना जारी रखते हैं तो निवल परिणाम कर्ज का मुद्रीकरण होगा। केंद्रीय बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद से मौद्रिक आधार का विस्तार होता है, किन्तु मुद्रीकरण के लिए सूक्ष्म विभेद है कि क्या इस प्रकार की खरीद सरकारी कर्ज परिचालनों के समर्थन में हैं। व्यवहार में, इनके बीच लिखित में भेद करना अब भी कठिन है कि केंद्रीय बैंक द्वारा खरीदी गई सरकारी प्रतिभूतियों का कौन सा भाग मौद्रिक नीति के संचालन के प्रयोजन से है और सरकारी उधारों के समर्थन में वे किस अनुपात में हैं। इस निर्णय की कुंजी सरकारी बांडों में केंद्रीय बैंक की खरीद आधार मुद्रा और मुद्रा आपूर्ति विस्तार के उसके लक्ष्य के अनुरूप किये जाने में है। ये लक्ष्य कर्ज प्रबंध विचार से स्वतंत्र रूप से निर्धारित किये जाने चाहिए। व्यवहार में, आज अनेक केंद्रीय बैंक कुल मौद्रिक राशियों का लक्ष्य निर्धारित नहीं करते हैं। इसके बजाय वे ब्याज दर लक्ष्य निर्धारण पर विश्वास करते हैं और अल्पावधि नीति दरों पर परिचालन करते हैं - विशेष रूप से,एक दिवसीय दर अथवा 14 दिवसीय रेपो दर। वे परिपक्वता के दीर्घावधि अंत में रेपो परिचालनों और एक मुश्त बिक्री/खरीद के माध्यम से संचालित होने वाले खुला बाजार परिचालनों के माध्यम से बैंक की आरक्षित निधियों और ब्याज दरों पर नियंत्रण रखते हैं। मात्रात्मक सुलभता के मामले में विशेष रूप से यह सत्य है। परिणामस्वरूप, प्रतिफल वक्र को प्रभावित करने के द्वारा किसी रूप में मुद्रीकरण पाया जा सकता है।

संदर्भ

थॉम्टन, डैनियल एस. (2010), ''मोनेटाइज़िंग दि डेब्ट,'' इक्नॉमिक सिनोप्सेस नं. 14, फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ सेंट लुइस।

3.6 यद्यपि एफ आर बी एम एक्ट, 2003 के अधिनियमन ने रिज़र्व बैंक को सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गमों में भाग लेने से वर्जित कर दिया है, यह सुस्पष्ट है कि भारी राजकोषीय घाटे संमाव्य रूप से किसी न किसी रूप में कर्ज के मुद्रीकरण की ओर ले जाते हैं। यह उस स्थिति में अधिक महत्वपूर्ण है जब भारी उधारों से निजी ऋण का बहिर्गमन हो जाता है तथा मौद्रिक प्राधिकारी इस बात के लिए बाध्य हो जाते हैं कि वे सरकारी बांडों की खुला बाजार खरीद के माध्यम से काफी अधिक चलनिधि उपलब्ध कराएं। इससे मौद्रिक नीति की प्रभावोत्पादकता क्षीण होती है (चार्ट III.।) ।

3.7 भारत ने कर्ज के मुद्रीकरण को हटाने की ओर तीव्र गति से प्रगति की है। दीर्घ काल तक सरकार के घाटों का तदर्थ खजाना बिलों के जारीकरण के माध्यम से स्वतः मुद्रीकरण हो जाता था। 91 दिवसीय परिपक्वता वाले ये बिल गैर -विपणन योग्य लिखत थे जो स्वतः रिज़र्व बैंक को जारी हो जाते थे ताकि वह सरकारी धाटे को पूरा करने के लिए उसके पास रखी हुई केंद्र सरकार की नकद शेष राशियों से पुनः पूर्ति कर सके। स्वतः मुद्रीकरण की यह समस्या 91 दिवसीय खजाना बिल ''सदासुलभ'' (4.6 प्रतिशत वार्षिक के नियत बट्टे पर) के निर्गम द्वारा उत्पन्न वित्तीय निरोध (रीप्रेशन) के अतिरिक्त थी जो बैंकों द्वारा अल्पावधि निवेश के लिए अथवा सांविधिक चलनिधि अनुपात (एस एल आर) के निर्वाह हेतु अपेक्षाओं का पालन करने के लिए मुख्य रूप से अपनाये गये थे। रिज़र्व बैंक को तदर्थ खजाना बिल जारी करने के द्वारा सरकारी खर्च के वित्तपोषण के कारण आरक्षित मुद्रा में वृद्धि हुई। इसके अतिरिक्त, बैंकों द्वारा अभिदत्त सतत् उपलब्ध खजाना बिलों की भी रिज़र्व बैंक ने पुनर्भुनाई की, जिससे मुद्रीकरण में वृद्धि हुई । भारत में कर्ज के मुद्रीकरण को घटाने के लिए हाल के उपायों के संबंध में बॉक्स III.2 में चर्चा की गई है।

चार्ट III.1 : उच्च मुद्रास्फीति के बीच उच्च राजकोषीय घाटों तथा बृहत् खुला बाजार खरीद से कभी-कभी मौद्रिक दबाव बढ़ता है

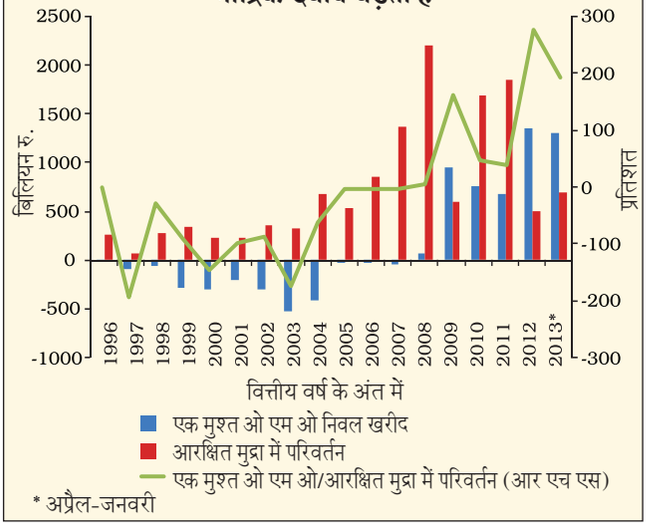

* अप्रैल-जनवरी

3.8 मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व का मुद्दा मुद्रीकरण मुद्दे के परे जाता है। यह अनेक रूपों में पाया जाता है। केंद्रीय बैंक द्वारा वित्तपोषित न किये जाने के बावजूद भारी राजकोषीय घाटों के मुद्रास्फीतिकारक परिणाम होते हैं। उदाहरण के लिए, सरकार द्वारा ऊर्जा क्षेत्र में नियंत्रित कीमतों को अविनियमित करने हेतु कुछ कदम उठाये जाने के बावजूद दमित मुद्रास्फीति, मुद्रास्फीति प्रबंधन पर देर तक जारी रहती है। प्रथम चरण पर, दमित मुद्रास्फीति, मुद्रास्फीति को पुष्ट करती है क्योंकि कीमत अनम्यता के कारण आवश्यक हो गई सहायता राशियों (सब्सिडीज) से राजकोषीय घाटे का विस्तार हो जाता है। द्वितीय चरण पर, चूंकि सब्सिडियां अधारणीय हो जाती हैं तो वे कभी न कभी बृहत पैमाने पर असतत कीमत समायोजन को आवश्यक बना देती हैं जिससे मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को बल

बॉक्स III.2
भारत में कर्ज का मुद्रीकरण

1980 के वर्षों में बाद वाले समय से मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व को घटाने के लिए अनेक कदम उठाये गये थे। प्रथम, रिज़र्व बैंक और सरकार ने बाजार आधारित सार्वजनिक कर्ज बाजार की स्थापना करने की ओर कदम बढ़ाया। नवंबर 1986 से 182 दिवसीय खजाना बिलों, अप्रैल 1992 से 364 दिवसीय खजाना बिलों और जनवरी 1993 से 91 दिवसीय खजाना बिलों की नीलामी प्रारंभ की गई थी। चूंकि नीलामी आधारित आय उच्चतर थी, सरकारी उधारों का एक वर्धमान भाग बाजार स्रोतों के माध्यम से वित्तपोषित किया जाना था, ताकि रिज़र्व बैंक द्वारा आरक्षित मुद्रा का बेहतर आरक्षण किया जा सके।

द्वितीय, रिज़र्व बैंक और भारत सरकार के बीच दो पूरक करारों (एग्रीमेंट) पर हस्ताक्षर किये गये थे। प्रथम करार पर 9 सितंबर 1994 को हस्ताक्षर किये गये थे जिसके अंतर्गत 1996-97 के साथ समाप्त होने वाली तीन वर्षों की अवधि के दौरान तदर्थ खजाना बिलों के निर्माण को सीमित करना था। तदर्थ खजाना बिलों के निवल निर्गम की एक समापन-वर्ष आधार पर उच्चतम सीमा (कैप) निर्धारित की गई थी। इसके अलावा, इस बात पर सहमति व्यक्त की गई थी कि यदि एक वर्ष के दौरान वह 10 लगातार कार्य दिवसों की निर्धारित सीमा से अधिक हो जाती है तो रिज़र्व बैंक स्वतः ही

(जारी...)

(...समाप्त)

खजाना बिलों अथवा दिनांकित प्रतिभूतियों को नीलाम करके अतिरिक्त सीमा को घटा देगा। तदर्थ खजाना बिलों के माध्यम से निधीयन को पूर्ण रूप से हटाये जाने से संबंधित द्वितीय पूरक करार पर 6 मार्च 1997 को हस्ताक्षर किये गये और मार्च अन्त 1997 की स्थिति के अनुसार खजाना बिलों की बकाया राशि को 4.6 प्रतिशत के प्रतिफल पर विशेष अद्यतन की गई प्रतिभूतियों में परिवर्तित कर दिया गया था।

अर्थोपाय अग्रिमों की एक प्रणाली (डब्ल्यू एम ए) 1 अप्रैल 1997 से लागू की गई थी। डब्ल्यू एम ए प्रणाली के अंतर्गत रिज़र्व बैंक पूर्व-घोषित छः माही सीमाओं तक अल्पावधि अग्रिम प्रदान कर रहा है, जो तीन महीने के भीतर पूर्ण रूप से अदा करने योग्य होंगे। भारत सरकार को ओक्रड्राफ्ट उठाने की भी अनुमति दी गई है किन्तु उक्त ओवरड्राफ्ट पर ब्याज दर डब्ल्यू एम ए की ब्याज दर से अधिक होगी। 1 अप्रैल 1999 से प्रभावी, ओवरड्राफ्ट 10 कार्य - दिवसों की अधिकतम अवधि तक के लिए सीमित कर दिये गये हैं। इसके अलावा, इस बात पर सहमति हुई थी कि जब भी कभी डब्ल्यू एम ए सीमा के 75 प्रतिशत की स्थिति हो जाएगी, रिज़र्व बैंक सरकारी प्रतिभूतियों के नये निर्गम जारी करने के लिए प्रवृत्त होगा। इस बात पर भी सहमति हुई थी कि रिज़र्व बैंक के पास रखी हुई सरकार की अधिशेष नकदी राशियां एक सहमत स्तर से अधिक हो जाने पर अतिरिक्त राशि का सरकार की स्वयं की प्रतिभूतियों में निवेश किया जायगा।

तदर्थ खजाना बिलों की समाप्ति के माध्यम से कर्ज के स्वतः मुद्रीकरण के ठहराव के बावजूद, अन्य रूप में मुद्रीकरण जारी रहा। रिज़र्व बैंक ने सार्वजनिक कर्ज के प्राथमिक निर्गमों को रिज़र्व बैंक पर नीलामी के विकास के परिणामस्वरूप अभिदान जारी रखा क्योंकि प्राथमिक व्यापारियों की हामीदारी क्षमता सीमित थी। उसी रूप में, कर्ज के मुद्रीकरण को हटाने की ओर तृतीय प्रमुख कदम एफ आर बी एम अधिनियम, 2003 के अधिनियम के साथ लिया गया था जिसमें 1 अप्रैल 2006 से सरकार के प्राथमिक निर्गमों में रिज़र्व बैंक द्वारा अभिदान पर रोक लगा दी गई थी।

क्या अब भारत में मुद्रीकरण को पूरी तरह से हटा दिया गया है कि रिज़र्व बैंक अब और सरकारी नीलामियों में प्राथमिक निर्गमों को अभिदान नहीं करता है ? वास्तविकता में मुद्रीकरण काफी हद तक हटा दिया गया है किन्तु पूरी तरह से नहीं हटाया जा सका है। जब तक राजकोषीय घाटे बहुत अधिक रहते हैं, बाजार उधारों का आकार भी बड़ा रहेगा और वह मौद्रिक नीति के संचालन पर अतिक्रमण करता रहेगा, इस बात की परवाह किये बिना कि कर्ज प्रबंध का संचालन किस प्रकार किया जाता है। सरकार के निवल बाजार उधार कार्यक्रम का आकार (दिनांकित प्रतिभूतियां) आठ वर्ष में लगभग 9.7 गुणा बढ़कर 2012-13 में 4.9 ट्रिलियन रूपये हो गया था। इसके अलावा, सरकार ने 364 दिवसीय खजाना बिलों के माध्यम से 1.16 ट्रिलियन रूपये के अतिरिक्त निधीयन का सहारा लिया था। इस अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक ने भारी मात्रा में निवल खुला बाजार खरीद का संचालन किया था जिसमें 2008-09 में 945 बिलियन रूपये, 2009-10 में 755 बिलियन रूपये, 2010-11 में 672 बिलियन रूपये और 2011-12 तथा 2012-13 में जनवरी तक प्रत्येक में 1.3 ट्रिलियन रूपये शामिल थे। यद्यपि, सिद्धांत रूप में रिज़र्व बैंक चलनिधि और मौद्रिक स्थितियों को प्राभावित करने के लिए खुला बाजार परिचालनों का इस्तेमाल करता है किन्तु व्यवहार में यह अंतर करना कठिन है कि खुला बाजार परिचालनों का कौन सा भाग शुद्ध रूप से इन्हीं प्रतिफलों के लिए काम में लिया गया था और कौन सा भाग उस प्रतिफल से प्रभावित हो सका है कि भारी सरकारी उधार बाजार के लिए विघटनकारी नहीं हो सकते हैं। 2008-09 में ओ एम ओ, वैश्विक वित्तीय संकट की पृष्ठभूमि में, उसी वर्ष में शुरू की गई मौद्रिक नीति सुलभता के सहक्रम में थे। किन्तु, मार्च 2010 और अक्तूबर 2011 के बीच मौद्रिक नीति स्पष्ट रूप से कठोर विधि में थी। क्या उस अवधि में ओ एम ओ खरीद से मौद्रिक नीति की प्रभावोत्पादकता क्षीण हुई थी, यह वाद-विवाद और अनुसंधान का एक विषय हो सकता है। सभी पहलुओं पर विचार करने के बाद, 2009-10 से की गई ओ एम ओ खरीद के कारण, मौद्रिक नीति के अंतर्गत की गई परिकल्पना से परे मौद्रिक विस्तार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा था। इस अवधि के दौरान की गई ओ एम ओ खरीद से, कुल मिलाकर मौद्रिक नीति और कर्ज प्रबंध, दोनों ही उद्देश्यों की पूर्ति हो गई। उदाहरण के लिए, 2011-12 के दौरान सरकार ने बजट-प्रावधान राशि के अतिरिक्त लगभग 2 ट्रिलियन रूपये (खजाना बिलों सहित) की राशि बाजार से उधार ली थी, जबकि केंद्रीय बैंक को कठोर चलनिधि स्थिति को नरम करने के लिए आरक्षित मुद्रा भंडार का निर्माण करने की आवश्यकता थी। ओ एम ओ ने भी, रिज़र्व बैंक द्वारा किये गये विदेशी मुद्रा बाजार हस्तक्षेप से उत्पन्न चलनिधि कठोरता को कम करने में सहायता की थी। हालांकि 2012-13 के दौरान, ब्याज दर चक्र उलटाव के साथ, उच्च सरकारी उधारों ने प्रतिफल पर अपने प्रभाव के माध्यम से वित्तीय बाजारों के अन्य खण्डों को न्यूनतर नीति दरों के अंतरण को कमज़ोर कर दिया हो। इसलिए उधारों की पूर्ण राशि का दबाव अब भी मौद्रिक नीति पर पड़ सकता है।

इसके अलावा, 2008-09 के दौरान जब वैश्विक वित्तीय संकट द्वारा प्रस्तुत असाधारण चुनौतियों का सामना करने के लिए मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों ने आगे-पीछे के क्रम में कार्य किया तब रिज़र्व बैंक द्वारा संचालित विशेष बाजार परिचालनों (एस एम ओ) के माध्यम से कर्ज का मुद्रीकरण भी किया गया था। 2008 में प्रारंभ किये गये एस एम ओ से, विदेशी मुद्रा जुटाने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र की तेल विपणन कंपनियां रिज़र्व बैंक को तेल बांड बेचने में सक्षम हो सकी। इन एस एम ओ से वास्तव में एफ आर बी एम अधिनियम व्यवस्था कमज़ोर हुई, क्योंकि इसने अप्रत्यक्ष रूप से सरकार के घाटों का दो कदमों में मुद्रीकरण कर दिया था। प्रथम, तेल बांड जारी करते हुए सरकार ने वास्तविक राजकोषीय घाटे को कम करके दिखाया। द्वितीय, यदि सरकार उसे अपनी दिनांकित प्रतिभूतियों के माध्यम से धन प्रदान करती तो रिज़र्व बैंक उसे प्राथमिक निर्गमों में अभिदान नहीं कर सका होता। तथापि, क्योंकि तेल बांडों में चलनिधि का अभाव था, रिज़र्व बैंक ने चलनिधि प्रदान करने के लिए प्रवेश किया तथा उसके साथ ही तेल कंपनियों की डॉलर निधीयन आवश्यकताओं को भी पूरा किया। इस नवोन्मेषी उपकरण ने ब्याज दरों के अतिरिक्त विनिमय दरों पर दबाव को कम करने में सहायता प्रदान की। जब एस एम ओ आकार में छोटे थे, उन्होंने संकट प्रबंध उद्देश्यों की पूर्ति की। हालांकि, भारी सरकारी खरीद और भारी खुला बाजार खरीद कभी-कभी इस सीमा तक समष्टि आर्थिक चुनौतियां उपस्थित करते हैं कि उनसे कर्ज के मुद्रीकरण की स्थिति पैदा हो सकती है।

संदर्भ

रंगराजन, सी. (2007), ''इंडियन बैंकिंग सिस्टम चेलेंजेज अहेड,'' प्रथम आर.के. तलवार स्मृति व्याख्यान, भारतीय बैंकिंग और वित्त संस्थान, 31 जुलाई 2007

मिलता है। वर्तमान परिस्थिति में, यदि तेल विपणन कंपनियों की कुल कम वसूली को हटाने के लिए एक ही बार में कीमतें समायोजित की जाती हैं और कोयला तथा बिजली की कीमतें 10-10 प्रतिशत के संतुलन द्वारा बढ़ा कर समायोजित की जाती हैं तो उसके प्रत्यक्ष प्रभाव से थोक मूल्य सूचकांक (डब्ल्यू पी आइ) में 4 प्रतिशत तक वृद्धि हो जाएगी। इससे मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व के चिरस्थायी रहने का संकेत मिलता है। कीमत स्तर के राजकोषीय सिद्धांत (एफ टी पी एल) के अनुसार राजकोषीय प्रभुत्व एक कमज़ोर अथवा मजबूत रूप में पाया जाता है। कमज़ोर रूप में, राजकोषीय प्रभुत्व तब पाया जाता है जब राजकोषीय घाटे का समंजन करने के लिए मुद्रा संवृद्धि बढ़ती है और इसलिए मुद्रास्फीति पर ऊर्ध्वमुखी दबाव डालती है। मज़बूत रूप में, यद्यपि राजकोषीय अंतराल की अनुक्रिया में मुद्रा आपूर्ति के स्तर में कोई परिवर्तन नहीं होता है, राजकोषीय अंतराल सकल मांग के माध्यम से अपने प्रभाव के कारण स्वतंत्र रूप से मुद्रास्फीति का स्तर बढ़ा देता है। कमज़ोर रूप से यह संकेत मिलता है कि केंद्रीय बैंक मुद्रास्फीति को लक्ष्य नहीं कर सकता है क्योंकि वह राजकोषीय प्रभुत्व के अंतर्गत मुद्रा आपूर्ति को नियंत्रित नहीं कर सकता है। मज़बूत रूप का निहितार्थ है कि मुद्रास्फीति का एक मौद्रिक घटना होना आवश्यक नहीं है और उसके बजाय राजकोषीय नीति मुद्रास्फीति बढ़ाती है।

III. विभिन्न प्रणालियों के अंतर्गत राजकोषीय और मौद्रिक नीति के बीच पारस्परिक क्रिया

3.9 पिछले तीन दशकों में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के लिए अपनाये गये ढांचों के अनुसार राजकोषीय और मौद्रिक नीति पारस्परिक क्रियाएं विकसित हुई हैं। इन ढांचों के आधार पर निम्नलिखित व्यापक चरण अभिनिर्धारित किये जा सकते हैं।

चरण I: 1980-81 से 1990-91 तक उच्च राजकोषीय प्रभुत्व

3.10 1980 के दशक में अत्यधिक घाटे देखे गये। केंद्र का सकल राजकोषीय घाटा (जी एफ डी)/जी डी पी अनुपात का औसत 6.7 प्रतिशत था, जो सांकेतिक रूप से 1970 के वर्षों के लिए 3.8 प्रतिशत के औसत की तुलना में उच्चतर था। उसी अवधि के दौरान उनके औसत जी एफ डी/जी डी पी अनुपात विस्तारित होकर 2.0 प्रतिशत से 2.8 प्रतिशत हो गया, जिससे राज्यों की राजकोषीय स्थिति भी बिगड़ गई थी। अन्य घाटा संकेतक भी वैसे ही खराब हो गये थे। उक्त राजकोषीय गिरावट केन्द्र की ओर से अधिक थी और मुख्य रूप से उसके राजस्व व्यय की ओर से उत्पन्न थी। कर और गैर-कर राजस्व के अतिरिक्त पूंजी प्राप्तियों में कुछ सुधार दिखाई दिया किन्तु पूंजी व्यय सीमित रहा। राजकोषीय गिरावट ने, मौद्रिक नीति उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता को सीमित करते हुए राजकोषीय घाटों के स्वतः मुद्रीकरण के लिए एक मार्ग के रूप में परिवर्तित होकर तदर्थ खजाना बिलों के साथ मौद्रिक नीति पर बहुत बड़ा भार डाल दिया।

3.11 1980 के वर्षों में सरकार को दिये गये रिज़र्व बैंक के निवल ऋण में तीव्र गति से विस्तार हुआ। 1980 के वर्षों में उच्च राजकोषीय घाटों के मौद्रिक निभाव का यह एक प्रत्यक्ष परिणाम था। रिज़र्व बैंक ने तदर्थ खजाना बिलों के माध्यम से घाटों का मुद्रीकरण किया। इसके परिणामस्वरूप निवल देशी आस्तियों (एन डी ए) में तीव्र वृद्धि हुई। उसके परिणाम के रूप में मौद्रिक दबाव महसूस किये गये जब कि निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों (एन एफ ए) में एक तीव्र अवमंदन देखा गया। जनता के पास मुद्रा में एक चिरंतन गिरावट जारी रही किन्तु एन डी ए में विस्तार वर्धमान रूप से सरकार को निवल रिज़र्व बैंक ऋण के बाहर आ गया। तेल कीमतों के दो आघातों के बाद, 1985-86 तक मुद्रास्फीति की स्थिति सामान्य रही किन्तु बाद में भारी राजकोषीय विस्तार के समर्थन से वापस आ गई जो मौद्रिक संकुचन द्वारा नियंत्रित नहीं की जा सकी।

3.12 उक्त अवधि के दौरान, ऋण बजट निर्माण से मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण की ओर बढ़ने के निर्णय के साथ मौद्रिक नीति में एक प्रणाली अंतरण हुआ। मौद्रिक प्रणाली की कार्य-पद्धति की समीक्षा हेतु समिति (अध्यक्षः प्रो. सुखमय चक्रवर्ती, 1985) की रिपोर्ट के अनुसरण में रिज़र्व बैंक ने 1980 के वर्षों के मध्य में मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण प्रारंभ किया। किन्तु, ऋण के सीधे आवंटन का ऋण बजट निर्माण ढांचा अधिकांश अवधि तक प्रचलित रहा। इस अवधि के दौरान, वाणिज्य बैंकों के साथ आवधिक ऋण बजट बैठकों के बाद रिज़र्व बैंक ने एक राजकोषीय वर्ष के दौरान दो बार अपनी ऋण नीति घोषित की। रिज़र्व बैंक ने जमा और ऋण संवृद्धि के लिए व्यापक दिशा निर्देश प्रस्तुत किये और साथ ही, समष्टि आर्थिक कुल राशियों, जैसे संवृद्धि और मुद्रास्फीति का निर्धारण करने के बाद प्रमुख अनुसूचित वाणिज्य बैंकों (एस सी बी) को ऋण के आवंटन संबंधी दिशा निर्देश भी सूचित किये।

3.13 इस अवधि के दौरान मौद्रिक नीति का राजकोषीय प्रभुत्व मौद्रिक नीति के लिए एक बाध्यकर दबाव बन गया था। सरकार के स्रोतों और निधियों के इस्तेमाल के बीच अस्थायी बेमेल स्थितियों में

सुधार लाने के लिए रिज़र्व बैंक ने चलनिधि प्रदान की तथा राजकोषीय घाटे तथा अत्यधिक चलनिधि निर्माण के बीच सहबद्धता के बारे में बारंबार चिंता व्यक्त की। चक्रवर्ती रिपोर्ट में भी इसी प्रकार की चिंता व्यक्त की गई, जिसमें बजट घाटे के मुद्रीकरण को बेहतर प्रतिबिंबित करने के लिए ''बजट घाटे'' की परिभाषा को व्यापक बनाने के लिए सरकार को सचेत किया गया था। बजट घाटे की व्यापक संकल्पना को स्वीकार करना राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच बृहत समन्वय की ओर उठाया गया एक प्रमुख कदम था। समिति ने मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण अपनाने की सिफारिश करते समय इस बात को नोट किया कि उत्पादन, मुद्रा और कीमतों के मध्य अंतर-संबंध जटिल बाधा है और यह कि इन बाधाओं के सटीक परिचालन निर्धारित करना कठिन है। उसी रूप में, एक वर्ष के लिए निर्धारित संकीर्ण समय-सीमा के भीतर मुद्रा, उत्पादन और कीमतों के बीच सहबद्धता को अलग से नहीं देखा जा सकता है।

3.14 मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण में अंतरण को केवल 1990 के वर्षों के दौरान ही चरणबद्ध किया गया था। 1985-90 के दौरान कोई मौद्रिक लक्ष्य निर्धारित नहीं किये गये थे, सिवाय इसके कि पिछले वर्ष (वर्षों) में औसत एम3 संवृद्धि के साथ संबद्ध ऋण की उच्चतम सीमा को निर्धारित करने के लिए लक्ष्य निश्चित किया गया था। उसी रूप में, मौद्रिक संवृद्धि को सामान्य बनाने के लिए ऋण बजट व्यवस्था का व्यापक ढांचे के रूप में बना रहना जारी रहा किन्तु लक्ष्य सामान्यतया अतिलंघित होते थे, क्योंकि घरेलू बचतों पर सरकार के विशाल प्रारूप के सामने निजी क्षेत्र को ऋण समर्थन की आवश्यकता थी। इस अवधि के दौरान ऋण नीतियां, अधिकांशतः संकुचनकारी थीं, परन्तु कर्ज बाजार में व्यवस्थित स्थितियां बनाये रखने की आवश्यकता द्वारा उनकी प्रभावोत्पादकता में कमी हो गई थी।

3.15 रिज़र्व बैंक, मौद्रिक नियंत्रणअतिरिक्त के विरोधाभासी हितों तथा भारी मात्रा में ऋण आवश्यककताओं को पूरा करने के लिए आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सी आर आर) के अतिरिक्त सांविधिक चलनिधि अनुपात (एस एल आर) तथा चयनात्मक ऋण नियंत्रण के साथ बाजीगरी करता रहा । 1989 में सी आर आर 15 प्रतिशत की अपनी सांविधिक उच्चतम सीमा पर पहुँच गई। रिज़र्व बैंक ने 1992 तक विभिन्न अवसरों पर वृद्धिशील निवल मांग और मीयादी देयताओं (एन डी टी एल) पर अतिरिक्त सी आर आर का सहारा लिया। रिज़र्व बैंक ने मौद्रिक और ऋण नीति के संचालन के लिए नियंत्रित ब्याज दरों - जमा और उधार दरों का भी इस्तेमाल किया।

3.16 एक सुस्पष्ट मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण प्रणाली पर आधारित मौद्रिक नीति ढांचा केवल 1991-92 में अपनाया गया था, जब एक वास्तविक जी डी पी संवृद्धि 3 से 3.5 प्रतिशत थी, मुद्रास्फीति दर 9 प्रतिशत से अधिक नहीं थी, और एम3 विस्तार में लगभग 13 प्रतिशत की महत्वपूर्ण गिरावट की परिकल्पना की गई थी। एम3 संवृद्धि के 19.3 प्रतिशत हो जाने के साथ, एक व्यापक मार्जिन द्वारा, इस प्रकार से निर्धारित मौद्रिक लक्ष्य अतिलंघित हो गये थे। 1992-93 के लिए मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण मुद्रीकृत घाटे में कमी की अंतर्निहित धारणा पर आधारित थे (केंद्र सरकार को दिये गये निवल रिज़र्व बैंक ऋण) ''जो 1991-92 में जी डी पी के 6.5 प्रतिशत के सकल राजकोषीय घाटे को घटा कर 1992-93 में 5.0 प्रतिशत किये जाने के सरकार के घोषित उद्देश्य के अनुरूप थे।''

3.17 भारी राजकोषीय प्रभुत्व के सामने भारत में ऋण बजट निर्धारण को बहुत अधिक सफलता नहीं मिली थी। उसने वित्तीय निग्रह के उत्पादन को समाप्त किया जिसने वास्तविक ब्याज दरों को न्यूनतर रखा और बचत और निवेश, दोनों को ही निरूत्साहित किया। उसके परिणामस्वरूप, अर्थव्यवस्था में निम्नतर वृद्धि हुई और मुद्रास्फीति बढ़ गई।

चरण II: 1991-92 से 2002-03 तक वित्तीय निग्रह से निकासी

3.18 द्वितीय चरण में वित्तीय क्षेत्र सुधार दिखाई दिये। सरकारी कर्ज के वित्तपोषण के लिए बाजार आधारित उपकरणों के क्रमशः विकास द्वारा यह स्पष्ट हुआ । इन सुधारों की रूपरेखा मुद्रा बाजार संबंधी कार्य दल की रिपोर्ट (अध्यक्षः एन. वाघुल) द्वारा 1987 में तथा नरसिंहम समिति की रिपोर्ट ।, 1991 द्वारा तैयार कर ली गई थी। एक समयावधि के दौरान अनेक कदम उठाये गये थे। इनमें मुद्रा बाजार उपकरणों का विकास, भारत सरकार (जी ओ आई) के खजाना बिलों की नीलामी का प्रारंभ, सी आर आर और एस एल आर के माध्यम से सांविधिक अग्रक्रयाधिकारों में कमी और ब्याज दरों का आंशिक अविनियमन शामिल हैं। यद्यपि 182 दिवसीय खजाना बिलों की नीलामी नवंबर 1986 में प्रारंभ की गई थी, अंतिम क्षण में कीमत की प्राप्ति अप्रैल 1992 में 364-दिवसीय खजाना बिलों के प्रारंभ और जनवरी 1993 में 91-दिवसीय खजाना बिलों की नीलामी प्रणाली के विस्तार के बाद ही सुधर सकी। दो पूरक करारों (बॉक्स III. 2) के साथ इन नीति उपक्रमणों से घाटों के मुद्रीकरण में काफी अधिक कमी हो सकी, जिससे मौद्रिक नीति के राजकोषीय प्रभुत्व को

सामान्य बनाने में सहायता मिली।

3.19 इस अवधि के दौरान, मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण का सक्रियता से पालन किया गया। एम3 संवृद्धि लक्ष्यों में एक चिरंतन कमी देखी गई। इस अवधि के दौरान, वित्तीय क्षेत्र सुधारों, विशेष रूप से सरकारी प्रतिभूतियों के लिए एक सक्रिय द्वितीयक बाजार के विकास ने मध्यावधि में मौद्रिक नियंत्रण के प्रत्यक्ष उपकरणों को अप्रत्यक्ष उपकरणों की ओर ले-जाने की नींव रखी। बैंकों के लिए सांविधिक अग्रक्रयाधिकार छह वर्ष की अवधि में, 1992 के शुरू के दिनों के लगभग 63 प्रतिशत से घटा कर 35 प्रतिशत कर दिये गये थे। ब्याज दर ढांचा युक्तिसंगत बनाया गया था और मीयादी जमा दरें अविनियमित की गई थी।

3.20 उक्त अवधि को 1996-97 तक राजकोषीय घाटों में सुस्पष्ट कमी द्वारा चिह्नित किया गया था। लगभग उसी समय, 1995-96 के ऋण दबाव में कमी ने परिकल्पना से भी अधिक अर्थव्यवस्था में गिरावट में योगदान किया। इसके परिणाम स्वरूप मौद्रिक और राजकोषीय, दोनों ही नीतियां आकस्मिक कठिनाइयों का सामना कर रही हैं । 1995-96 में मौद्रिक नीति ने मुद्रास्फीति में काफी अधिक गिरावट सुनिश्चित की। किन्तु व्यापक मुद्रा संवृद्धि प्रवृत्ति से भी कम तक गिर जाने के साथ वास्तविक अर्थव्यवस्था के लिए निरंतर लागत बढ़ रही थी। यद्यपि इस अवधि के दौरान राजकोषीय मौद्रिक समन्वय में सुधार हुआ किन्तु विशेष रूप से 1995-96 के ऋण संकट जैसे स्पेल्स थे, जब बृहत समन्वित कार्रवाई से बेहतर परिणाम प्राप्त हो सकते थे।

चरण III: 2003-04 से 2007-08 तक राजकोषीय और मौद्रिक विवेक

3.21 वित्तीय क्षेत्र सुधारों के कारण रिज़र्व बैंक मौद्रिक नियंत्रण के प्रत्यक्ष उपकरणों को अप्रत्यक्ष उपकरणों में अंतरित कर सका और उसके परिणामस्वरूप 2003-04 से 2007-08 की अवधि को प्रणाली अंतरण द्वारा चिह्नित किया गया था। साथ-साथ, एफ आर बी एम अधिनियम, 2003 के अधिनियमन के साथ एक अभूतपूर्व गति से राजकोषीय सुधार प्रारंभ किये गये थे। एक साथ लिये गये इन नीति उपक्रमणों से मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व को सार्थक ढंग से घटाने में सहायता मिली। उसी समय, इस अवधि के दौरान पूंजी अंतर्वाह में उछाल से समष्टि आर्थिक प्रबंध के लिए चुनौतियां खड़ी हो गईं रिज़र्व बैंक ने पूंजी अंतर्वाह को अवरूद्ध करने के लिए अधिशेष चलनिधि को अवशोषित करने की दृष्टि से भारी मात्रा में ओ एम ओ का सहारा लिया। वास्तव में, 1990 के द्वितीयार्ध में और 2000 के शुरूआती वर्षों में ओ एम ओ चलनिधि अवशोषण प्रणाली (मोड) में थे।

3.22 सबसे महत्वपूर्ण सुधार जिससे मौद्रिक नीति के संचालन के लिए परिचालन क्रियाविधियों में सुधार हो सका वह चलनिधि समायोजन सुविधा (एल ए एफ) को चरणों में लागू करने से संबंधित है। 1998 में बैंकिंग क्षेत्र सुधार संबंधी समिति (नरसिंहम समिति II) ने एल ए एफ प्रारंभ करने की सिफारिश की थी, जिसके अंतर्गत रिज़र्व बैंक आवधिक आधार पर, यदि दैनिक आधार पर आवश्यक न हो, नीलामियां आयोजित करेगा। उक्त समिति ने परिकल्पना की कि रिज़र्व बैंक अपनी रेपो और रिवर्स रेपो दरों को पुनः निर्धारित कर सकता है जिससे मांग मुद्रा दरों के लिए एक उचित गलियारा उपलब्ध हो सकेगा। इन सिफारिशों के अनुपालन में, रिज़र्व बैंक ने रेपो और रिवर्स रेपो संचालित करने के लिए एक अंतरिम चलनिधि समायोजन सुविधा (आई एल ए एफ) प्रारंभ की थी, जिसने सामान्य पुनर्वित्त सुविधा का स्थान लिया। आइ एल ए एफ ने मुद्रा बाजार दरों में उतार-चढ़ाव को कम करने में सहायता की। जून 2000 में, आइ एल ए एफ के स्थान पर परिवर्ती दर रेपो नीलामी के साथ एल ए एफ प्रारंभ किया गया। अप्रैल 2003 में, बैक स्टॉप सुविधा के अंतर्गत चलनिधि अवशोषण/इंजेक्ट की दरों पर, दरों की विविधता को युक्तिसंगत बनाया गया था। इन परिवर्तनों से रिज़र्व बैंक मार्जिन पर चलनिधि में परिवर्तन लागू करने के लिए प्रमुख साधन के रूप में एल ए एफ का इस्तेमाल करने के लिए प्रवृत्त हो सका और रेपो/रिवर्स रेपो दरों का निर्धारण करते हुए अन्य बातों के साथ, एल ए एफ को अप्रत्यक्ष साधन के रूप में इस्तेमाल करते हुए मौद्रिक नीति का संचालन कर सका।

3.23 एफ आर बी एम अधिनियम ने जो 26 अगस्त 2003 को अधिनियमित हुआ और 5 जुलाई 2004 से प्रभावी हुआ था, घाटे की ओर झुकाव की अंतर्जात प्रवृत्ति की विवेकाधीन नीतियों को नियंत्रित करने के लिए राजकोषीय नियमों की प्रणाली को खोल दिया। उक्त कदम अंतर्राष्ट्रीय अनुभव द्वारा उत्प्रेरित था, जिसने यह दर्शाया कि भारी राजकोषीय असंतुलन का सामना कर रहे अनेक देशों ने ऐसे ही विधानों ओर नियमों के माध्यम से लाभ उठाया, जैसे कि यू के में मध्यावधि वित्तीय रणनीति, यू एस में दि ग्राम रूडमैन हॉलिंग्ज़ एक्ट, 1985 और न्यूज़ीलैंड में 1994 में, अर्जेंटीना में 1999 में, पेरु में 1999 तथा ब्राज़ील में 2002 में राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून ।

3.24 उक्त अधिनियम में निर्धारित किया गया कि केंद्र सरकार को राजकोषीय घाटा घटाने और 31 मार्च 2008 तक राजस्व घाटे को निकाल देने और उसके बाद पर्याप्त राजस्व अधिशेष बढ़ाने के

लिए उपयुक्त उपाय करने चाहिए। हालांकि, 2004-05 के केंद्रीय बजट में, राजस्व घाटे को 2008-09 तक हटाने के लक्ष्य को आस्थगित कर दिया। उक्त अधिनियम ने प्राप्तियों और भुगतानों में अस्थायी बेमेल स्थिति से निपटने के लिए अर्थोपाय अग्रिमों (डब्ल्यू एम ए) के माध्यम से, को छोड़कर अथवा अपवादात्मक परिस्थितियों के सिवाय, 2006-07 से केंद्र सरकार द्वारा रिज़र्व बैंक से प्रत्यक्ष उधार लेने पर प्रतिबंध लगा दिया था।

3.25 एफ आर बी एम अधिनियम, 2003 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए केंद्र सरकार ने 5 जुलाई 2004 से प्रभावी होने वाले ''राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध नियम, 2004'' बनाये। इन नियमों के अंतर्गत 31 मार्च 2008 को समाप्त होने वाली अवधि में मुख्य घाटा संकेतकों में चरणबद्ध कटौती के लिए वार्षिक लक्ष्य निर्धारित किये गये थे। इन नियमों के अंतर्गत सरकारी गारंटियों और अतिरिक्त दायित्वों पर भी वार्षिक उच्चतम सीमा लागू की गई थी।

3.26 राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय को भी कर्ज स्वैप योजना (डी एस एस) से एक प्रोत्साहन मिला। वित्त आयोग द्वारा उक्त योजना की सिफारिश की गई थी। इससे राज्य सरकारें केंद्र से उच्च लागत पर लिये गये अपने ऋणों को नये बाजार उधारों तथा अल्प बचत के एक भाग के अंतरणों से स्थानापन्न कर सकती हैं। इस योजना के अंतर्गत राज्यों ने उच्च लागत के ऋणों की अदला-बदली (स्वैप) की । 2002-03 से 2004-05 तक (के दौरान) राज्यों ने केंद्र सरकार से लिये गये 1.02 ट्रिलियन रूपये के अपने ऋण स्वैप किये थे। उन्होंने इसका वित्तपोषण 536 बिलियन रूपये के अतिरिक्त बाजार उधारों अथवा 6.5 प्रतिशत से कम की ब्याज दरों पर 53 प्रतिशत से और शेष 9.5 प्रतिशत पर नियत ब्याज दर के साथ राष्ट्रीय अल्प बचत निधि (एन एस एस एफ) को विशेष प्रतिभूतियां जारी करने के माध्यम से किया था। यद्यपि यह योजना कर्ज-तटस्थ थी, इसने राज्य सरकारों के लिए कर्ज सर्विसिंग की लागत कम करने में दीर्घावधि लाभ प्रदान किये।

3.27 इस अवधि में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का दूसरा उदाहरण बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) के प्रारंभ के रूप में सामने आया। इस योजना का लक्ष्य मौद्रिक नीति में सुधार लाना था जिसके लिए यह अपेक्षा की गई थी कि विदेशी मुद्रा बाजारों में हस्तक्षेप के लिए अपेक्षित भारी पूंजी अंतर्वाह से उत्पन्न चलनिधि को अवरूद्ध करने के लिए उपकरणों की कमी के समक्ष उसकी प्रभावोत्पादकता समाप्त हो सकती है। अवरूद्धता का शुरूआती भार एकमुश्त लेन देनों द्वारा वहन किया गया जिनमें दिनांकित प्रतिभूतियों और खजाना बिलों की बिक्री शामिल है। हालांकि, सरकारी प्रतिभूतियों के स्टॉक के निःशेषण के कारण, चलनिधि समायोजन का भार एल ए एफ पर अंतरित हो गया। एल ए एफ को आवश्यक रूप से सीमांत चलनिधि अधिशेष/घाटों से निपटने के लिए ही बनाया गया। अधिक स्थायी प्रकृति की चलनिधि के अवशोषण के लिए बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) पर विचार किया गया था।

3.28 भारत सरकार और भारतीय रिज़र्व बैंक ने 25 मार्च 2004 को एक सहमति ज्ञापन पर हस्ताक्षर किये और 1 अपैल 2004 को एम एस एस योजना प्रारंभ हुई थी। एम एस एस के अंतर्गत, सरकार द्वारा खजाना बिल और दिनांकित प्रतिभूतियां जारी की गई थी। एम एस एस की प्राप्तियों को एक अलग पहचान वाले नकदी खाते में सरकार के लिए उन्हें धारण करने के द्वारा अलग करते हुए रिज़र्व बैंक द्वारा रखा और परिचालित किया गया। एम एस एस खाते में जमा की गई राशियां एम एस एस के अंतर्गत जारी खजाना बिलों और/अथवा दिनांकित प्रतिभूतियों के मोचन और/अथवा वापसी खरीद के प्रयोजन के लिए ही विनियोजित की जा सकती थी। एम एस एस प्रतिभूतियों को एस एल आर, रेपो और एल ए एफ के लिए पात्र प्रतिभूतियों के रूप में माना गया था।

3.29 काफी देशों, जैसे चिली, चीन, कोलंबिया, इंडोनेशिया, कोरिया, मलेशिया, पेरु, फिलीपीन्स, रूस, श्री लंका, ताइवान और थाइलैंड ने केंद्रीय बैंक प्रतिभूतियां जारी की हैं। तथापि, इनमें से अनेक देशों के केंद्रीय बेंकों को अपने तुलन पत्र में विकृति का सामना करना पड़ा था। उसी रूप में, एम एस एस ने मौद्रिक नीति की स्वतंत्रता के स्तर को काफी अधिक बढ़ा दिया। उसने विनिमय दर और मौद्रिक प्रबंध परिचालनों को संचालित करने की रिज़र्व बैंक की योग्यता को सुदृढ़ किया। उसने रिज़र्व बैंक को, बाद में आवश्यकता पड़ने पर चलनिधि को अवशोषित करने और प्रदान करने, दोनों के लिए एम एस एस साधन का नम्यता के साथ इस्तेमाल करने की भी सामर्थ्य प्रदान की।

चरण IV: 2008-09 से समन्वित और असमन्वित अनुक्रियाएं:

3.30 2008-09 से प्रारंभ यह अंतिम चरण रोचक है। एक ओर जहाँ वह वैश्विक वित्तीय संकट से उत्पन्न संक्रामकता के सामने उच्च स्तरीय समन्वित राजकोषीय और मौद्रिक नीति और उसके परिणामस्वरूप वैश्विक अर्थव्यवस्था में गिरावट की गवाह रही तो

दूसरी ओर राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों ने उसे विश्वास में आकस्मिक रूप से उस हानि का सामना करने के लिए एक समन्वित प्रोत्साहन प्रदान किया जिससे देशी अर्थव्यवस्था में तेजी से सर्पिल अधोगति की स्थिति उत्पन्न हो सकती थी। लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के पश्चात् रिज़र्व बैंक ने अक्तूबर 2008 से जनवरी 2009 तक मौद्रिक और चलनिधि सुलभता उपायों के एक घुमाव की घोषणा की। उदाहरण के लिए, दिसंबर 2008 के प्रारंभ में एक समन्वित कदम के रूप में, राजकोषीय प्राधिकारियों ने एक साथ एक पैकेज की घोषणा की जिसमें गैर पेट्रोलियम उत्पादों के लिए केंद्रीय मूल्य वर्धित कर (वैट) में सभी स्तरों पर 4 प्रतिशत अंकों की कटौती, सूक्ष्म लघु और मध्यम उद्यमों (एम एस एम ई) के लिए एक समर्थन पैकेज, निर्यातकों को सॉप और कर मुक्त बांडों के माध्यम से 100 बिलियन रूपये (लगभग 2 बिलियन अमरीकी डालर) जुटाने के लिए इंडिया इंफ्रास्ट्रक्चर फाइनैंस कंपनी लिमिटेड (आई आई एफ सी एल) को अनुमति शामिल थी। रिज़र्व बैंक द्वारा उठाये गये कदमों में, उसकी नीति दरों में 100 आधार अंकों की कटौती और 110 बिलियन रूपये का एक अतिरिक्त पुनर्वित्त पैकेज शामिल था।

3.31 वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के साथ इस बात पर समन्वय में कमी थी कि प्रोत्साहन में गिरावट से कैसे निपटा जा सकता है। परिणामस्वरूप, प्रोत्साहन से निकासी की अवधि के दौरान कुछ असमन्वित अनुक्रियाएं थी। वर्ष के दौरान एक कम निधीयन वाले बजट तथा 2008-09 के राजकोषीय प्रोत्साहन से एक उल्टा-पुल्टा बजटीय गणित शेष रह गया था। प्रारंभिक अनुमानों के मुकाबले दुगुने से भी अधिक बाजार उधारों के कारण राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच खेले जाने हेतु 'गेम ऑफ चिकन' के लिए जैसे सेटिंग उपलब्ध हो गया था। (बॉक्स III.3)

बॉक्स III.3

मौद्रिक और राजकोषीय नीति पारस्परिक क्रिया और चूजे का खेल (गेम ऑफ चिकन)

समष्टि आर्थिक प्रबंध के लिए मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों में समन्वय की आवश्यकता है। व्यवहार में, यह समन्वय कभी-कभी एक गेम-थियोरेटिक वातावरण उत्पन्न कर देता है जिसमें राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारी एक दो-व्यक्ति गैर सहकारी गेम का सामना करते हैं। बीटर (2010) के वर्णन के अनुसार, यूरो क्षेत्र में केंद्रीय बैंक और राजकोष की पारस्परिक क्रिया के विश्लेषण के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले 'गेम ऑफ चिकन' के अंतर्गत यह मान्यता है कि केंद्रीय बैंक और राजकोषीय प्राधिकारी प्रायः यह देखने के लिए एक दूसरे की जांच करते हैं कि कौन पहले आँख झपकाता है और दूसरे को स्थान देने के लिए अपेक्षित समायोजन करता है।

गेम ऑफ चिकन में, जिसे हॉक-डव अथवा स्नोड्रिफ्ट गेम के रूप में भी जाना जाता है, प्रत्येक खिलाड़ी दूसरे खिलाड़ी के सामने हार नहीं मानना चाहता है और सबसे बदतर नतीजों की संभावना तो तब होती है जब दोनों ही खिलाड़ी समर्पण के लिए तैयार नहीं होते हैं। इस गेम को समझने के लिए आसान, वास्तविक जीवन की वह स्थिति है जब दो कार ड्राईवरों की आमने-सामने की टक्कर हो जाती है। दोनों में से एक ड्राइवर को ऐसी भिड़ंत से बचने के लिए जो दोनों को मार सकती है, गाड़ी घुमा लेनी चाहिए थी, किन्तु यदि जो ड्राइवर गाड़ी घुमा लेता है, वह ''चिकन'' या कायर कहलाता है। भुगतानों के अनुसार, आमने-सामने की टक्कर के मामले में दोनों को भारी हानि होने की तुलना में गाड़ी घुमाने से होने वाली हानि (अथवा ''चिकन'' कहलाना) कुछ भी नहीं है। एक विशिष्ट भुगतान उदाहरण निम्नानुसार है:

	घुमाना	आमने-सामने जाना
घुमना	(0,0)	(-1,+1)
आमने-सामने जाना	(+1,-1)	(-10, -10)

विशुद्ध रणनीति संतुलन वे हैं जिनमें एक खिलाड़ी समर्पण कर देता है और दूसरा नहीं। किन्तु, समन्वय के अभाव में, कोई भी यह नहीं जान सकता कि दूसरा समर्पण कर देगा और इसलिए उचित रणनीति तो यह है कि आत्मघाती टक्कर से पूर्व ही समर्पण कर दिया जाए। किन्तु यदि एक इस बात में विश्वास करता है कि उसका विरोधी उचित है, एक यह निश्चय कर लेता है कि वह कभी भी समर्पण नहीं करेगा तो उसे बदतर नैश-टाइप परिणाम भुगतने होंगे।

यूरोपीय केंद्रीय बैंक (ई सी बी) और यूरो क्षेत्र के अनेक राष्ट्रीय राजकोषीय प्राधिकारियों के बीच ताजा रणनीतिक पारस्परिक क्रिया गेम ऑफ चिकन का एक ऑफ साइटेड उदाहरण रहा है। ई सी बी उपविधि में अधिदेश है कि कीमत स्थिरता का प्रयास किया जाए और अन्य किसी उद्देश्य को पाने का तभी प्रयास किया जाए जब वह कीमत स्थिरता के मुख्य उद्देश्य के विरूद्ध न हो। हालांकि राजकोषीय प्राधिकारियों के साथ, उसके कुछ सदस्य देशों में, जो राष्ट्रिक कर्ज संकट का सामना कर रहे हैं, वहाँ ऋण शोधन क्षमता सुनिश्चित किया जाना यदि सुस्पष्ट लक्ष्य नहीं है तो भी एक निकटस्थ लक्ष्य बन गया है। ई सी बी ने इस बात को जान लिया कि पी आइ आइ जी एस (पुर्तगाल, आयरलैंड, इटली, युनान, और स्पेन) में से किसी भी देश में एक राष्ट्रिक चूक से अनियंत्रणयोग्य संक्रामक भड़क सकता है जिससे वित्तीय स्थिरता और संवृद्धि के लिए जोखिम उपस्थित हो जाएगा जिसे नियंत्रित करना कठिन होगा।

ई सी बी के लिए यह देखा गया है कि वह कीमत और वित्तीय स्थिरता चाहता है, जब कि राजकोषीय सरकारें चाहती हैं कि सरकारी कर्ज पर चूक को टालने के लिए ई सी बी वित्तपोषण करे। राजकोषीय प्राधिकारी ई सी बी को इस बात के लिए प्रोत्साहन दे सकते हैं कि वह अपने तुलन पत्र पर राष्ट्रिक तथा निजी ऋण जोखिम को लेते हुए अर्ध-राजकोषीय क्रियाकलापों का उत्तरदायित्व ले। किन्तु, ई सी बी की चिन्ता यह है कि उसके द्वारा ली

(जारी...)

(...समाप्त)

जाने वाली कोई भी मात्रात्मक सुलभता (क्यू ई) अस्फीतिकारक होनी चाहिए। आधार मुद्रा की आपूर्ति करने में ई सी बी का एकाधिकार है और इसलिए सिक्का ढलाई-मुनाफा के लाभ प्रारंभ में कम से कम उसके द्वारा विनियोजित किये जाते हैं। तथापि, दिसंबर 2011 से, ई सी बी के 3 वर्षीय दीर्घावधि रेपो परिचालन (एल टी आर ओ) के परिणाम के रूप में सरकारी कर्ज का मुद्रीकरण किसी रूप में हुआ हो सकता है।

वैश्विक वित्तीय संकट के प्रारंभ से पहले ही बीटर और साइबर्ट (2005) ने ई सी बी की परिचालन क्रियाविधियों में एक मूलभूत परिवर्तन करने का प्रस्ताव रखा था जिसका लक्ष्य बाजार अनुशासन की पुनः स्थापना तथा अधारणीय राजकोषीय घाटे का सामना करना था। यह देखा गया था कि ई सी बी गेम ऑफ चिकन में फस्ट मूवर एडवांटेज को पुनः स्थापित करने का प्रयास कर रहा है। कीमत स्तर संबंधी राजकोषीय सिद्धांत एफ टी पी एल बताता है कि इस खेल में राजकोषीय प्रभुत्व है अथवा मौद्रिक प्रभुत्व, इस बात पर निर्भर करते हुए राजकोषीय प्रभुत्व से उच्च मुद्रास्फीति - भी सकती है और नहीं भी हो सकती है। राजकोषीय प्रभुत्व के मामले में अनियंत्रित घाटा बढ़ जाता है जो अन्ततः केंद्रीय बैंक को इस तरफ ध्यान देने और घाटे का मुद्रीकरण करने के लिए बाध्य करता है, अर्थात् सिक्का-ढलाई मुनाफा बढ़ाना तथा बहिर्जात राजकोषीय घाटा पथ के वित्तपोषण के लिए मुद्रास्फीति कर का इस्तेमाल करना। यदि मौद्रिक प्रभुत्व की स्थिति है तो केंद्रीय बैंक घाटे का मुद्रीकरण न करने का निर्णय लेता है और तब राजकोषीय प्राधिकारी इस तरफ ध्यान देने और खर्च में कटौती करके अथवा अपने अंतर-कालिक बजट दबावों को पूरा करने के लिए करों में वृद्धि करने के लिए बाध्य होता है। यदि कोई भी प्राधिकारी इस स्थिति पर ध्यान नहीं देता है तो ब्याज दरों के बढ़ने तथा कर्ज गति सिद्धांत के बदतर होने के कारण घाटे का जोखिम बढ़ जाता है।

एफ टी पी एल, सार्जेंट एण्ड वालेस (1981) के अरूचिकर मुद्रावादी गणित का समाधान प्रस्तुत करता है जो समष्टि आर्थिक प्रबंध में गेम ऑफ चिकन के लिए एक समाधान उपलब्ध कराता है। सेमीनल 1981 पेपर में ''सम अनप्लेजेंट मोनेटरिस्ट अर्थमेटिक'' शीर्षक के अंतर्गत उन्होंने दर्शाया है कि एक अल्पावधि में मुद्रास्फीति के एक मौद्रिक तथ्य होते हुए भी वह दीर्घावधि में एक राजकोषीय तथ्य बना रहता है। ऐसा सरकार के बजट दबावों तथा निजी क्षेत्र द्वारा रखी जाने वाली सार्वजनिक कर्ज-सीमाओं के बाद होता है। इसके साथ ही, ये सुनिश्चित करते हैं कि दीर्घावधि में मुद्रा स्टॉक में संवृद्धि राजकोषीय घाटे द्वारा अधिशासित होती है क्योंकि राजकोषीय प्राधिकारी स्टैकलबर्ग लीडर के रूप में कार्य करते हैं, जब कि मौद्रिक प्राधिकारी स्टैकलबर्ग फोलोअर के रूप में कार्य करते हैं। स्टैकलबर्ग मॉडल अर्थशास्त्र में एक रणनीतिक गेम है जिसमें लीडर फर्म पहले चाल चलती है, जबकि फोलोअर फर्म अनुक्रमिक रूप से चाल चलती है, और वह जानी-मानी कीमत निर्धारक पहेलियों का एक समाधान प्रस्तुत करती है। एफ टी पी एल, मूलतः यह सूचित करता है कि सरकार का वर्तमान समेकित मूल्य बजट दबाव, सरकारी व्यवहार पर एक दबाव के बजाय एक इष्टतमता स्थिति है और यह दर्शाती है कि धन प्रभाव की रिकार्डियन और गैर-रिकार्डियन धारणाएं किस प्रकार कीमत निर्धारण और घरेलू खपत में अपनी भूमिका निभाती है। एफ टी पी एल के मजबूत प्रकार आश्चर्यजनक मामले प्रस्तुत करते हैं जहाँ यह नो ब्लिंक टू साइडेड गेम यह सुनिश्चित करने के लिए प्रारंभिक कीमत स्तर (उच्च मुद्रास्फीति) के एक उछाल की ओर ले जाता है कि सरकार के अन्तर-कालिक बजट दबाव का समाधान हो जाता है। वास्तविक जगत में, गेम ऑफ चिकन में सामान्यतः राजकोषीय प्रभुत्व का शासन होता है और मौद्रिक प्रभुत्व अपवाद स्वरूप पाया जाता है। भारत इस सामान्य नियम से भिन्न नहीं है। बृहत राजकोषीय घाटे कभी-कभी ''गेम ऑफ चिकन'' जैसी स्थिति उत्पन्न करने की एक वजह बन जाते हैं। यदि केंद्रीय बैंक अपने रणनीति प्राक्कलनों में कर्ज वित्तपोषण का निभाव न करते हुए अपने मौद्रिक उद्देश्यों का अनुसरण करते हैं तो राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों ही प्राधिकारियों के लिए तथा साथ ही समग्र रूप से अर्थव्यवस्था के लिए भी समष्टि आर्थिक परिणाम निकृष्ट हो सकते हैं। उसी रूप में, समष्टि आर्थिक प्रबंध, अनर्थकारी परिणामों से बचने की अनिवार्यता रखते हुए किये जाने होते हैं।

संदर्भ

बीटर, विलियम्स और एन सी साइबर्ट (2005), ''हाउ दि यूरोसिस्टम्स ट्रीटमेंट ऑफ कॉलेटरल इन इट्स ओपन मार्केट ऑपरेशन्स वीकन्स फिसकल डिसीप्लीन इन दि यूरोजोन (एण्ड व्हाट टू डू एबाउट इट),'' 30 जून - 1 जुलाई 2005 तक ''फिसकल पॉलिसी एण्ड दि रोड टू दि यूरो'' विषय पर नैशनल बैंक ऑफ पोलेण्ड और दि सेंट्रल बैंक ऑफ हंगरी द्वारा वारसा में आयोजित सम्मेलन।

लिबिच, जन, डैट थान्ह गुयेन एंड पीटर स्टेहिक (2001), ''मोनेटरी एग्जिट स्ट्रेटेजी एंड फिसकल स्पिलओवर्स,'' सी ए एम ए वर्किंग पेपर 4@2011, आस्ट्रेलियन नैशनल यूनिवर्सिटी।

रैपोपोर्ट, ए और ए.एम. चामाह (1966), ''दि गेम ऑफ चिकन'', अमेरिकन बिहेवियर साइंटिस्ट, 10 सारजेंट, टी. और एन. वालेस (1981), ''सम अनप्लेजेंट मोनेटरिस्ट अर्थमटिक,'' फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ मिनियापोलिस, क्वार्टरली रीव्यू 1-17।

3.32 हालांकि, भारत में 'गेम ऑफ चिकन' स्थितियों को न्यूनतम करने की दृष्टि से सहकारी ढांचा अपनाने के द्वारा राजकोषीय प्रभुत्व में काफी अधिक कमी हुई है। अनुपूरक करार, दि एफ आर बी एम अधिनियम, दि फाइनैंस कमीशन रिपोर्ट्स और बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) सभी ऐसे उदाहरण हैं जिन्होंने राजकोषीय-मौद्रिक नीति पारस्परिक क्रिया के लिए सहकारी रणनीतियां विकसित करने में योगदान किया है। प्रायः दोनों ही प्राधिकारियों ने औपचारिक अथवा अनौपचारिक रूप से एक दूसरे से अपनी योजनाओं के बारे में चर्चा की और/अथवा 'गेम ऑफ चिकन' स्थिति विकसित होने से पूर्व उन्होंने अपने इरादों को बड़े युक्तियुक्त तरीके से एक दूसरे को बता दिया था। समन्वय को आगे बढ़ाने के लिए विश्वसनीय रूप से संकेत देना एक उपयोगी रणनीति है। राजकोषीय प्राधिकारियों के लिए मुड़ने हेतु राजकोषीय नियम विश्वसनीय संकेत देने के सर्वोत्तम रूप हैं। किन्तु, ये नियम तनाव की घटनाओं में अथवा राजनैतिक चक्रों के कारण विश्वासघाती हो गये हैं।

3.33 वर्ष 2008-09 एक उदाहरण के रूप में साबित हुआ जब केंद्र सरकार का जी एफ डी/जी डी पी 2.5 प्रतिशत के बजटीय घाटे के सम्मुख 6.0 प्रतिशत था और निवल बाजार उधार बजट अनुमान के 1 ट्रिलियन रूपये की तुलना मैं 2.34 ट्रिलियन रूपये था। राजकोषीय गिरावट अभूतपूर्व थी। राजकोषीय प्राधिकारियों ने इस प्रकार की गिरावट के बारे में पहले सुस्पष्ट रूप से संकेत नहीं दिये थे और पिछली तिमाही में अचानक भारी अतिरिक्त बाजार उधार 10 वर्ष के बेंच मार्क प्रतिफल में परिणत हो गये जो दिसंबर 2008 में गिरकर 5.0 प्रतिशत हो गये और मार्च 2009 के अंत में 200 आधार अंक बढ़ कर 7.0 प्रतिशत हो गये। यह इस सबके बावजूद हुआ था कि रिज़र्व बैंक ने, मौद्रिक नीति के अभूतपूर्व सुलभता का आश्रय लिये जाने के समय संभावित ब्याज दर आघात को टालने के लिए 2008-09 की अंतिम तिमाही में लगभग 890 बिलियन रूपये की एकमुश्त खुला बाजार खरीद की थी।

3.34 2009-10 के दौरान जी एफ डी- जी डी पी अनुपात 6.5 प्रतिशत के बजट-घाटे के समक्ष 6.4 प्रतिशत हो गया था। निवल बाजार उधार की राशि बजट राशि के अनुरूप 3.98 ट्रिलियन रूपये थी। इसके समक्ष, सरकार ने वर्ष 2010-11 में स्पेक्ट्रम नीलामियों और निर्निहितीकरण (डिवेस्टमेंट) के माध्यम से अप्रत्याशित रूप से एकल राजस्व प्राप्त किया जिससे अस्थायी राजकोषीय समेकन में सहायता मिली। परिणामस्वरूप, जी एफ डी- जी डी पी अनुपात गिरकर 4.6 प्रतिशत हो गया, जो 5.5 प्रतिशत के बजट स्तर निर्धारण से काफी कम था। वर्ष 2011-12 में फिर से राजकोषीय गिरावट देखी गई और बजट में अनुमानित 4.6 प्रतिशत के स्तर में 1.3 प्रतिशत की गिरावट हो गई। वर्ष के प्रारम्भ में, केंद्रीय बैंक विश्वसनीय रूप से कठोर मौद्रिक नीति बनाये रखने के लिए वचनबद्ध था, किन्तु लगभग 2 ट्रिलियन रूपये के अतिरिक्त बाजार उधारों (खजाना बिलों को शामिल करते हुए) ने कुछ उर्ध्वमुखी दबाव बना दिया। हालांकि, अगस्त 2011 से बाजार में अस्थिरता पर नियंत्रण करने के लिए विदेशी मुद्रा में भारतीय रिज़र्व बैंक के हस्तक्षेप को शामिल करते हुए और भी अनेक कारणों से चलनिधि को अत्यधिक कठोर बनाया गया। इसलिए ओ एम ओ खरीद एक बृहत सीमा तक अत्यधिक कठोर चलनिधि स्थितियों में कटौती के केंद्रीय बैंक के उद्देश्य के अनुरूप थी। गेम ऑफ चिकन से बचते हुए, कठोर राजकोषीय और मौद्रिक नीति के नियमों का अनुसरण करना तथा इन नियमों के प्रति विश्वसनीय रूप से प्रतिबद्ध रहना सर्वोत्तम है। इन नियमों में कुछ अंतर्जात लचीलापन होना चाहिए ताकि आर्थिक के अतिरिक्त राजनैतिक चक्रीयता को संतुष्ट किया जा सके किन्तु ढांचागत घाटे के विस्तार से बचा जा सके।

3.35 प्रोत्साहन के प्रावधान की तुलना में प्रोत्साहन से निकासी काफी कम समन्वित थी। केंद्रीय मूल्य वर्धित कर (सी ई एन वी ए टी) वापस लिये जाने की योजना आस्थगित हो जाने से मौद्रिक नीति पर कर्ज के मुद्रीकरण का अतिरिक्त दबाव पड़ा। यह स्पष्ट नहीं था कि प्रोत्साहन को वापस लेते समय कौन बाज होगा और कौन फाख़ता (डॅव) होगी। दीर्घ काल तक शीघ्र सुधार को बनाये रखने का टिकाऊ पन अनिश्चित रहा तथा कीमत दबाव अस्पष्ट बने रहे। मौद्रिक नीति ने फिर से निकासी भार के बृहत भाग का निभाव किया। वैश्विक वित्तीय संकट के बाद आने वाले राजकोषीय घाटे के व्यापक होने में एक बृहत् ढांचागत घटक है जो राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय को नियंत्रित करता है। 2012-13 में सरकार द्वारा स्वीकृत संशोधित राजकोषीय रूपरेखा (रोडमैप) अंशतः कोर्स करेक्शन सेट करेगी। हालांकि संशोधित रूपरेखा पहले से ही 2011-12 से निर्धारित की गई अनुक्रिया है जो महत्वपूर्ण समष्टि आर्थिक गिरावट का मुकाबला करने के लिए बनाई गई थी। उक्त रोडमैप राजकोषीय समेकन की गुणवत्ता के प्रश्न का पर्याप्त रूप से समाधान नहीं करता है। राजस्व के गैर-टिकाऊ संसाधनों, सब्सिडी की अपर्याप्त काट-छाँट और इस राजकोषीय समेकन रणनीति के भाग के रूप में पूंजी व्यय में अवांछित कटौती पर अत्यधिक निर्भरता रही है।

IV. मुद्रास्फीति प्रबंध में राजकोषीय और मौद्रिक समन्वय

3.36 निम्न और स्थिर मुद्रास्फीति स्तर बनाये रखना समष्टि आर्थिक नीति का एक प्रमुख लक्ष्य है। चूंकि मुद्रास्फीति को एक मौद्रिक तथ्य के रूप में परंपरागत मुद्रावादी दृष्टिकोण से देखा जाता है, मौद्रिक नीति की मुद्रास्फीति प्रबंध के लिए एक प्रमुख साधन के रूप में सिफारिश की जाती है। तथापि मुद्रास्फीति नियंत्रण में राजकोषीय नीति की भूमिका को भी सकल मांग और मुद्रास्फीति के अतिरिक्त करों व सब्सिडी की उसकी नीति के माध्यम से अल्पावधि-मुद्रास्फीति प्रबंध पर उच्च राजकोषीय घाटे के प्रभाव की दृष्टि से मान्यता प्रदान की गई है। राजकोषीय घाटे और मुद्रास्फीति के बीच दुतरफा पारस्परिक क्रिया से भी, कीमत स्थिरता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच इष्टतम समन्वय स्थापित करना महत्वपूर्ण होगा। इस खंड में मुद्रास्फीति प्रबंध में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों की भूमिका तथा मुद्रास्फीति पर इन नीतियों के बीच पारस्परिक क्रिया के निहितार्थों को समझने का प्रयास किया गया है।

मुद्रास्फीति और राजकोषीय बनाम मौद्रिक नीति

3.37 परंपरागत आर्थिक सिद्धांत इस विचार को बढ़ावा देता है कि मौद्रिक नीति को प्रति-चक्रीय नीतियों के माध्यम से व्यवसाय चक्र स्थिरीकरण पर फोकस करना चाहिए जब उत्पादन को मांग की ओर के आधात हों और मुद्रास्फीति का प्रभुत्व हो, जब कि राजकोषीय नीति को, कर्ज-घाटा गति सिद्धांत से उत्पन्न अंतर-कालिक और अंतर-जनरेशनल बजट दबावों को ध्यान में रखते हुए आपूर्ति की ओर के आघातों के प्रभाव स्थिर करने पर फोकस करना चाहिए । इस प्रकार के तर्क का बुनियादी सैद्धांतिक आधार वाक्य यह है कि दीर्घीकृत उच्च मुद्रास्फीति सामान्यतया मौद्रिक कारणों से होती है। इसके अलावा, उच्च मुद्रास्फीति सामान्यतया उच्च संकलित मांग का परिणाम है और मौद्रिक नीति के माध्यम से संकलित मांग पर बेहतर ढंग से नियंत्रण किया जा सकता है।

3.38 अल्पावधि और दीर्घावधि, दोनों ही प्रभावों के अनुसार राजकोषीय नीतियों और मुद्रास्फीति के बीच सहबद्धता के संबंध में एक विशाल अनुभवजन्य साहित्य भी है (रोदर, 2004) । उच्च राजकोषीय घाटे का मुद्रास्फीति पर प्रभाव दो अलग-अलग कोणों से देखा जाता है। राजकोषीय घाटे में वृद्धि में सरकार के बढ़े हुए खर्च शामिल होंगे, जिनसे समग्र मांग में वृद्धि हो सकती है और यह मुद्रास्फीतिकारक हो सकता है, यदि अर्थव्यवस्था उत्पादन के संभाव्य स्तर पर अथवा उससे ऊपर के स्तर पर कार्य कर रही हो। किन्तु, यदि आर्थिक संवृद्धि संभाव्य स्तर से कम है तो अल्पावधि में राजकोषीय विस्तार मुद्रास्फीति को नहीं बढ़ा सकता है। यह तर्क किया गया है कि अभूतपूर्व राजकोषीय प्रोत्साहन जो भारत में वैश्विक आर्थिक संकट के दौरान प्रयोग में लाया गया था, उसका मुद्रास्फीति पर कोई तात्कालिक प्रभाव नहीं पड़ा था क्योंकि उसने प्राथमिक रूप से उपभोग तथा निवेश मांग में गिरावट को आंशिक रूप से प्रतिसंतुलित करने के एक साधन के रूप में कार्य किया था। (रिजर्व बैंक वार्षिक रिपोर्ट, 2009-10)।

3.39 मुद्रास्फीति पर राजकोषीय घाटे का अल्पावधि प्रभाव नीतियों के मिश्रण पर भी निर्भर कर सकता है जिसे सरकार समष्टि आर्थिक प्रबंध के लिए शुरू करने हेतु योजना बनाती है। यदि राजकोषीय घाटा अप्रत्यक्ष करों में कमी के कारण बढ़ता है, जैसे कि वैश्विक संकट के तुरंत बाद की अवधि में भारत में अधिकांश विनिर्मित उत्पाद के लिए उत्पाद कर में कमी की गई थी, इसका अंतिम कीमतों पर एक मंदक प्रभाव पड़ता है। उसी प्रकार, प्रजातिगत सब्सिडी में वृद्धि कीमतों को बाजार समाशोधन कीमतों से कम रख सकती है, इस प्रकार मुद्रास्फीति को अल्पावधि में दबा कर रखा जाता है। दूसरी ओर, अंतिम उपभोक्ता को सीधे नकद हस्तांतरण के रूप में सब्सीडी प्रदान करने से वह अल्पावधि में मुद्रास्फीतिकारक हो सकती है क्योंकि बढ़ी हुई मांग से कीमतों में वृद्धि हो सकती है। अल्पावधि मुद्रास्फीति पर न्यूनतर राज कोषीय घाटे का प्रभाव इस बात पर निर्भर करते हुए अलग-अलग भी हो सकता है कि घाटे में कमी किस प्रकार से की गई है। यदि राजकोषीय घाटे को कम करने के लिए अप्रत्यक्ष करों में वृद्धि को एक साधन के रूप में इस्तेमाल किया गया है तो अंतिम कीमतें अल्पावधि में बढ़ सकती हैं। प्रजातिगत सब्सिडी में कमी के कारण अल्पावधि मुद्रास्फीति बढ़ सकती है किन्तु मध्यावधि में इसका मुद्रास्फीति पर अनुकूल प्रभाव होगा।

3.40 चिरस्थायी राजकोषीय घाटे से कभी न कभी मुद्रा निर्माण करना होता है जिसके मुद्रास्फीतिकारक परिणाम होंगे। सार्जेंट और वॉलेस यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि राजकोषीय प्रभुत्व की स्थितियों के अंतर्गत मुद्रास्फीति एक राजकोषीय समस्या से भी अधिक समस्या के रूप में सामने आ सकती है। राजकोषीय प्रभुत्व व्यवस्था तथा मुद्रास्फीति के बीच सहबद्धता का पता लगाने संबंधी प्रायोगिक कार्य में यह दर्शाया गया है कि सरकारें प्रायः राजकोषीय तनाव के समय के दौरान सिक्का ढलाई मुनाफा (अथवा मुद्रास्फीति कर) का सहारा लेती हैं जिसके मुद्रास्फीतिकारक परिणाम हुए हैं।

3.41 दीर्घावधि-प्रवृत्तियों की ओर नज़र डालने वाले अध्ययनों द्वारा यह प्रमाणित करने का प्रयास किया गया है कि किस सीमा तक बृहत् और चिरस्थायी घाटा स्तर मुद्रास्फीति को प्रभावित करते हैं। दूसरी ओर अल्पावधि अध्ययन राजकोषीय नीतियों में परिवर्तनों के प्रभाव पर फोकस करते हैं, अर्थात् मुद्रास्फीति पर राजकोषीय आघातों का प्रभाव। 'एफ टी पी एल' पर आधारित हाल की सैद्धांतिक गतिविधियां यह सुझाव देती हैं कि मध्यावधि कीमत स्थिरता के लिए केवल उपयुक्त मौद्रिक नीति की ही आवश्यकता नहीं होती बल्कि उपयुक्त राजकोषीय नीति की भी आवश्यकता होती है। यह सिद्धांत सरकार के अंतर-कालिक बजट दबावों की पूर्ति सुनिश्चित करने के लिए निर्णायक समायोजन परिवर्ती के रूप में कीमत स्तर पर विचार करता है। यह दबाव, वास्तविक रूप में, सरकार की चालू देयताओं को सरकारी राजस्व के निवल वर्तमान मूल्य से समीकृत करता है, अर्थात मुद्रा निर्माण से भावी प्राथमिक अधिशेष और राजस्व। ऐसी स्थिति में जब रिकार्डियन समानता स्थिर नहीं रहती है और मजबूती से प्रतिबद्ध तथा स्वतंत्र केंद्रीय बैंक के साथ, अंतर-कालिक बजट दबाव में असंतुलनों को कीमत स्तर में बदलाव के माध्यम से समायोजित करने की आवश्यकता होती है।

3.42 ये सभी सैद्धांतिक अनुपात इस आधार वाक्य पर आधारित राजकोषीय नीति और मुद्रास्फीति के बीच सहबद्धता की तलाश करते हैं कि राजकोषीय नीति मुद्रास्फीति का एक कारण है, वह मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने का साधन नहीं है। किन्तु, जब मुद्रास्फीतिकारक दबाव आपूर्ति पक्ष से उत्पन्न होता है तो मुद्रास्फीति नियंत्रण के लिए एक साधन के रूप में राजकोषीय नीति की भूमिका निर्णायक हो जाती है। आपूर्ति में अचानक कमी से सामान्यतया सापेक्ष कीमतें प्रभावित होती हैं क्योंकि कुछ वस्तुओं की कीमतें कीमत स्तर में सामान्य वृद्धि की तुलना में अधिक बढ़ जाती हैं। इस प्रकार, अल्पावधि स्थिरीकरण की समस्या में सभी प्रकार के आघातों के प्रति राजकोषीय अनुक्रिया शामिल हो सकती है, उनमें से कुछ विकृतिकारक हो सकते हैं क्योंकि कीमतों को नाममात्र की अनम्यता द्वारा पहचाना जाता है। राजकोषीय नीति कर दरों/सब्सिडी के परिवर्तनों को प्रति संतुलित करते हुए लागत-प्रेरित आघातों को कम कर सकती है। इस प्रकार राजकोषीय नीति अधिक प्रभावी ढंग से लागत-प्रेरित मुद्रास्फीति को प्रभावित कर सकती है। किन्तु, लागत-प्रेरित आघातों को अकेले राजकोषीय अथवा मौद्रिक नीति द्वारा हटाया नहीं जा सकता, क्योंकि वे सामान्यतया विपरीत दिशा में उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति के बीच संबंध को प्रभावित करते हैं (किर्सानोवा और अन्य, 2009)। आपूर्ति में अचानक कमी प्रारंभ में सापेक्ष कीमतों को प्रभावित करती है, किन्तु मजदूरी कीमत सर्पिल गति से दूसरे दौर के प्रभाव के माध्यम से उसमें अधिसमय में सामान्यीकरण की प्रवृत्ति आ जाती है। इसलिए, मौद्रिक नीति को मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं पर अंकुश लगाते हुए सामान्यीकृत मुद्रास्फीति की स्थिति बनाने वाली आपूर्ति में अचानक कमी के खिलाफ बचाव करना होगा।

भारत में मुद्रास्फीति की प्रकृति और राजकोषीय और मौद्रिक नीति की भूमिका

3.43 आपूर्ति में बारंबार अचानक कमी होना एक मुख्य कारण है जो भारत में मुद्रास्फीति पथ को प्रभावित करता है। 1952-53 से, यह विचार करते हुए कि 5-6 महीने में दो अंकीय मुद्रास्फीति इतनी ऊँची है कि भारत के लिए उच्च मुद्रास्फीति के नौ एपीसोड्स अभिनिर्धारित किये जा सकते हैं (मोहंती, 2010)। आपूर्ति पक्ष के कारण, जैसे सूखा, युद्ध, तेल और अंतर्राष्ट्रीय पण्य कीमत आघात इन देखे गये अधिकांश मुद्रास्फीति कीलों (स्पाइक) के पीछे मुख्य कारण रहे हैं। हाल की अवधि में मुद्रास्फीति अनुभव का एक विश्लेषण यह दर्शाता है कि पिछले 20 वर्षों में समग्र थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति में 'खाद्य' और 'ईंधन' समूह का भारित योगदान उनके 20 वर्षों में से 16 में संयुक्त भार से अधिक था

चार्ट III.2: समग्र मुद्रास्फीति में खाद्य और ईंधन का भारित अंशदान

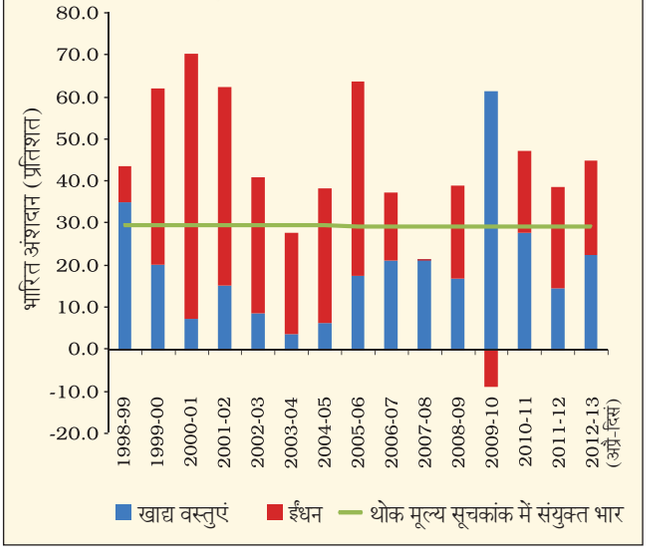

(चार्ट III.2) यह मुद्रास्फीति की ढांचागत प्रकृति की ओर संकेत करता है, क्योंकि यदि आपूर्ति में अचानक कमी को अस्थायी होना माना जाता है तो खाद्य अथवा ईंधन में उच्च मुद्रास्फीति के बाद अनुवर्ती अवधि में उसी वर्ग में कम मुद्रास्फीति होने की संभावना मानी जाती है और इसके द्वारा मुद्रास्फीति के स्थायीत्व को भंग किया जाता है । ढांचागत मुद्रास्फीति की स्थिति में, मुद्रास्फीति से निपटने के लिए परंपरागत मौद्रिक नीति साधन इतने प्रभावी नहीं हो सकते हैं इसलिए मुद्रास्फीति प्रबंध को उच्चतर राजकोषीय घाटे के जोखिम पर ध्यान दिये बिना जो मुद्रास्फीतिकारक भी हो सकता है, असंतुलनों को सही करने के लिए राजकोषीय हस्तक्षेप करने की आवश्यकता होगी। उच्चतर सब्सिडी के साथ राजकोषीय हस्तक्षेप ही अल्पावधि में मुद्रास्फीति को दबा सकता है, जो अधिसमय में सुस्पष्ट हो जायगा। दूसरी ओर, उच्चतर पूंजी व्यय के माध्यम से आपूर्ति में वृद्धि करने के लिए किये गये राजकोषीय हस्तक्षेप से राजकोषीय घाटा बढ़ सकता है, किन्तु मध्यावधि में उससे मुद्रास्फीति पर नियंत्रण हो सकता है।

3.44 1990 के वर्षों के द्वितीयार्ध से समग्र मुद्रास्फीति में 'गैर-खाद्य गैर-ईंधन' मुद्रास्फीति का अंशदान कुछ हद तक कम हुआ है, जब कि आपूर्ति में अचानक कमी ने मुद्रास्फीति को काफी अधिक अस्थिर रखा है (चार्ट III.3) ।

3.45 समग्र मुद्रास्फीति में आपूर्ति में अचानक कमी से उत्पन्न मुद्रास्फीति का कारण-कार्य संबंध इस बात का संकेत देता है कि ईंधन समूह की मुद्रास्फीति सामान्यीकृत मुद्रास्फीति में अंतरित हो

चार्ट III.3: मुद्रास्फीति अस्थिरता और परिवर्तनशील अंशदान

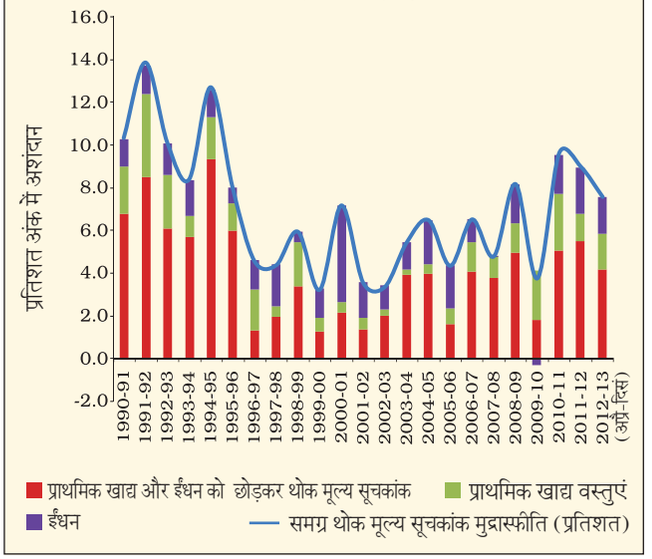

जाती है, जब कि इस प्रकार का प्रभाव खाद्य मुद्रास्फीति के मामले में नहीं दिखाई देता है (सारणी 3.1)। कारण-कार्य संबंध जांच इस ओर संकेत करती है कि ईंधन मुद्रास्फीति खाद्य मुद्रास्फीति में अंतरित नहीं होती है, शायद इस बात की ओर संकेत करते हुए कि कृषि के लिए वित्तीय सहायता प्राप्त ईंधन से प्रभाव का अंतरण सीमित हो जाता है। यद्यपि खाद्य मुद्रास्फीति सामान्यीकृत मुद्रास्फीति का प्रत्यक्ष रूप से कारण नहीं है तथापि वह मजदूरी-कीमत सर्पिल गति के माध्यम से सामान्यीकृत मुद्रास्फीति को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर सकती है।

3.46 आपूर्ति में अचानक कमी के लिए देशी और विदेशी, दोनों ही कारण जिम्मेवार हैं। जहाँ देशी कारण अधिकांशतः कृषि क्षेत्र से

सारणी 3.1: खाद्य, ईंधन और मूल मुद्रास्फीति के बीच जोड़े-वार ग्रेंजर कारणता जांच

अवधि: अप्रैल 1996- मार्च 2012

अकृत प्राक्कल्पना:	एफ. आंकड़े	प्रॉब
खाद्य ईंधन का ग्रेंजर कारण नहीं है	0.63	0.64
ईंधन खाद्य का ग्रेंजर कारण नहीं है	1.65	0.16
मूल ईंधन का ग्रेंजर कारण नहीं है	2.37	0.05
ईंधन मूल का ग्रेंजर कारण नहीं है	3.89	0.00
मूल खाद्य का ग्रेंजर कारण नहीं है	0.24	0.91
खाद्य मूल का ग्रेंजर कारण नहीं है	0.41	0.79

टिप्पणी: गैर खाद्य विनिर्मित उत्पादों द्वारा मूल मुद्रास्फीति का प्रतिनिधित्व किया जाता है।

अत्यधिक अस्थिर उत्पादन से उत्पन्न होते हैं, बाह्य कारणों में अंतर्राष्ट्रीय पण्य कीमतों में उछाल शामिल है, विशेष रूप से, ईंधन और उर्वरकों के मामले में । हाल के वर्षों में वैश्विक ईंधन कीमतों में वृद्धि काफी महत्वपूर्ण रही है और वह मुद्रास्फीतिकारक दबावों का प्रमुख स्रोत बन गई है। अधिकांश देशों (प्रमुख ओ ई सी डी देशों के अपवाद के साथ) ने पेट्रोलियम कीमत निर्धारण पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सरकारी हस्ताक्षेप नियोजित किये हैं (किरीट पारीख विशेषज्ञ दल, 2010) । किन्तु, हस्तक्षेप की प्रकृति और विधि अलग-अलग देशों में अलग-अलग होती है। भारत में, नियंत्रित मूल्य प्रक्रिया (ए पी एम), 1973-74 में प्रथम तेल कीमत आघात द्वारा उत्पन्न उच्च और अस्थिर तेल कीमतों से भारतीय अर्थव्यवस्था की रक्षा करने की दृष्टि से संपूर्ण तेल क्षेत्र पर लागू की गई थी।

3.47 अप्रैल 2002 में ए पी एम का पूरी तरह से परित्याग कर दिया गया था। अप्रैल 2002 और जनवरी 2004 के बीच तेल विपणन कंपनियों ने बाजार कारणों पर आधारित पेट्रोलियम उत्पादों की देशी उपभोक्ता कीमतों में परिवर्तन किये। उसके बाद कच्चे तेल की अंतर्राष्ट्रीय कीमतों में वृद्धि ने सरकार को पेट्रोल, डीज़ल, मिट्टी के तेल और घरेलू एल पी जी की कीमतों पर नियंत्रण पुनः लागू करने के लिए बाध्य किया जिससे ओ एम सी की अल्प वसूललियों में काफी अधिक वृद्धि हुई। 2008 में कच्चे तेल की कीमतों में ऐतिहासिक उछाल के साथ अल्प वसूलियां चिंताजनक अनुपात तक बढ़ गई थी (चार्ट III.4) । 2010 के आखीर से कच्चे तेल की अंतर्राष्ट्रीय

चार्ट III.4: ईंधन में उत्पाद-वार अल्प वसूली

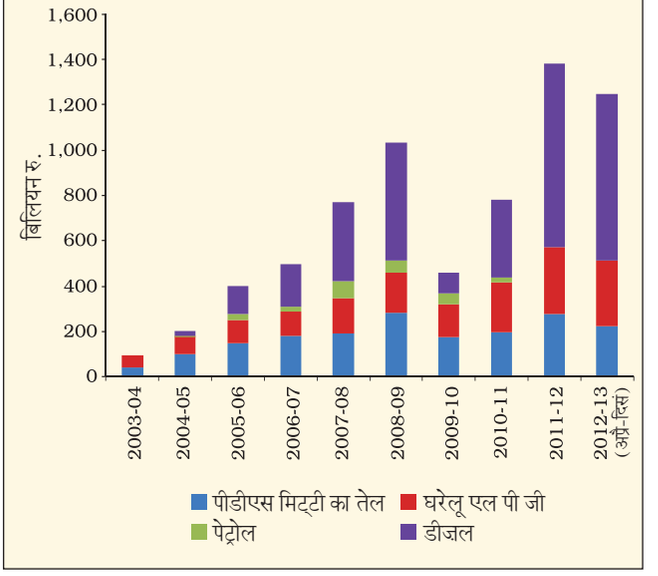

कीमतों में उच्च प्रवृत्ति के साथ, इस अवधि के दौरान ओ एम सी की अल्प वसूलियों में तीव्र वृद्धि देखी गई।

3.48 मुद्रास्फीति पर ईंधन कीमतों में सरकार के राजकोषीय हस्तक्षेप का प्रभाव नियंत्रित और अनियंत्रित उत्पादों के मध्य 'ईंधन' समूह में मुद्रास्फीति के विचलित नमूने से देखा जा सकता है। चूंकि सरकार का अप्रैल 2004 से ईंधन कीमत पर नियंत्रण पुनः उभरना शुरू हो गया था, इस अवधि के दौरान ईंधन कीमतों में प्रवृत्तियों के तुलनात्मक विश्लेषण से मुद्रास्फीति की उस सीमा का पता चलता है जिस तक राजकोषीय हस्तक्षेप के माध्यम से सरकार ने मुद्रास्फीति का अवशोषण किया है (चार्ट III.5) ।

3.49 नियंत्रित कीमतें सार्थक रूप से अनियंत्रित कीमतों से कम रही हैं, जो इस बात का संकेत है कि नियंत्रित कीमत नीति घरेलू कीमतों को सार्थक रूप से कम रखने में सहायक रही है। नियंत्रित कीमतों के अंतर्गत उत्पादों में घरेलू एल पी जी, मिट्टी का तेल और डीज़ल शामिल है, जिनका एक साथ भार खनिज तेल समूह के अंतर्गत कीमत नियंत्रण से मुक्त उत्पादों के संयुक्त रूप से थोक मूल्य सूचकांक के 3.0 प्रतिशत की तुलना में 6.3 प्रतिशत था। यदि कोई यह मानता है कि अनियंत्रित कीमतों की मुद्रास्फीति राजकोषीय हस्तक्षेप के अभाव में वैसी ही होने की संभावना है, जिसके बारे में कोई कीमत नियंत्रण मुक्त उत्पादों की मुद्रास्फीति तथा नियंत्रित कीमतों की मुद्रास्फीति के बीच अंतर के रूप में दमित मुद्रास्फीति की सीमा का अनुमान लगा सकता है (चार्ट III.6) । यह देखा जा सकता है कि नियंत्रित कीमतें अस्थिरता को सार्थक रूप से बराबर करने के लिए एक राजकोषीय नीति साधन के रूप में इस्तेमाल की गई हैं जिसके अभाव में वह उभर कर सामने आ जाती यदि वैश्विक ईंधन कीमत आघातों को देशी कीमतों तक पूर्ण रूप से गुजरने की अनुमति दी गई होती। यह अस्थिरता, निविष्टि लागत पर अपने प्रभाव के अतिरिक्त, सार्थक रूप से अस्थिरक मुद्रास्फीति की संभावनाओं पर भी प्रभाव डाल सकती है, जिसके द्वारा ऐसी स्थिति का निर्माण हो सकता है जिसमें मौद्रिक नीति को और अधिक सक्रिय होना होगा। इसलिए जब आपूर्ति में अचानक कमी मुद्रास्फीति पथ को सार्थक रूप से अस्थिरता प्रदान करती है तो राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय निर्णायक बन जाता है।

3.50 पण्य कीमत आघातों से देशी अर्थव्यवस्था को पृथक करने के प्रशासनिक उपाय अल्पावधि में कम मुद्रास्फीति प्रदान कर सकते हैं किन्तु बढ़े हुए राजकोषीय भार के कारण मध्यावधि में मुद्रास्फीति में वृद्धि हो सकती है। देशी मुद्रास्फीति पर पण्य कीमतों में तीव्र अस्थिरता के प्रभाव को पृथक करने के प्रयोजन के लिए केवल राजकोषीय/प्रशासनिक उपायों के उपयुक्त नीति मिश्रण का इस्तेमाल करना होगा, जब कि स्तर में किसी परिवर्तन को आदर्श रूप से गुजरने दिया जाए क्योंकि उससे भी मांग समायोजन में सहायता मिलेगी। थोक उपभोक्ताओं के लिए डीज़ल की खुला बाजार कीमत लागू करने तथा डीज़ल की खुदरा कीमत में भिन्न कालिक वृद्धियों के संबंध में सरकार द्वारा की गई हाल की घोषणाओं से सन्निकट कीमत दबावों में वृद्धि हो सकती है, किन्तु यह सही दिशा में एक कदम है।

चार्ट III.5: ईंधन की अंतर्राष्ट्रीय और देशी कीमतों में उतार-चढ़ाव

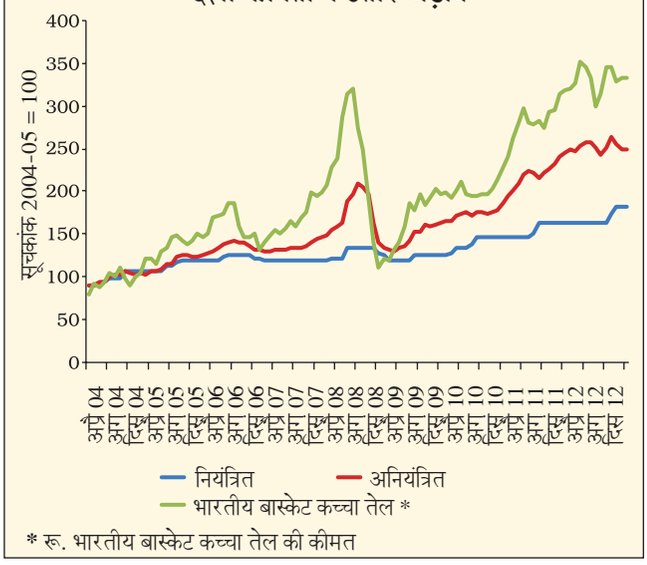

* रू. भारतीय बास्केट कच्चा तेल की कीमत

चार्ट III.6: ईंधन स्फीति पर राजकोषीय नियंत्रण

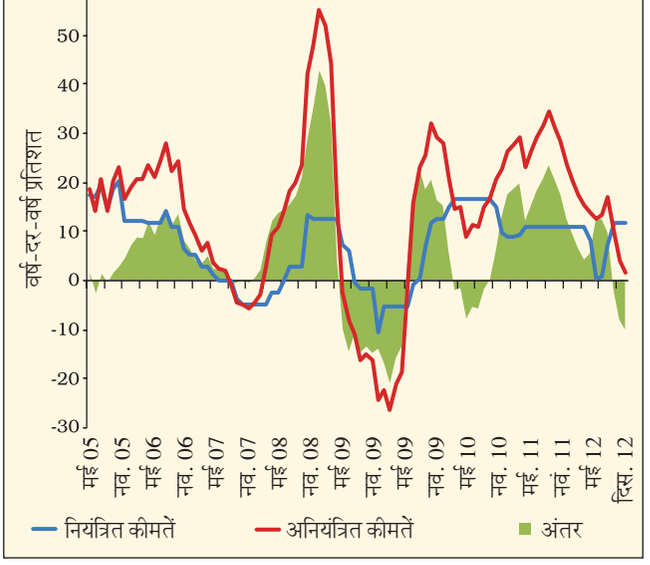

3.51 सरकार उर्वरक सब्सिडियां उपलब्ध करा रही है, क्योंकि कृषि क्षेत्र के लिए वह एक मुख्य निविष्टि है। यह देखा जा सकता है कि अंतर्राष्ट्रीय उर्वरक कीमतों में हाल के वर्षों में तीव्र वृद्धि दिखाई दी है और ऐसा ही ईंधन उत्पादों के मामले में भी हुआ है, सरकार ने इस प्रकार की अस्थिरता पर रोक लगाने के लिए सब्सिडियों को एक प्रमुख साधन के रूप में इस्तेमाल किया है (चार्ट III.7) । यद्यपि अल्पावधि में मुद्रास्फीति प्रबंध के लिए सब्सिडियों को एक साधन के रूप में, इस्तेमाल किया जा सकता है, किन्तु अंतर्राष्ट्रीय बाजार में चिरस्थायी उच्च कीमतों की वजह से राजकोषीय मोर्चे पर काफी अधिक भार पड़ सकता है और देशी कीमतों को उच्च आयात कीमतों का प्रभाव अपरिहार्य रूप से झेलना पड़ सकता है, विशेष रूप से तब, जब आयात पर निर्भरता बहुत अधिक हो।

सरकारी वित्त पर मुद्रास्फीति का प्रभाव

3.52 मौद्रिक और राजकोषीय नीति के बीच जिस प्रमुख चैनल के माध्यम से पारस्परिक क्रिया कार्य करती है वह मुद्रास्फीति और सरकारी वित्त के बीच आकस्मिक संबंध के माध्यम से है। यदि सरकारी राजस्व और व्यय की मुद्रास्फीति के प्रति अलग-अलग अनुक्रिया होती है तो इन घटकों की मुद्रास्फीति के प्रति निवल अनुक्रिया पर निर्भर करते हुए राजकोषीय संतुलन बदल जायगा। यदि मुद्रास्फीति के प्रति सरकार के व्यय की मूल्य सापेक्षता, मुद्रास्फीति के प्रति राजस्व की मूल्य सापेक्षता से अधिक है तो, मुद्रास्फीति में वृद्धि से घाटे में वृद्धि होगी और इसके विपरीत स्थिति होगी। इस क्षेत्र में आघेवली और खान (1978) द्वारा सेमिनल कार्य किया गया था। उन्होंने पाया कि उभरती अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रास्फीति को स्वतः स्थायी बनाने वाली एक प्रक्रिया होती है। भारत के संबंध में पिछले अनुभवजन्य अध्ययनों (शर्मा 1984, जाधव और सिंह, 1990) ने भारतीय संदर्भ में मुद्रास्फीति प्रेरित घाटे की प्राक्कल्पना की वैधता के लिए समर्थन पाया।

चार्ट III.7: उर्वरक कीमतें और सब्सिडी

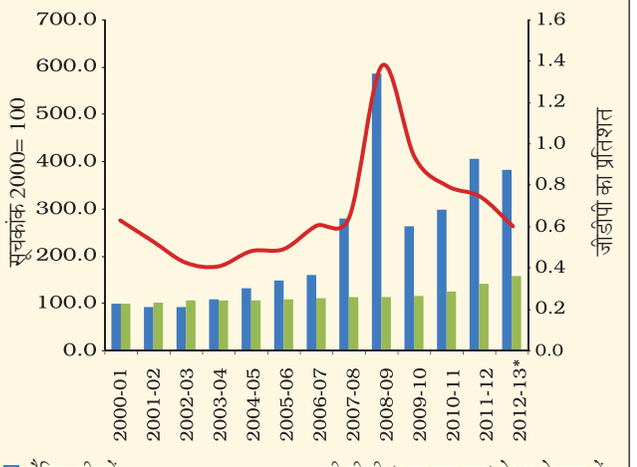

* कीमतें अप्रैल-दिसंबर के लिए है। जी डी पी अग्रिम अनुमान और सब्सिडी बजट अनुमान वित्तीय वर्ष के लिए है।

3.53 मुद्रास्फीति और सरकारी वित्त के बीच पारस्परिक क्रिया की बॉक्स ।।।.4 में प्रायोगिक रूप से जांच की गई है। यह देखा जा सकता है कि मुद्रास्फीति के प्रति व्यय मूल्य-सापेक्षता काफी अधिक है और सांख्यिकीय आधार पर राजस्व मूल्य सापेक्षता की तुलना में महत्वपूर्ण है। यह इसलिए हो सका है कि अधिकांश सरकारी व्यय की योजना वास्तविक रूप से बनाई जाती है और मुद्रास्फीति के प्रति उसे स्वतः ही सूचकांक प्राप्त हो जाता है। उदाहरण के लिए, मुद्रास्फीति के साथ परियोजना लागत बढ़ जाती है, जब कि वेतन मुद्रास्फीति सूचकांक से सम्बद्ध होते हैं। इसके अलावा, मुख्य मदों, जैसे खाद्य और ईंधन पर सब्सिडी व्यय भी मुद्रास्फीति के प्रति बहुत अधिक संवेदनशील हैं। राजकोषीय घाटे का उच्चतर स्तर मुद्रास्फीतिकारक हो सकता है, ये बिन्दु भी स्वतः स्थायी बनने वाले मुद्रास्फीति चक्र तथा राजकोषीय घाटे के जोखिम में परिणत हो जाते हैं।

V. सरकारी व्यय की चक्रीयता

3.54 कीन्स के दृष्टिकोण बताते हैं कि राजकोषीय नीति आदर्श रूप से प्रतिचक्रीय होनी चाहिए, अर्थात् आर्थिक गिरावट के दौरान जब अर्थव्यवस्था का विस्तार हो रहा हो तथा उसमें वृद्धि हो रही हो, राजकोषीय घाटों में कमी होनी चाहिए। सरकार के व्यय की चक्रीयता को सामान्यतया इस रूप में परिभाषित किया जाता है कि व्यय किस प्रकार से उत्पादन अंतराल के साथ चलता है। जब नकारात्मक उत्पादन अंतराल की स्थिति में यदि सरकार के व्यय बढ़ते हैं। (अर्थात् उत्पादन उसकी संभाव्यता से कम हो) तो व्यय प्रतिचक्रीय होते हैं। इसका निहितार्थ यह है कि जब उत्पादन उसकी प्रवृत्ति के सापेक्ष अधिक होता है तो व्यय कम होता है। इसलिए, प्रचक्रीयता को उत्पादन अनुपात के प्रति औसत से अधिक व्यय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जब कभी भी उत्पादन उसकी संभाव्यता से अधिक हो।

3.55 अनेक देशों में राजकोषीय नीतियां प्रतिचक्रीय के स्थान पर प्रचक्रीय बन गई हैं। इस घटना में उधार दबाव, राजकोषीय नियम और कमज़ोर संस्थाएं योगदान करती हैं। नीतियां, विशेष रूप से सरकारी व्यय तेजी के समय प्रायः विस्तारकारी हो जाते हैं और मंदी के दौरान संकुचनकारी बन जाते हैं। यह, समष्टि आर्थिक स्थिरता के दृष्टिकोण से संभाव्य रूप से नुकसानदायक है। इसके प्रतिकूल कल्याण नतीजे भी होते हैं। इसके अलावा, अच्छे समय में राजकोषीय

बॉक्स III.4
मुद्रास्फीति और सरकारी वित्त: क्या यह भारत में स्वत: स्थायी चक्र है ?

भारतीय मामले में मुद्रास्फीति-घाटा संबंध का अनुभवजन्य अनुमान एक वेक्टर त्रुटि सुधार मॉडल (वी ई सी एम) ढांचे के अंतर्गत सह-समन्वय संबंध का अनुमान लगाते हुए प्रारंभ किया जाता है।

सह समन्वय संबंध बनाये रखने के लिए समान क्रम के सभी परिवर्ती एकीकृत किये जाने चाहिए। स्थायीत्व के लिए परिवर्तियों की जांच की गई थी और यह पाया गया कि सम-स्तरों पर सभी परिवर्ती अस्थायी थे किन्तु प्रथम अंतर पर स्थायी थे, जिससे यह संकेत मिलता है कि इन परिवर्तियों के बीच सह-समन्वय संबंध हो सकता है।

जोहन्सन और जुसेलियस (1992) द्वारा सुझाये गये प्रणाली विज्ञान के अनुसरण में ट्रेस टेस्ट और अधिकतम ईजन मूल्य सांख्यिकी का इस्तेमाल करते हुए सरकारी राजस्व, मुद्रास्फीति, और संवृद्धि के बीच संबंध में सह-समन्वित वेक्टर्स की उपस्थिति तथा संख्या का अनुमान लगाया गया है। दोनों जांच से सरकारी राजस्व समीकरण और सरकारी व्यय समीकरण के लिए एक सह-समन्वित वेक्टर की उपस्थिति का पता चलता है। यह आर्थिक सिद्धांत में प्रस्तुत किये गये तर्क के अनुरूप है। जहाँ सरकारी राजस्व (आर ई वी) मुद्रास्फीति और आर्थिक संवृद्धि द्वारा सकारात्मक रूप से प्रभावित हो सकते हैं, सरकार के व्यय (ई एक्स पी) उच्च मुद्रास्फीति का कारण तथा प्रभाव, दोनों ही हो सकते हैं। अनुमानित संबंध (सरकारी राजस्व, व्यय, मुद्रास्फीति और वी ई सी एम मॉडल में संवृद्धि के बीच संबंध विनिर्दिष्ट करते हुए) से 1990-2012 की अवधि के लिए निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए हैं:

सरकारी राजस्व

लॉग आरईवी = -5.90+0.88 लॉग डब्ल्यूपीआइ + 0.75 लॉग जीडीपी
टी मूल्य (1.35) (2.51) *

सरकारी व्यय

लॉग ईएक्सपी = -10.21 + 2.72 लॉग डब्ल्यूपीआई-0.03 लॉग जीडीपी
टी मूल्य (2.56)** (-0.06)

* 5 प्रतिशत पर महत्वपूर्ण

** 1 प्रतिशत पर महत्वपूर्ण

संवृद्धि, मुद्रास्फीति और सरकारी वित्त के बीच पारस्परिक क्रिया के अनुसार, अनुभवज्य परिणाम निम्नलिखित प्रमुख निहितार्थ दर्शाते हैं । यह देखा गया है कि सरकारी राजस्व पर की तुलना में सरकारी व्यय पर मुद्रास्फीति का दीर्घावधि प्रभाव अधिक बृहत् और महत्वपूर्ण होता है। संवृद्धि के प्रति सरकारी राजस्व की अनुक्रिया सकारात्मक होती है। इसका निहितार्थ यह है कि उच्च मुद्रास्फीति उच्चतर सरकारी व्यय की तरफ ले जा सकती है जो क्रमशः राजकोषीय घाटे को बढ़ाएगा। यह निश्चित है कि दीर्घावधि में राजकोषीय घाटा मुद्रास्फीतिकारक है, मुद्रास्फीति- सरकारी वित्त संबंध स्वतः - स्थायी चक्र की स्थिति उत्पन्न कर सकते हैं, जैसा कि आघेवली और खान (1978) ने तर्क दिया था। इस प्रकार मुद्रास्फीति प्रबंध की दृष्टि से मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच समन्वय और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गया है क्योंकि दीर्घावधि में उच्च मुद्रास्फीति की स्थिति स्वतः स्थायी हो सकती है। ये परिणाम यह भी संकेत करते हैं कि उच्चतर संवृद्धि से सरकारी वित्त की स्थिति में सुधार होना आवश्यक नहीं है, यदि मुद्रास्फीति अनियंत्रित है।

संदर्भ

आघेवली और खान (1978), ''विकासशील देशों में सरकारी घाटे और मुद्रास्फीति कारक प्रक्रिया,'' आइ एम एफ स्टाफ पेपर्स, वॉल्यूम. 25, 383-416

नीतियां पूर्ण रूप से बुरे समय में प्रति संतुलित नहीं होती हैं तथा वे असंशोधित घाटे की ओर झुकाव लिये छोड़ दी जाती हैं। इससे कर्ज की निरंतरता का जोखिम रह सकता है और चूक की संभावनाएं बढ़ सकती हैं। आदर्श रूप से, कर नीतियों का इस्तेमाल कर विकृतियों और व्यय को कारोबार चक्र पर आसान बनाने के लिए किया जाना चाहिए, किन्तु स-चक्रीय राजकोषीय नीतियों की प्रकृति का झुकाव कारोबार चक्र घट-बढ़ को बदतर बनाने की ओर होता है। भारत में जी डी पी की संवृद्धि दर तथा सरकारी अंतिम उपभोग व्यय (जी एफ सी ई) के बीच की तुलना स-चक्रीयता की प्रकृति की ओर संकेत करती है (चार्ट III.8)।

3.56 स-चक्रीयता की जाँच के लिए नीचे दिये गये दो अभ्यास पूरे किये गये: (i) एक त्रुटि-सुधार ढांचे में राजकोषीय खर्च और उत्पादन संबंध की जाँच की गई थी जिससे हम सरकारी खर्च पर उत्पादन के अल्पावधि प्रभाव तथा इन दो परिवर्तियों के बीच किसी दीर्घावधि प्रभाव के बीच का अंतर समझ सके। (ii) सरकारी खर्च और उत्पादन के बीच संबंध को समझने के लिए सरकारी उपभोग खर्च के चक्रीय घटक का ओ एल एस परावर्तन समीकरण/जी डी पी (जी एफ सी ई/ जी डी पी - सी अनुपात (वास्तविक) और जी डी पी का चक्रीय घटक (वास्तविक जी डी पी-सी) का, सरकारी खर्च और उत्पादन के बीच संबंध समझने के लिए अनुमान लगाया गया था[1]। 1950-51 से 2011-12 के लिए परिणाम निम्नानुसार थे:

दीर्घावधि समीकरण

लॉग वास्तविक जी एफ सी ई = 7.88 + 0.23 लॉग (वास्तविक जीडीपी) + 0.04 प्रवृत्ति (1971)
टी (5.5)*** (2.1)** (7.4)*** एडीजे आर^2 = 0.99

1 वास्तविक जी डी पी (फैक्टर लागत पर) के बजाय ''सरकारी खर्च को छोड़कर वास्तविक जी डी पी (बाजार कीमत पर)'' को परिवर्ती मानते हुए समान परिणाम प्राप्त किये गये थे।

चार्ट III.8: सरकारी व्यय और सकल देशी उत्पाद की संवृद्धि दरें

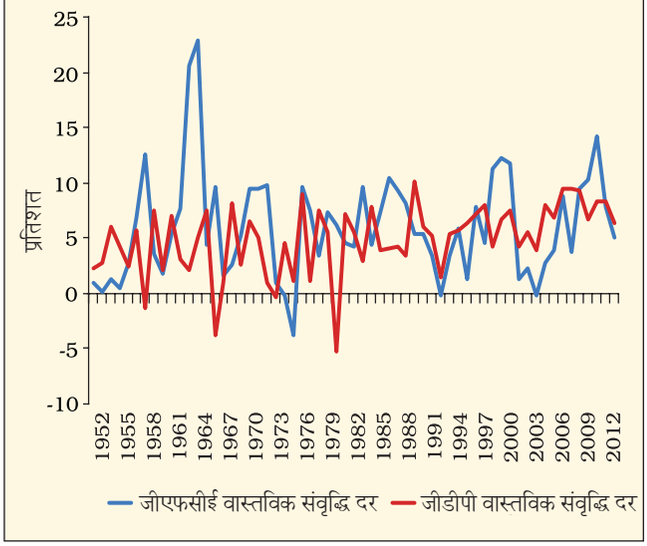

चार्ट III.9: सकल देशी उत्पाद और सरकारी अंतिम उपभोग व्यय के चक्रीय घटक (एच पी- फिल्टर का प्रयोग करते हुए)

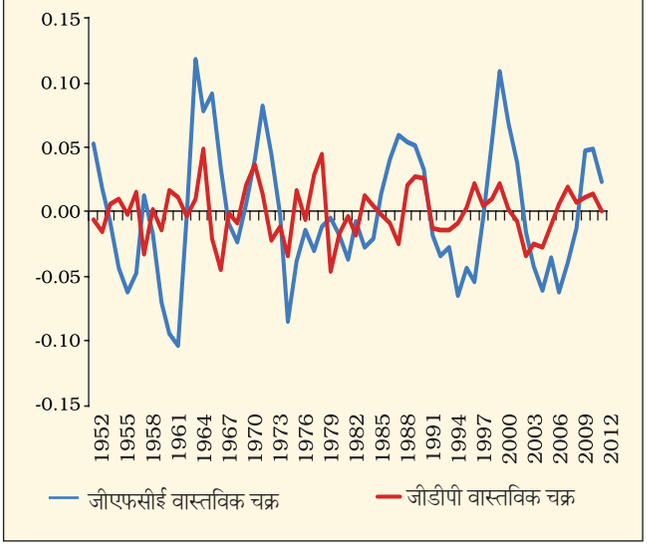

अल्पावधि समीकरण:

डी(लॉग(वास्तविक जी एफ सी ई)) =0.02+ 0.51 डी (लॉग (वास्तविक जी एफ सी ई (-1)))
टी (1.3) (3.8) ***

+ 0.20 डी (लॉग (वास्तविक जी डी पी) -0.31(दीर्घावधि समीकरण का शेष (-1))
(1.2) (-3.4)*** एडीजे आर^2 = 0.33

* 10 प्रतिशत पर महत्वपूर्ण ** 5 प्रतिशत पर महत्वपूर्ण, और
*** 1 प्रतिशत पर महत्वपूर्ण

3.57 परिणाम दर्शाते हैं कि जी एफ सी ई और जी डी पी सह-समन्वित हैं और यह कि सरकारी व्यय दीर्घावधि और अल्पावधि दोनों में प्रचक्रीय है। किन्तु एक अल्पावधि (1980-81 से 2011-12) के लिए उक्त परिणाम सांख्यिकीय तौर पर निरर्थक हैं। ऐसा, वैश्विक वित्तीय संकट की पृष्ठभूमि में 2008-09 में शुरू किये गये प्रति-चक्रीय राजकोषीय विस्तार द्वारा हो सकता है।

चक्रीय घटकों पर ओ एल एस

जीएफसीई/जीडीपी_सी = सी + β1* वास्तविक जीडीपी_सी(-1)+ β2 * वास्तविक जीडीपी_सी(-2)
+ β3 * वास्तविक जीडीपी_सी(-4)

अनुमानित समीकरण प्रतिफल

जीएफसीई/जीडीपी_सी = 0.001+0.08 वास्तविक जीडीपी_सी(-1)+0.12 वास्तविक जीडीपी सी(-2)
टी (-0.2) (2.5)** (4.1)***

+0.08 वास्तविक जीडीपी_सी(-4) एडीजेआर^2 = 0.32
(2-8)***

* 10 प्रतिशत पर महत्वपूर्ण ** 5 प्रतिशत पर महत्वपूर्ण और
*** 1 प्रतिशत पर महत्वपूर्ण

3.58 चूंकि वास्तविक जी डी पी-सी के गुणांक सकारात्मक पाये गये हैं, सरकारी व्यय फिर प्रचक्रीय पाया गया है। उपर्युक्त परिणाम सरकारी व्यय की प्रचक्रीयता पर प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। जी डी पी और जी एफ सी ई के चक्रीय घटक में उतार चढ़ाव के द्वारा आगे और इसकी पुष्टि होती है। (चार्ट III.9 और III.10)।

3.59 विकासशील अर्थव्यवस्था में राजकोषीय व्यय की प्रचक्रीयता कोई असामान्य बात नहीं है और इसके समर्थन में काफी

चार्ट III.10: सकल देशी उत्पाद अनुपात और सकल देशी उत्पाद में सरकारी अंतिम उपभोग व्यय के चक्रीय घटक

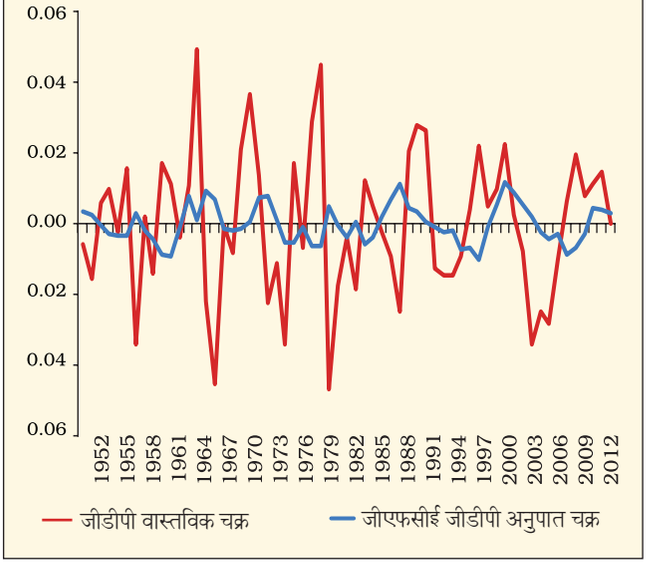

अनुभवजन्य प्रमाण हैं, तथापि इस प्रकार का व्यवहार सामान्य बुद्धिमानी के विरूद्ध होता है। सरकार को ''बुरे समय'' में उधार लेना चाहिए जब राजस्व कम हो जाते हैं तथा ''सामाजिक'' व्यय में वृद्धि हो जाती है, और अच्छे समय में कर्ज की चुकौती करनी चाहिए। किन्तु अनेक कारणों से ई एम डी ई में कारोबार चक्र पर राजकोषीय नीतियां कर प्राप्तियों तथा व्यय का महत्व कम नहीं करती हैं, उन कारणों में से कुछ इस प्रकार हैं : (i) राजकोषीय स्थितियां पहले से ही इतनी खींचकर बढ़ा दी जाती हैं कि प्रतिचक्रीय नीतियों के लिए सीमित गुंजाइश बचती है, (ii) प्रतिचक्रीय नीतियों के समर्थन के लिए राजकोषीय नियमों में अपर्याप्त प्रावधान, (iii) इन अर्थव्यवस्थाओं द्वारा सामना किये जाने वाले उधार दबाव (iv) कमजोर संस्थाएं जो अन्तर्निमित घाटे की ओर झुकाव रखती हैं, (v) भ्रष्टाचार जो उत्पादन अंतराल के प्रति प्राथमिक संतुलन की अनुक्रिया को कम करता है, (vi) लालच प्रभाव, जिसमें अप्रत्याशित राजस्व राजकोषीय पुनर्वितरण के लिए दबावों को तीव्र कर देता है और सामान्य पूल समस्या को प्रबलित कर देता है। भारत इस प्रकार की समस्याओं से बचा हुआ नहीं हैं।

VI. कर्ज-घाटा गति सिद्धांत और मौद्रिक प्रबंध

3.60 यद्यपि केंद्रीय बैंक राजकोषीय प्राधिकारी के एक एजेंसी कार्य के रूप में कर्ज प्रबंध का संचालन करता है, मौद्रिक प्रबंध को आकार देने में घाटे और कर्ज की प्रवृत्ति एक सार्थक भूमिका निभा सकते हैं। सिद्धांत रूप में, मौद्रिक और राजकोषीय नीतियां अल्पावधि और दीर्घावधि स्तरों तथा समष्टि आर्थिक परिवर्तियों के पथ जैसे उत्पादन और मुद्रास्फीति को अनुकूलित करने के लिए अनेक प्रकार से पारस्परिक क्रिया करती हैं। इस खंड में पिछले तीन दशकों के दौरान भारत में कर्ज-घाटा गति सिद्धांत तथा मौद्रिक नीति के बीच पारस्परिक क्रिया का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

3.61 दो वैकल्पिक स्रोतों, अर्थात् कर (धन करेतर और अन्य गैर-कर्ज प्राप्तियाँ) वित्तपोषण और कर्ज वित्तपोषण के माध्यम से अपने व्यय को वित्त प्रदान करने के सरकार के निर्णय से कर्ज-घाटा गति सिद्धांत उत्पन्न होता है। यद्यपि सरकार नियमित रूप से चुकौतियां कर रही है, विगत वर्षों में उच्चतर अनुपात में सरकारी व्यय के कर्ज वित्तपोषण से सार्वजनिक कर्ज के स्टॉक में वृद्धि हो सकती है। भारत में, 1980-81 से 2012-13 की अवधि के दौरान, कुल सरकारी व्यय के औसतन एक तिहाई भाग का वित्तपोषण उधार राशियों द्वारा किया गया था, अर्थात् सरकार द्वारा व्यय किये गये प्रत्येक 100 रूपये के लिए 33 रूपये उधार लिये गये थे।

3.62 कर्ज वित्तपोषण की अवस्थिति के बावजूद, 2000 के वर्षो के दौरान उसके अंश में गिरावट देखी गई, जो सरकार द्वारा राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) अधिनियम, 2003 के अधिनियमन को प्रतिबिंबित करती है जिससे क्रमशः राजकोषीय अनुशासन की स्थिति बन गई। इस प्रकार, भारत में राजकोषीय नीति के इतिहास में एफ आर बी एम अधिनियम तथा अनुवर्ती एफ आर बी एम नियम मील के पत्थर थे जिनके अंतर्गत सरकार से कानूनन यह अपेक्षा की गई थी कि वह 2007-08 तक सकल राजकोषीय घाटा जी डी पी का 3 प्रतिशत से अनधिक प्राप्त करे, जिसे बाद में एक वर्ष बढ़ा कर 2008-09 कर दिया गया था। वस्तुतः, जब केन्द्र सरकार ने 2007-08 में जी डी पी के प्रति राजकोषीय घाटे का अनुपात 2.5 प्रतिशत प्राप्त कर लिया था, वह लक्ष्य से आगे थी। किन्तु, अर्थव्यवस्था में कुल मांग पर वैश्विक गिरावट के प्रभाव को प्रतिसंतुलित करने के लिए चूंकि सरकार ने राजकोषीय प्रोत्साहन कार्यक्रम कार्यान्वित किये थे, वैश्विक वित्तीय हलचल के प्रारंभ के साथ कर्ज वित्तपोषण में गिरावट की प्रवृत्ति में उलटाव हो गया था।

3.63 इस प्रकार, हाल के वर्षों में, अर्थात् 2008-09 से 2012-13 तक व्यय में कर्ज वित्तपोषण का अंश बढ़ गया है। वित्तीय वर्ष 2010-11 में कर्ज वित्तपोषण के अंश में सामान्य गिरावट ने विस्तारकारी राजकोषीय नीति से आंशिक निकासी के प्रभाव को प्रतिबिंबित किया, जिसे करेतर प्राप्तियों और आर्थिक संवृद्धि में सुधार सहित राजस्व प्राप्तियों में सुदृढ़ संवृद्धि का समर्थन प्राप्त था। किन्तु, 2011-12 और 2012-13 में चिरस्थायी निम्न आर्थिक संवृद्धि से सरकारी राजस्व संसाधनों में कमी हो गई और इस प्रकार कर्ज के माध्यम से व्यय वित्तपोषण 2010-11 की तुलना में थोड़ा सा अधिक था (चार्ट III.11) ।

3.64 व्यय का कर्ज वित्तपोषण सरकार पर चुकौती का उत्तरदायित्व आवश्यक बना देता है, रिकार्डियन तुल्यता के अनुसार जिसका वित्तपोषण भावी कर और करेतर राजस्वों द्वारा करना होगा। किन्तु, यदि सरकार भविष्य में अपने पिछले कर्ज के वित्तपोषण के लिए पर्याप्त राजस्व नहीं जुटा पाती है तो उसे पुराने कर्ज के वित्तपोषण के लिए नये उधारों का सहारा लेना पड़ सकता हैं। इसे राजकोषीय शब्दावली में आम तौर पर पोन्ज़ी वित्तपोषण के नाम से जाना जाता है। सैद्धांतिक रूप से, इससे बचने के लिए, सरकार को एक प्राथमिक राजस्व अधिशेष का निर्माण करना होता है, जो ब्याज भुगतान दायित्वों के वित्तपोषण के लिए पर्याप्त हो। भारत में, केंद्र

चार्ट III.11: सरकारी व्यय का उधार राशियों द्वारा वित्तपोषण किये जाने में निरंतर वृद्धि

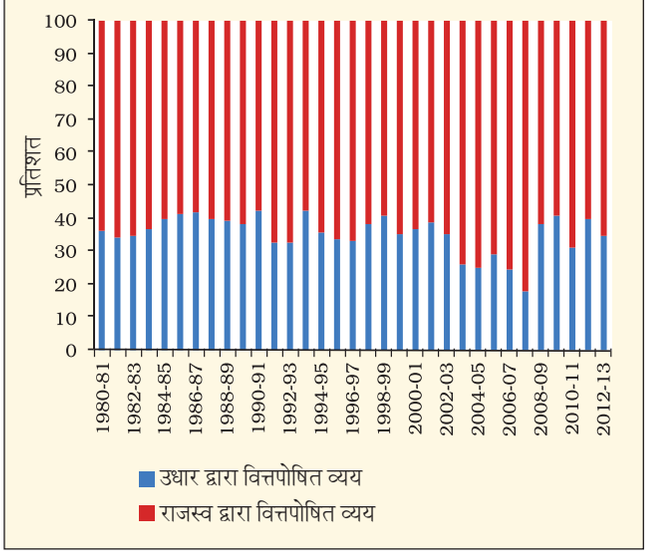

चार्ट III.12: बढ़ते हुए ब्याज का प्राथमिक राजस्व शेष में उलटाव से भुगतान

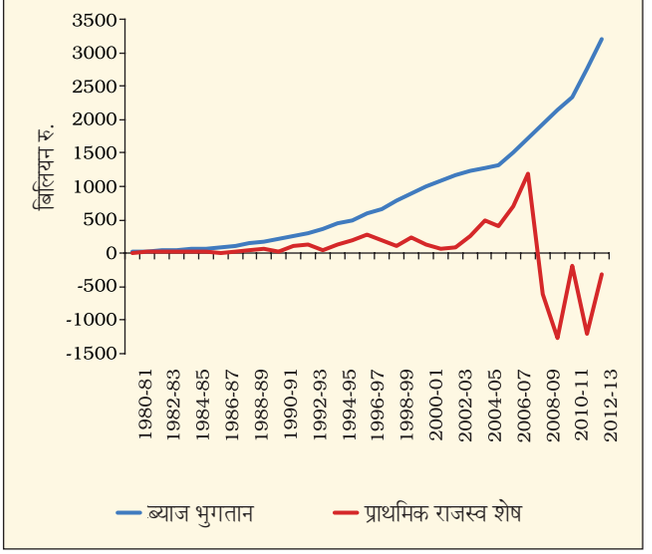

सरकार हाल के वर्षों के दौरान को छोड़कर पिछले तीन दशकों से प्राथमिक राजस्व अधिशेष चला रही है। किन्तु, पिछले दो दशकों के दौरान, यह प्राथमिक राजस्व अधिशेष सम्पूर्ण ब्याज भुगतानों के वित्तपोषण के लिए अपर्याप्त था। एफ आर बी एम अधिनियम के कार्यान्वयन के साथ, जब सरकार ने एक नियम-आधारित राजकोषीय नीति ढांचे की ओर कदम रखा, राजकोषीय कार्यक्षेत्र में प्राथमिक राजस्व अधिशेष द्वारा वित्तपोषित ब्याज भुगतान के प्रतिशत में सुधार हुआ है। हालांकि, राजकोषीय प्रोत्साहन कार्यक्रम ने अपनी विस्तारकारी, प्रणाली से प्राथमिक राजस्व अधिशेष को हटा दिया, और उसके परिणामस्वरूप सरकार ने हाल के वर्षों के दौरान एक प्राथमिक राजस्व घाटे की रिपोर्ट की, जो यह दर्शाता है कि नये उधारों का इस्तेमाल ब्याज भुगतानों के एक भाग के वित्तपोषण के लिए किया गया था। (चार्ट III.12)

3.65 सरकार द्वारा एफ आर बी एम अधिनियम के कार्यान्वयन ने पिछले दशक के दौरान भारतीय अर्थ-व्यवस्था में राजकोषीय घाटे और कर्ज के स्तर और पथ के निर्धारण में एक प्रमुख भूमिका अदा की। साहित्य में यह भी तर्क दिया जाता है कि राजकोषीय अनुशासन मौद्रिक स्वतंत्रता का एक दर्पण प्रतिबिंब है। यह इसलिए कि जब कर्ज की राशि सरकार की राजकोषीय नीति का परिणाम है, कर्ज की संरचना कर्ज प्रबंध नीति का परिणाम है (टॉबिन, 1963)। अनेक देशों में (भारत सहित), कर्ज प्रबंध नीति केंद्रीय बैंकों के अधीन होती है।[2] जब कि केन्द्रीय बैंकों का घाटे की राशि पर सामान्यतया कोई नियंत्रण नहीं होता है, बड़े राजकोषीय घाटे प्रायः यह आवश्यक बना देते हैं कि मौद्रिक और कर्ज प्रबंध, दोनों के निर्विघ्न संचालन के लिए राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय स्थापित किया जाए। सभी देशों के अनुभव से यह संदेश मिलता है कि इसे या तो एक संस्थागत व्यवस्था के माध्यम से पूरा किया जाए जहाँ सरकार की ओर से कर्ज प्रबंध का संचालन करते हुए केंद्रीय बैंक के साथ समन्वय किया जाए, अथवा कर्ज प्रबंध के लिए एक अलग एजेंसी की स्थापना करके इसे प्राप्त किया जा सकता है। एजेंसी को तथापि समन्वय तंत्र की आवश्यकता होगी जो सरकार की बहुत बड़ी बाजार उधार की राशि के मामले में एक कठिन कार्य हो सकता है। चूंकि एजेंसी में ब्याज दरों, चलनिधि प्रबंध और ऋण प्रवाहों का निहितार्थ है, एक ही स्थान पर एक समन्वित दृष्टिकोण के अपने अलग लाभ हैं। घाटे के परिणाम के रूप में उधार की राशि, जो सरकार द्वारा निर्धारित की जाती है, केंद्रीय बैंक को, उसके वित्तपोषण की व्यवस्था करने के लिए बहिर्जात रूप से प्रदान कर दी जाती हे। वस्तुतः, राजकोषीय-मौद्रिक अंतरापृष्ठ के क्षेत्र में मानक सैद्धांतिक तर्क कर्ज प्रबंध नीति और मौद्रिक नीति के बीच पारस्परिक क्रिया पर आधारित होते हैं। इस प्रकार, जिन विधियों से कर्ज/घाटों का वित्तपोषण किया जाता है वे उतनी ही महत्वपूर्ण

2 उदाहरण के लिए, श्रीलंका, केन्या, पाकिस्तान, जांबिया, कोस्टा रिका और निकारागुआ जैसे देशों में कर्ज प्रबंध केंद्रीय बैंकों के पास निहित है।

होती हैं जितना कि घाटे/कर्ज का आकार महत्वपूर्ण होता है। इसके अलावा, यह मानते हुए कि घाटे/कर्ज का वित्तपोषण उस स्थिति में आसानी से किया जा सकता है जब वे आकार में छोटे हों, यह अर्थ देता है कि घाटे/कर्ज को कम करने की प्रतिबद्धता के साथ राजकोषीय अनुशासन मौद्रिक नीति के संचालन के समय केंद्रीय बैंकों के पास उपलब्ध युक्ति में सुधार करेगा।

जी एफ डी का बाह्य वित्तपोषण और उसका मौद्रिक प्रभाव

3.66 भारतीय रिज़र्व बैंक (आर बी आई) अधिनियम 1934 की धारा 20 और 21 के अनुसार मौद्रिक प्राधिकारी होने के अतिरिक्त भारतीय रिज़र्व बैंक के अधीन भारत सरकार के सार्वजनिक कर्ज का प्रबंध तथा नये ऋण जारी करना भी है। इसके अलावा, आर बी आई अधिनियम की धारा 21 क के अंतर्गत रिज़र्व बैंक राज्य सरकारों के साथ करार करके राज्यों के कर्ज का प्रबंध अपने हाथ में ले सकता है। इस प्रकार, भारत में, कर्ज प्रबंध नीति तथा मौद्रिक नीति, दोनों ही एक ही संस्था के साथ संबद्ध हैं।

3.67 जहाँ तक घाटे के वित्तपोषण का संबंध है, भारत में वह प्राथमिक रूप से आंतरिक स्रोतों के माध्यम से वित्तपोषित किया जाता है। पिछले तीन दशकों के दौरान, भारत में कुल जी एफ डी का औसतन 6-1 प्रतिशत बाह्य स्रोतों के माध्यम से जुटाये गये संसाधनों का इस्तेमाल करते हुए वित्तपोषित किया गया था। किन्तु, विगत वर्षों में, जी एफ डी के बाह्य वित्तपोषण की सीमा में गिरावट आ गई। इसके अलावा, यद्यपि विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफ आई आई एस) को सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करने की अनुमति दी गई है, एफ आई आई एस के पास कुल सरकारी कर्ज का केवल थोड़ा सा हिस्सा है। बहुपक्षीय और द्विपक्षीय ऋणदाताओं से लिये गये ऋण बाह्य वित्तपोषण के अन्य स्रोत हैं। इसके अतिरिक्त, सरकार ने एक राष्ट्रिक संस्था के रूप में अंतर्राष्ट्रीय पूंजी बाजार में सीधे अपनी पहुँच नहीं बनाई है। इस प्रकार, ऐसे उधार के साथ आम तौर से जुड़े हुए जोखिम व्यावहारिक तौर पर मौजूद नहीं हैं (जी ओ एल, 2011)। राष्ट्रिक कर्ज पर ऐसे जोखिमों ने यूरो क्षेत्र में संकट को तीव्र कर दिया है। इसके अतिरिक्त, भारत में, उप-राष्ट्रीय सरकारों को अपने स्वयं के बूते पर बाह्य ऋण जुटाने की अनुमति नहीं है।

3.68 सिद्धांत रूप में, बाह्य स्रोतों के माध्यम से जी एफ डी का वित्तपोषण निवल पूंजी अंतर्वाहों के माध्यम से राजकोषीय-मौद्रिक अंतरापृष्ठ में अन्य आयाम जोड़ देता है। मुंडेल-फ्लेमिंग ओपन इकॉनामी मॉडल के अनुसार, मुद्रा के अधिमूल्यन के परिणामस्वरूप प्रायः भारी मात्रा में निवल पूंजी अंतर्वाहों के संदर्भ में विनिमय दर को सहन करने योग्य स्तरों पर (अथवा एक नियत दर पर) रखने के लिए विदेशी मुद्रा बाजार में जब हस्तक्षेप होता है तो एक स्वतंत्र मौद्रिक नीति का होना असंभव है। इस प्रकार, उच्चतर अनुपातों में बाह्य संसाधनों के माध्यम से जी एफ डी का वित्तपोषण केवल राजकोषीय निरंतरता पर ही अप्रत्यक्ष प्रभाव नहीं डाल सकता है बल्कि असंभव ट्रिनिटी अर्थात्, खुला पूंजी खाता, मीयादी विनिमय दर और स्वतंत्र मौद्रिक नीति पर भी प्रभाव डाल सकता है। जी एफ डी के वित्तपोषण के लिए बाह्य वित्त पर निर्भरता कभी भी उच्च नहीं रही है और हाल की अवधि में उसमें गिरावट हुई है, जो भारतीय संदर्भ में एक स्वागत योग्य परिवर्तन है। महत्वपूर्ण है कि 2002-03 से 2004-05 तक बाह्य वित्तपोषण का अंश नकारात्मक हो गया था, चूंकि उच्च लागत वाले बाह्य ऋणों का इस अवधि के दौरान पहले ही भुगतान कर दिया गया था (चार्ट III.13)।

निवल पूंजी अंतर्वाह, बाजार स्थिरीकरण योजना और उसका मौद्रिक प्रभाव

3.69 2000 के वर्षों के दौरान, भारत में विदेशी मुद्रा भंडार में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई जो इस बात का संकेत था कि इस अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक द्वारा निवल पूंजी अंतर्वाहों का एक भाग अवशोषित किया गया था। सैद्धांतिक आधार पर, निवल पूंजी अंतर्वाहों का रिज़र्व बैंक द्वारा अवशोषण आरक्षित मुद्रा का निर्माण

चार्ट III.13: सकल राजकोषीय घाटे का विदेशी वित्तपोषण सीमित रहना

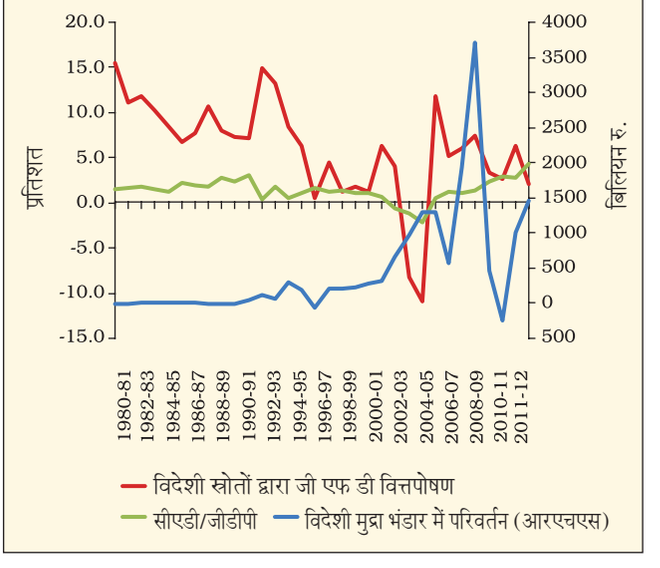

करता है जो प्रवर्धक प्रभाव के माध्यम से अर्थव्यवस्था में एम3 का निर्माण करता है। हालांकि रिज़र्व बैंक द्वारा उच्च निवल पूंजी अंतर्वाहों के अवशोषण के बावजूद जी डी पी के एक अनुपात के रूप में आरक्षित मुद्रा में इस अवधि के दौरान कोई उछाल नहीं दिखाई दिया। भारतीय रिज़र्व बैंक और भारत सरकार द्वारा 2004 में लागू बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) का इस्तेमाल विदेशी मुद्रा बाजार हस्तक्षेप के प्रभाव को अवरूद्ध करने के लिए किया गया था, इस प्रकार निवल पूंजी अंतर्वाहों के मौद्रिक प्रभाव को सीमित किया गया था। एम एस एस पर ब्याज भुगतान सरकार द्वारा वहन किये जाते है। इस प्रकार, निवल पूंजी अंतर्वाहों के मौद्रिक प्रभाव को निष्क्रिय करने की प्रक्रिया में, राजकोषीय लागत उठाई गई थी, जिससे उच्चतर सकल राजकोषीय घाटे की स्थिति उत्पन्न हो गई। हालांकि, इस प्रक्रिया में राजकोषीय नीति ने मौद्रिक नीति को संकुचित बनाने के बजाय उसे और लचीला बना दिया था। वास्तव में, एम एस एस एक प्रभावी राजकोषीय -मौद्रिक समन्वय के उदाहरण के रूप में स्पष्ट दिखाई देती है जिसने पूंजी अंतर्वाहों में उछाल को प्रति संतुलित करने के लिए मौद्रिक संकुचन में ही सहायता नहीं की बल्कि आर्थिक गिरावट की स्थिति में उसने वैश्विक वित्तीय संकट के बाद एम एस एस के मोचन के माध्यम से मौद्रिक विस्तार में भी सहायता की थी।

सरकारी कर्ज का आंतरिक वित्तपोषण और उसका मौद्रिक प्रभाव

3.70 भारत में 90 प्रतिशत से अधिक सरकारी कर्ज का वित्तपोषण आंतरिक स्त्रोतों के माध्यम से होता है। सैद्धांतिक रूप में, यदि सार्वजनिक कर्ज देशी आधार पर रखा जाता है तो बाह्य निरंतरता के दृष्टिकोण से सार्वजनिक वित्त का जोखिम कम होना प्रतीत होता है। पुर्तगाल, आयरलैंड, युनान और स्पेन के हाल के अनुभव ने यह प्रदर्शित किया है कि सार्वजनिक कर्ज की बहुत अधिक बाह्य धारिता में एक राष्ट्रिक कर्ज संकट को प्रेरित करने की संभाव्यता होती है। इस दृष्टिकोण से, भारत की स्थिति काफी अच्छी है क्योंकि भारत के अधिकांश सार्वजनिक कर्ज देशी आधार पर धारित हैं। किन्तु, यदि देशी आधार पर धारित सार्वजनिक कर्ज अत्यधिक हैं तो भी पुनर्वित्त का जोखिम है और ब्याज दर के चैनलों, निजी निवेश के बहिर्गमन तथा मुद्रीकरण के माध्यम से कतिपय मौद्रिक प्रभाव होते हैं।

3.71 सैद्धांतिक आधार पर, अर्थव्यवस्था में उच्चतर राजकोषीय घाटे को कुल ऋण योग्य निधियों के एक उच्चतर अंश में विनियोजित करने के द्वारा निजी क्षेत्र के लिए ब्याज दरें बढ़ सकती हैं। उच्च ब्याज दरें निजी क्षेत्र निवेश को घटा सकती हैं और जिसके परिणामस्वरूप समग्र आपूर्ति कम हो सकती है। समग्र आपूर्ति वक्र के बायीं तरफ खिसक जाने का निहितार्थ यह है कि आपूर्ति और मांग के बीच एक नया संतुलन उच्चतर कीमत के साथ जुड़ जाएगा। इस प्रकार, निजी निवेश के बहिर्गमन के प्रभाव के माध्यम से राजकोषीय घाटा समग्र उत्पादन में तदनुरूपी कमी के साथ अर्थव्यवस्था में कीमत स्तर बढ़ा सकता है।

3.72 सार्जेंट और वालेस के अनुसार, परिणामी कठोर मुद्रा और ब्याज दर स्थितियाँ एक अधारणीय कर्ज वित्तपोषण प्रक्रिया में परिणत हो सकती हैं, और इस प्रकार दीर्घावधि में उच्चतर मुद्रास्फीति की ओर बढ़ सकती हैं। इस ढांचे में, मुद्रास्फीति एक राजकोषीय प्रेरित घटना है, और अभिहित मौद्रिक संवृद्धि बजट दबावों की संतुष्टि के लिए बहिर्जात रूप से दिये गये घाटे के वित्तपोषण की आवश्यकता द्वारा अंतर्जात रूप से निर्धारित की जाती है।

3.73 इसके अलावा, यदि मौद्रिक प्राधिकारी निजी निवेश के बहिर्गमन को रोकने के द्वारा उच्चतर ब्याज दरों के प्रभाव को प्रतिसंतुलित करने का निर्णय लेता है तो मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि करनी पड़ सकती है। इसका निहितार्थ यह है कि ब्याज दर में तदनुरूपी कमी तथा उत्पादन में वृद्धि के साथ एल एम वक्र दाहिनी तरफ खिसक गया है। किन्तु, यदि अर्थव्यवस्था लगभग पूर्ण रोजगार स्तर पर परिचालित है तो मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि के परिणामस्वरूप उत्पादन में वृद्धि नहीं होगी, बल्कि इसकी बजाय अल्पावधि में कीमत स्तर बढ़ सकता है क्योंकि अल्पावधि सकल आपूर्ति वक्र लम्बवत है।

3.74 ऊपर दिये गये विभिन्न सैद्धांतिक तर्क बाजार उधारों के माध्यम से जी एफ डी के वित्तपोषण पर आधारित हैं। भारत में बाजार उधारों द्वारा वित्तपोषित किया गया जी एफ डी का अंश पिछले तीन दशकों में बढ़ गया है। जी डी पी के प्रतिशत के रूप में आरक्षित मुद्रा में भी निम्न दर पर वृद्धि देखी गई, जब कि विगत दशक में मुद्रास्फीति न्यूनतर थी। उल्लेखनीय रूप से, पिछले दशक के दौरान कुल जी एफ डी के लगभग 74 प्रतिशत का वित्तपोषण बाजार उधारों द्वारा किया गया था (सारणी 3.2) । कर्ज, घाटा और मुद्रा के गति सिद्धांत को समझने के लिए तकनीकी विश्लेषण बाद में लिया गया है।

3.75 जैसा कि पहले संकेत किया गया है, 1996-97 से प्रारंभ कर्ज प्रबंध नीति और मौद्रिक नीति के बीच सहबद्धता से संबंधित

सारणी 3.2: बाजार उधार, घाटे, आरक्षित मुद्रा और मुद्रास्फीति

औसत	जी एफ डी के प्रतिशत के रूप में बाजार उधार	डब्ल्यूपीआई मुद्रास्फीति	जीडीपी के प्रतिशत के रूप में आरक्षित मुद्रा
1980-81 से 1989-90	26.9	8.0	13.4
1990-91 से 1999-00	37.3	8.1	14.8
2000-01 से 2009-10	73.4	5.4	15.9

विभिन्न संस्थागत सुधारों से मौद्रिक स्वतंत्रता में काफी अधिक सुधार हुआ है।

3.76 मुद्रीकरण का प्रश्न, हालांकि शेष रह जाता है। अन्ततः कौन सरकारी घाटे का वित्तपोषण करता है, यह उस पर निर्भर नहीं करता है जो प्राथमिक बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों में पहले अभिदान करता है, बल्कि उस पर निर्भर करता है जो सरकारी प्रतिभूतियों को अंतिम रूप से धारण करता है। भारत में, सरकारी प्रतिभूतियों का एक भाग रिज़र्व बैंक के पास है, और कर्ज वित्तपोषण के फलस्वरूप यदि इस धारिता में वृद्धि होती है तो वह द्वितीयक बाजार परिचालनों के माध्यम से मुद्रीकरण की ओर प्रेरित करती है। इस प्रकार, जैसा कि सार्जेंट और वालेस ने बताया है, सरकारी घाटे और कर्ज का अन्ततः दीर्घावधि में मुद्रीकरण किया जायगा, जिससे आरक्षित मुद्रा का निर्माण होगा। इस अध्याय के पूर्ववर्ती भाग में इन प्रश्नों पर विस्तार से विचार किया गया था।

3.77 कर्ज-घाटा गति सिद्धांत और मौद्रिक प्रबंध के बीच संबंध सरकारी बांडों के धन-प्रभाव द्वारा भी प्रभावित हो सकते हैं (किआ, 2006) । एफ टी पी एल के प्रस्तावकों का यह तर्क है कि गैर-रिकार्डियन विश्व में, बांड-धारक बांडों को भविष्य के करों के रूप में नहीं ले सकते हैं। इस प्रकार, चूंकि सरकार अपने घाटे के वित्तपोषण के लिए बांड जारी करती है, यह महसूस किया जाता है कि देश की संपत्ति में वृद्धि हो गई है। यह उच्चतर धन प्रभाव वस्तुओं तथा सेवाओं की मांग में वृद्धि कर सकता है और अल्पावधि में कीमतें बढ़ा सकता है।

3.78 चूंकि अलग-अलग देशों के संदर्भ में, राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच सही अंतरापृष्ठ अनेक तथ्यों पर निर्भर होगा, ऊपर उल्लिखित सैद्धांतिक संभावनाएं विवादास्पद हैं। इस प्रकार, किसी देश विशेष में कौन सा सैद्धांतिक संबंध लागू होता है, यह समष्टि आर्थिक प्राथमिकताओं, राजनैतिक इच्छाशक्ति और अर्थव्यवस्था की अन्य ताकतों और कमजोरियों पर निर्भर करता है। कर्ज-घाटा गति सिद्धांत और मौद्रिक प्रबंध के बीच संबंध पर कुछ अनुभवजन्य साक्ष्य बॉक्स III.5 में उपलब्ध कराये गये हैं।

अनुभवजन्य विश्लेषण

3.79 अनुभवजन्य विश्लेषण में, निम्नलिखित तीन कारणों से केंद्र और राज्य सरकारों का संयुक्त कर्ज लिया गया थाः प्रथम, जैसा कि पहले संकेत किया गया है, वह कर्ज प्रबंध नीति है जिसमें मौद्रिक प्रबंध के लिए निहितार्थ हैं। इसके अलावा, राजकोषीय घाटे के निहितार्थ कर्ज प्रबंध नीति में प्रतिबिंबित हो सकते हैं, क्योंकि कर्ज पिछले घाटों का एक संचयन है। द्वितीय, प्राथमिक बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों का पहला अभिदान ही नहीं, किन्तु द्वितीयक बाजार परिचालनों के माध्यम से सरकारी प्रतिभूतियों का अंतिम स्वामित्व भी मौद्रिक प्रबंध के लिए महत्वपूर्ण है। इस प्रकार, सरकार के संयुक्त कर्ज को एक व्याख्यात्मक परिवर्ती के रूप में लिया जाना सरकार के राजकोषीय घाटे की तुलना में इन गति सिद्धांतों का बेहतर ढंग से अभिग्रहण कर सकता है। तृतीय, संयुक्त कर्ज का इस्तेमाल इस कारण से किया जाता है कि अकेले केंद्र सरकार के कर्ज, आरक्षित मुद्रा और कर्ज के बीच संबंध को निर्धारित करने के लिए सही परिवर्ती नहीं हो सकते हैं, क्योंकि राज्य सरकारों की भी विगत दशकों में कर्ज की काफी अधिक राशियां संचित हो गई हैं। इसके अलावा, केंद्र सरकार की तरह, राज्य सरकारें भी अपने घाटों के वित्तपोषण के लिए बाजार के पास जाती हैं। राज्य सरकारों द्वारा जारी प्रतिभूतियों की भी भारत में एस एल आर हैसियत है और उनके कर्ज निर्गमों का प्रबंध रिज़र्व बैंक द्वारा किया जाता है। इस प्रकार, मौद्रिक प्रबंध के लिए राज्यों के कर्ज का निहितार्थ उतना ही महत्वपूर्ण हो सकता है जिनता कि केंद्र सरकार के कर्ज का निहितार्थ हो सकता है।

3.80 कर्ज और मुद्रा के बीच संबंध के गति सिद्धांत का अनुभवजन्य विश्लेषण करने के लिए एक स्वतः प्रतिगामी वितरित अंतराल (ए आर डी एल) मॉडल लागू किया जाता है [3] । ए आर डी एल बाउंड्स जांच दृष्टिकोण का प्रथम कदम यह है कि सामान्य न्यूनतम वर्ग द्वारा दो समीकरणों का अनुमान लगाना है:

3 आरक्षित मुद्रा और संयुक्त कर्ज में परिवर्तन के समाकलन के असमान क्रम के कारण ए आर डी एल लागू किया गया था।

बॉक्स III. 5
कर्ज-घाटा गति सिद्धांत और मौद्रिक प्रबंध: अनुभवजन्य साक्ष्य

अनुभवजन्य साहित्य में, राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच संबंध को समझने के लिए भारत सहित विभिन्न देशों में अनेक प्रयास हुए हैं। मेटिन (1998) और हैमबर्गर तथा ज़िक (1981) ने पाया कि मौद्रिक नीति, घाटों के बजाय सरकारी व्यय द्वारा काफी अधिक प्रभावित होती है। टेकिन -कोरू और ओज़मेन (2003) ने पाया कि टर्की में घाटे और मुद्रास्फीति के बीच कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं है।इस अध्ययन के अनुसार, टर्की में मुद्रास्फीति भी सिक्का-ढलाई मुनाफे का परिणाम नहीं थी, उसके बजाय, मुद्रा और मुद्रास्फीति, दोनों ही संयुक्त रूप से निर्धारित किये जाते हैं। इसी प्रकार के परिणाम 12 देशों में किंग (1985) द्वारा, यू. एस. के लिए जोइनेस (1985) द्वारा, 32 देशों के लिए करास (1994) द्वारा तथा 30 विकासशील देशों के लिए सिक्कन और हान (1998) द्वारा प्राप्त किये गये हैं। गियान्नरोस और कोल्लूरी (1985) ने पाया कि सामान्य परिस्थितियों में सरकारी बजट घाटा मुद्रा आपूर्ति संवृद्धि का अथवा मुद्रास्फीति का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से निर्धारक तत्व नहीं है। मुद्रास्फीति पर बजट घाटे के प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभावों के कुछ सांख्यिकीय साक्ष्य के साथ यू एस एक अपवाद है। 1954-76 की अवधि के आंकड़ों का इस्तेमाल करते हुए बैरो (1978) ने निष्कर्ष निकाला कि घाटे के बजाय वह सरकारी व्यय है जिससे यू एस में मौद्रिक संवृद्धि प्रभावित होती है। उसी प्रकार के आंकड़ो का इस्तेमाल करते हुए निस्कानेन (1978) ने पाया कि मुद्रा संवृद्धि दर के माध्यम से अथवा इससे अलग परिचालित मुद्रास्फीति दर पर सरकारी घाटे का कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ता है।

कैगन (1965) का तर्क है कि मुद्रा आपूर्ति अंतर्जात और बहिर्जात, दोनों ही संपत्तियों को प्रभावित करती है। अल्पावधि एवं चक्रीय घट-बढ़ के लिए, कैगन ने एक संबंध का प्रस्ताव रखा है जिसमें मुद्रा आपूर्ति रीयल सेक्टर में परिवर्तनों द्वारा अंतर्जात रूप से निर्धारित की जाती है। किन्तु, दीर्घावधि में, मुद्रा आपूर्ति में दीर्घकालिक प्रवृत्ति घट-बढ़ रीयल सेक्टर से स्वतंत्र है और बहिर्जात रूप से निर्धारित होती है। परिदा, मल्लिक और मैथियाजगन (2001) पाते हैं कि राजकोषीय घाटे और मुद्रा आपूर्ति एक दूसरे द्वारा प्रभावित होते हैं। इसके अलावा, कीमत स्तर राजकोषीय घाटे अथवा मुद्रा आपूर्ति, किसी को भी प्रभावित नहीं करता है किन्तु वह इन दोनों परिवर्तियों द्वारा प्रभावित होता है।

खुंद्रकपम और गोयल (2008) भारतीय संदर्भ में पाते हैं कि मुद्रा और वास्तविक उत्पादन अल्पावधि के अतिरिक्त दीर्घावधि में भी कीमतों को प्रभावित करते हैं। किन्तु, मुद्रा उत्पादन के प्रति तटस्थ हैं। इसके अलावा, साक्ष्य दर्शाते हैं कि सरकारी घाटा वर्धमान आरक्षित मुद्रा निर्माण के लिए प्रेरित करता है, यद्यपि रिज़र्व बैंक द्वारा सरकारी घाटे के लिए वित्त प्रदान करना चालू दशक के अधिकांश में अस्तित्व में नहीं रहा है। वे यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि सरकारी घाटा, अवरूद्धता के स्तर को प्रभावित करते हुए रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में निवल विदेशी आस्तियों में अभिवृद्धि को प्रभावित करता है और इसलिए वह वृद्धिशील आरक्षित मुद्रा निर्माण तथा मुद्रा आपूर्ति में समग्र विस्तार का मुख्य कारक बना हुआ है। इस तथ्य को समझते हुए कि मुद्रा, मुद्रास्फीति की तरफ प्रेरित करती है, सरकारी घाटा स्थिरीकरण के लिए प्रासंगिक रहता है।

संदर्भ

खुंद्रकपम, जीवन के. और राजन गोयल (2008) ''इज़दि गवर्नमेंट डेफिसिट इन इंडिया स्टिल रेलेवेंट फॉर स्टेबिलाइजेशन ?'', रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया ऑकेज़नल पेपर्स, वॉल्यूम 29, नं. 3, 1-21.

$$\Delta X_t = a_x + \sum_{i=1}^{n} b_{ix}\Delta X_{t-i} + \sum_{i=0}^{n} c_{ix}\Delta Y_{t-i} + \delta_{x1}X_{t-1} + \delta_{x2}Y_{t-1} + \varepsilon_t$$

$$\Delta Y_t = a_y + \sum_{i=1}^{n} b_{iy}\Delta Y_{t-i} + \sum_{i=0}^{n} c_{iy}\Delta X_{t-i} + \delta_{y1}Y_{t-1} + \delta_{y2}X_{t-1} + \varepsilon_t$$

जहाँ एक्स$_t$ आरक्षित मुद्रा में परिवर्तित होता है और वाई, संयुक्त कर्ज है।

3.81 परिवर्तियों में दीर्घावधि संबंध के अस्तित्व की जांच के लिए परिवर्तियों के अंतराल स्तरों के गुणांकों के संयुक्त महत्व के लिए एक एफ - टेस्ट किया गया था, अर्थात्

H0: $\delta_{x1} = \delta_{x2} = 0$ विकल्प के विरुद्ध

H1: $\delta_{y1} \neq \delta_{y2} \neq 0$

अंतराल आधारित परिवर्तियों के गुणांक पर एक टी-टेस्ट द्वारा परिणामों की पुष्टि की गई थी, अर्थात्

3 आरक्षित मुद्रा और संयुक्त कर्ज में परिवर्तन के समाकलन के असमान क्रम के कारण ए आर डी एल लागू किया गया था।

$\delta_{x1} \neq 0$ ए आर डी एल के प्रथम समीकरण में

$\delta_{y1} \neq 0$ ए आर डी एल के द्वितीय समीकरण में

परिणाम सारणी 3.3 में दिये गये हैं।

3.82 अंतराल आधारित परिवर्ती के गुणांक पर एक एफ -टेस्ट और टी-टेस्ट, दोनों का प्रयोग करते हुए परिवर्तियों के बीच दीर्घावधि संबंध के अस्तित्व की पुष्टि की गई थी। दोनो जांचों के परिणाम यह दर्शाते हैं कि सरकार के संयुक्त कर्ज और आरक्षित मुद्रा में परिवर्तन के बीच एक सह-संपूर्ण संबंध है[4]। विपरीत कारणता के लिए जांच

4 हालांकि, इस बात को ध्यान में रखना होगा कि रिज़र्व बैंक भी अपनी चलनिधि समायोजन सुविधा, सीमांत स्थायी सुविधा और आरक्षित नकदी निधि अनुपात में परिवर्तनों के माध्यम से आरक्षित मुद्रा में बदलाव कर सकता है, जैसा कि हाल के वर्षों में हुआ है।

सारणी 3.3: सरकारी कर्ज और आरक्षित मुद्रा के बीच सह-समन्वयन के लिए सीमाओं की जांच

परिवर्ती	मॉडल	एफ-टेस्ट			टी-टेस्ट	अकृत प्राक्कल्पना (सह-समन्वयन रहित)
		जांच संख्यिकी	न्यून महत्व मूल्य (95 प्रतिशत)	ऊपरी महत्व मूल्य (95 प्रतिशत)		
Δ लॉग आरएम/ लॉग सीटीडी	अवरूद्ध और प्रवृत्ति रहित	10.058*	4.934	5.764	3.620**	निरस्त
लॉग सीटीडी/ Δ लॉग आरएम	अवरूद्ध और प्रवृत्ति रहित	7.050*	4.934	5.764	-0.671	निरस्त नहीं / अनिर्णायक

* 5 प्रतिशत स्तर पर महत्वपूर्ण
** 1 प्रतिशत स्तर पर महत्वपूर्ण
जहाँ आर एम आरक्षित मुद्रा में परिवर्तित होता है और सी टी डी संयुक्त कुल कर्ज है।

का एक सार्थक एफ सांख्यिकी और निरर्थक टी सांख्यिकी के साथ कोई परिणाम नहीं निकला था। एक बार जब दीर्घावधि संबंध स्थापित हो जाता है तो दूसरा कदम दीर्घावधि गुणांकों का अनुमान लगाने के लिए होता है। निम्न लिखित समीकरण का प्रयोग करते हुए दीर्घावधि संबंध का अनुमान लगाया गया था।

$$X_t = a_0 + \sum_{i=1}^{n} b_1 X_{t-i} + \sum_{i=0}^{p} \quad b_2 Y_{t-i} + \varepsilon_t$$

3.83 शवार्ज़ सूचना मानदंड के आधार पर मॉडल की लैग लेंग्थ निर्धारित की गई थी। आरक्षित मुद्रा में परिवर्तन पर संयुक्त सरकारी कर्ज का दीर्घावधि गुणांक महत्वपूर्ण होने का अनुमान है। दीर्घावधि अनुमानों के साथ संबद्ध एक त्रुटि सुधार मॉडल के अनुमान द्वारा संबंध का अल्पावधि गति सिद्धांत अभिगृहीत किया गया था। इस दीर्घावधि अनुमान के साथ संबद्ध त्रुटि सुधार मॉडल नीचे दिया गया है। अनुमान-परिणाम सारणी 3.4 में दिये गये हैं।

$$\Delta X_t = a_0 + \sum_{i=1}^{n} b_1 \Delta X_{t-i} + \sum_{i=0}^{p} b_2 \Delta Y_{t-i} + ECT_{t-1} + \varepsilon_t$$

3.84 दीर्घावधि संबंध से प्राप्त त्रुटि सुधार टर्म नकारात्मक और सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है, जिसकी संयुक्त सरकारी कर्ज से आरक्षित मुद्रा में परिवर्तन की कारणता की पुष्टि की गई है। -0.99 पर त्रुटि सुधार (ई सी) टर्म के गुणांक के साथ एक आघात के बाद संतुलन पर समायोजन की गति काफी अधिक है।

सारणी 3.4: आरक्षित मुद्रा के लिए त्रुटि सुधार मॉडल

आश्रित परिवर्ती: आरक्षित मुद्रा में लॉग परिवर्तन

व्याख्यात्मक परिवर्ती	गुणांक	टी-सांख्यिकी	पी-मूल्य
डी लॉग सीटीडी	-4.059	-0.843	0.406
ई सी एम (-1)	-0.997	-4.974*	0.000

*: 1 प्रतिशत स्तर पर महत्वपूर्ण

VII. समापन टिप्पणी

3.85 इस अध्याय में, हमने व्याख्यात्मक के अतिरिक्त अनुभवजन्य साक्ष्य प्रस्तुत किये हैं कि मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व इस सीमा तक रहता है कि मौद्रिक प्राधिकारियों को राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण की आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर विभिन्न नीति उपकरणों के इस्तेमाल को अनुकूल बनाना पड़ता है। किन्तु, संस्थागत सुधारों के परिणामस्वरूप मौद्रिक नीति पर प्रत्यक्ष दबाव कम हो गया है। संस्थागत सुधारों का राजकोषीय क्षेत्र के अतिरिक्त मौद्रिक प्रबंध के क्षेत्र में सक्रियता से अनुपालन हुआ है। राजकोषीय-मौद्रिक ढांचों में सुधार के बावजूद, आने वाले समय में बृहत राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय की आवश्यकता होगी। मुद्रास्फीति प्रबंध के दृष्टिकोण से यह समन्वय महत्वपूर्ण है, क्योंकि, दीर्घावधि में, मुद्रास्फीति राजकोषीय स्थिति में गिरावट का कारण बन जाती है, जिसकी वजह यह है कि मुद्रास्फीति के प्रति व्यय अनुक्रिया राजस्व अनुक्रिया से आगे निकल जाती है।

3.86 इस अध्याय में विश्लेषण यह दर्शाता है कि सरकारी व्यय कुल मिला कर प्रचक्रीय रहा है। सरकारी व्यय की यह प्र-चक्रीयता निभाई जा सकती है, यदि इसे राजस्व प्राप्तियों में आनुपातिक वृद्धि के साथ जोड़ दिया जाए और उसके द्वारा राजकोषीय घाटे को नियंत्रण में रखा जाए। इसकी अनुपस्थिति में सरकारी व्यय की प्रचक्रीयता उच्चतर राजकोषीय घाटे के साथ जोखिम पूर्ण हो सकती है। इसके लिए राजकोषीय नियमों का अधिक कठोर ढांचा उपलब्ध कराने हेतु आगे और संस्थागत सुधारों की आवश्यकता है जो कारोबार और निर्वाचन संबंधी चक्रों का मुकाबला कर सके।

3.87 अनुभवजन्य परिणाम भी यह दर्शाते हैं कि सरकारी कर्ज ग्रेंजर के कारण भारत में आरक्षित मुद्रा में वृद्धि होती है, और एक आघात के बाद संतुलन के लिए समायोजन की गति उच्च समायोजन गुणांक के साथ काफी तेज है। 1982-2011 की अवधि में यह कारणता संबंध 1997 तक रिज़र्व बैंक द्वारा तदर्थ खजाना बिलों के

माध्यम से और मार्च 2006 तक सरकारी कर्ज को प्राथमिक अभिदान के माध्यम से कर्ज के मुद्रीकरण में प्रतिबिंबित हो सकता है। बाद की अवधि में, काफी अधिक ओ एम ओ खरीद के कारण यह प्रभाव अब भी चिरस्थायी हो सकता है। इस प्रकार का राजकोषीय प्रभुत्व समग्र रूप से समष्टि आर्थिक स्थिरता के लिए विशेष रूप से हानिकारक है, यदि वह आरक्षित मुद्रा को वांछित स्तर से ऊपर की ओर बढ़ने के लिए प्रेरित करता है, जिसकी आर्थिक संवृद्धि और मुद्रास्फीति के अनुरूप व्यापक मुद्रा विस्तार के लिए आवश्यकता होती है। इस संदर्भ में, संस्थागत ढांचों की डिज़ाइनिंग और प्रथाओं के लिए आगे और ध्यान देने की आवश्यकता होगी। समाप्त करने के लिए, राजकोषीय घाटे में स्थायी कमी से राजकोषीय प्रभुत्व में आगे और कमी हो सकती है जिससे मौद्रिक नीति को एक अधिक प्रभावी भूमिका निभाने के लिए तैयार किया जा सकता है। यह इस पृष्ठभूमि में है कि राजकोषीय समेकन के लिए रोड मैप पर समिति (अध्यक्ष: डॉ. विजय एल. केलकर) की रिपोर्ट के पश्चात् संशोधित राजकोषीय रोडमैप का महत्व काफी बढ़ गया है। उक्त रोडमैप में 2016-17 तक जी एफ डी - जी डी पी अनुपात को 3-0 प्रतिशत तक नीचे लाने की परिकल्पना की गई है। राजस्व खाते पर राजकोषीय समायोजन रोडमैप को संभवत: तीव्र समायोजन संपादित करने की आवश्यकता है। कठोर नियम आधारित राजकोषीय प्रणाली के कार्यान्वयन से राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय में सुधार होगा तथा समग्र समष्टि आर्थिक प्रबंध सुलभ होगा।

4 राजकोषीय परिचालन और रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र

रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में विगत वर्षों के दौरान भारी रूपान्तरण हुए हैं, जिसमें मौद्रिक नीति परिचालनों की शासन प्रणाली में परिवर्तन और राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विभिन्न चरण प्रतिबिंबित होते हैं। सुधारों के बाद की अवधि में, बाजार आधारित सरकारी उधार कार्यक्रम के उभरने से, प्राथमिक प्रतिभूति बाजार से रिज़र्व बैंक के आहरणों तथा विभिन्न दीर्घावधि निधियों में उसके अंशदान में बहुत अधिक कमी से केंद्रीय बैंक तुलन पत्र और राजकोषीय नीतियों के बीच अंतरापृष्ठ की प्रकृति में परिवर्तन हो गया । पूंजी अंतर्वाहों में उछाल ने रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में एक नया आयाम जोड़ा है, जिसने न केवल आय में संबद्ध परिवर्तनों के साथ आस्तियों के विन्यास में परिवर्तन किया है, बल्कि बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) प्रारंभ करने के साथ अवरूद्धता की लागत को भी राजकोष द्वारा शेयर करने के साथ राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच अंतरापृष्ठ में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर भी रखा है। इसके अतिरिक्त, सरकार और अर्ध-राजकोषीय गतिविधियों में रिज़र्व बैंक के अधिशेष के अंतरण की सीमा ऐसे अन्य पहलू हैं जिनका सुधारों के पश्चात् रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र से संबंध रहा है। दिलचस्प बात यह है कि संकट वर्ष 2008-09 के दौरान, अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों द्वारा अपने तुलन पत्र पर देखे गये विस्तार से भिन्न रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र संकुचित हो गया। इसका श्रेय प्रणाली में चलनिधि की वृद्धि करने के लिए किये गये उपायों को जाता है, जिनके अंतर्गत आरक्षित नकदी निधि अनुपात में कमी करना तथा सरकार के एम एस एस शेष का मोचन करना शामिल है। उसके बाद से रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में महत्वपूर्ण विस्तार हुआ है जो मुद्रास्फीति को नियंत्रित रखते हुए वसूली प्रक्रिया को मजबूत बनाने के उद्देश्य से किये गये उसके चलनिधि प्रबंध परिचालनों को प्रतिबिंबित करता है।

1. प्रस्तावना

4.1 एक केंद्रीय बैंक, मुद्रा मुद्रित करने संबंधी अपनी अनन्य शक्ति के आधार पर एक अद्वितीय वित्तीय संस्था है। उसकी अद्वितीयता इस तथ्य से भी प्रतिपादित होती है कि वह बैंकों के बैंकर और सरकार के बैंकर के कार्य निष्पादित करता है। इस प्रकार उसका तुलन पत्र, सार्वजनिक नीति परिप्रेक्ष्य की दृष्टि से एक विशेष हित से संबंधित है। केंद्रीय बैंक की आस्तियों और देयताओं का एक विवरणात्मक लेखा होने की वजह से किसी भी समय वह अपने मौद्रिक परिचालनों के अतिरिक्त वाणिज्य बैंकों और सरकार जैसी अन्य प्रमुख संस्थाओं के साथ अपने संबंध के बारे में भी महत्वपूर्ण जानकारी रखता है। केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र मौद्रिक नीति परिचालनों के संचालन संबंधी संस्थागत व्यवस्थाओं के प्रभाव का भी चित्रण करता है (हाकिन्स, 2003) । निदर्शी तौर पर घाटा वित्तपोषण का आश्रय लिये जाने से चिह्नित एक राजकोषीय शासन प्रणाली में एक केंद्रीय बैंक की अस्तियों की सबसे अधिक ध्यान देने योग्य मद सरकार को दिये गये केंद्रीय बैंक के निवल ऋण होगी। इसी प्रकार, जब एक अर्थव्यवस्था की विनिमय दर की पहचान एक मुद्रा बोर्ड व्यवस्था के रूप में होती है तो उसके तुलन पत्र पर, विदेशी मुद्रा बाजार में उसके परिचालन प्रतिबिंबित होंगे। भारत में रिज़र्व बैंक तुलन पत्र और भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के बीच बहुविध सहबद्धताएं सार रूप में इस प्रकार प्रस्तुत की जाती हैं ;''.....रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र अर्थव्यवस्था में परिवर्तन को प्रतिबिंबित तथा एक प्रकार से बाह्य क्षेत्र, राजकोषीय और, वास्तव में, मौद्रिक क्षेत्रों को प्रभावित करता है'' (रेड्डी, 1997)।

4.2 मौद्रिक नीति परिचालनों तथा रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के बीच अंतर - सहबद्धताओं ने नीति निर्माताओं और अनुसंधानकर्ताओं का समान रूप से ध्यान आकर्षित किया है (उदाहरणार्थ .. जाधव और अन्य, 2003, 2005 (आर बी आई, 2005)। प्रस्तुत रिपोर्ट में, मौद्रिक परिचालनों से परे जाने का इरादा है। इस रिपोर्ट की विषय-वस्तु के अनुरूप इस अध्याय में राजकोषीय और मौद्रिक परिचालनों तथा रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर उनके प्रभाव की जांच की गई है। राजकोषीय और मौद्रिक नीतियां समग्र समष्टि आर्थिक नीति की दो भुजाएं हैं और धारणीय आर्थिक संवृद्धि तथा कीमत स्थिरीकरण के बुनियादी उद्देश्यों में हिस्सा बँटाती है। मौद्रिक और राजकोषीय नीति समन्वय का विस्तार अनेक पेरामीटरों पर देखा गया है, जिनमें केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र का आकार और विन्यास शामिल है और जिन्हें केंद्रीय बैंक द्वारा सामना किये जाने वाले विभिन्न जोखिमों के कारण महत्वपूर्ण समझा जाता है। समन्वय की प्रकृति भी अत्यंत

प्रासंगिक है। अन्य कारकों के अतिरिक्त, अर्थव्यवस्था के बाह्य समन्वय का स्तर समन्वय की आवश्यकता को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व है। जहाँ इस अध्याय में राजकोषीय-मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच बदलते हुए संबंध के संदर्भ में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में उतार-चढ़ाव बिंदुओं का पता लगाने पर जोर दिया गया है, प्राथमिक रूप से यह अध्याय 1990 के शुरू के वर्षों में आर्थिक सुधारों की शुरूआत से हाल ही के विगत दिनों के भीतर खोज करता है।

4.3 धारणीय नीति ढांचे के संदर्भ में राजकोषीय मौद्रिक समन्वय पर सामान्य स्थितियों के अंतर्गत विचार भिन्न हो सकते हैं क्योंकि संकट के दिनों में जैसी आवश्यकता हो सकती है वह उसके विरूद्ध होता है। जहाँ बाजार विफलता, अनुपूरक मांग समर्थन और सार्वजनिक माल के संबंध में तर्क मौद्रिक नीति की एक निष्क्रिय भूमिका मानने के साथ सक्रिय राजकोषीय नीति के पक्ष में हो सकते हैं, सुदृढ़ सरकारी वित्त द्वारा समर्थित अच्छा कार्य करने वाले वित्तीय बाजार मौद्रिक नीति की भूमिका में सुधार की ओर झुकाव रखते हैं। नीति अनुक्रिया अर्थात् मात्रात्मक सुलभता, मौद्रिक/राजकोषीय प्रोत्साहन उपाय तथा राजकोषीय सदृश गतिविधियां संकट के दौरान अल्पावधि-उपायों के रूप में सामान्य और आवश्यक समझे जा सकते हैं, किन्तु उन्हें उपयुक्त समय पर वापस लिये जाने की आवश्यकता है ताकि अर्थव्यवस्था में दीर्घावधि विकृति को टाला जा सके।

4.4 केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में यथा प्रतिबिंबित, भारत में मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच समन्वय की प्रकृति कैसी रही है ? विशेष रूप से रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर प्रभाव डालने वाले सामान्य और पूंजी अंतर्वाह में अर्थव्यवस्था के खुलने के राजकोषीय निहितार्थ क्या हैं ? केंद्रीय बैंक की पूंजी और आरक्षित निधियों से संबंधित प्रमुख मुद्दे क्या हैं ? इस अध्याय में, उनमें से कुछ मुद्दों पर सामान्य और प्रासंगिक, दोनों ही आधारों पर जांच की गई है।

4.5 शेष अध्याय निम्नानुसार सुव्यवस्थित किया गया है। खंड II में केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र पर राजकोषीय परिचालनों के प्रभाव का विश्लेषण किया गया है जब कि खंड III में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के संदर्भ में इस विषय पर विचार किया गया है। खंड IV में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय से संबंधित ऐसे विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण किया गया है जिन्होंने रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र को प्रभावित किया है। वर्तमान आर्थिक संकट और उसका रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर प्रभाव को खंड V में शामिल किया गया है। समापन टिप्पणियां खंड VI में प्रस्तुत की गई हैं।

II. राजकोषीय नीति और केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र

एक रूढ़-शैली के अनुसार अंकित केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र

4.6 राजकोषीय नीति और केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र के बीच पारस्परिक क्रिया की प्रकृति को केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र की एक रूढ़ शैली से समझा जा सकता है। राजकोषीय नीति और केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र के बीच सहबद्धता केंद्रीय बैंक में जमा सरकारी जमाराशियों अथवा सरकार को केंद्रीय बैंक के ऋणों अथवा सरकारी प्रतिभूतियों में केंद्रीय बैंक के निवेश के माध्यम से हो सकती है (सारणी 4.1)।

4.7 उपर्युक्त के अतिरिक्त केंद्रीय बैंक का लाभ और हानि लेखा उस सीमा तक राजकोषीय परिचालनों से संबद्ध रहता है कि सरकार केंद्रीय बैंक से लाभ अंतरण की प्राप्तकर्ता है। जहाँ तक केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में राजकोषीय परिचालनों के प्रतिबिंबित होने का संबंध है, तुलन पत्र के निम्नलिखित घटकों का विशेष रूप से उल्लेख किया जाना आवश्यक है।

सरकारी जमाराशियां

4.8 सरकार के बैंकर के रूप में अपनी परंपरागत भूमिका में केंद्रीय बैंक सामान्यतया सरकार की जमाराशियां स्वीकार करता है, जो केंद्रीय बैंक की देयता होती है। सरकार की जमा राशियों में परिवर्तन मुद्रा आपूर्ति को प्रभावित करते हैं और ऐसे देशों में एक उपयोगी मौद्रिक नीति साधन उपलब्ध कराते हैं जहाँ केंद्रीय बैंकों को यह अधिकार होता है कि वे जमाराशियों को अपनी और वाणिज्य बैंकों की बहियों के बीच अंतरित कर सकें (उदाहरण के

सारणी 4.1: एक रूढ़-शैली के अनुसार अंकित केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र

देयताएं	आस्तियां
1	2
1. मुद्रा 2. बैंक की जमाराशियां 3. सरकारी जमाराशियां 4. पूंजी 5. आरक्षित निधि 6. अन्य देयताएं	1. निम्नांकित को ऋण: (क) सरकार (ख) बैंक 2. निम्नांकित में निवेश: (क) सरकारी प्रतिभूतियां (ख) विदेशी आस्तियां 3. स्वर्ण 4. अन्य आस्तियां

लिए, कनाडा, मलेशिया और दक्षिण अफ्रीका)। जब एशिया की अर्थव्यवस्था ने 1997 के संकट से पूर्व भारी मात्रा में पूंजी अंतर्वाहों का सामना किया था, सरकार की अधिशेष निधियों को केंद्रीय बैंक में जमा करने से अंतर्राष्ट्रीय आरक्षित निधियों के वर्धमान स्टॉक के भाग को अवरुद्ध करने में सहायता मिली थी (हाकिन्स, 2003)। सरकारी जमाराशियों में घट-बढ़ अत्यधिक अस्थिर हो सकती है। जिससे चलनिधि प्रबंध के लिए समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं । सरकार द्वारा रखी गई निधियों पर भुगतान किये जाने वाले प्रतिफल के बारे में भी प्रश्न हैं।

सरकार को ऋण/सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश

4.9 एक वित्तीय रूप से दमित व्यवस्था में, प्राथमिक बाजार नीलामियों में सरकारी पत्र में अभिदान के माध्यम से सरकार को ऋण देकर केंद्रीय बैंक अपना दायित्व निभा सकता है। यह वित्तपोषण अत्यन्त रियायती अथवा बाजार संबद्ध दर पर हो सकता है। रियायती दर पर वित्तपोषण से सक्षम बाजार-कार्य एवं मौद्रिक प्रबंध की प्रभावोत्पादकता प्रभावित होगी। हालांकि, अनेक देश राजकोषीय उत्तरदायित्व अधिनियमों के अधिनियमन तथा कार्यान्वयन के माध्यम से प्राथमिक बाजार में केंद्रीय बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद को वर्जित कर देते हैं। ऐसे देशों के लिए समन्वय की चुनौतियां तीव्र होती हैं जिनमें वित्तीय बाजारों की कार्य-कुशलता तथा एक प्रभावी अप्रत्यक्ष मौद्रिक नीति के अनुसरण के लिए आवश्यक ढांचे का अभाव होता है।

4.10 कुछ उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों के लिए यह यथावांछित माना जाता है कि वे बाजार का विकास करने के लिए सरकारी बांडों में बाजार बनाएं। किन्तु अन्य में, भारी मात्रा में सरकारी प्रतिभूतियों की धारिता की पकड़ से बचने के लिए केंद्रीय बैंक इस गतिविधि से दूर ही रहते हैं (अल-जस्सेर और बनाफे, 2002) ।

4.11 1999 में अंतर्राष्ट्रीय निपटान बैंक (बी आई एस) द्वारा आयोजित सर्वेक्षण में पाया गया कि अधिकांश केंद्रीय बैंकों को, या तो विधान द्वारा अथवा उनकी सरकारों के साथ लिखित करार द्वारा सरकार को उधार देने की आवश्यकता नहीं थी और प्रायः उन्हें इसकी अनुमति नहीं थी (वैन' टी डैक, 1999) । विशेष रूप से ब्राजील, चिली, पेरु और पोलेंड में सख्त निषेध विद्यमान हैं जहाँ संविधान द्वारा सरकार को उधार दिया जाना बाधित है। अति लघु वित्तीय क्षेत्रों वाले विकासशील देशों में केंद्रीय बैंक उधार पर पूर्ण प्रतिबंध होना अनुपयुक्त हो सकता है क्योंकि यह व्यय और राजस्व के बीच अस्थायी अंतरालों को मिटाने से सरकार को रोक सकता है। किन्तु, प्रायः यह तर्क दिया जाता है कि इस प्रकार के उधार सीमित और बाजार दरों पर होने चाहिए (जो केंद्रीय बैंक द्वारा निर्धारित की जाएं) (कॉटरेल्ली, 1993)। इस प्रकार, राजकोषीय अनुशासन सुनिश्चित करने और राजकोषीय अपव्ययिता से उत्पन्न अनेक समस्याओं से बचने की दृष्टि से अधिक से अधिक संख्या में उन्नत के अतिरिक्त उभरते बाजार तथा विकासशील अर्थव्यवस्थाओं (ई एम डी ई) ने एक नियम-आधारित राजकोषीय उत्तरदायित्व ढांचा (सारणी 4.2) अपनाया है।

विदेशी प्रतिभूतियों में निवेश: अवरुद्ध विदेशी मुद्रा हस्तक्षेप

4.12 केंद्रीय बैंक विदेशी मुद्रा आरक्षित निधि प्रबंध के भाग के रूप में आम तौर पर विदेशी प्रतिभूतियों में निवेश करते हैं। कुछ केंद्रीय बैंक विनिमय दर के बचाव के लिए विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप करते हैं जिसमें कभी-कभी संचित विदेशी मुद्रा भंडार का इस्तेमाल कर लिया जाता है और केंद्रीय बैंक को घाटा होना निहित होता है। इसके अलावा, मुद्रा बाजार में केंद्रीय बैंक के देशी उधार की लागत से, अंतर्राष्ट्रीय आरक्षित निधियों की बहुत बड़ी राशि के प्रतिफल कम हो सकते हैं (हाकिन्स, 2003)। ऐसे मामले हैं, जब कुछ केंद्रीय बैंकों को निर्यातकों अथवा अरक्षित देशी उधारकर्ताओं को हानियों से बचाने के लिए वायदा लेन-देनों में भारी हानि उठानी पड़ी थी (क्विर्क और अन्य, 1988)।

सरकार को केंद्रीय बैंक अंतरण तथा पूंजी लगाना

4.13 एक सक्रिय मौद्रिक नीति के लिए आवश्यक है कि केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र सुदृढ़ हो तथा वह वित्तीय और विदेशी मुद्रा बाजारों में केन्द्रीय बैंक के परिचालनों के कारण यदि कोई हानि हो तो उसका सामना करने के लिए पर्याप्त पूंजी आधार द्वारा समर्थित हो। हालांकि केंद्रीय बैंक ऐसी आवश्यकताओं के लिए पूंजी में वृद्धि करने के विपरीत अपने अधिशेष अंतरित करने के द्वारा राजकोषीय प्राधिकारियों को आम तौर पर समर्थन प्रदान करते हैं। कुछ देशों में, केंद्रीय बैंक सरकार को कर का भुगतान भी करते हैं (हाकिन्स, 2003)।

सारणी 4.2: चयनित देशों में राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून-मुख्य विशेषताएं

देश और दिनांक	मूल कानून	क्रिया विधिक कानून	एफ आर एल में संख्यात्मक लक्ष्य 1/	व्याप्ति 2/	बचाव खंड 3/	स्वीकृतियां
1	2	3	4	5	6	7
अर्जेंटीना: राजकोषीय उत्तरदायित्व की संघीय व्यवस्था (2004) 4/	1999, 2001	हाँ	ईआर;डीआर	सीजी	नहीं	हाँ
आस्ट्रेलिया: चार्टर ऑफ बजट ऑनेस्टी (1998)		हाँ	.....6/	सीजी	नहीं	नहीं
ब्राज़ील: राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून (2000)		हाँ	ईआर;डीआर	पीएस	हाँ	हाँ
चिली: एफ आर एल (2006)		हाँ	बीबीआर	सीजी	नहीं	नहीं
कोलंबिया: राजकोषीय पारदर्शिता और उत्तरदायित्व पर मूल कानून (2003)	1997, 2000	हाँ	बीबीआर	एनएफपीएस	हाँ	नहीं
ईक्वेडोर: राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून (2010)	2002, 2005	हाँ	ईआर	पीएस	नहीं	नहीं
भारत: राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध अधिनियम (2003)		हाँ	बीबीआर	सीजी	नहीं	नहीं
जमैका: राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून (2010)	2010	हाँ	बीबीआर; डीआर.	सीजी5/	हाँ	नहीं
मैक्सिको (2006)		हाँ	बीबीआर	सीजी	हाँ	हाँ
नाइजीरिया (2007)			बीबीआर	सीजी	नहीं	नहीं
न्यूज़ीलैंड % सार्वजनिक वित्त (राज्य क्षेत्र प्रबंध) बिल (2005)	1994	हाँ	--6/	सीजी	नहीं	नहीं
पाकिस्तान:राजकोषीय उत्तरदायित्व और कर्ज लिमिटेशन अधिनियम (2005)		हाँ	बीबीआर; डीआर	सीजी	हाँ	नहीं
पनामा: न्यू फिस्कल रेस्पांसिबिलिटी लॉ (2009)	लॉ नं. 2 ऑन इक्नॉमिक एक्टीविटी प्रमोशन एंड फिस्कल रेस्पांसिबिलिटी (2002)	हाँ	बीबीआर; डीआर	एनएफपीएस	हाँ	नहीं
पेरु: राजकोषीय उत्तरदायित्व और पारदर्शिता कानून (20.03)	1999	हाँ	बीबीआर; ईआर	एनएफपीएस	हाँ	हाँ
रोमानिया (2010)		हाँ	ईआर	जीजी	हाँ	हाँ
सर्बिया (2010) बजट प्रणाली कानून 2009 में प्रारम्भ एफ आर एल प्रावधान		हाँ	बीबीआर; डीआर	जीजी	नहीं	नहीं
स्पेन:बजट स्थिरता कानून (2007)	2001	हाँ	बीबीआर	एनएफपीएस	हाँ	हाँ
श्री लंका: राजकोषीय प्रबंध उत्तरदायित्व अधिनियम 2003		हाँ	बीबीआर; डीआर	सीजी	नहीं	नहीं
युनाइटेड किंग्डम: बजट उत्तरदायित्व और राष्ट्रीय लेखा परीक्षा अधिनियम (2011)	राजकोषीय स्थिरता के लिए संहिता (1998)	हाँ	बीबीआर; डीआर	पीएस	नहीं	नहीं

टिप्पणियां :

1) बी बी आर = बजट संतुलन नियमावली ; डी आर = कर्ज नियम; ई आर = व्यय नियम
2) जी जी = सामान्य सरकार ; सी जी = केंद्रीय सरकार, पी एस = सार्वजनिक क्षेत्र; एन एफ पी एस = गैर - वित्तीय सार्वजनिक क्षेत्र
3) इसमें केवल सु-विनिर्दिष्ट बचाव खंड शामिल हैं। उदाहरण के लिए भारत के राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून (एफ आर एल) में बचाव खंड बहुत सामान्य है।
4) एफ आर एल वास्तव में 2009 से बंद कर दिया गया है।
5) इसमें सार्वजनिक निकाय भी शामिल है।
6) ये देश (वास्तविक) नियम चलाते हैं, हालांकि उन्हें एफ आर एल में स्पष्ट नहीं किया गया है।

स्रोत: स्केदर एंड्रीया, टिडियाने किंडा. नीना बुदिना और अंके वेबर (2012), फिस्कल रूल्स इन रेस्पांस टू दि क्राइसिस- टुवर्ड दि ''नेक्स्ट जनरेशन'' रूल्स, अ न्यू डाटासेट; आई एम एफ वर्किंग पेपर, जुलाई 2012 ।

4.14 जब कि लाभ सरकार को अंतरित कर दिये जाते हैं, हानियां आम तौर पर पूंजी और आरक्षित निधियों में कमी करके पूरी की जाती हैं। कभी-कभी असाधारण लाभ सरकार को वितरण करने से पूर्व आरक्षित निधियों में अंतरित कर दिया जाता है। फिलीपीन्स एक अद्वितीय उदाहरण है, जहाँ पहले वाले केंद्रीय बैंक के भारी मात्रा में अशोध्य कर्ज हो जाने पर सरकार ने पूंजी लगा कर 1992 में एक नये केंद्रीय बैंक का निर्माण कर लिया था।

4.15 ऐसे तीन प्रमुख प्रश्न हैं जो केंद्रीय बैंक की आरक्षित निधियों के संदर्भ में उठते हैं। पहला प्रश्न यह है कि क्या केंद्रीय बैंक को आरक्षित निधियां रखने की आवश्यकता है, जब कि अधिकांश मामलों में स्वामी अपने आप में राष्ट्रिक है। इसे व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि एक सुपूंजीकृत केंद्रीय बैंक एक बाजार अर्थव्यवस्था में सापेक्ष रूप से अधिक विश्वसनीय हे, विशेष रूप से जब अर्थव्यवस्था को भारी राजकोषीय हानि होती है तो उसकी आरक्षित निधियां बाजार स्थिरीकरण की बृहत राजकोषीय सदृश लागत के समक्ष एक कुशन के रूप में काम करती है। अंतर्निहित राष्ट्रिक गारंटी के बावजूद, ऐसे मामलें में जब केंद्रीय बैंक ऋण शोधन क्षमता का सामना कर रहा हो, उसे उपयोग में लाया जा सकता है। विशेष रूप से एहतियाती प्रयोजनों के लिए, ई एम डी ई में केंद्रीय बैंक प्रायः बृहत आरक्षित निधियां रखते हैं।

4.16 दूसरा प्रश्न यह है कि अपने तीन घटकों के अनुसार आरक्षित निधियों को कौन सा रूप लेना चाहिए, अर्थात् , चुकता पूंजी, आकस्मिकता आरक्षित निधि और पुनर्मूल्यन खाते। अधिकांश केंद्रीय बैंक चुकता पूंजी को बढ़ाने की बजाय अपने वार्षिक लाभ के एक भाग को अंतरित करने के द्वारा आरक्षित निधियाँ बढ़ाने को प्राथमिकता देते प्रतीत होते हैं, जब कि पुनर्मूल्यन खातों का उपयाग प्रचलित बाजार प्रवृत्तियों के समायोजन के लिए होता है।

4.17 तीसरा प्रमुख प्रश्न यह है कि केंद्रीय बैंक की आय को केंद्रीय बैंक (अर्थात् आरक्षित निधियों के रूप में) सरकारी और गैर-सरकारी स्वामियों के बीच किस प्रकार से प्रभाजित किया जाना चाहिए, यदि ईक्विटी का भाग निजी पणधारकों द्वारा रखा गया हो लाभ के एक विवेकी अनुपात को केंद्रीय बैंक की पूंजी तथा आरक्षित निधियों के लिए एक तरफ रखने के बाद, सरकार ''शेयरधारक'' के रूप में केंद्रीय बैंक के कुल लाभ का भाग प्राप्त करने की हकदार है। इस प्रकार के अंतरणों के आकार को नियंत्रित करने के लिए सुदृढ़ अथवा यांत्रिक नियम हो सकते हैं; ऐसा केंद्रीय बैंक के विवेक पर, सरकार के विवेक पर अथवा उनके बीच समझौता वार्ता का विषय हो सकता है। केंद्रीय बैंक के विधान प्रायः सांविधिक रूप से आरक्षित निधियों के आकार को तुलन पत्र, चुकता पूंजी, वार्षिक अधिशेष, अथवा कुछ समष्टि आर्थिक परिवर्ती, जैसे जी डी पी अथवा मुद्रा आपूर्ति के आकार के साथ सहबद्ध करते हैं। किसी भी मामले में, सरकार को अंतरण कभी भी जी डी पी के 0.5 प्रतिशत से अधिक नहीं होते हैं, हांगकांग सार और सिंगापुर जैसे अपवादों को छोड़ कर। अधिकांश केंद्रीय बैंक उनके लाभ का आधे से अधिक भाग वितरित कर देते हैं (कुर्तज़िंग और मैन्दर, 2003)।

4.18 राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के लिए लाभ अंतरण का आकार एक महत्वपूर्ण विषय है। यद्यपि सरकारें विशिष्ट रूप से प्रमुख भाग (प्रायः 90 प्रतिशत तक) विनियोजित करती हैं, विशेष रूप से सिक्का-ढलाई अधिकार की अनुमति के साथ प्रायः यह राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण पर समानान्तर प्रतिबंधों द्वारा प्रतिसंतुलित हो जाता है।

केंद्रीय बैंक के अर्ध-राजकोषीय क्रियाकलाप

4.19 केंद्रीय बैंक के व्यय तीन वर्गों में वर्गीकृत किये जा सकते हैं: (i) मजदूरी और वेतन, लाभों, उपकरण और परिसरों पर सामान्य प्रशासनिक व्यय, (ii) केंद्रीय बैंकों के पास वाणिज्य बैंकों की जमा राशियों पर तथा किसी अन्य केंद्रीय बैंक उधार के लिए ब्याज भुगतान, और (iii) अर्ध-राजकोषीय व्यय जो केंद्रीय बैंक के मौद्रिक तथा विनिमय प्रणाली संबंधी उत्तरदायित्वों के अतिरिक्त होने वाले क्रियाकलापों पर होने वाला व्यय है।

4.20 अनेक देशों में, केंद्रीय बैंक राजकोषीय नीति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। वित्तीय लेन-देनों का उत्तरदायित्व लेने के द्वारा, जो वही भूमिका अदा करते हैं जैसा कि कर और सब्सिडियां, वे राजकोषीय घाटे के प्रभावी आकार को कम कर देते हैं। ये तथाकथित अर्ध-राजकोषीय क्रियाकलाप (क्यू एफ ए एस) इन देशों में महत्वपूर्ण निर्धारक तथा बजटीय प्रभाव रख सकते हैं। केंद्रीय बैंकें द्वारा निष्पादित किये जाने वाले अधिकांश क्यू एफ ए एस, विनिमय और वित्तीय प्रणालियों के विनियामक के रूप में और सरकार के बैंकर के रूप में उनकी दोहरी भूमिकाओं से उत्पन्न होते हैं। क्यू एफ ए एस में बहुविध विनिमय दर व्यवस्था (विशिष्ट रूप से निर्यातकों पर कर और आयातकों को एक सब्सिडी), विनिमय दर गारंटी (विदेशी मुद्रा के उधारकर्ता को एक आकस्मिक सब्सिडी) , ब्याज दर सब्सिडियां, क्षेत्रीय ऋण की उच्चतम सीमाएं, केंद्रीय बैंक बचाव कार्य, तथा केंद्रीय सरकार को बाजार दर से कम पर उधार दिया जाना शामिल हो सकता है।

4.21 केंद्रीय बैंक क्यू एफ ए एस में क्यों संलग्न रहता है, इसके अनेक कारण हैं। क्यू एफ ए एस सरकार को सार्वजनिक वित्तीय संस्थाओं के खातों में आवश्यक रूप से समझे जाने वाले बजटीय क्रियाकलापों को छुपाने की अनुमति दे सकते हैं। ऐसे क्यू एफ ए एस को बजटीय कार्यों की तुलना में समान वैधानिक अथवा संसदीय

संवीक्षा प्राप्त नहीं हो सकती है। कुछ क्यू एफ ए एस के लिए अन्य मूलाधार यह है कि बजटीय कार्यों की तुलना में उन्हें सापेक्ष रूप से नियंत्रित करना अधिक सुविधाजनक हो सकता है। किन्तु, क्योंकि वे बजट पर चार्ज नहीं किये गये होते हैं, वे केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में दिखाये जाते हैं। 1980 के वर्षों की बाद की अवधि में चिली के केंद्रीय बैंक को क्यू एफ ए एस की वजह से भारी घाटा उठाना पड़ा था।

III. रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र और राजकोषीय परिचालन

4.22 विगत वर्षों में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में, मौद्रिक नीति परिचालनों की व्यवस्थाओं में परिवर्तन तथा राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विभिन्न चरणों के अनुरूप काफी अधिक रूपांतरण हुआ है। स्वतंत्रता के बाद की अवधि के दौरान तीन सुस्पष्ट चरण देखे जा सकते हैं-प्रारंभिक चरण (1951-1967), सामाजिक नियंत्रण चरण (1968-1990) और वित्तीय उदारीकरण चरण (1991 के बाद से) (आर बी आई, 2006)। इन चरणों को जहाँ इस अध्याय के लिए विस्तीर्णता से प्रलेखित किया गया है, वहीं व्यापक प्रवृत्ति का एक त्वरित विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, ताकि रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में राजकोषीय परिचालनों के संदर्भ तथा विकास को समझा जा सके (चार्ट IV.1) ।

4.23 प्रारंभिक चरण के दौरान, रिज़र्व बैंक ने 'विकास केंद्रीय बैंकिंग' की रणनीति अपनाई जिसमें औद्योगिक वित्तपोषण के लिए

चार्ट IV.1: रिज़र्व बैंक तुलन पत्र आकार

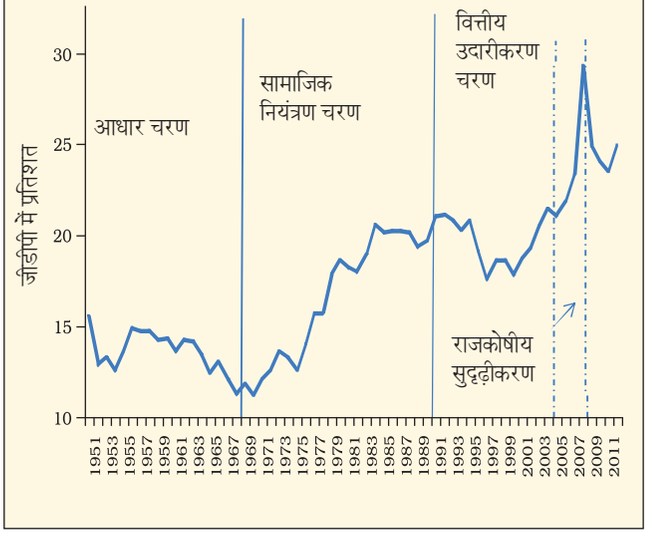

एक संस्थागत ढांचे का विकास करना, ग्रामीण ऋण प्रदान करना तथा आर्थिक विकास के लिए रियायती वित्तीय योजनाओं की डिज़ाइनिंग शामिल हैं (सिंह और अन्य, 1982) । राष्ट्र निर्माण प्रक्रिया में रिज़र्व बैंक की विस्तारित भूमिका उसके तुलन पत्र के आस्ति पक्ष में प्रतिबिंबित हुई थी जो अनेक विकास वित्तीय संस्थाओं की शेयर पूंजी में अभिदान तथा विभिन्न क्षेत्र विनिर्दिष्ट समर्पित विकास निधियों को किये गये अशंदान के रूप में थी। एक योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था ढांचे में राजकोष की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, रिज़र्व बैंक ने कतिपय उपाय करने शुरू किये हैं, जैसे सरकारी प्रति भूतियों में उसके निवेश पर उच्चतम सीमा में छूट, राज्य सरकारों को उसके द्वारा दिये जाने वाले अग्रिमों में वृद्धि तथा तदर्थ खजाना बिलों के निर्माण के माध्यम से सरकारी घाटे का स्वतः मुद्रीकरण। योजना-प्रेरित उद्योगीकरण प्रक्रिया जो, आगे बढ़ रही थी, का प्रबंध करने के लिए बड़े पैमाने पर पूंजी आयातों का वित्तपोषण करने के लिए विदेशी मुद्रा आरिक्षत निधियों में, उनके आहरण द्वारा तीव्र कमी हो गई थी। इस प्रकार, रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के विन्यास में, देशी आस्तियों के प्रभुत्व को मानने के साथ, एक नाटकीय रूपान्तरण देखा गया । मुद्रा विस्तार को समर्थन देने के लिए विदेशी प्रतिभूतियों के निःशेषण के साथ, अनुपातिक आरक्षित प्रणाली, जिसके अंतर्गत नोट जारी करने के लिए 40 प्रतिशत विदेशी आस्ति समर्थन की आवश्यकता होती थी, उसे क्रमशः बदल कर उसके स्थान पर स्वर्ण और विदेशी प्रतिभूतियों में 2 बिलियन रुपये की न्यूनतम आवश्यकता का प्रावधान कर दिया गया था। हालांकि रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का आकार इस चरण के दौरान कम हो गया, जिससे यह परिलक्षित होता है कि देश में बैंकिंग नेटवर्क के विस्तार के साथ, नकद आधारित प्रणाली का स्थान धीरे-धीरे बैंकिंग चैनल ने ले लिया था।

4.24 सामाजिक नियंत्रण चरण के दौरान, जिसे बैंक, राष्ट्रीयकरण द्वारा पहचाना जाता था, ऋण और रियायती वित्तपोषण पर नियंत्रण हुआ, सम्पूर्ण वित्तीय प्रणाली राजकोषीय नीति के उद्देश्यों को पूरा करने में संलग्न हो गई थी। सरकार की योजना आवश्यकताओं को पूरा करने के अतिरिक्त युद्ध और तेल आघातों द्वारा उपस्थित समष्टि आर्थिक चुनौतियों का सामना करने एवं सहवर्ती मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के लिए रिज़र्व बैंक के बढ़ते हुए निभाव को प्रतिबिंबित करते हुए, इस चरण

के दौरान रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के आकार में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। 1980 के वर्षों में, सरकार को मौद्रिक आधार के 90 प्रतिशत तक की वृद्धि के साथ रिज़र्व बैंक के निवल ऋण से जी डी पी में मुद्रीकृत घाटे का अनुपात पिछले दशक की तुलना में दुगुना हो गया। आरक्षित मुद्रा के विस्तार द्वारा प्रयास किये गये बढ़ते हुए मुद्रास्फीतिकारक दबावों को नियंत्रित करने के लिए, रिज़र्व बैंक को आरक्षित आवश्यकताओं की वृद्धि का अधिक से अधिक सहारा लेना पड़ा, जिससे उसके तुलन पत्र के देयता पक्ष में बैंक जमाराशियों में वृद्धि हो गई। मुद्रा-जमा अनुपात में तीव्र गिरावट द्वारा रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में परिणामी विस्तार आंशिक रूप से ही प्रतिसंतुलित हुआ था जो अर्थव्यवस्था में वित्तीय गहराई के गति-वर्धन को प्रदर्शित करता है (सारणी 4.3) ।

4.25 1991 के भुगतान संतुलन संकट के परिणामस्वरूप प्रारंभ हुआ वित्तीय उदारीकरण चरण वित्तीय क्षेत्र में व्यापक सुधारों द्वारा पहचाना जाता था। रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में मौद्रिक नीति के संचालन में अंतरण तथा शेष विश्व के साथ अर्थव्यवस्था का बढ़ता हुआ समन्वय प्रतिबिंबित हुआ । सुधार से पूर्व की अवधि के दौरान का काफी अधिक तुलन पत्र विस्तार 1990 के वर्षों के प्रथमार्ध तक जारी रहा। आस्ति पक्ष पर रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में विस्तार बृहत पूंजी आगमन के अस्थिरता प्रभाव को रोकने के लिए उसके विदेशी मुद्रा हस्तक्षेप परिचालनों के माध्यम से निवल

सारणी 4.3: रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का क्रम-विकास-चयनित संकेतक

(प्रतिशत)

संकेतक	1970 के वर्ष	1980 के वर्ष	1990 के वर्ष	2000 के वर्ष	2010-12
1	2	3	4	5	6
1. जी डी पी में तुलन पत्र का आकार	14.6	19.6	19.6	22.5	23.9
2. कुल तुलन पत्र आकार में पूंजी खाता	एनए	एनए	13.7	20.4	26.5
3. बैंकिंग विभाग तुलन पत्र में निर्गम विभाग का आकार	2.0	1.0	1.1	1.1	1.1
4. देशी आस्तियों के प्रति विदेशी मुद्रा आस्तियां	25.6	22.8	43.2	466.8	213.8
5. सरकार को अंतरित अधिशेष (तुलन पत्र आकार का प्रतिशत)	1.4	0.4	1.4	1.8	0.8
6. एम $_3$ में मुद्रा	33.2	22.8	19.4	15.7	14.5
7. सी आर आर	6.0	15.0	9.0	6.0	4.75

* पूंजी, आरक्षित निधियां, प्रावधान तथा पुनर्मूल्यन खाते शामिल हैं।
एनए: उपलब्ध नहीं
टिप्पणी: इस सारणी में दिये गये आंकड़े उल्लिखित अवधियों के वर्षांत औसत हैं।

विदेशी आस्तियों में अभिवृद्धि द्वारा प्रेरित था। यह सरकार को निवल रिज़र्व बैंक ऋण में काफी अधिक वृद्धि के कारण पहले के दो चरणों में देशी आस्ति प्रेरित विस्तार के विपरीत था। देयता पक्ष की तरफ, चूंकि खुला बाजार परिचालन (ओ एम ओ) अधिशेष पूंजी प्रवाहों को केवल आंशिक रूप से ही अवरुद्ध कर सके थे, सी आर आर में निरंतर वृद्धि के अनुरूप बैंक की आरक्षित निधियों में वृद्धि द्वारा प्रेरित विस्तार जारी रहा । तदर्थ खजाना बिलों के समापन और सरकारी प्रतिभूति बाजार के समानान्तर विकास के साथ, रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र सरकारी खातें में घाटों के साथ बाह्य खाते पर अधिशेषों के व्यापार द्वारा पूंजी प्रवाहों में भारी परिवर्तन से पृथक किया जा सका था। इससे रिज़र्व बैंक सी आर आर में क्रमशः कमी कर सका जिससे 1990 के वर्षों के द्वितीयार्ध के दौरान तुलन पत्र के आकार में क्रमशः संकुचन हुआ।

4.26 रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में, हालांकि विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप के माध्यम से देशी अर्थव्यवस्था पर बृहत् पूंजी आगमन के अस्थिरकारी प्रभावों को रोकने के रिज़र्व बैंक के प्रयासों को प्रतिबिंबित करते हुए 2001 और 2007 के बीच पुनः वृद्धि हो गई। बड़े पैमाने पर विदेशी मुद्रा में वृद्धि के मौद्रिक प्रभाव को उसके अवरुद्धता परिचालनों द्वारा प्रतिसंतुलित कर दिया गया था। अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों से भिन्न, जहाँ संकट के प्रति उनकी नीति अनुक्रियाओं के परिणामस्वरूप उनके तुलन पत्रों में महत्वपूर्ण विस्तार देखा गया, रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र 2008-09 के दौरान संकुचित हो गया। सी आर आर में कमी तथा सरकार की एम एस एस शेष राशियों के मोचन के माध्यम से प्रणाली में चलनिधि की वृद्धि के लिए किये गये उपायों से रिज़र्व बैंक की देयताएं संकुचन में परिवर्तित हो गई। पूंजी का बहिर्वाह जारी रखते हुए विदेशी आस्तियों में कमी के परिणाम स्वरूप, आस्ति पक्ष की तरफ समान रूप से संकुचन था। हालांकि, रिज़र्व बैंक की नीति कार्रवाइयों और चलनिधि प्रबंध परिचालनों की अनुक्रिया स्वरूप उसके तुलन पत्र के आकार में अगले तीन वर्षों 2009-10, 2010-11 और 2011-12 में सार्थक रूप से वृद्धि हुई। आस्ति पक्ष पर, मूल्यांकन प्रभावों के कारण चलनिधि लगाने तथा विदेशी मुद्रा आस्तियों के लिए सरकारी प्रतिभूतियों की खुला बाजार खरीद के कारण दोनों ही देशी प्रतिभूतियों में रिज़र्व बैंक की धारिता में वृद्धि हुई थी। देयताओं के पक्ष की तरफ, तुलन पत्र के विस्तार की व्याख्या 2009-2010 और 2010-11 में संचलन

में मुद्रा तथा जमाराशियों और 2011-12 में संचलन में मुद्रा तथा मुद्रा एवं स्वर्ण पुनर्मूल्यन खाते (सी जी आर ए) में वृद्धि द्वारा की जाती है।

रिज़र्व बैंक में रखे गये सरकारी खाते की प्रवृत्तियां

सरकारी जमाराशियां

4.27 भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 20 और 21 के अंतर्गत केंद्र सरकार अपनी सभी आपसी सहमति के अधीन न्यूनतम, नकद शेष राशियां, ब्याज मुक्त आधार पर रिज़र्व बैंक में जमा रखती है। राज्य सरकारें भी न्यूनतम जमा राशियां रखती हैं जो आपसी करारों के अनुसार बजटीय लेन-देनों की मात्रा से संबद्ध होती है। ये शेष राशियाँ रिज़र्व बैंक तुलन पत्र के देयता पक्ष पर सरकारी जमा राशियों के रूप में प्रतिबिंबित होती हैं। अधिशेष जमाराशियां, जो न्यूनतम जमाराशियों के अतिरिक्त होती हैं, पूर्व सहमत उच्चतम सीमा तक रिज़र्व बैंक के पास केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों में पुनर्निवेशित कर दी जाती हैं, जिससे आस्ति पक्ष पर रिज़र्व बैंक के निवेश संविभाग में कमी हो जाती है। पुनर्निवेश की उच्चतम सीमा से अधिक की अतिरिक्त जमाराशियों को सरकारी जमाराशियों के अंतर्गत दर्शाया जाना जारी रहता है। 2001-02 तक की सुधार पश्चात् की अवधि के दौरान, अधिकांशतः वित्तीय वर्ष के अंत में, केवल संक्षिप्त दौर के अधिशेष के साथ, सरकारी वित्त सामान्यतया घाटे में ही रहे। बृहत अधिशेषों के उभरने के साथ, 2002-03 से केंद्र सरकार की नकद जमाराशियों के स्वरूप (पैटर्न) में परिवर्तन हुआ था (बॉक्स IV.1)।

4.28 2003-04 से तुलन पत्र में एम एस एस खाते के अंतर्गत सरकारी जमाराशियां भी प्रतिबिंबित होती हैं। चूंकि इस खाते में निधियां एम एस एस मोचन के विशेष प्रयोजन के लिए रखी गई थी, वे सरकार के लेन-देन के लिए उसे उपलब्ध नहीं थी। हालांकि, 2008-09 और 2009-10 के दौरान, इस खाते में जमा राशि का एक भाग अवपृथक कर दिया गया था तथा उसे, वैश्विक संकट के परिणामस्वरूप सरकारी बाजार उधार पर निर्भरता को कम करने की दृष्टि से सरकार को अंतरित कर दिया गया था। सरकारी जमराशियों में वर्ष के दौरान भारी परिवर्तनों से रिज़र्व बैंक के लिए चलनिधि प्रबंध जटिल हो गया है।

बॉक्स IV.1
सरकारी नकदी शेष में भारी मात्रा में अधिशेष का आविर्भाव

रिज़र्व बैंक के पास सरकारी नकदी शेष में 2002-03 से भारी मात्रा में और दीर्घकाल तक अधिशेष पाये गये। अधिशेषों में योगदान देने वाले प्रमुख कारक निम्नलिखित थे:

- राज्यों के लिए कर्ज स्वैप योजना (डी एस एस) का प्रारंभ, जिससे वे केंद्र के प्रति उच्च लागत वाली देयताओं को चुकाने योग्य बने।
- रिज़र्व बैंक के विदेशी मुद्रा हस्तक्षेपों को अवरुद्ध करने के लिए सरकारी अधिशेष में वृद्धि करने की दृष्टि से 2002-04 के बीच खजाना बिल नीलामियों की अधिसूचित राशियों में वृद्धि ।
- केंद्र सरकार के पात्र खजाना बिलों में उनके निवेश में प्रतिबिंबित राज्य सरकार के अधिशेष। ये अधिशेष क्रमशः निम्नलिखित के परिणाम है:
  - स्वयं राज्यों के कर राजस्वों में उछाल तथा व्ययों के नियंत्रण के माध्यम से मुख्यतः प्रभावित राजकोषीय उत्तरदायित्व ढांचे के अंतर्गत राज्य स्तर पर राजकोषीय सुदृढ़ीकरण ।
  - बारहवें वित्त आयोग के अवार्ड के अनुसरण में केंद्र से संसाधनों का अंतरण तथा न्यागमन की मात्रा में तीव्र वृद्धि।
  - अल्प बचत संग्रहणों में उछाल;
  - 2002-03 और 2006-07 के बीच राष्ट्रीय अल्प बचत निधि (एन एस एस एफ) आय की राज्यों और केंद्र के बीच हिस्सेदारी व्यवस्था में परिवर्तन जो 80:20 से 100:0 कर दी गई। [1]
- संकट के प्रारंभ होने के पूर्व 2008 में सरकारी वित्त में सुधार।
- 2010-11 की पहली तिमाही के दौरान केंद्र सरकार की 3 जी और ब्राडबैंड नीलामियों से बजट में अनुमानित राशियों से अधिक आय।

स्रोत: रिज़र्व बैंक वार्षिक रिपोर्ट, विभिन्न मुद्दे

1 वर्तमान में, एन एस एस एफ आय को राज्यों और केंद्र के बीच 17 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के लिए 50:50 के अनुपात में तथा 13 राज्यों/ संघ राज्य क्षेत्रों के लिए 100:0 के अनुपात में बाँटा गया है।

ऋण और अग्रिम

4.29 रिज़र्व बैंक भी केंद्र और राज्य, दोनों सरकारों को उनके अल्पावधि चलनिधि असंतुलनों की पूर्ति करने के लिए 'अर्थोपाय अग्रिमों' (डब्ल्यू एम ए) और ओवर ड्राफ्ट (ओ डी) के रूप में ऋण और अग्रिम प्रदान करता है।

केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों में रिज़र्व बैंक के निवेश

4.30 सुधार-पश्चात् की अवधि के दौरान, विशेष रूप से 1990 के वर्षों के द्वितीयार्ध से, केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों में रिज़र्व बैंक के निवेश सरकार की उधार आवश्यकताओं को पूरा करने की आवश्यकता द्वारा नियंत्रित होने से भी कहीं अधिक उसके मौद्रिक नीति परिचालनों के संचालन द्वारा नियंत्रित होते हैं। अप्रैल 2006 से सरकारी प्रतिभूतियों की नीलामियों में रिज़र्व बैंक के प्राथमिक अभिदान के बन्द हो जाने के साथ, द्वितीयक बाजार में खुला बाजार खरीद/बिक्री, रेपो/रिवर्स रेपो परिचालनों और सरकार द्वारा अपने स्वयं की प्रतिभूतियों में उसके खाते में नकद अधिशेषों से पुनर्निवेश/विनिवेश द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों में रिज़र्व बैंक की धारिता में परिवर्तन किये गये हैं (सारणी 4.4)।

पूंजी खाते की भूमिका

4.31 रिज़र्व बैंक का पूंजी आधार भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम 1934 की धारा 4 द्वारा यथानिर्धारित 50 मिलियन रुपये की प्रारंभिक चुकता पूंजी तथा आर बी आई अधिनियम की धारा 46 के अंतर्गत यथानिर्धारित एक आरक्षित निधि से निर्मित होता है। 50 मिलियन रुपये की मूल आरक्षित निधि उसकी मुद्रा देयता के लिए केंद्र सरकार से अभिदान के रूप में सृजित की गई थी। उसके बाद, अक्तूबर 1990 तक स्वर्ण के आवधिक पुनर्मूल्यन पर लाभ के रूप में इस निधि में 64.95 बिलियन रुपये जमा किये गये थे, इस प्रकार उसे 65 बिलियन रुपये तक ले जाया गया।

4.32 1998-99 से अप्रत्यक्ष मौद्रिक नीति परिचालनों की ओर परिवर्तित होने तथा 2003-04 से बढ़ते हुए पूंजी प्रवाहों के साथ, यह महसूस किया गया था कि रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र को पर्याप्त रूप से मज़बूत होने की आवश्यकता है ताकि वह तुलन पत्र विचारों द्वारा नियंत्रित न होकर मौद्रिक नीति कार्रवाइयों को स्वतंत्र रूप

सारणी 4.4: रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में सरकारी लेन-देन

(कुल देयताओं/आस्तियों का प्रतिशत)

वर्ष	देयताएं			आस्तियां	
	सरकारी जमाराशियां			ऋण और अग्रिम	निवेश
	नकद	एमएसएस	कुल		
1	2	3	4	5	6
निम्नांकित के लिए औसतः					
1990 के वर्ष	0.1	–	0.1	0.9	56.0
2000 के वर्ष	4.6	–	4.2	1.2	14.1
2010-12	0.0	0.0	6.1	0.0	24.1
2004	0.0	6.2	6.2	1.2	12.0
2005	0.1	10.5	10.6	0.1	10.0
2006	0.0	4.1	4.1	0.0	4.8
2007	0.0	8.1	8.1	2.0	8.9
2008	1.2	11.9	13.1	0.0	6.6
2009	0.0	1.6	1.6	0.0	7.6
2010	2.3	0.0	2.4	0.0	17.7
2011	0.0	0.0	0.0	0.0	22.3
2012	0.0	0.0	0.0	0.0	25.9

'–' : उपलब्ध नहीं

टिप्पणी: 1. आंकड़े 30 जून की स्थिति के अनुसार हैं।
2. पूंजी प्रवाहों को अवरुद्ध करने के लिए 2004 में एम एस एस खाते का सृजन किया गया था।
3. न्यूनतम जमाराशि से अधिक तथा कतिपय निर्धारित उच्चतम सीमा तक सरकार के नकदी अधिशेष सरकारी प्रतिभूतियों में पुनर्विनिवेशित किये जाते है और इस प्रकार उनमें आर बी आई के निवेश कम किये जाते हैं।

से प्रारंभ कर सके। इसलिए, पूंजी खाता और आरक्षित निधि के अलावा, रिज़र्व बैंक ने, यद्यपि इस प्रकार की आरक्षित निधियां रखे जाने के कोई सुस्पष्ट प्रावधान नहीं हैं, बाजार जोखिमों से उत्पन्न अप्रत्याशित आकस्मिकताओं का सामना करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम 1934 की धारा 47 के समर्थकारी प्रावधानों के अंतर्गत कुछ आरक्षित निधियां और पुनर्मूल्यन खाते सृजित किये हैं। प्रावधानों की प्रकृति में दो आरक्षित निधियां हैं, अर्थात् आकस्मिक आरक्षित निधि (सी आर) और आस्ति विकास आरक्षित निधि (ए डी आर)[2] । सी आर, प्रतिभूतियों पर मूल्यहास को पूरा करने, विनिमय गारंटियों और मौद्रिक/विनिमय दर नीति परिचालनों से उत्पन्न जोखिमों का सामना करने के प्रावधानों को मजबूत बनाने के प्रयोजनों से रखी जाती है। विदेशी मुद्रा अनिवासी खाता (एफ सी एन आर (ए)) योजना विदेशी मुद्रा से उत्पन्न विनिमय हानियों को पूरा करने के लिए 1990 के वर्षों के शुरू में अपरदित (इरोडिड)

2 रिज़र्व बैंक द्वारा रखे गये इन आरक्षित खातों की विस्तृत जानकारी के लिए, मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट, 2004-05,अध्याय VIII, बॉक्स VIII-6 देखें।

कर दी गई थी, सी आर 1993 से, सकल आय तथा राष्ट्रीय विकास निधियों [3] से निधियों के अंतरण के माध्यम से पुनः निर्मित की गई है।

4.33 रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के बदलते हुए विन्यास तथा विकसित होते हुए देशी और अंतर्राष्ट्रीय वातावरण की पृष्ठभूमि के समक्ष रिज़र्व बैंक द्वारा 1996-97 में स्थापित एक अनौपचारिक दल (अध्यक्षः वी. सुब्रमण्यम) ने, मौद्रिक/विनिमय दर नीति अनिवार्यताओं के कारण देशी और विदेशी प्रतिभूतियों की कीमतों में अस्थिरता के लिए कुल आस्तियों का 5 प्रतिशत कवर प्रस्तावित किया; विदेशी आस्तियों और स्वर्ण के पुनर्मूल्यन के लिए 5 प्रतिशत; और केंद्रीय बैंक विकास कार्यों से संबंधित सम्पूर्ण जोखिमों और अपेक्षाओं, आंतरिक धोखाधड़ी, अप्रत्याशित हानियों, इत्यादि के लिए 2 प्रतिशत कवर प्रस्तावित किया था। उक्त दल की सिफारिशों के अनुसरण में जून 2005 तक आस्तियों का 12 प्रतिशत सी आर प्राप्त करने का एक मध्यावधि लक्ष्य निर्धारित किया गया था, इसके साथ ही समग्र लक्ष्य के भीतर ए डी आर के लिए अस्तियों का एक प्रतिशत उप-लक्ष्य रखा गया था।

4.34 रिज़र्व बैंक ने सहायक संस्थाओं और सहयोगी संस्थाओं में निवेशों तथा आंतरिक पूंजी व्यय की पूर्ति करने के लिए 1998 में ए डी आर की स्थापना की। विनियामक के रूप में उसकी भूमिका से बैंकों/संस्थाओं के स्वामी के रूप में केंद्रीय बैंक के कार्य अलग करने की दृष्टि से, नरसिंहम समिति द्वारा यथा अनुशंसित, रिज़र्व बैंक ने क्रमशः उन सहायक संस्थाओं में अपनी धारिताओं को निर्निहित कर दिया जिन्हें वह विनियमित करता है। तदनुसार, रिज़र्व बैंक ने भारतीय स्टेट बैंक में अपना संपूर्ण पण (स्टेक) और नाबार्ड में अपना 99 प्रतिशत पण क्रमशः 2007 और 2010 में भारत सरकार को अंतरित कर दिया। इन परिवर्तनों के अनुरूप, अब सकल आय से ए डी आर को अंतरण मुख्य रूप से बैंक के पूंजीगत व्यय के लिए किया जाता है। 2009 में 12 प्रतिशत का लक्ष्य लगभग प्राप्त कर लिया गया था, किन्तु उसके बाद से लक्ष्य से हटने की स्थिति रही है।

4.35 रिज़र्व बैंक प्रचलित बाजार प्रवृत्तियों से तुलन पत्र को पृथक करने के लिए पुनर्मूल्यन खाते भी रखता है। अक्तूबर 1990 से, स्वर्ण पर मूल्यन लाभ/हानि विदेशी मुद्रा उतार चढ़ाव आरक्षित निधि (ई एफ आर) में बुक किया जाता है, जिसे मुद्रा और स्वर्ण पुनर्मूल्यन खाता (सी जी आर ए) के रूप में पुनर्नामित किया गया है, जिसमें विदेशी मुद्रा आस्तियों के मूल्यन पर लाभ/हानियां भी शामिल हैं। ई एफ आर का प्रयोग रिज़र्व बैंक द्वारा उपलब्ध कराई गई योजनाओं के अंतर्गत, जिनमें विनिमय गारंटिया शामिल हैं, देयताओं के संबंध में उपचय आधार पर, अन्य बातों के साथ-साथ विनिमय हानियों का सामना करने के लिए विदेशी मुद्रा समकरण खाता (ई ई ए) की पुनः पूर्ति के लिए भी किया जाता था। रिज़र्व बैंक द्वारा आगे और विनिमय गारंटियां न दिये जाने और इस प्रकार की गारंटियों वाली योजनाओं को बंद किये जाने के साथ, ई ई ए में शेष राशियां विगत वर्षों में कम हो गई हैं। वर्तमान में, ई ई ए में शेष राशियां वायदा प्रतिबद्धताओं से उत्पन्न विनिमय हानियों के लिए किये गये प्रावधान से संबद्ध होती है।

4.36 2009-10 में रिज़र्व बैंक ने, रिज़र्व बैंक के लाभों के आकार के लिए निहितार्थ वाली विदेशी दिनांकित प्रतिभूतियों के मूल्यन के लिए अपनी लेखा-नीति में एक परिवर्तन किया है। तदनुसार, खजाना, बिलों से भिन्न विदेशी दिनांकित प्रतिभूतियां प्रत्येक महीने के आखरी कारोबार दिवस पर प्रचलित बाजार कीमत पर मूल्यांकित की जा रही हैं। और निवल मूल्य वृद्धि/मूल्यहास, जैसा भी मामला हो, नव सृजित निवेश पुनर्मूल्यन खाता (आई आर ए) में अंतरित किया जा रहा है। इसके अलावा, बट्टा/प्रीमियम, यदि हो तो अब उसे परिपक्वता तक शेष अवधि के लिए दैनिक आधार पर परिशोधित किया जा रहा है। [4] जैसा कि पहले किया जाता था, अब नई लेखा नीति के अंतर्गत चूंकि मूल्यहास को चालू आय के सामने समायोजित नहीं किया जाता है, रिज़र्व बैंक के लाभ, और विस्तार द्वारा, सरकार को अंतरित अधिशेष लेखा परिवर्तन परिदृश्य से पूर्व की स्थिति से अधिक होंगें।

4.37 जहाँ कुल देयताओं में पूंजी और आरक्षित निधियों का अंश विगत वर्षों में घटता जा रहा है, एक बाजारोन्मुख और वैश्विक वातावरण में केंद्रीय बैंक के परिचालनों में बढ़ते हुए जोखिमों के अनुरूप प्रावधानों और पुनर्मूल्यनों का अंश बढ़ता जा रहा है (सारणी 4.5)।

3 1992 में, रिज़र्व बैंक की अधिशेष आय में से सांविधिक विकासात्मक निधियों में भारी मात्रा में राशियां अंतरित करने की प्रथा बंद कर दी गई थी, और उपयोग में न लाई गई निधियों को मज़बूत बनाने के लिए 1998 से आकस्मिक आरक्षित निधि (सी आर) में अंतरित कर दिया गया था।

4 अब तक ये प्रतिभूतियां प्रत्येक महीने के अंतिम कारोबार दिवस पर प्रचलित बही मूल्य अथवा बाजार कीमत से कम (एल ओ बी ओ एम) पर मूल्यांकित की जाती थी जिसमें मूल्यहास चालू आय में समायोजित होता था और मूल्यवृद्धि को छोड़ दिया जाता था। बट्टा/प्रीमियम, यदि हो तो उसे परिशोधित नहीं किया जाता था।

सारणी 4.5: रिज़र्व बैंक का पूंजी आधार

(कुल आस्तियों में प्रतिशत)

वर्ष	पूंजी खाता		प्रावधान		पुनर्मूल्यन खाते			कुल
	पूंजी	आरक्षित निधि	आकस्मिक आरक्षित निधि	आस्ति विकास आरक्षित निधि	मुद्रा और स्वर्ण पुनर्मूल्यन खाता	विदेशी मुद्रा समकरण खाता	निवेश पुनर्मूल्यन खाता	
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1935	2.1	2.1	–	–	–	–	–	4.2
1951	0.3	0.3	–	–	–	–	–	0.6
1971	0.1	2.6	–	–	–	–	–	2.7
1991	..	5.3	4.5	–	2.9	4.4	–	17.1
1995	..	3.0	1.9	0	3.4	1.2	–	9.5
2002	..	1.4	10.7	1.0	11.2	..	–	24.3
2008	..	0.4	8.7	0.9	11.2	..	–	21.2
2009	..	0.5	10.9	1.0	14.1	..	–	26.5
2010	..	0.4	10.2	0.9	7.7	..	0.6	19.8
2011	..	0.4	9.4	0.9	10.1	..	0.2	21.0
2012	..	0.3	8.8	0.8	21.4	0.1	0.6	32.0

'–': उपलब्ध नहीं .. : नगण्य

स्रोत: रिज़र्व बैंक वार्षिक रिपोर्ट, विभिन्न मुद्दे

4.38 यद्यपि, बढ़ते हुए जोखिमों के खिलाफ रक्षोपाय के लिए प्रावधानों की स्थिर संवृद्धि की मौजूदगी से हाल के संकट से रिज़र्व बैंक के पूंजी आधार में कमी होना प्रारंभ नहीं हुआ था, विश्व के चारों ओर अनेक केंद्रीय बैंकों ने अपने पूंजी मोर्चे पर समस्याओं का सामना किया (बॉक्स IV.2)

बॉक्स IV.2
केंद्रीय बैंक पूंजी: मुद्दे और परिप्रेक्ष्य

यद्यपि केंद्रीय बैंकों को अपनी पूंजी हैसियत के साथ, भारी मात्रा में पूंजी की आवश्यकता नहीं होती है, वे सामान्यतया अपने तुलन पत्र पर कम से कम सकारात्मक पूंजी रखने को प्राथमिकता देते हैं। वित्तीय सुदृढ़ता (रखी गई पूंजी के अनुसार) के मुद्दे पर केंद्रीय बैंकों के अलग-अलग विचार हैं। कुछ यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि चूंकि केंद्रीय बैंक सिक्का-ढलाई के माध्यम से उनका पुनर्पूंजीकरण करने के लिए मुद्रा छापने की योग्यता रखते हैं, केंद्रीय बैंकों के लिए पूंजी आधार की पर्याप्तता अनावश्यक है। अन्ततः की गई संस्थागत व्यवस्था (अर्थात् राजकोष के साथ पुर्नपूंजीकरण करार) और सुदृढ़ीकृत राजकोषीय स्थिति (अर्थात् केंद्रीय बैंकों को पुनर्पूंजीकृत करने की राजकोषीय योग्यता) का क्या महत्व है। कई केंद्रीय बैंकों ने वर्षों तक नकारात्मक पूंजी के साथ परिचालन किया है। चिली का केंद्रीय बैंक अनेक वर्षों तक नकारात्मक पूंजी धारण करने के बावजूद मुद्रास्फीति को नियंत्रित रखने में अत्यधिक विश्वसनीय और सफल माना गया था। इसके लिए सरकार की राजकोषीय स्थिति का स्वस्थ सुदृढ़ीकृत होना आवश्यक है। किन्तु, सामान्यतया इस तर्क का दो मोर्चों पर विवाद रहा है। प्रथम, यद्यपि केंद्रीय बैंक की हानियों को भविष्य में सिक्का-ढलाई द्वारा प्रतिसंतुलित किया जा सकता है, ऐसा करना देशी कीमत स्थिरता के लक्ष्य के विरूद्ध होगा। द्वितीय, और अधिक महत्वपूर्ण यह हे कि राजनैतिक आर्थिक कारण केंद्रीय बैंकों के लिए इस आवश्यकता को प्रबलित करते हैं कि वे अपने तुलन पत्र के स्वास्थ्य के बारे में सावधान रहें। राजकोष से अंतरणों की आवश्यकता को न्यूनतम करने के लिए, सरकारें बृहत् निगरानी का प्रयोग कर सकती हैं, जिससे केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता को क्षति पहुँचती है। अनुभवजन्य साक्ष्य भी इस तथ्य का समर्थन करता है कि मौद्रिक नीति के संचालन के लिए केंद्रीय बैंक की वित्तीय क्षमता का महत्व है। इष्टतम नीति से भारी ब्याज दर विचलनों की केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र की कमजोरियों द्वारा कुछ सीमा तक व्याख्या की जा सकती है (एडलर, 2012)। निधीयन समर्थन के लिए सरकार पर निर्भरता केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता और उसकी स्वतंत्रता के लक्ष्य को क्षति पहुँचा सकती है।

केंद्रीय बैंकों द्वारा उठाई गई हानियों के अनेक मामलों तथा इन हानियों के उपचार के लिए विनिर्दिष्ट कानूनी प्रावधानों अथवा इन हानियों की रक्षा के लिए नियमों के अभाव के आधार पर केंद्रीय बैंक की पूंजी को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। स्वीडन (2011) ने ब्राज़ील, चिली, इंडोनेशिया, फिलीपीन्स, दक्षिण कोरिया, थाइलैंड और युरूग्वे को शामिल करते हुए 17 देशों में केंद्रीय बैंक की हानियों के लिए कारणों की पहचान की है। वह इन देशों में केंद्रीय बैंक की प्रतिभूतियों का इस्तेमाल करते हुए खुला बाजार परिचालनों को केंद्रीय बैंक हानियों का प्रमुख कारण मानता है, यद्यपि विनिमय दर उतार-चढ़ाव, विदेशी मुद्रा पुनर्मूल्यन तथा देशी देयताओं और विदेशी आस्तियों के बीच ब्याज में अंतर वाली राशियां भी केंद्रीय बैंक हानियों के लिए महत्वपूर्ण कारणों के रूप में उभरी हैं।

ताजा वैश्विक आर्थिक संकट से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों द्वारा निभाई जाने वाली 'अंतिम उधारदाता' की भूमिका की पृष्ठभूमि में केंद्रीय बैंक की पूंजी तथा आरक्षित निधियों का मुद्दा उभर कर सामने आया है। (होराकोवा, 2011) 'अंतिम उधारदाता' के रूप में केंद्रीय बैंकों की भूमिका के साथ संबद्ध जोखिम तत्व, उनके गैर-पंरपरागत नीति-उपायों और वित्तीय स्थिरता उत्तरदायित्व से उत्पन्न हानियों, जिनका केंद्रीय बैंकों को सामना करना पड़ सकता है, को ध्यान में रखते हुए, केंद्रीय बैंकों के लिए पूंजी बफर्स के मुद्दे पर पुनर्विचार किया जा रहा है।

(जारी...)

(...समाप्त)

उदाहरण के लिए, संकट के बाद स्वीडिश सरकार ने अपना नीति रुख बदल दिया। उसके संकट-पूर्व रुख से भिन्न कि एक केंद्रीय बैंक को बहुत अधिक पूंजी की आवश्यकता नहीं होती है, संकट के बाद रिक्सबैंक का पूंजी स्तर संकट-पूर्व के स्तरों की तुलना में बढ़ गया था। इसका कारण यह था कि केंद्रीय बैंक को अपना अंतिम उधारदाता-कार्य निष्पादित करने के लिए अधिक मात्रा में डॉलर मूल्य-वर्ग के लिखतों को धारण करना पड़ता है और इन धारिताओं का निधीयन करना होता है।

विदेशी मुद्रा दरों, ब्याज दरों और स्वर्ण कीमतों में अस्थिरता के कारण वर्धमान जोखिमों के अतिरिक्त ऋण जोखिम को स्वीकार करते हुए यूरोपीय केंद्रीय बैंक (ई सी बी) ने दिसंबर 2010 से अपनी अभिदत्त पूंजी को लगभग दुगुना करते हुए 5.76 बिलियन से बढ़ाकर 10.76 बिलियन कर दिया। बाजार सहभागियों ने इसे उसके यूरो क्षेत्र राष्ट्रिक बांड खरीद कार्यक्रम से संभाव्य हानियों की रक्षा के लिए एक बफर का सृजन करने के प्रयास के रूप में देखा तथा इसे ई सी बी की सुदृढ विश्वसनीयता के एक संकेत के रूप में ग्रहण किया गया। ई सी बी के पास एक एकल यूरोपीय राजकोषीय प्राधिकारी के रूप में कार्य करने का विकल्प नहीं है और ई सी बी की पूंजी समस्त यूरोपीय संघ के सदस्य राज्यों के राष्ट्रीय केंद्रीय बैंकों से आती है।

यद्यपि केंद्रीय बैंक की पूंजी के उपयुक्त स्तर के संबंध में सर्व सम्मति नहीं है, तथापि जब देशी मुद्रा मज़बूत होती है तो विदेशी मुद्रा धारिताओं के पुनर्मूल्यन के कारण उत्पन्न पूंजीगत हानियों तथा उन हानियों के बीच जो राजकोषीय सदृश क्रियाकलापों (क्यू एफ ए एस) के कारण हो सकती हैं, एक गुणात्मक विभेदीकरण किये जाने की आवश्यकता है। एक (केंद्रीय बैंक द्वारा कार्यान्वित) सुस्पष्ट कर, सब्सिडी, अथवा प्रत्यक्ष व्यय के रूप में बजट उपायों द्वारा सिद्धांततः द्विगुणीकृत किये जा सकने योग्य क्रियाकलापों के रूप में राजकोषीय क्रियाकलापों को परिभाषित किया गया है। चेक नैशनल बैंक (सी एन बी) का अनुभव प्रथम वर्ग में आता हे। सी एन बी की पूंजी में कमी, विशेष रूप से मध्य 2000 के वर्षों के आस-पास, मुख्य रूप से उसकी स्वयं की मुद्रा देयताओं के बाजार मूल्य में मज़बूती के कारण हुई थी। हालांकि केंद्रीय बैंक की सिक्का ढलाई से आय पर्याप्त रही, जिससे यह विश्वास मिला कि कुछ समय बाद उसकी पूंजी में पुनः वृद्धि हो जायगी। बी आई एस भी सी एन बी की स्थिति को समर्थन प्रदान कर रहा है। ई सी बी अपने यूरो क्षेत्र बांडों की खरीद कार्यक्रम के साथ द्वितीय वर्ग से संबंधित है। बाद वाली स्थिति केंद्रीय बैंक की अंतिम उधारदाता के रूप में भूमिका की दृष्टि से प्रासंगिक है। राजकोषीय सदृश क्रियाकलापों वाले केंद्रीय बैंकों के लिए बहुत अधिक पूंजी आवश्यकताओं की अपेक्षा होती है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इस प्रकार के क्रियाकलापों से उत्पन्न किसी प्रकार की संभाव्य हानि से उनके मौद्रिक नीति उद्देश्यों में हस्तक्षेप न होने पाए। इस प्रकार के राजकोषीय सदृश संकट उपाय में पूंजी बफर्स अथवा हानि में हिस्सेदारी व्यवस्थाओं पर पुनर्विचार करने और सरकार के साथ चर्चा किये जाने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया है। लाभ रिकार्ड होने पर यदि विनिधान किये जाते हैं किन्तु जब केंद्रीय बैंक हानियां दर्ज करता है तो सरकार की ओर से कोई अंतरण नहीं होता है, तब इससे केंद्रीय बैंक की पूंजी के घटने का जोखिम होना आवश्यक हो सकता है।

संदर्भ

एडलर गुस्ताव, पेद्रो वास्त्रो और कामिलो ई टोवर (2012), ''डज़सेंट्रल बैंक कैपिटल मैटर फॉर मोनेट्री पॉलिसी ?'', आई एम एफ वर्किंग पेपर, फरवरी।

होराकोवा, मार्टिना (2011), ''सेंट्रल बैंककैपिटल लेवल्सः डू दे मैटर एंड वॉट केन बी डन ?'' सेंट्रल बैंकिंग जर्नल, जून 10 ।

यूरोपीयन सेंट्रल बैंक (2010), कन्वर्जेंस रिपोर्ट 2011, http://www.ecb.int/ उपलब्ध।

स्वीडन, ओसामा डी. (2011), डसेंट्रल बैंकलोसेज़ः कॉजेज़ एंड कोन्सीक्वेंसेज,'' एशियन-पैसिफिक इक्नॉमिक लिटरेचर, वॉल्यूम 25, मई।

IV. राजकोषीय -मौद्रिक अंतरापृष्ठ और रिज़र्व बैंक का तुलन पत्रः कुछ मुद्दे

4.39 अध्याय 3 में स्वतंत्रता के बाद से राजकोषीय मौद्रिक पारस्परिक क्रिया तथा किसी केंद्रीय बैंक के प्रभावी परिचालनों पर उसके प्रभाव का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसे ध्यान में रखा जाए कि राजकोषीय-मौद्रिक अंतरापृष्ठ का केंद्रीय बैंक तुलन पत्र पर सीधा संबंध होता है। सुधार-पूर्व अवधि के दौरान, देयता पक्ष पर उच्चतर सी आर आर के साथ आस्ति पक्ष में धाटे की वित्त व्यवस्था के मौद्रिक प्रभाव को निष्प्रभावी बनाने की रणनीति से मध्य 1970 के वर्षों से जी डी पी में अनुपात के रूप में रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र विस्तारित होना शुरू हो गया। 1980 के वर्षों में आरक्षित मुद्रा के 90 प्रतिशत से अधिक तक के सरकार को निवल आर बी आई ऋण के साथ रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को प्रदत्त निभाव में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। रिज़र्व बैंक ने राजकोषीय घाटे तथा अतिरिक्त चलनिधि निर्माण और आरक्षित मुद्रा के रूप में उसके प्रभाव के बारे में अक्सर चिन्ता व्यक्त की। यह चिन्ता चक्रवर्ती समिति की रिपोर्ट (1985) में प्रतिबिंबित हुई थी जिसने सरकार को बजट घाटे की परिभाषा को आशोधित करने के लिए प्रेरित किया था ताकि बजट घाटे का मुद्रीकरण बेहतर रूप में प्रतिबिंबित हो। सुधार के पश्चात्, तदर्थ खजाना बिलों से डब्ल्यू एम ए की ओर बढ़ना और अन्ततः 2003 में एक राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) ढांचे ने मौद्रिक नीति को स्वतंत्र कर दिया है और इसलिए, केंद्रीय बैंक तुलन पत्र राजकोषीय घाटे के जकड़ जामे से मुक्त हो गया है। इसके बावजूद, कुछ ऐसे मुद्दे हैं जो सुधार के बाद की अवधि में राजकोषीय-

मौद्रिक अंतरापृष्ठ से संबद्ध हैं,विशेष रूप से वे सरकार के बैंकर और कर्ज प्रबंधक होने के नाते रिज़र्व बैंक की भूमिका से संबद्ध हैं जिनका प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रूप से रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र से संबंध हैं। उनमें से कुछ पहलुओं का नीचे विश्लेषण किया गया है।

मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण ढांचे का कार्य-निष्पादन

4.40 चक्रवर्ती समिति की सिफारिशों के अनुसरण में, भारतीय मौद्रिक नीति ने प्रतिसूचना के साथ मौद्रिक लक्ष्य निर्धारनण ढांचा अपनाया। इस से और केंद्र सरकार के लिए वित्तपोषण व्यवस्था से संबंधित अन्य नीति निर्णयों से रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर राजकोषीय दबावों का प्रभाव कम हो गया। समग्र मौद्रिक आधार में, केंद्र सरकार को दिये गये निवल आर बी आई ऋण का अंश जो 1980 के वर्षों में लगभग 95 प्रतिशत था, 1990 के वर्षों में कम होकर 65 प्रतिशत हो गया एवं आगे और गिर कर 2000 के वर्षों में केवल 12 प्रतिशत रह गया। यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि यद्यपि अधिकांश अवसरों पर, मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण ढांचा अपने आप से लक्ष्यों को पूरा नहीं कर सका था किन्तु वह राजकोषीय सुदृढ़ीकरण प्रारंभ करने के प्रति जागरूकता पैदा करने में सफल रहा। यह पहले वाली उस स्थिति से बिल्कुल विपरीत था जब स्वतः मुद्रीकरण व्यवस्था के अंतर्गत लक्ष्य से विचलन महत्वपूर्ण रहा था। 2000 के वर्षों में, जब मौद्रिक विस्तार में राजकोषीय विस्तार की प्रमुख भूमिका क्रमशः कम हो गई थी, विचलनों को महत्व देते हुए पूंजी प्रवाहों ने केंद्रीय स्थान ग्रहण कर लिया था, यद्यपि वे मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण व्यवस्था में हुए विचलनों की तुलना में कम थे (बॉक्स IV. 3) ।

बॉक्स IV. 3
मौद्रिक लक्ष्यों (1998 से पूर्व) को पूरा करना और बहुल निर्देशक दृष्टिकोण अवधि के दौरान निर्देशात्मक पूर्वानुमान (1998 के पश्चात्)

राजकोषीय घाटे और आरक्षित मुद्रा निर्माण के बीच सहबद्धता और तदनुसार आर बी आई का तुलन पत्र 1980 के वर्षों और 1990 के वर्षों में अधिक विशिष्ट था। 1995 में औपचारिक रूप से मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण अपनाने के बावजूद पिछले वर्षों में व्यापक मुद्रा (एम3) की औसत संवृद्धि से सहबद्ध एक उच्चतम सीमा निश्चित करने के लक्ष्य के सिवाय 1985-90 की अवधि के दौरान कोई भी विनिर्दिष्ट लक्ष्य निर्धारित नहीं किये गये थे। इसका कारण यह था कि प्राथमिक मुद्रा निर्माण की वजह से अतिरिक्त चलनिधि की भारी मात्रा में अधिकता जारी थी। रिज़र्व बैंक का, उसके द्वारा केंद्र सरकार को दिये गये ऋण पर कोई नियंत्रण नहीं था, जो वृद्धिशील आरक्षित मुद्रा का एक प्रमुख भाग समझा गया । रिज़र्व बैंक अपने उपकरणों, जैसे आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सी आर आर), सांविधिक चलनिधि अनुपात (एस एल आर) और चयनात्मक ऋण नियंत्रण के माध्यम से अधिक से अधिक द्वितीयक मुद्रा विस्तार पर सीमाएं निर्धारित कर सका। इन उपायों के बावजूद, मुद्रा आपूर्ति संवृद्धि उच्च बनी रही जिसने मुद्रास्फीति में योगदान दिया।

1991-92 से 1994-95 के दौरान एम3 में संवृद्धि लक्ष्य से औसतन 5 प्रतिशत से अधिक अंक से दूर रह गई थी। राजकोषीय विस्तार के साथ, ऐसा होने के पीछे पूर्वानुमान से अधिक विदेशी मुद्रा संचयन और वर्षांत और पक्षांत पर उसमें वृद्धि की वजह से सांख्यिकीय कारकों का योगदान था। सफलता के वर्षों के तुरंत पूर्व मुद्रा आपूर्ति में तीव्र वृद्धि के वर्ष थे। 1980 के वर्षों में (1985-86, 1987-88 तथा 1990-91) सफल मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण के प्रथम कुछ वर्ष केन्द्र सरकार को निवल आर बी आई ऋणों और बैंकिंग क्षेत्र की निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों, दोनों में न्यून विस्तार दर के साथ थे। केंद्र सरकार को निवल आर बी आई ऋण में उच्चतर विस्तार के बावजूद, सफलता का अगला वर्ष (1995-96) बैंकिंग क्षेत्र की निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों में अत्यधिक कम विस्तार की वजह से संभव बन सका। 1997-99 के दौरान वृद्धि, सरकार और वाणिज्य क्षेत्रों, दोनों को देशी ऋण में काफी अधिक विस्तार तथा बैंकिंग प्रणाली की निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों में वृद्धि की वजह से थी।

1980 के वर्षों तथा 1990 के शुरू के वर्षों के दौरान राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण से उत्पन्न मौद्रिक विस्तार पर दबावों ने क्रमशः 2000 के वर्षों में आरक्षित मुद्रा विस्तार का निर्धारण करने में निरंतर बढ़ते हुए पूंजी प्रवाहों की महत्वपूर्ण भूमिका के लिए मार्ग प्रशस्त किया। पूंजी आगमन पर किसी प्रकार के नियंत्रण के अभाव में, मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण की सफलता राजकोषीय समायोजन पर निर्भर हो गई है। जहाँ 2000 के वर्षों के प्रारंभिक भाग (2001-02 और 2002-03) में वास्तविक जी डी पी संवृद्धि के अनुरूप व्यापक मुद्रा में गिरावट आ गई, विशेष रूप से 2007-08 के आखीर में रिज़र्व बैंक की विदेशी मुद्रा आस्तियों में काफी अधिक वृद्धि तथा ऋण एवं जमा संवृद्धि में एक चक्रीय गतिवर्धन के बल पर 2005-07 से मुद्रा आपूर्ति में निरंतर रूप से निश्चयार्थक पूर्वानुमानों से अधिक वृद्धि हुई। 2006-07 से, जब रिज़र्व बैंक ने सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गमों में अभिदान करना बंद कर दिया तो आरक्षित मुद्रा विस्तार पर राजकोषीय प्रभाव सीमित हो गया है। 2008-09 के संकट वर्ष में राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों, जिन्होंने एम3 लक्ष्य में आवधिक ऊर्ध्वमुखी संशोधन की ओर प्रेरित किया, के कारण राजकोषीय घाटे में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई थी। हालांकि वर्ष के दौरान एम3 संवृद्धि बढ़ गई थी, वर्ष के अंत में वह जनवरी 2009 के निश्चयार्थक पूर्वानुमान के करीब थी।

मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण अवधि तथा 1998-99 अवधि के बाद की अवधि के लिए औसतन वास्तविक एम3 संवृद्धि द्वारा सामान्यीकृत करते हुए और रूट मीन स्क्वायर एरर का इस्तेमाल करते हुए यथा परिमाणित एम3 संवृद्धि पूर्वानुमानों के सहीपन की मात्रा को देखते हुए (सारणी देखें), यह देखा गया है कि लक्ष्य और वास्तविक एम3 संवृद्धि के बीच अंतराल 20

(जारी...)

(...समाप्त)

प्रतिशत से अधिक उच्च बना रहा। 2005-06 में प्रारंभ तिमाही निर्धारणों के बाद विशेष रूप से, एम3 निश्चयार्थक पूर्वानुमान और पश्च 1999 अवधि में वास्तविक के बीच अंतराल में कमी हुई है। इस प्रकार जहाँ सरकारी घाटे का बड़े पैमाने पर मुद्रीकरण और कुछ सीमा तक, पूंजी प्रवाह मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण व्यवस्था में देखे गये बृहत विचलनों को स्पष्ट करते हैं, ये वे विचलन हैं जिन्होंने राजकोषीय सुदृढ़ीकरण के महत्व एवं उसकी तुरंत आवश्यकता को रेखांकित किया है। 2000 के वर्षों में जब मौद्रिक विस्तार में राजकोषीय विस्तार की प्रमुख भूमिका क्रमशः कम हो गई तो विचलनों को महत्वपूर्ण रखते हुए पूंजी प्रवाहों ने केंद्रीय स्थान ग्रहण कर लिया यद्यपि वे मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण व्यवस्था में हुए विचलनों की तुलना में कम थे।

सारणी: एम3 में संवृद्धि -वास्तविक बनाम पूर्वानुमान

अवधि		औसत वास्तविक एम3 संवृद्धि (प्रतिशत)	एम3 संवृद्धि पूर्वानुमान की आर एम एस ई (प्रतिशत)	एम3 संवृद्धि आर एम एस ई/ औसत (प्रतिशत)
1985-86 से 1998-99		17.5	3.7	21.1
1999-2000 से 2011-12	अप्रैल पूर्वानुमान का प्रयोग करते हुए	16.5	2.7	16.4
	जनवरी पूर्वानुमान का प्रयोग करते हुए *	16.5	2.3	13.9

* 2005-06 से रिज़र्व बैंक ने तिमाही पूर्वानुमान बनाना शुरू किया।

टिप्पणी: 1. जहाँ पूर्वानुमान एक सीमा है, सीमा का औसत इस्तेमाल किया गया है।

2. वास्तविक और पूर्वानुमानित के बीच विचलन भी चालू एम3 पूर्वानुमान को नया आधार देने वाले परिकल्पित संबंध में वित्तीय नव-परिवर्तन और आस्थिरता के कारण हो सकता है।

संदर्भ

मोहंती, दीपक और ए. के. मित्रा (1999), ''भारतमें मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण के साथ अनुभव,'' इकनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, जनवरी 16-23।

मोहंती, दीपक (2010), ''भारतमें मौद्रिक नीति ढांचा: बहुविधि संकेतक दृष्टिकोण के साथ अनुभव,'' आर बी आई बुलेटिन, फरवरी।

केंद्र सरकार के निवल बाजार उधार

4.41 राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) विधान, 2003 के अधिनियमन के अनुसरण में रिज़र्व बैंक ने सरकार के निर्गमों में अंतिम आश्रय के हामीदार के रूप में कार्य करना बंद कर दिया। अप्रैल 2006 से, एफ आर बी एम अधिनियम द्वारा यथानिर्धारित प्राथमिक बाजार से रिज़र्व बैंक का पीछे हटना परिचालन में आ गया था। चूंकि रिज़र्व बैंक ने द्वितीयक बाजार में हस्तक्षेप करना जारी रखा था, ओ एम ओ मौद्रिक और सार्वजनिक कर्ज प्रबंध का मुख्य उपकरण बन गया था, जिसके द्वारा बाजार सुधारों के अनुरूप प्रक्रियाओं और प्रौद्योगिकीय बुनियादी संरचना की समीक्षा के माध्यम से पुनः अभिमुखीकरण आवश्यक हो गया।

4.42 सरकार के बैंकर की भूमिका के निर्वाह में रिज़र्व बैंक अर्थव्यवस्था की चलनिधि आवश्यकताओं के अनुरूप सरकार के बाजार उधार कार्यक्रम का प्रबंध करता है। इस व्यवस्था के अंतर्गत, सरकार को दिये जाने वाले समग्र बैंक ऋण का निर्धारण समग्र मौद्रिक और समष्टि आर्थिक परिदृश्य के अनुरूप एक प्रायरी के आधार पर होता है। वास्तव में, एक विकासमान अर्थव्यवस्था में वाणिज्य क्षेत्र के लिए ऋण उपलब्धता के निर्धारण में उधार आवश्यकताओं के प्रति सरकार का कितना समर्थन हो, यह महत्वपूर्ण है। बैंकों की ओर से एस एल आर प्रतिबद्धता के होते हुए, यह, सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश के माध्यम से सरकार को आर बी आई के निवल ऋण भी निर्धारित करता है, जिससे क्रमशः आरक्षित मुद्रा और रिज़र्व बैंक तुलन पत्र पर प्रभाव पड़ता है।

4.43 पश्च-एफ आर बी एम अवधि के दौरान सरकार के निवल बाजार उधार की ओर देखते हुए, यह पाया गया है कि संकट से पूर्व केंद्र सरकार के निवल बाजार उधार सामान्यतया उसी के अनुरूप बने रहे जैसा कि रिज़र्व बैंक ने मौद्रिक पूर्वानुमानों की पृष्ठभूमि में दर्शाया था तथा जैसा कि बजट में पूर्वानुमान लगाया गया था (सारणी 4.6)। 2008-09 के दौरान राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों, जिन्हें वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप शुरू करना पड़ा था, की वजह से वास्तविक बाजार उधार पूर्वानुमानित स्तरों (रिज़र्व बैंक के निश्चयार्थक पूर्वानुमान तथा बजट में अनुमानित राशियों, दोनों) से काफी अधिक बढ़ गये थे बजट में अनुमानित और वास्तविक निवल बाजार उधार, राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों के जारी रहने के कारण 2009-10 में रिज़र्व बैंक के पूर्वानुमान की तुलना में काफी अधिक थे। यद्यपि 2010-11 के लिए बजट में निर्धारित निवल बाजार उधार रिज़र्व बैंक के पूर्वानुमान क करीब थे, वास्तविक उधार

सारणी 4.6: केंद्र सरकार के निवल बाजार उधार* - पूर्वानुमानित बनाम वास्तविक

(बिलियन रुपये)

वर्ष	निवल बाजार उधार (रिज़र्व बैंक द्वारा दर्शाये गये)	निवल बाजार उधार (बजट में दर्शाये गये)	वास्तविक निवल बाजार उधार
1	2	3	4
2006-07	1,100	1,138 460 (एमएसएस उधार)	1,104
2007-08	1,230	1,096 100 (एमएसएस उधार)	1,318
2008-09	1,130 1,500 (एमएसएस उधार)	1,006 298 (एमएसएस उधार)	2,336#
2009-10	1,404 (यदि एम एस एस विस्तारित किये जाते हैं) 2,004 (यदि कोई एमएसएस विस्तारित नहीं है) (अंतर = 600 = एम एस एस)	3,980#	3,984#
2010-11	3,004	3,450	3,254
2011-12	3,580	3,430	4,364

*: दिनांकित प्रतिभूतियों के माध्यम से निवल बाजार उधार
#: एम एस एस अवपृथक्करण सहित
स्रोत: बजट दस्तावेज और आर बी आई

अत्यधिक कम थे क्योंकि 3जी स्पेक्ट्रम नीलामियों से एकल आदेश उतपादन के परिणामस्वरूप भारी मात्रा में नकदी शेष राशियां संचित हो गई थी। 2011-12 के दौरान, बजट में प्रस्तुत निवल बाजार उधार मोटे तौर पर रिज़र्व बैंक द्वारा पूर्वानुमानित राशि के अनुरूप ही था किन्तु आर्थिक मंदी और सब्सिडियों की अत्यधिकता के कारण भारी राजकोषीय गिरावट की वजह से वास्तविक उधार, अनुमानों से काफी अधिक थे। यह इस बात को दर्शाता है कि यद्यपि रिज़र्व बैंक और सरकार के बीच प्रभावी समन्वय में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है, किन्तु जैसा कि वास्तविक निवल बाजार उधारों से परिलक्षित हुआ है, वैश्विक और देशी अनिश्चितताओं ने परिणाम को प्रभावित किया है।

अधिशेष का रिज़र्व बैंक से केंद्र सरकार को अंतरण: रिज़र्व बैंक तुलन पत्र का सुदृढ़ीकरण

4.44 रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को अधिशेष का अंतरण रिज़र्व बैंक द्वारा उत्पादित अधिशेष की मात्रा तथा उसके तुलन पत्र पर रखे जाने वाले उसके अनुपात द्वारा तय किया जाता है। सुधार-पूर्व अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक के अधिशेष का सरकार को अंतरण बैंकिंग के सामाजिक नियंत्रण को प्रतिबिंबित करते हुए निरंतर घट रहा था। सुधार-पश्चात् की अवधि के दौरान, रिज़र्व बैंक के अधिशेषों में, मौद्रिक नीति व्यवस्था में परिवर्तन की अनुक्रिया में घट-बढ़ हुई। 1992 और उसके बाद की अवधि से राष्ट्रीय निधियों के विनिधान में अत्यधिक कमी (प्रत्येक निधि के लिए 10 मिलियन रुपये का टोकन वार्षिक योगदान), बाजार संबद्ध ब्याज दरों पर सरकारी प्रतिभूतियों का अधिग्रहण, ब्याज दरें पहले वाले कम प्रतिफल देने वाले तदर्थ खजाना बिलों की दरों से बहुत ऊँची थी, और अर्ध-राजकोषीय लागत (विनिमय दर गारंटियों से उत्पन्न) का सरकार को अंतरण जैसे कारकों ने इस अवधि के दौरान लाभ अंतरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। हालांकि, 1990 के वर्षों के द्वितीयार्ध से रिज़र्व बैंक का अधिशेष अंतरण सरकारी प्रतिभूतियों पर ब्याज दरों में गिरावट और 2004-05 में ब्याज दर चक्र में कायापलट के परिणामस्वरूप निवेश संविभाग में मूल्यहास द्वारा नकारात्मक रूप से प्रभावित हुआ था। इसके अलावा, रिज़र्व बैंक की कुल आस्तियों में विदेशी आस्तियों के अंश में तीव्र वृद्धि और ब्याज आय पर परिणामी प्रभाव द्वारा भी अधिशेष अंतरण प्रभावित हुआ था। ब्याज आय एक ओर जहाँ इन आस्तियों पर कम अर्जन से प्रभावित हुई थी वहीं दूसरी ओर तुलन पत्र के सुदृढ़ीकरण की दृष्टि से आकस्मिक और आस्ति विकास आरक्षित निधियों में उच्चतर विनिधान से प्रभावित हुई थी। उपर्युक्त कारकों की वजह से अधिशेष में गिरावट (क) 4.6 प्रतिशत विशेष प्रतिभूतियों (पहले तदर्थ और निरंतर उपलब्ध खजाना बिलों से निर्मित) के उच्चतर ब्याज दरों वाली विपणन योग्य प्रतिभूतियों में परिवर्तन से उच्चतर ब्याज अर्जन (ख) 2003 तक सी आर आर दरों में निरंतर कटौती के कारण सी आर आर शेष राशियों पर ब्याज भुगतानों में कमी, 2004 से बैंक दर से पात्र सी आर आर शेष राशियों पर ब्याज भुगतानों को अलग करने और मार्च 2007 से अंतिम रूप से बंद किये जाने से पूर्व सी आर आर शेष राशियों पर ब्याज में क्रमशः कटौती द्वारा आंशिक रूप से प्रतिसंतुलित हो गई थी।

4.45 रिज़र्व बैंक से अधिशेष अंतरण केंद्र सरकार के लिए करेतर राजस्व के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में उभर कर सामने आया है, जिसका 2009-10 में केंद्र सरकार के कुल करेतर राजस्व में 21.5 प्रतिशत योगदान रहा। रिज़र्व बैंक के अधिशेष के अंश का सरकार को अंतरण से कुल करेतर राजस्व 1980 के दशक के 3.8 प्रतिशत से बढ़कर 1990 के दशक में 8.5 प्रतिशत हो गये और उसके बाद

2000 के वर्षों में 16.2 प्रतिशत हो गये। 2011-12 में केंद्र के करेतर राजस्व में उनका अंश 12.1 प्रतिशत था। केंद्रीय बैंक के अधिशेषों को रखने अथवा अंतरित किये जाने का प्रश्न अभी तक हल नहीं हुआ है। जैसी कि पूर्व में चर्चा की गई है, रिज़र्व बैंक ने सी आर और ए डी आर के लिए कुल आस्तियों का 12 प्रतिशत लक्ष्य निर्धारित किया है, और वह विशेष रूप से 1990 के दशक के प्रारंभ में ए डी आर के निः शेषण के बाद, सी आर सुदृढ़ीकरण की सक्रिय नीति का अनुसरण कर रहा है। सकल आय के अनुपात के रूप में सी आर को अंतरण 1993-94 से 19 वर्षों में से 8 में सरकार को अधिशेष अंतरण के मुकाबले उच्चतर थे (चार्ट IV.2) । एफ आर बी एम अधिनियम के अधिनियमन और कार्यान्वयन के बाद से, सरकार को अंतरणों की तुलना में आरक्षित निधियों में अंतरण सामान्यतया उच्चतर रहे हैं, यहाँ तक कि कुछ ऐसे वर्षों के दौरान भी जब राजस्व घाटा बढ़ गया था । किन्तु, तुलन पत्र को प्रदत्त विस्तार और विदेशी आस्तियों के संयोजनात्मक परिवर्तन से बढ़ते हुए जोखिमों के कारण तुलन पत्र को मजबूत बनाने की आवश्यकता पर बहुत अधिक बल नहीं दिया जा सकता है। विदेशी आस्तियों और स्वर्ण के अनुपात के रूप में मुद्रा और स्वर्ण पुनर्मूल्यन खाते में काफी अधिक अस्थिरता देखी गई, विशेष रूप से हाल के वर्षों में। स्वर्ण और विदेशी मुद्रा आस्तियों में तीव्र घट-बढ़ का केंद्रीय बैंक की लाभप्रदता के लिए निहितार्थ है और

चार्ट IV.2: आरक्षित निधियों और सरकार को राशियों का अंतरण

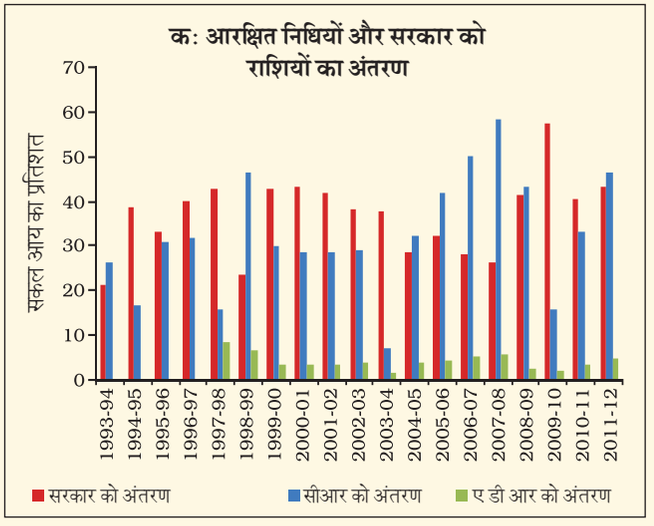

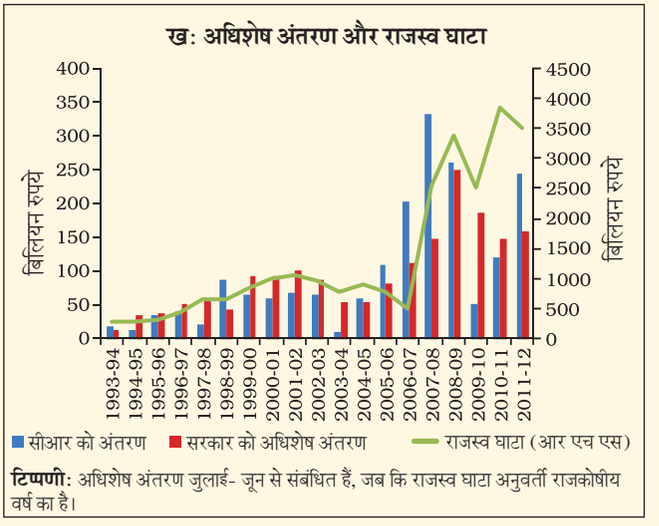

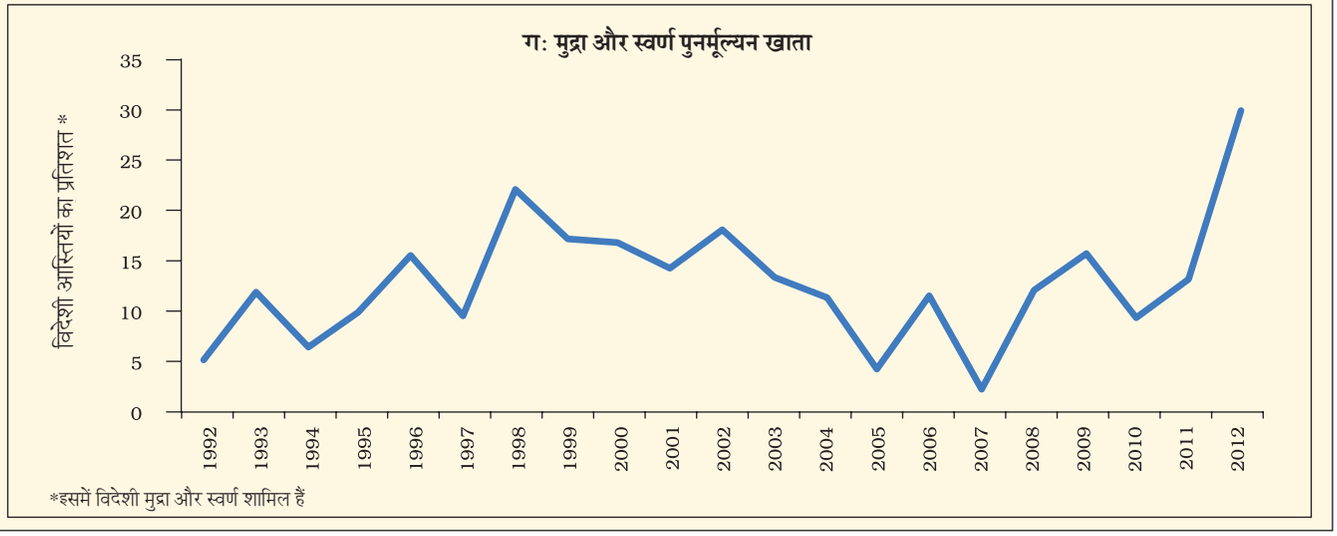

इसलिए सरकार को अधिशेष अंतरणों में भी उसका निहितार्थ है।[5] अतः अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में अस्थिरता के कारण केंद्रीय बैंक को होने वाली हानियों की भरपाई के लिए सी आर का पर्याप्त होना आवश्यक है। इस प्रकार, तुलन पत्र के बढ़ते हुए आकार और विदेशी मुद्रा आस्तियों के प्रभुत्व को ध्यान में रखते हुए 12 प्रतिशत के लक्ष्य को पुनः प्राप्त किये जाने की आवश्यकता हो सकती है।

सिक्का-ढलाई मुनाफा (सेन्योरेज)

4.46 केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में सिक्का-ढलाई मुनाफे की भूमिका की ओर विगत वर्षों में शोधकर्ताओं का ध्यान आकृष्ट हुआ है। (बॉक्स IV.4)। सिक्का ढलाई मुनाफा धन निर्माण से लाभ से संबंधित है और इस प्रकार यह एक ऐसा तरीका है जिससे सरकार परंपरागत कर लगाए बिना राजस्व पैदा करती है। सिक्का ढलाई मुनाफे के बारे में सामान्यतया साहित्य में तीन संकल्पनाएं है। (i) अवसर लागत संकल्पना (राजकोषीय सिक्का-ढलाई मुनाफा भी कहलाती है), जिसे केंद्रीय बैंक की आरक्षित निधियों पर अर्जित निवल ब्याज के अनुसार मापा जाता है, (ii) मौद्रिक सिक्का-ढलाई मुनाफा, जिसे मौद्रिक आधार के निर्माण से उत्पन्न लागत की कटौती करने के बाद एक वर्ष के दौरान मौद्रिक आधार में परिवर्तन के अनुसार मापा जाता है, और

बॉक्स IV. 4
सिक्का-ढलाई मुनाफा और केंद्रीय बैंक के लाभ

सिक्का ढलाई मुनाफा वह लाभ है जो केंद्रीय बैंको को अपनी विशिष्ट स्थिति के बल पर अपनी दो प्रमुख देयताओं, अर्थात् संचलन में नोट और उनके पास बैंकों की जमाराशियों पर कम ब्याज अथवा कोई ब्याज नहीं चुकाने से उपचित होता है। अन्य शब्दों में, सिक्का-ढलाई मुनाफा वह राजस्व है जो मौद्रिक आधार में से आपूर्ति की लागत को निकालने के बाद मौद्रिक आधार के निर्माण के माध्यम से केंद्रीय बैंक को ब्याज मुक्त ऋण के माध्यम से प्राप्त होता है। इसे इस रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है कि यह वह अवसर लागत है जो सरकार द्वारा चुकानी पड़ती है, यदि वह ब्याज-भार वाले कर्ज के बदलें में मौद्रिक आधार का विनिमय करती है (बाल्टन्सपर्जर और जोर्डन, 1998)। ड्रैज़न (1985) सिक्का ढलाई मुनाफे को मुद्रा निर्माण के साथ संबद्ध कुल राजस्वों के रूप में परिभाषित करता है, जिसे मुद्रा निर्माण के कारण आस्ति खरीद से प्राप्त राजस्व की कुल राशि (आस्तियों को स्थिर रखने के लिए उपयोग में लाये गये राजस्व के उस भाग को निकालने के बाद) और वास्तविक प्रति व्यक्ति के अनुसार मुद्रा आपूर्ति के वर्तमान विस्तार से प्राप्त राजस्व से मापा जाता है। अन्य शब्दों में, इस परिभाषा के अनुसार, सिक्का-ढलाई मुनाफा मौद्रिक आधार की जी डी पी तीव्रता में वृद्धि के कारण हानियों (लाभों) को निकालने के बाद शेष रही केंद्रीय बैंक की आरक्षित निधि पर अर्जित ब्याज से संबंधित है।

नोट निर्गम से उत्पन्न सिक्का-ढलाई मुनाफा संचलन में नोट के रूप में (उनकी छपाई और उनके वितरण की लागत को घटाकर), बाजार ब्याज दर द्वारा गुणा करके परिकलित किया जाता है, जो केंद्रीय बैंक आस्तियों पर प्रतिलाभ की संभाव्य दर हैं। केंद्रीय बैंकों के पास रखी बैंक शेष राशियों से प्राप्त होने वाली सेन्योरेज बैंकों द्वारा या तो ब्याज-मुक्त शेष राशियों अथवा बाजार ब्याज दरों से कम पर, अपनी आरक्षित आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए केंद्रीय बैंकों के पास रखी गई निधियों से उत्पन्न होती है। 2000 के दशक के प्रारंभ में किये गये अध्ययन में यह दर्शाया गया है कि मुद्रा सेन्योरेज प्रचलित मुद्रास्फीति दर के अनुरूप अनेक उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्थाओं में कम हो गया है। (हाकिन्स, 2003)।

बंद अर्थव्यवस्था में कार्य करने वाले केंद्रीय बैंक के पास चलनिधि और मुद्रा निर्माण के संबंध में पूर्ण रूप से एकाधिकार होता है, और इसलिए उसे चलनिधि आरक्षित निधि की आवश्यकता नहीं होगी। वह अपना संपूर्ण संविभाग सरकारी कर्ज में रख सकता है, जिसमें न तो चूक का जोखिम होता है और न ही मुद्रा का जोखिम। सरकारी कर्ज पर ब्याज दरें सेन्योरेज मापने के लिए एक उपयोगी बेंचमार्क उपलब्ध कराती हैं। वास्तविकता में, केंद्रीय बैंक चलनिधि के स्थानापन्न स्रोतों और मुद्रा से प्रतियोगिता का सामना करते हैं, जिससे देशी मुद्रा के लिए मांग में परिवर्तन होगा। इसलिए केंद्रीय बैंकों को अपने धन की विश्वसनीयता और विश्वस्तता सुनिश्चित करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय आरक्षित निधियों और स्वर्ण के रूप में आरक्षित आस्तियां धारित करनी होगी। इस प्रकार केंद्रीय बैंक के लाभ केंद्रीय बैंक आस्तियों के निवेश संविभाग पर निर्भर करते हैं। इन आस्तियों में अलग-अलग प्रकार का जोखिम हो सकता है, जैसे मुद्रा जोखिम (विदेशी आस्तियों में निवेश के मामले में), बाजार जोखिम (देशी और विदेशी, दोनों प्रकार की आस्तियों के लिए), और चूक जोखिम (निजी क्षेत्र और बाहर के देशों को उधार के लिए)। विदेशी आस्तियों और ब्याज रहित स्वर्ण के अलावा, अन्य कारकों से केवल देशी राष्ट्रिक कर्ज में अपने निवेशों के अनुसार मापे गये बेंचमार्क सेन्योरेज से केंद्रीय बैंक लाभों में एक विचलन हो सकता है। इनमें परिचालन लागत, जो लाभ घटाती है; देशी फर्मों को आर्थिक सहायता प्राप्त उधार देना, सरकारों को ब्याज-मुक्त ऋण तथा दीर्घावधि निवेश पर ब्याज दर उतार-चढ़ाव शामिल हैं।

संदर्भ

बाल्टन्स्पर्जर, अर्न्सट् और थॉमस जे, जोर्डन (1998), ''सेन्योरेज एंड दि ट्रांसफर ऑफ सेंट्रल बैंक प्रोफिट्स टू दि गवर्नमेंट,'' क्योक्लोस, वॉल्यूम 51, 73-88।

ड्रैज़न ए. (1985) '' अ जनरल मेजर ऑफ इन्फ्लेशन टैक्स रेवेन्यूज़,'' इक्नॉमिक्स लेटर्स, वॉल्यूम 17, 327-330।

हॉकिन्स, जोन (2003), ''सेंट्रल बैंकबेलेंस शीट एंड फिस्कल ऑपरेशन्स,'' बी आई एस पेपर्स नं. 20, ओक्टोबर।

5 स्वर्ण और विदेशी मुद्रा आस्तियों की कीमतों में उतार-चढ़ाव की वजह से यदि सी जी आर ए खाता में शेष राशियां समाप्त हो गई हों तो हानियों की भरपाई सी आर में से आहरण द्वारा करनी होगी। यदि सी आर नकारात्मक हो जाता है तो उसकी पुनः पूर्ति उस वर्ष की आय से आहरण द्वारा करनी होगी जो क्रमशः केंद्रीय बैंक की लाभप्रदता को प्रभावित कर सकता है।

(iii) मुद्रास्फीति कर संकल्पना, जिसे मुद्रास्फीति दर और मौद्रिक आधार के उत्पाद के रूप में मापा जाता है। इन तीनों दृष्टिकोणों में से प्रत्येक की अपनी सीमाएं हैं। जहाँ इन तीनों दृष्टिकोणों में सिक्का-ढलाई मुनाफे के लिए 'कर आधार' मौद्रिक आधार का स्टॉक है, प्रत्येक मामले में कल्पित 'कर दर' भिन्न होती है। अवसर लागत दृष्टिकोण आधार तीव्रता में परिवर्तनों की वजह से सिक्का-ढलाई मुनाफे पर प्रभाव की उपेक्षा करता हे। मौद्रिक दृष्टिकोण इस तथ्य की वजह से उक्त प्रभाव की उपेक्षा करता है कि ब्याज की वास्तविक दर और जी डी पी की संवृद्धि दर परस्पर भिन्न हो सकती है और मुद्रास्फीति कर दृष्टिकोण ब्याज की वास्तविक दर के मूल्य तथा आधार तीव्रता में परिवर्तनों के कारण हुए प्रभावों, दोनों की अपेक्षा करता है (होक्रीटर और रॉवेल्ली, 2002)। इस प्रकार, व्यवहार में, सिक्का-ढलाई मुनाफे के इन दृष्टिकोणों में से प्रत्येक एक भिन्न परिणाम देगा।

4.47 सेन्योरेज का एक उपयुक्त माप का विकल्प जिस प्रयोजन के लिए उसका उपयोग किया जाना है, उस पर तथा जिसके लिए उसकी गणना की गई है उस अर्थव्यवस्था के प्रकार पर निर्भर करेगा। मुद्रास्फीति-कर की संकल्पना अर्थशास्त्र में प्रयोग के लिए अधिक लागू है, जहाँ अति-मुद्रास्फीति एक मुद्दा है और जहाँ सरकारी घाटे के लिए केंद्रीय बैंक एक प्रमुख वित्त-प्रदाता है। चूंकि मौद्रिक सेन्योरेज और मुद्रास्फीति कर दृष्टिकोण, दोनों ही सेन्योरज के उत्पादन में वास्तविक ब्याज दरों की भूमिका की उपेक्षा करते हैं, भारत जैसे देश के लिए सेन्योरेज की गणना में अक्सर लागत संकल्पना नियोजित करना अधिक उपयोगी होगा क्योंकि यह संकल्पना सेन्योरेज की लेखांकन परिभाषा के समान है, अर्थात् केंद्रीय बैंक आरक्षित निधियों में उपचित निवल ब्याज।

4.48 हॉकिन्स (2003) द्वारा अपनाई गई प्रणाली विज्ञान का इस्तेमाल करते हुए, जो मुद्रा सेन्योरेज और बैंक आरक्षित निधियों से सेन्योरेज को अलग-अलग मापने के लिए अवसर लागत संकल्पना नियोजित करती है, भारत के लिए सेन्योरेज की गणना निम्नानुसार की गई है:

मुद्रा सेन्योरेज, सी =(सी-जी)* आर -पी;

जहाँसी=संचलन में नोट, जी=केंद्रीय; बैंक की स्वर्ण-धारिता,पी=नोट छपाई की लागत [6], अर्थात् प्रतिभूतियों की छपाई और आर=निगम विभाग की कुल आस्तियों में निर्गम विभाग की देशी आस्तियों और विदेशी आस्तियों के अंश द्वारा भारित मुद्रा पर अर्जित प्रतिफल की संभाव्य दर, अर्थात् आर=एसडीए$_{\text{आई डी}}$* आइडीए + एसएफए$_{\text{आई डी}}$*आइएफए। यहाँ एसडीए$_{\text{आई डी}}$=निर्गम विभाग की कुल आस्तियों में निर्गम विभाग की देशी आस्तियों का अंश (स्वर्ण का निवल), आई डी ,= केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों पर (वित्तीय वर्ष के आधार पर) भारित औसत आय, एसएफए$_{\text{आई डी}}$= निर्गम विभाग की कुल आस्तियों में निर्गम विभाग में रखी गई विदेशी प्रतिभूतियों का अंश और आइ एफ ए=रिज़र्व बैंक द्वारा दिये गये अनुसार विदेशी आस्तियों पर आमदनी। [7]

4.49 चूंकि संचलन में नोट केंद्रीय बैंक की देयता है, इसे संचलन में मुद्रा के बजाय हिसाब में लिया गया है, जिसमें सिक्के भी शामिल हैं जो सरकार की देयता है। स्वर्ण धारिता (जैसा कि रिज़र्व बैंक, निर्गम विभाग के तुलन पत्र में प्रतिबिंबित हुआ है) बाहर कर दी गई है, क्योंकि उससे कोई प्रतिफल नहीं मिलता है।

बैंक आरक्षित निधियों पर सेन्योरेज, बी, बी*(आर'-आई') के रूप में परिकलित किया जाता है;

जहाँ बी=बैंक की आरक्षित निधियां, आर' बैंकिंग विभाग की कुल आस्तियों में बैंकिंग विभाग की देशी आस्तियों और विदेशी आस्तियों के अंश द्वारा भारित बैंक आरक्षित निधियों पर अर्जित प्रतिफल की संभाव्य दर है, अर्थात् आर'=एस डी ए बी डी * आई डी ए + एस एफ ए बी डी * आई एफ ए, जहाँ एस डी ए बी डी = बैंकिग विभाग की कुल आस्तियों में बैंकिंग विभाग की देशी आस्तियों का अंश है और एस एफ ए बी डी = बैंकिग विभाग की कुल आस्तियों में बैंकिंग विभाग की विदेशी आस्तियों का अंश है।

आई= अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की जमाराशियों पर रिज़र्व द्वारा (मार्च 2007 तक [8]) अदा की गई प्रभावी दर है (जो कुल जमाराशियों की 98 प्रतिशत से अधिक है)।

4.50 देशी और विदेशी ब्याज दरों में गिरावट के कारण जी डी पी के सापेक्ष मुद्रा सेन्योरेज और बैंक आरक्षित निधियों पर सेन्योरेज दोनों ही 1990 के दशक में कम हो गये थे। 2000-01 के दौरान सेन्योरेज राजस्व में वृद्धि का श्रेय विदेशी आस्तियों से आमदनी

6 इसमें प्रतिभूति की छपाई और खजाने का विप्रेषण शामिल है।

7 संभाव्य प्रतिफलों के बजाय विदेशी आस्तियों के संबंध में वास्तविक आमदनी ली गई थी क्योंकि केंद्रीय बैंक आस्तियों के विदेशी निवेश संविभाग पर जानकारी के बिना, जो बताई नहीं गई है, इन आस्तियों पर एक बेंचमार्क प्रतिफल प्राप्त करना कठिन है।

8 31 मार्च 2007 से प्रारंभ पखवाड़े से रिज़र्व बैंक ने सी आर आर शेष राशियों पर पारिश्रमिक देने की प्रथा समाप्त कर दी है।

में तीव्र वृद्धि को जाता है, जो रिज़र्व बैंक की कुल आस्तियों में विदेशी आस्तियों के वर्धमान अंश के साथ वर्ष के प्रथमार्ध के दौरान अंतर्राष्ट्रीय ब्याज दरों में महत्वपूर्ण वृद्धि को प्रतिबिंबित करता है। मुद्रा और बैंक की आरक्षित निधियों से सेन्योरेज राजस्व में 2004 और 2008 के बीच फिर तीव्र वृद्धि हुई (चार्ट IV.3)। उच्च वृद्धि के सामने वर्धमान लेन-देन मांग को प्रतिबिंबित करते हुए, इस अवधि के दौरान मुद्रा की मांग बढ़ गई। बैंकों के पास सकल जमाराशियों में वृद्धि के अतिरिक्त आरक्षित निधि की आवश्यकताओं में प्रति-चक्रीय उछाल के संयुक्त प्रभाव के कारण बैंक की आरक्षित निधियों से सेन्योरेज में वृद्धि हो गई।

4.51 2008 में संकट के प्रारंभ होने के बाद से अंतर्राष्ट्रीय ब्याज दरों में तीव्र गिरावट और विदेशी आस्तियों से आमदनी पर उसके प्रभाव के कारण सेन्योरेज राजस्व प्रभावित हुआ। इस प्रकार, मुद्रा सेन्योरेज-जी डी पी अनुपात, मुद्रा की मांग में वृद्धि के बावजूद घटना जारी रहा। अगस्त 2008 में, 9 प्रतिशत के शिखर से, सी आर आर में, वैश्विक संकट की नीति अनुक्रिया के रूप में कटौती के परिणामस्वरूप बैंक जमाराशियों पर सेन्योरेज में कमी हो गई, जो फरवरी 2010 के बाद से सी आर आर में वृद्धि के पश्चात् फिर बढ़ना शुरू हो गई। देशी आस्तियों के अंश और उनके प्रतिफल में वृद्धि के कारण 2010-11 में बैंक आरक्षित निधियों से सेन्योरेज राजस्व में सीमांत वृद्धि हुई थी किंतु 2011-12 में सी आर आर में कटौती से वह कम हो गई।

चार्ट IV.3 : सिक्का ढलाई मुनाफा प्रवृत्तियां

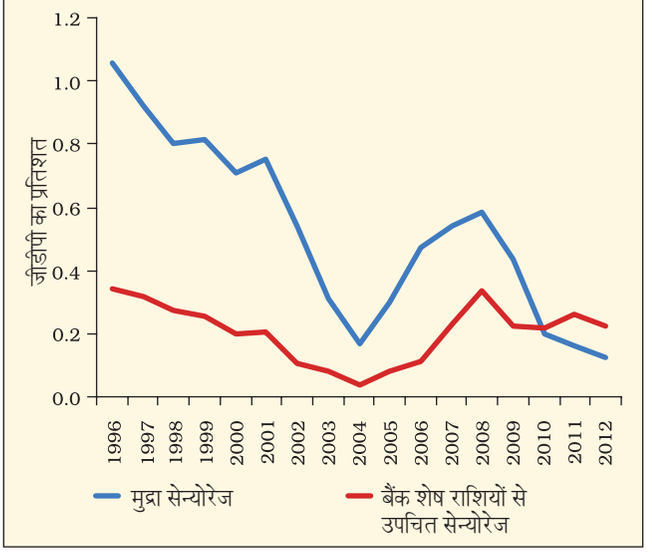

पूंजी प्रवाह, अवरुद्धता और रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र

4.52 1990 के दशक के प्रारंभ में सुधार प्रक्रिया लागू होने के बाद से ही, भारत में सीमा-पार पूंजी प्रवाह में एक महत्वपूर्ण वृद्धि देखी गई है, जो एक ऐसी प्रवृत्ति है जिसने पिछले दो दशकों से चली आ रही परंपरा को भंग किया है। चालू खाता घाटे के वित्तपोषण के लिए आवश्यक पूंजी से भी अधिक बड़ी मात्रा में अत्यधिक पूंजी प्रवाह के परिणामस्वरूप विदेशी मुद्रा आस्तियां संचित हो गई जो रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में प्रतिबिंबित होती हैं। जब पूंजी प्रवाहों में उछाल के साथ मुकाबला करना होता है तो केंद्रीय बैंक विनिमय दर की अव्यवस्थित आवाजाही मंद करने के लिए विदेशी मुद्रा (फोरेक्स) बाजार में हस्तक्षेप कर सकते हैं। हालांकि, बाजार हस्तक्षेप और अवरुद्धता परिचालनों के माध्यम से पूंजी प्रवाहों का प्रबंध अर्धराजकोषीय लागत के साथ संबद्ध है, यदि देशी आस्तियां विदेशी मुद्रा आस्तियों के मुकाबले अधिक प्रतिफल प्रदान करती हों। हस्तक्षेप उपायों का बड़े पैमाने पर इस्तेमाल करने से भी केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र के आकार और संयोजन में परिवर्तन हो जाता है।

4.53 मध्य-1970 के दशक और 1980 के दशक के प्रारंभ में सुदृढ़ विप्रेषणों और अनिवासी जमाराशि आगमनों के कुछ वर्षों को छोड़कर, रिज़र्व बैंक के आस्ति-आधार पर या तो सरकार को उसके निवल ऋण के रूप में अथवा क्षेत्र विशिष्ट पुनर्वित्त सुविधाओं के रूप में लगभग पूर्ण रूप से देशी आस्तियों का प्रभुत्व था। विशेष रूप से मध्य 2000 के दशक में भारी मात्रा में पूंजी प्रवाहों की पृष्ठभूमि में विदेशी मुद्रा बाजार में रिज़र्व बैंक के सक्रिय हस्तक्षेप के पश्चात् तुलन पत्र के संयोजन में निवल देशी आस्तियों (एन डी ए) के सापेक्ष बृहत निवल विदेशी आस्तियों (एन एफ ए) के पक्ष में परिवर्तन हुआ (चार्ट IV-4)। रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में एन एफ ए में उतार-चढ़ाव उसके विदेशी मुद्रा परिचालनों, सहायता के रूप में सरकार द्वारा प्राप्त राशियों तथा विदेशी मुद्रा आस्तियों द्वारा उत्पन्न आय को प्रतिबिंबित करते हैं। जहाँ रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में एन एफ ए में स्थिर वृद्धि के रूप में विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों का संचयन प्रतिबिंबित हुआ था, ओ एम ओ के माध्यम से चलाये गये अवरुद्धता परिचालनों के कारण रिज़र्व बैंक द्वारा धारित देशी आस्तियों में गिरावट आ गई थी। तदनुसार, रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में देशी आस्तियों के प्रति विदेशी आस्तियों के अनुपात में नाटकीय वृद्धि हुई थी, जो 1997-2004 की अवधि के दौरान 1980 के दशक के 22-8 प्रतिशत से बढ़ कर 182-4 प्रतिशत हो गया था।

चार्ट IV. 4 : रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर पूंजी प्रवाहों का प्रभाव

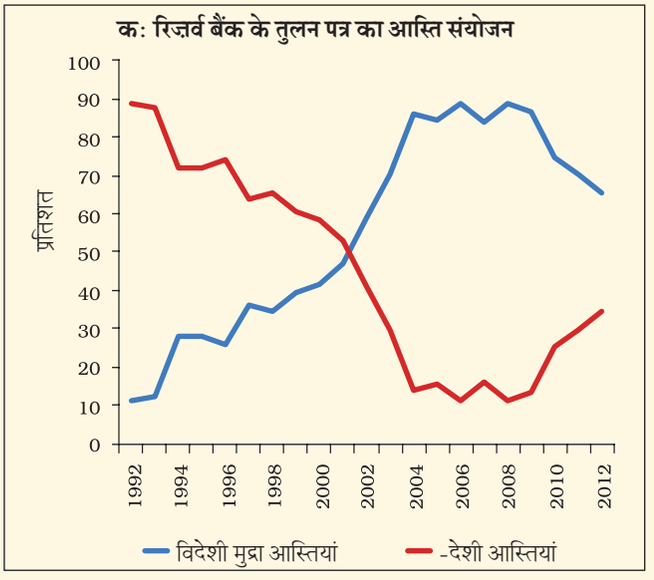

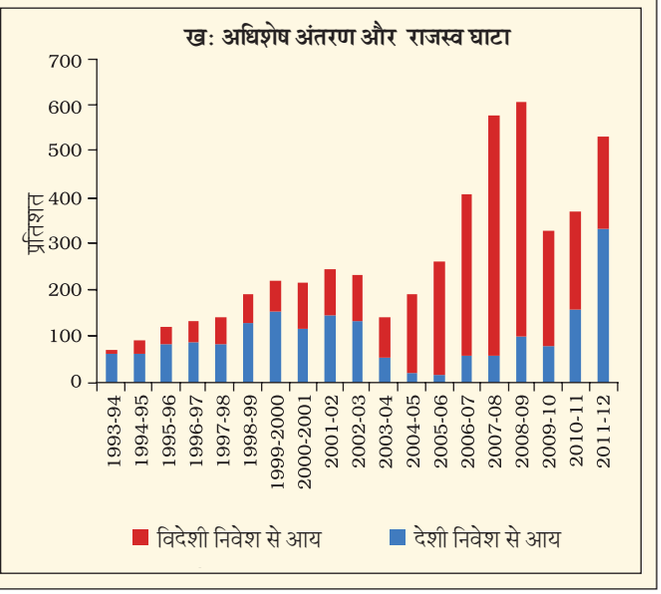

4.54 सरकारी प्रतिभूतियों के घटते हुए स्टॉक के साथ भारी पूंजी प्रवाहों के सामने, रिज़र्व बैंक ने अवरुद्धता का एक नया उपकरण प्रारंभ किया, अर्थात् बाजार परिचालनों को बनाए रखने के लिए एम एस एस। अप्रैल 2004 में एम एस एस के प्रारंभ होने के बाद सरकार ने प्रतिभूतियां जारी करने तथा उनसे प्राप्त आमदनी को केंद्रीय बैंक के पास रखने के माध्यम से विदेशी मुद्रा बाजार में रिज़र्व बैंक की खरीद द्वारा जारी रुपया चलनिधि का सफाया कर दिया है। इस प्रकार एम एस एस द्वारा परंपरागत खुला बाजार परिचालनों के मामले में देशी आस्तियों की भारी मात्रा में समानांतर बिक्री के विपरीत, रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के भीतर विदेशी मुद्रा बाजार में रिज़र्व बैंक के परिचालनों द्वारा जारी रुपया चलनिधि को अवरूद्ध कर दिया गया था।

4.55 बड़े पैमाने पर किये जाने वाले अवरुद्धता परिचालन राजकोषीय और मौद्रिक दोनों ही लागतों के साथ संबद्ध हैं। एक अवरुद्ध विदेशी मुद्रा बाजार हस्तक्षेप का संचालन करने के लिए अतिरिक्त चलनिधि का सफाया करने के लिए किये गये प्रयास में सरकारी प्रतिभूतियां (उदाहरणार्थ भारत में एम एस एस बांड) जारी किये जाने से सरकार पर प्रायः कर्ज चुकाने का भार आ पड़ता है। एक केंद्रीय बैंक के लिए परिचालन हानियां हो सकती हैं, जब संचित विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों का विदेशी आस्तियों में निवेश किया जाता है, जिन पर दुनिया की प्रमुख मुद्राओं पर प्रचलित ब्याज दर के अनुसार ब्याज मिलता है जो प्रायः केंद्रीय बैंक द्वारा बेची गई देशी प्रतिभूतियों पर मिलने वाले ब्याज से कम होता है। अवरुद्धता की सीमा अलग-अलग होती है। इन्हें ''राजकोषीय सदृश'' लागत के रूप में जाना जाता है क्योंकि केंद्रीय बैंक के प्रति लागत को कम लाभ के अंतरण के माध्यम से राष्ट्रिक पर डाल दिया जाता है (आर बी आई, 2004)। भारत में अवरुद्धता परिचालनों की लागत का एक अनुमान दर्शाता है कि उच्च पूंजी प्रवाहों की अवधि के दौरान इस प्रकार की लागत रिज़र्व बैंक के लिए महत्वपूर्ण रही है (बॉक्स IV.5) ।

राजकोषीय सदृश क्रियाकलाप और उनका प्रभाव

4.56 सम्पूर्ण विश्व में केंद्रीय बैंक प्रायः अयोग्य उधारकर्ताओं को जबरन उधार देने, बैंक बेलआउट्स, और विनिमय गारंटियों के प्रावधान की प्रकृति में राजकोषीय सदृश परिचालन का उत्तरदायित्व लेते हैं जो उनकी लाभप्रदता को प्रभावित करता है। रिज़र्व बैंक ने भी देश के भुगतान संतुलन को मज़बूती प्रदान करने की दृष्टि से कतिपय योजनाओं के लिए विनिमय गारंटी के रूप में विगत दिनों में सरकार को इस प्रकार का राजकोषीय सदृश समर्थन प्रदान किया था। परिणामस्वरूप, 1990 के दशक के प्रारंभ में रिज़र्व बैंक की लाभप्रदता कठिन दबाव के अंतर्गत आ गई क्योंकि बैंक को निम्नलिखित के अंतर्गत उधार ली गई विदेशी मुद्राओं के संबंध में विनिमय जोखिम से रक्षा के लिए बड़े प्रावधान करने पड़े थे। (i) विदेशी मुद्रा अनिवासी (खाते) (एफ सी एन आर (ए) और विदेशी बैंकों द्वारा भारत में उसी प्रकार की योजनाओं के अंतर्गत जमा की गई विदेशी मुद्रा, (ii) भारत विकास बांड के अंतर्गत जमा निधियां और (iii) वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्राप्त विदेशी मुद्रा ऋण

बॉक्स IV.5
भारत में अवरुद्धता लागत

रिज़र्व बैंक तीन साधनों के माध्यम से अवरुद्धता परिचालन का दायित्व निभाते हैं- एम एस एस , ओ एमओ/एल ए एफ और सी आर आर वृद्धि। एम एस एस में सरकार के लिए लागत आती है क्योंकि उसे ब्याज लागत को वहन करना होता है। चलनिधि अवशोषण के लिए कोई भी ओ एम ओ बिक्री अथवा एल ए एफ रिवर्स रेपो परिचालन में रिज़र्व बैंक के लिए लागत अंतर्निहित होती है, चूंकि ओ एम ओ बिक्री के अंतर्गत अर्पित प्रतिभूतियों पर सामान्यतया, केंद्रीय बैंक द्वारा अभिगृहीत विदेशी प्रतिभूतियों पर मिलने वाले ब्याज की तुलना में अधिक ब्याज मिलता है। राजकोषीय सदृश लागत के रूप में नामित, केंद्रीय बैंक द्वारा अदा की गई निवल लागत कभी -कभी स्वभावतः केंद्रीय बैंक तुलन पत्र और भावी मौद्रिक नीति के संचालन के लिए निहितार्थों के साथ काफी अधिक हो जाती है। कतिपय लैटिन अमेरिकन देशों के लिए ये राजकोषीय सदृश लागत जी डी पी की 0.25 - 0.5 के बीच होने का अनुमान लगाया जाता है। इसके अलावा, राजकोषीय सदृश लागत पूंजी प्रवाहों में उछाल की अवधियों के दौरान बढ़ जाती है। ऐसी स्थितियों में, केंद्रीय बैंकों ने अन्य उपायों जैसे, आरक्षित नकदी निधि अपेक्षाओं में वृद्धि, विनिमय दर वृद्धि और साथ ही पूंजी नियंत्रण लागू करने को जोड़ते हुए ओ एम ओ के माध्यम से अवरुद्धता परिचालनों का इस्तेमाल किया है। अवरुद्धता प्रयोजनों के लिए सी आर आर में वृद्धि बैंकिंग प्रणाली पर एक भार थोप देती है क्योंकि उससे आरक्षित निधियों में इतनी राशि अवरुद्ध हो जाती है कि अन्यथा उसका उपयोग बैंकों द्वारा उधार देने एवं प्रतिफल उपार्जित करने के लिए किया जा सकता था। सारणी में संकट से पूर्व अवधि के लिए, जब पूंजी प्रवाह उच्च थे, केंद्रीय बैंक, सरकार तथा भारत में बैंकिंग प्रणाली के लिए अवरुद्धता लागत की मात्रा निर्धारित करने का प्रयास किया गया है। जैसा कि ध्यान में लाया जा सकता है, उच्च पूंजी आगमनों की अवधि के दौरान, विशेष रूप से 2004-05 से 2006-07 के दौरान अवरुद्धता की अधिकतम लागत रिज़र्व बैंक द्वारा वहन की गई थी।

यह नोट किया जाए कि या तो देशी मुद्रा आपूर्ति पूर्वानुमानित आपूर्ति से उच्चतर होने की वजह से अथवा क्योंकि अतिरिक्त पूंजी प्रवाह है, रिज़र्व बैंक प्रतिभूतियों की बिक्री में हस्तक्षेप कर सकता है। रिज़र्व बैंक पूर्वानुमानित एम3 संवृद्धि को अपने नीतिगत वक्तव्यों में प्रकाशित करता है, जो प्रचलित संवृद्धि, मुद्रास्फीति और बाह्य क्षेत्र गति सिद्धांत से संगत होता है तथा सरकार की बाजार उधार आवश्यकताओं और निजी क्षेत्र से ऋण के लिए मांग में संभावित वृद्धि को हिसाब में लेता है। तद्नुसार, आरक्षित मुद्रा का वांछित/प्रारंभिक स्तर, जिसके ऊपर जाने पर उसे अतिरिक्त के रूप में समझा जाएगा और उसकी गणना प्रदत्त प्रवर्धक, पूर्वानुमानित एम3 संवृद्धि से संगत स्तर के रूप में की जा सकेगी। यह देखा गया है कि जहाँ अवरुद्धता से, सी आर आर परिवर्तनों के लिए समायोजन करने के बाद वास्तविक आरक्षित मुद्रा को इन वर्षो के लिए पूर्वानुमानित स्तरों के नज़दीक रखा गया, अवरुद्धता क्रियाकलाप के बावजूद, वास्तविक आरक्षित मुद्रा वांछित/प्रारंभिक स्तर के ऊपर बनी रही, जो इस बात का संकेत है कि अवरुद्धता, आवश्यकता के अनुपात में कम पड़ गई थी। इसके अलावा, इस बात पर विचार करते हुए कि 2004-05 से 2007-08 के दौरान उच्च पूंजी प्रवाहों की अवधि के दौरान केंद्र को आर.बी.आई. के निवल ऋण कम थे, आरक्षित मुद्रा में विस्तार तथा लागू किया गया परिणामी अवरुद्धता उपाय रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों में विस्तार की वजह से था।

सारणी: रिज़र्व बैंक, सरकार और बैंकों के लिए अवरुद्धता लागत

(जी डी पी में प्रतिशत के अनुसार)

वर्ष	आर बी आई	सरकार	वाणिज्य बैंक
2004-05	1.7	0.1	0.2
2005-06	0.4	0.1	0.3
2006-07	0.6	0.1	0.3
2007-08	0.1	0.2	0.5
2008-09	0.0	0.2	0.4

टिप्पणी:

1. रिज़र्व बैंक के लिए लागत का प्राक्कलन ओ एम ओ/एल ए एफ बिक्रियों पर रिज़र्व बैंक द्वारा चुकाये जाने वाले ब्याज तथा फोरेक्स पर उसके द्वारा उपार्जित प्रतिफल के बीच अंतर को लेते हुए निकाला जाता है। यह नोट किया जाए कि रुपया रूप में फोरेक्स पर प्रतिफल, विनिमय दर परिवर्तनों का हिसाब में लेने के बाद भिन्न हो सकता है।
2. एम एस एस पर ब्याज भुगतान सरकार के लिए लागत के रूप में लिये गये हैं।
3. बैंकों के लिए लागत को सी आर आर के कारण अवरुद्ध राशि पर बैंकों द्वारा उपार्जित किये जा सकने वाले प्रतिफल के रूप में लिया जाता है। 2008-09 के प्रथमार्ध के दौरान को छोड़ कर, जब मुद्रास्फीति दो अंकों में थी, जिस अवधि पर विचार किया जा रहा है, वह सामान्यतया कम मुद्रास्फीति वाली अवधि थी एवं चलनिधि प्रबंध प्रयोजनों के लिए सी आर आर में आम तौर पर वृद्धि की गई थी। यह निश्चित है कि संपूर्ण सी आर आर केवल अवरुद्धता प्रयोजनों के लिए नहीं है, अन्यथा बैंकों के लिए वास्तविक लागत कम होती।

और एक पार्किंग निधि योजना के अंतर्गत उपयोग के लिए लंबित, रिज़र्व बैंक के पास जमा। एफ सी एन आर (ए) आहरणों/नवीकरणों पर वहन किये गये विदेशी मुद्रा विनिमय जोखिम के कारण रिज़र्व बैंक पर न्यागत, कुल राशि 1990-93 की अवधि के दौरान 106.15 बिलियन रुपये थी। यह भार ई एफ आर द्वारा वहन किया गया जिसकी सी आर के निः शेषण द्वारा पुनः पूर्ति की गई थी, जो जून 1993 में 8.59 बिलियन रुपये कम पड़ गई थी। भारत सरकार ने 1 जुलाई 1993 और उसके बाद से वार्षिक बहिर्गमन पर एफ सी एन आर (ए) से संबंधित विदेशी मुद्रा विनिमय जोखिम-दायित्व अपने अधिकार में ले लिया था। उक्त दायित्व इस शर्त पर लिया गया कि रिज़र्व बैंक इन हानियों की भरपाई करने के लिए सामान्य अंतरणों से अधिक की अतिरिक्त निधियां अंतरित करेगा। सरकार ने भी 1993-94 और 1994-95 के अपने बजट में हानियों के एक छोटे खंड की भरपाई की थी। 1993-98 की अवधि में रिज़र्व बैंक ने एफ सी एन आर (ए) हानियों की भरपाई के लिए अपने लाभ में से 128.47 बिलियन रुपये की एक अतिरिक्त राशि अंतरित की थी (सारणी 4.7) । विभिन्न जमा राशियों पर विदेशी मुद्रा विनिमय दर गारंटियां आहरित करने के उद्देश्य से, 1990 के दशक के आखरी दिनों में एफ सी एन आर (ए) योजना को हटा दिया गया था और उसके स्थान पर एफ सी एन आर (बी) योजना प्रारंभ की गई थी, जिसके अंतर्गत विदेशी मुद्रा विनिमय जोखिम बैंकों द्वारा उनके जोखिम बोध के आधार पर वहन किया जाता है।

सारणी 4.7: विदेशी मुद्रा अनिवासी (खाता) योजना के लिए विदेशी मुद्रा गारंटी से उत्पन्न राजकोषीय सदृश लागत

(बिलियन रुपये)

वर्ष	एफ सी एन आर (ए) गारंटी के कारण हानियां	रिज़र्व बैंक द्वारा अपनी आरक्षित निधियों से आहरण द्वारा वहन की गई हानियां	हानियों की रक्षा के लिए रिज़र्व बैंक अधिशेष से अंतरित राशि	सरकार ,द्वारा अपने बजट से वहन की गई हानियां
1	2	3	4	5
1991	25.14	25.14	-	-
1992	55.32	55.32	-	-
1993	25.70	25.70	-	-
1994	56.86	-	55.87	0.99
1995	25.95	-	23.28*	2.66
1996	24.38	-	24.38	-
1997	27.63	-	27.63	-
1998	18.27	-	18.27	-

'–': लागू नहीं

*: अगस्त 1994 में योजना बंद होने के समय 2.7 बिलियन रुपये के लाभ शामिल हैं।

V. वैश्विक वित्तीय संकट और रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र

4.57 वैश्विक वित्तीय संकट द्वारा उत्पन्न चलनिधि आघात के समाधान के लिए समस्त विश्व के मौद्रिक प्राधिकारियों ने अनेक गैर-परंपरागत नीति उपायों का सहारा लिया। उन्नत देशों में मौद्रिक प्राधिकारियों ने पहले आक्रामक मौद्रिक सुलभता के माध्यम से अनुक्रिया की, उसके बाद चलनिधि में वृद्धि करने के लिए गैर-परंपरागत उपायों का इस्तेमाल किया। रीयल सेक्टर की ओर फैलते हुए वित्तीय संकट और आर्थिक मंदी के बारे में बढ़ती हुई चिंताओं के साथ अधिकांश केंद्रीय बैंकों में ऋण और मात्रात्मक सुलभता को नीति प्राथमिकता प्रदान की गई (मोहन्ती, 2011) । इन चलनिधि-वृद्धि उपायों के परिणामस्वरूप अनेक केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्रों में अभूतपूर्व विस्तार होने के अतिरिक्त उनके संयोजन में भी परिवर्तन हुए (बॉक्स IV.6)।

4.58 उन्नत देशों और उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं (ई एम डी ई एस) के केंद्रीय बैंकों द्वारा अपनाये गये नीति उपायों में महत्वपूर्ण अंतर है। उन्नत देशों में केंद्रीय बैंकों ने ऋण और मात्रात्मक सुलभता उपायों का व्यापक पैमाने पर इस्तेमाल किया, जब कि ई एम डी ई एस में उनका प्रयोग कम ही देखने को मिला (सुब्बाराव, 2011)। वैश्विक वित्तीय संकट के संक्रामक प्रभावों का सामना करने के लिए, ई एम डी ई एस ने पहले उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में यद्यपि काफी उच्चतर स्तर से नीति दर कटौतियों को सक्रिय करने से पूर्व मुद्रा की अदला-बदली और सी आर आर जैसे उपकरणों के माध्यम से चलनिधि वृद्धि उपायों का सहारा लिया। अधिकांश उभरते बाजारों के केंद्रीय बैंकों ने देशी बाजार में विदेशी निधीयन के लिए मांग को पूरा करने तथा विदेशी मुद्रा विनिमय दर पर दबाव को कम करने के लिए विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों की एकमुश्त बिक्री की। ब्राज़ील, कोरिया, मेक्सिको

बॉक्स IV.6

गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति उपाय और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंक तुलन पत्र

संपूर्ण विश्व में केंद्रीय बैंकों ने, तीव्र बाजार दबाव से उत्पन्न चलनिधि समस्याओं से निपटने की दृष्टि से और साथ ही 'नगण्य न्यूनतर सीमा' तक पहुँची ब्याज दरों वाली नीति दरों से उत्पन्न नीति गतिरोध को दूर करने के लिए भी, जिसने मौद्रिक संचारण तंत्र में बाधा उपस्थित की थी, हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान अपने तुलन पत्रों के गैर-परंपरागत, व्यापक तथा आक्रामक इस्तेमाल का सहारा लिया। प्रारंभ में, केंद्रीय बैंकों ने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में प्रतिभूतियों के समूह के अतिरिक्त उनके केंद्रीय बैंकिंग परिचालन के लिए पात्र प्रतिपक्षियों की संख्या का विस्तार करते हुए तथा उन चलनिधि प्रदाता परिचालनों की परिपक्वता अवधि में भी विस्तार करते हुए पंरपरागत चलनिधि सुलभता उपाय किये। चूंकि संकट गहन हो गया था और ब्याज दर चैनल प्रभावी नहीं रह गया था, इन देशों में केंद्रीय बैंकों को मात्रात्मक सुलभता के लिए बाध्य होना पड़ा था। देश-वार उपायों का अध्याय 2 में विस्तार से वर्णन किया गया है।

ऋण और मात्रात्मक सुलभता के व्यापक प्रयोग के परिणामस्वरुप, उन्नत देशों में केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्रों में तेजी से विस्तार हुआ। फेडरल रिज़र्व और बैंक ऑफ इंग्लैंड (बी ओ ई) के जी डी पी में कुल आस्तियों का अनुपात, जो 10 प्रतिशत से भी कम था, बढ़ कर 15 प्रतिशत से भी अधिक हो गया, जब कि यूरो प्रणाली में यह वृद्धि यूरो क्षेत्र जी डी पी के 13 प्रतिशत से बढ़कर 20 प्रतिशत से भी अधिक हो गई (चार्ट) । बैंक ऑफ जापान (बीओजे) के तुलन पत्र का आकार जी डी पी के लगभग 30 प्रतिशत से भी बड़ा था, यद्यपि वह 2000 के दशक के प्रारंभ में शुरू की गयी मात्रात्मक सुलभता के कारण अधिक था। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में, केंद्रीय बैंक के तुलन पत्रों का आकार, केंद्रीय बैंकों द्वारा आरक्षित निधियों के संचयन के आधार पर संकट से पूर्व ही काफी अधिक बढ़ गया था। प्रमुख उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की संयुक्त विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियां मध्य-2008 में 5 ट्रिलियन अमरीकी डालर थी (हैनाउन, 2010)।

बड़े पैमाने पर आर्थिक गिरावट ने जो संकट के साथ ही थी, अभूतपूर्व परिमाण में प्रतिचक्रीय राजकोषीय नीति उपायों का आह्वान किया जो कीन्स के पुनः प्रकटीकरण में परिवर्तित हो गया (अध्याय 2 भी देखें) । इस प्रकार

(जारी...)

(...समाप्त)

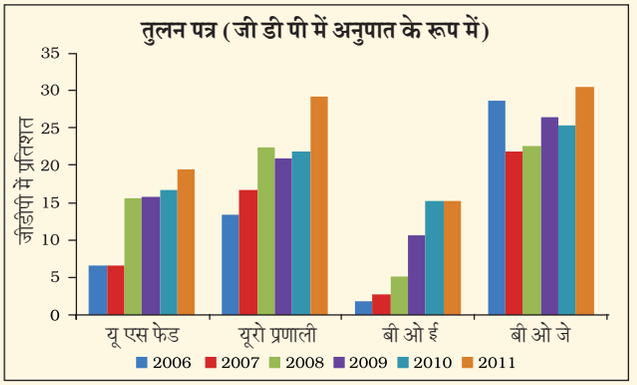

के राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों को प्रतिबिंबित करते हुए, कुछ अग्रणी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में, जी डी पी में सरकारी कर्ज के अंश में वृद्धि तथा मौद्रिक संचारण के लिए सहवर्ती निहितार्थों के साथ उच्च सरकारी उधार एवं केंद्रीय बैंकों द्वारा चलनिधि प्रबंध के अनुसार उनकी राजकोषीय स्थिति में महत्वपूर्ण गिरावट देखी गई (आई एम एफ 2011)।

जहाँ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों द्वारा बड़े पैमाने पर आस्ति खरीद से वित्तीय बाजार स्थिर हो गये प्रतीत होते हैं, तुलन पत्रों में, उनके संरचनात्मक परिवर्तन के साथ परिणामी विस्तार से हालांकि ब्याज दर, विदेशी मुद्रा विनिमय दर तथा ऋण जोखिम कारकों के प्रति उनकी भेद्यता में वृद्धि हो गई है। जहाँ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंक के तुलन पत्रों में ब्याज और ऋण जोखिम को महत्व मिला हुआ है, क्योंकि उन्होंने वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान केंद्रीय बैंक आस्ति खरीद के भाग के रूप में निजी क्षेत्र आस्तियां अधिगृहीत की हैं, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों ने, जिनके पास भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा आस्तियां हैं, विदेशी मुद्रा विनिमय जोखिम (पुनर्मूल्यन जोखिम) और अल्पावधि अवरुद्धता बांड्स की लागत के, यदि केंद्रीय बैंक द्वारा जारी किये गये अथवा देशी आस्तियों पर ब्याज आय त्याग दी गई हो, कम होने वाली विदेशी मुद्रा आस्तियों पर प्रतिफल के जोखिम का सामना किया।

संदर्भ

सुब्बाराव, दुवुरी (2011), ''इंप्लीकेशन्स ऑफ दि एक्सपांशन ऑफ दि सेंट्रल बैंक बेलेंस शीट्स,'' गवर्नरों की विशेष बैठक में भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर द्वारा की गई टिप्पणियां, क्योतो, जनवरी 31।

मोहंती, दीपक (2011), ''लेसन्स फॉर मोनेट्री पॉलिसी फ्रॉम दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिसः एन इमर्जिंगः मार्केट पर्सपेक्टिव,'' 1 अप्रैल को जेरुसलम में बैंक ऑफ इज़राइल के केंद्रीय बैंकों के सम्मेलन में प्रस्तुत पत्र।

हैनाउन, एच. (2010), ''दि एक्सपांडिंग रोल ऑफ सेंट्रल बैंक्स सिंस दि क्राइसिसः वॉट आर दि लिमिट्स ?'' बी आई एस भाषण

आई एम एफ (2011) फिस्कल मॉनीटर अपडेट, जून 17 ।

आर बी आई (2010), रिपोर्ट ऑन करेंसी एंड फाइनेंस, 2008-09।

और सिंगापुर के केंद्रीय बैंकों की फेडरल रिज़र्व के साथ डॉलर स्वैप की व्यवस्था थी। किन्तु, उभरती अर्थव्यवस्था के केंद्रीय बैंकों के लिए ऋण सुलभता और मात्रात्मक सुलभता उपायों का इस्तेमाल उनके उन्नत अर्थव्यवस्था वाले प्रतिपक्ष के मुकाबले अधिक सीमित था। तद्नुसार, केंद्रीय बैंक तुलन पत्रों पर चलनिधि वृद्धि उपायों का असर ई एम डी ई एस के मामले में कम कठोर था।

4.59 अनेक विदेशी केंद्रीय बैंकों के अनुभव से भिन्न, जिनके तुलन पत्र ऋण और अग्रिम मंजूर किये जाने तथा विभिन्न संस्थाओं को पुनर्वित्त सुविधाएं प्रदान किये जाने के कारण आकार में बढ़ गये हैं, रिज़र्व बैंक द्वारा वर्धमान रूप से उदारीकृत भारतीय वित्तीय बाजारों की देशी और विदेशी मुद्रा चलनिधि आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किये गये परंपरागत और गैर-परंपरागत उपायों के व्यापक इस्तेमाल के बावजूद 2008-09 के दौरान रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र संकुचित हो गया। तुलन पत्र के आकार में यह संकुचन संकट के दौरान किये गये विशिष्ट चलनिधि इंजेक्टिंग उपायों द्वारा लाया गया था। देयता पक्ष की ओर, सी आर आर में 400 आधार अंकों की कमी तथा सरकार की एम एस एस शेष राशियों के निवेश मोचन ने रिज़र्व बैंक की समग्र देयताओं को कम करने का कार्य किया। चूंकि सी आर आर शेष राशियां आरक्षित मुद्रा का एक भाग है, सी आर आर में कटौती करना आरक्षित मुद्रा में कटौती जैसा दर्शाता है और इसके विपरीत सी आर आर में वृद्धि आरक्षित मुद्रा में वृद्धि दर्शाती है। इसके अलावा, एम एस एस एक अन्य उपकरण था, जो एम एस एस के अंतर्गत रखी गई प्रतिभूतियों के निवेश मोचन द्वारा प्रणाली में चलनिधि विस्तार के लिए रिज़र्व बैंक के पास सहज उपलब्ध था। एम एस एस के माध्यम से अवरुद्ध राशि रिज़र्व बैंक में केंद्र सरकार के खाते में अवरुद्ध बनी रही[9]। एम एस एस शेष राशियों के निवेश

9 संकट के परिणामस्वरूप, एम एस एस के अंतर्गत नये निर्गम रोक लिये गये थे और सरकार के बाजार उधार के भाग का वित्तपोषण एम एस एस नकद खाता के अन्तर्गत शेष राशियों के अवपृथक्करण द्वारा किया गया था। प्रणाली में चलनिधि भरने (इंजेक्ट) के लिए वर्तमान एम एस एस प्रतिभूतियों की वापसी-खरीद का कार्य भी शुरू किया गया था। इससे तुलन पत्र के देयता पक्ष की ओर 'जमाराशियां' शीर्ष के भीतर अनिवार्य रूप से संरचनात्मक परिवर्तन हुआ। इन परिचालनों को प्रतिबिंबित करते हुए, एम एस एस शेष राशियों में छः महीनों की अवधि के दौरान महत्वपूर्ण कमी हो गई जो सितंबर 2008 के अंत की स्थिति के अनुसार 1,740 बिलियन रुपये से अधिक की राशि से कम होकर जून 2009- अंत तक 229 बिलियन रुपये के लगभग रह गई।

मोचन से रिज़र्व बैंक को किसी महत्वपूर्ण उपाय द्वारा अपने तुलन पत्र में विस्तार का सहारा लिये बिना आवश्यक चलनिधि विस्तार करने की गुंजाइश प्राप्त हो गई।

4.60 आस्ति पक्ष की ओर, रिजर्व बैंक के तुलन पत्र में संकुचन लाने वाला एक प्रमुख तत्व पूंजी प्रवाह में उलटाव की स्थिति थी क्योंकि संकट गहन हो गया था और वैश्विक समष्टि आर्थिक स्थितियों में गिरावट आ गई थी। पूंजी बहिर्गमन के परिणामस्वरूप, भारत की भुगतान संतुलन की स्थिति 2008-09 की तीसरी तिमाही के दौरान दबाव में आ गई। विदेशी मुद्रा बाजार में व्यवस्थित स्थितियां सुनिश्चित करने की दृष्टि से कमी को पूरा करने के लिए एक उपसाध्य (कॅरॉलरि) के रूप में रिज़र्व बैंक से यह अपेक्षा थी कि वह आरक्षित निधियों में आहरण द्वारा कमी करे। आरक्षित निधियों में आहरण द्वारा कमी से आधार (आरक्षित) मुद्रा में तद्नुरूपी संकुचन हुआ। इसलिए, आस्ति पक्ष की ओर विदेशी मुद्रा विनिमय दरों को स्थिर करने के लिए विदेशी आस्तियों में कमी ने समग्र आस्तियों को कम करने का कार्य किया।

4.61 यद्यपि ओ एम ओ के माध्यम से देशी आस्तियों तथा चयनित भारतीय वित्तीय संस्थाओं की चलनिधि आवश्यकताओं के निभाव में विस्तार हुआ, मंदित ऋण वातावरण के कारण बड़े और निरंतर रिवर्स रेपो परिचालनों के परिणामस्वरूप तुलन पत्र के आकार में संकुचन निवल प्रभाव था। परिणाम के रूप में, रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का आकार 30 जून 2008 के 14,630 बिलियन रुपये से घट कर 30 जून 2009 की स्थिति के अनुसार 14,082 बिलियन रुपये रह गया । इस प्रकार, पूर्व में अवरुद्ध चलनिधि के पुनः प्रणाली में जारी होने से बाजार स्थिर हो गये और इसने वैश्विक प्रवृत्ति से भिन्न, रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में किसी असामान्य वृद्धि दर्शाये जाने को भी रोका है।

4.62 संकट का सामना करने के लिए की गई कार्रवाई में रिज़र्व बैंक और अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों के बीच कुछ मुख्य भिन्नताएं हैं (मोहंती, 2011)। प्रथम, रिज़र्व बैंक द्वारा बाजार में चलनिधि इंजेक्शन के मामले में, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के मामले में बैंकेतर से भिन्न, बैंक प्रतिपक्षी थे। यहाँ तक कि अन्य वित्तीय संस्थाओं, जैसे म्युच्युअल फंड्स, गैर-बैंक वित्तीय कंपनियों और आवास वित्त कंपनियों के लिए चलनिधि उपाय बैंकों के माध्यम से चैनल किये गये थे। गैर-बैंक वित्त कंपनियों (एन बी एफ सी एस) को उधार देने के लिए आर बी आई अधिनियम 1934 के सांविधिक प्रावधान में प्रतिबंधों के कारण विशेष प्रयोजन माध्यम (एस पी वी) के माध्यम से पात्र गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों-गैर-जमा ग्रहण-प्रणालीगत महत्वपूर्ण (एन बी एफ सी- एन डी एस आई) के लिए अस्थाई चलनिधि बेमेल को पूरा करने के लिए चलनिधि समर्थन प्रदान करने के लिए केंद्र सरकार द्वारा एक नवोन्मेषी व्यवस्था लागू की गई थी। इस व्यवस्था के अंतर्गत रिज़र्व बैंक को एस पी वी द्वारा जारी सरकार द्वारा गारंटीकृत प्रतिभूतियां खरीदनी थी और एस पी वी को क्रमशः रिजर्व बैंक से प्राप्त निधियां अल्पावधि लिखतों में निवेश करनी थी[10]। यद्यपि इस सुविधा की उपलब्धता सीमित थी, यह चलनिधि संकट को नियंत्रित करने के लिए सरकार और रिज़र्व बैंक के बीच प्रभावी सहयोग का एक उदाहरण था। द्वितीय, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बंधक प्रतिभूतियों और वाणिज्यिक पत्रों से भिन्न, भारत में संपार्श्विक प्रतिभूतियों का दायरा सरकारी प्रतिभूतियों से अधिक विस्तारित नहीं हुआ था, जिसने संपार्श्विक मानदंडों को अक्षुण्ण रखा है। तृतीय, भारी चलनिधि विस्तार के बावजूद रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में पूर्व में अवरुद्ध चलनिधि के जारीकरण के कारण असामान्य वृद्धि दृष्टिगत नहीं हुई।

4.63 अगले तीन वर्षों में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के आकार में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। मुद्रास्फीति को नियंत्रित रखते हुए वसूली प्रक्रिया को मजबूत बनाने के लक्ष्य के साथ नीति कार्रवाई एवं चलनिधि प्रबंध परिचालनों की अनुक्रिया में जून 2010 तक उसमें 15,531 बिलियन रुपये तक का, जून 2011 तक 18,047 बिलियन रुपये तक का और आगे जून 2012 तक 22,089 बिलियन रुपये तक का विस्तार हुआ। आस्ति पक्ष की ओर, मूल्यन प्रभावों के कारण चलनिधि के इंजेक्शन और विदेशी मुद्रा आस्तियों के लिए सरकारी प्रतिभूतियों की खुला बाजार खरीद के कारण रिज़र्व बैंक की दोनों देशी प्रतिभूतियों की धारिता में वृद्धि हुई थी। देयता पक्ष की ओर, तुलन पत्र का विस्तार 2009-10 और 2010-11 में संचलन में मुद्रा और जमाराशियों में वृद्धि तथा 2011-12 में संचलन में मुद्रा की वृद्धि के साथ सी जी आर ए में अभिवृद्धि के कारण था।

10 अल्पावधि लिखतों में वाणिज्यिक पत्र और 90 दिनों से अनधिक अवशिष्ट परिपक्वता वाले और निवेश ग्रेड के रूप में श्रेणीकृत अपरिवर्तनीय डिबेंचर शामिल हैं।

VI. समापन टिप्पणी

4.64 केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र से दो मुख्य आर्थिक एजेंटों के साथ उसका संबंध प्रतिध्वनित होता है, जिनके लिए वह एक बैंकर का कार्य करता है, अर्थात् बैंक और सरकारें । जहाँ कुछ अर्थ में बैंकों के साथ केंद्रीय बैंक का संबंध मौद्रिक नीति संचारण का मूल अधिकार क्षेत्र है, राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारों का अंतरापृष्ठ केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में प्रतिबिंबित होता है। यह महत्वपूर्ण हो सकता है, जैसा कि हाल के आर्थिक संकट के मामले में हुआ है, जब केंद्रीय बैंकों ने वित्तीय बाजारों को चलनिधि और स्थिरता प्रदान करने के लिए सरकारी बांडों की खरीद सहित गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति उपाय अपनाये थे। इस प्रकार इस रिपोर्ट के पूर्ववर्ती अंक में केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र और मौद्रिक गति-सिद्धांत के बीच सह-सबंध का विश्लेषण करने के बाद, वर्तमान अध्याय में, विशेष रूप से सुधार के पश्चात् की अवधि में, सरकार और भारतीय रिज़र्व बैंक के बीच विकसित संबंध के एक आईने के रूप में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में परिवर्तनों का विश्लेषण किया गया है। जैसी कि उक्त अध्याय में चर्चा की गई है, रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के परिप्रेक्ष्य से इन दो प्राधिकारियों के बीच सह-संबंध तीन स्त्रोतों से प्रकट होता है, अर्थात् केन्द्रीय बैंक के पास सरकार की जमाराशियां, डब्ल्यू एम ए और ओवरड्राफ्ट के माध्यम से सरकार को केंद्रीय बैंक के ऋण तथा सरकार की प्रतिभूतियों में उसके निवेश ।

4.65 ऐतिहासिक रूप में, सामाजिक नियंत्रण की अवधि (1968-1990) के दौरान राजकोषीय प्रभुत्व सुस्पष्ट था। 1980 के दशक के मध्य से मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण दृष्टिकोण के प्रारंभ ने मौद्रिक नीति परिचालनों में राजकोषीय प्रभुत्व के कारण उत्पन्न परिचालनगत दबावों तथा कठोरताओं को नियंत्रित करने की आवश्यकता को रेखांकित किया था। एक बाजार आधारित सरकारी उधार कार्यक्रम का उभरना, सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गमों में रिज़र्व बैंक की संलग्नता पर रोक तथा विभिन्न दीर्घावधि निधियों में उसके अभिदान में काफी अधिक कटौती ने केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र और राजकोषीय नीतियों के बीच अंतरापृष्ठ में एक नये युग का सूत्रपात किया। पिछले तीन दशकों में समग्र मौद्रिक आधार में केंद्रीय सरकार को निवल आर बी आई ऋण का अंश क्रमशः कम हुआ है।

4.66 2000 के दशक में, जब मौद्रिक विस्तार में राजकोषीय विस्तार की प्रमुख भूमिका क्रमशः कम हो गई तो पूंजी प्रवाहों ने केंद्रीय स्थान ग्रहण कर लिया और रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में एक नया आयाम जोड़ दिया, क्योंकि रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर निवल देशी आस्तियों में कटौती के साथ निवल विदेशी आस्तियां साथ-साथ संचित हो गई थी। परिणामस्वरूप, पूर्वानुमानित तथा वास्तविक एम3 संवृद्धि के बीच विचलन महत्वपूर्ण रहा, यद्यपि वह 1980 के दशक और 1990 के दशक की मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण व्यवस्था में हुए विचलन के मुकाबले कम था। एम एस एस का लागू किया जाना राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच अंतरापृष्ठ में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर था, जिसके अंतर्गत अवरुद्धता प्रयोजनों के लिए सरकारी प्रतिभूतियां जारी की गई थी, जिसमें राजकोष भी अवरुद्धता लागत में सहभागिता कर रहा था।

4.67 इस बात को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान गैर-परंपरागत मौद्रिक नीतियों और मात्रात्मक सुलभता उपायों को अपनाये जाने से अनेक केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्रों में विस्तार हो गया है। इसके विपरीत, भारत में, रिज़र्व बैंक द्वारा हस्तक्षेप की संरचना इस प्रकार से की गई थी कि 2008-09 में उसका तुलन पत्र सिकुड़ गया। उसके बाद से रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में महत्वपूर्ण विस्तार हुआ है, जिसमें सरकार के उधार कार्यक्रम और मुद्रास्फीति नियंत्रण को समर्थन देते हुए वसूली प्रक्रिया को सुदृढ़ बनाने के लक्ष्य के साथ उसके चलनिधि प्रबंध परिचालन प्रतिबिंबित हुए हैं। विशेष रुप से संकट के पश्चात् के दृश्य-विधान में, जिसने पूंजी मोर्चे पर अनेक केंद्रीय बैंकों को समस्याओं का सामना करते हुए देखा है, आज के बाजारोन्मुख और वैश्विक वातावरण में बढ़ते हुए मूल्यन और प्रणालीगत जोखिमों के प्रकाश में, तुलन-पत्र के सुदृढ़ीकरण की आवश्यकता महसूस की जा रही है जिसका रिज़र्व बैंक से अधिशेष अंतरण के लिए निहितार्थ है। सेन्योरेज के कारण राजस्व भी, जो आवश्यक रूप से मुद्रा निर्माण से लाभ से संबंध रखता है, संकट के पश्चात् सामान्यतः कम हो गया है और सी आर आर में कमी के साथ अंतर्राष्ट्रीय ब्याज दरों में गिरावट को प्रतिबिंबित करता है।

4.68 जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र वाणिज्य बैंकों और सरकार के साथ केंद्रीय बैंक के संबंध की भावना को प्रदर्शित करता है। यह संबंध स्थायी नहीं है, बल्कि वह विगत समयावधि में महत्वपूर्ण रूपांतरणों से गुजरा है। भारतीय अनुभव इस सामान्य प्रवृत्ति के लिए कोई अपवाद नहीं है।

5 राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय और सरकारी कर्ज और नकदी प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्थाएं : एक मध्यावधि दृष्टिकोण

राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय के लिए मध्यावधि दृष्टिकोण का निर्धारण मांग दर (जो मौद्रिक नीति का परिचालन लक्ष्य है और जिसका मौद्रिक नीति दर के लिए सामान्यतया एक परोक्षी के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है) और उत्पादन अंतराल, मुद्रास्फीति अंतराल और जी डी पी अनुपात में राजकोषीय घाटे के बीच एक आनुक्रमिक संबंध के अनुमान पर आधारित है। वर्तमान परिस्थिति में, मुद्रास्फीति नियंत्रण की संभावना तथा उत्पादन अंतराल को नकारात्मक रखते हुए, मध्यावधि में अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर प्रवृत्ति की ओर लौटने की दृष्टि से निवेश को प्रोत्साहित करने की उच्च प्राथमिकता है। इस संदर्भ में, एक व्यवस्थित और गुणात्मक राजकोषीय समायोजन मध्यावधि में, सामान्य रूप से समष्टि आर्थिक स्थिरता और विशेष रूप से संवृद्धि उद्देश्य पर विचार करने के लिए मौद्रिक नीति को अधिक खुली ऊँचाई (हेड रूम) प्राप्त होगी। कर्ज/नकदी प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्था के मुद्दे पर वैश्विक वित्तीय संकट के संबंध में अंतर्राष्ट्रीय अनुभव राजकोषीय, मौद्रिक और कर्ज प्रबंध के एक साथ गुंथे होने को विशिष्टता प्रदान करता है और इस प्रकार मौद्रिक और कर्ज प्रबंधकों और राजकोषीय प्राधिकारियों के बीच निकट समन्वय की आवश्यकता को रेखांकित करता है। भारत में वर्तमान परिस्थिति में, सरकारी उधार राशियां दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही हैं और सामान्य आर्थिक वातावरण विकसित होती हुई राजकोषीय स्थिति की कड़ी निगरानी के लिए आधार प्रस्तुत करता है। इस संदर्भ में, सरकार के साथ अधिक गहन समन्वय के साथ सरकारी कर्ज प्रबंध में केंद्रीय बैंक की संलग्नता की निरंतरता मध्यावधि के लिए उपयुक्त दृष्टिकोण प्रतीत होता है।

1. प्रस्तावना

5.1 वैश्विक वित्तीय संकट ने मौद्रिक राजकोषीय समन्वय के इतिहास में एक मोड़ बिन्दु चिह्नित किया है, जिसमें लगभग सभी देशों में सरकारें और केंद्रीय बैंक वित्तीय स्थिरता की पुनः स्थापना के लिए एक अभूतपूर्व और गैर-परंपरागत पैमाने पर कार्य कर रहे हैं। जहाँ अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में सरकारों ने असफल निवेश बैंकों, बैंकेतर और बीमा कंपनियों को बेलिंग आउट करने और यहाँ तक कि उनका एकमुश्त राष्ट्रीयकरण करने के लिए एक निर्णयात्मक कार्रवाई की और वास्तविक अर्थव्यवस्था पर संकट के प्रभाव को कम करने के लिए काफी अधिक राजकोषीय प्रोत्साहन प्रदान किया, केंद्रीय बैंकों ने बैंकों व गैर-बैंकों के लिए समान रूप से चलनिधि खिड़कियां खोल दी और मुद्रा स्वैप लाइन्स प्रारंभ कर दी।

5.2 संकट के दौरान प्रारंभ की गई गैर-परंपरागत राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों से निकासी में हालांकि, उसी प्रकार का सामंजस्य नहीं दिखाई दिया। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में, चूंकि विद्यमान घाटे के आकार के अतिरिक्त मितव्ययिता उपायों के प्रति राजनैतिक मतैक्य के अभाव के कारण राजकोषीय बहिर्गमन एक कठिन और दीर्घकालिक प्रक्रिया प्रतीत होती है, आर्थिक सुधार की कमज़ोर स्थिति को अपेक्षित बढ़ावा देने के लिए मौद्रिक नीति का समंजनकारी बने रहना जारी रहा है। यूरो क्षेत्र में, प्रतीयमानतः अड़ियल राष्ट्रिक कर्ज समस्याओं ने, राजकोषीय अनुशासन की पुनः स्थापना करने के लिए अनेक पहल करने के बावजूद, एक स्थायी निभावशील मौद्रिक नीति रुख का होना आवश्यक बना दिया है, फिर भी हाल की अवधि में अर्थव्यवस्था के संकुचन की गति से कुछ उपशमन दिखाई दिया है। दूसरी ओर, उभरती अर्थव्यवस्थाएं, संकट से शीघ्र उबरने और मुद्रास्फीतिकारी दबावों के उभरने की दृष्टि से राजकोषीय और मौद्रिक दोनों, सुदृढ़ीकरण का समसामयिक रूप से पालन कर रही हैं। हालांकि, बाद में, वैश्विक संवृद्धि में शिथिलता, देशी संरचनात्मक रुकावटों और पण्य और/अथवा आस्ति कीमत दबावों के समाधान के लिए (विगत दिनों में) मौद्रिक नियंत्रण में वृद्धि ने उभरते बाजार वाले देशों के भावी संवृद्धि-पथ को प्रभावित किया। इससे हाल की अवधि में कुछ मौद्रिक सुलभता की स्थिति बनी, हालांकि, कुछ देशों में आगे और निभाव के लिए नीतिगत स्थान कम हो गया है।

5.3 सामान्य रूप से, संकट के बाद, क्रमशः यह बात महसूस की जा रही है कि वैश्वीकरण की परिपक्वता के साथ ही और विशेष रूप से वित्तीय वैश्वीकरण के गहन होने तथा अर्थव्यवस्था के अदृश्य जोखिमों के प्रकट होने के साथ ही संयुक्त रूप से कार्रवाई करने की गुंजाइश के व्यापक हो जाने की संभावना है जहाँ सरकारों और केंद्रीय बैंकों को एक दूसरे के क्रियाकलापों की पहुँच (डोमेन) का सम्मान करते हुए मेल-मिलाप के साथ अधिक बारंबार कार्य करना पड़

सकता है। वर्धमान राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय की आवश्यकता को प्रमाणित करने की अंतर्राष्ट्रीय नीतिगत सोच में निहित बदलाव के तात्कालिक प्रकटीकरण के लिए नयी संस्थागत कॉलेजियल व्यवस्थाएं हैं जिनमे केंद्रीय बैंक, अन्य विनियामक और सरकार शामिल है, जिन्हें वित्तीय स्थिरता को प्रोत्साहित करने का प्राथमिक उत्तरदायित्व सौंपा गया हैं ।

5.4 राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय और 2011 में अनेक देशों में सरकारी घाटे में कमी से प्राप्त सकारात्मक अनुभव के बावजूद, आइ एम एफ के ताजा राजकोषीय मोनीटर (अक्तूबर 2012) ने अनेक उन्नत और कुछ उभरती बाजार अर्थ व्यवस्थाओं में बहुत उच्च सार्वजनिक कर्ज विस्तार आवश्यकताओं से उत्पन्न उत्थित राजकोषीय भेद्यताओं को विशिष्टता से दर्शाया है, जबकि उसने अनेक देशों में क्रियाकलाप की सामान्य शिथिलता के संदर्भ में राजकोषीय समायाजन की एक व्यवस्थित गति की सिफारिश की। उक्त दस्तावेज से भी यह पाया गया है कि सार्वजनिक वित्त को मध्यावधि में सुदृढ़ स्तर पर रखा जाना एक प्राथमिकता होना चाहिए क्योंकि यह संवृद्धि के लिए एक मुख्य पूर्वापेक्षा के रूप में रहता है।

5.5 भारत में भी, वैश्विक वित्तीय संकट की अप्रत्यक्ष रुकावट से पीछा छुड़ाने के बाद राजकोषीय सुदृढ़ीकरण प्रयासों का पुनरारंभ चुनौतियों से घिर गया है। वास्तव में, बारहवीं योजना के प्रथम वर्ष (2012-13) के दौरान एक मामूली सुधार के बावजूद वैश्विक आर्थिक संभावनाओं के प्रति महत्वपूर्ण जोखिम बने रहते हैं। इसके अतिरिक्त, हाल की सुलभता के बावजूद थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति में आगे और कमी आपूर्ति दबावों में कमी तथा राजकोषीय सुदृढ़ीकरण पर प्रगति आकस्मिक है। इसके अलावा, चूंकि 2012-13 के दौरान अब तक राजकोषीय घाटा उच्च रहा है, बारहवीं योजना के लिए अपेक्षित संसाधनों के उत्पादन के लिए राजकोषीय स्थिति में एक कायापलट अनिवार्य है। 2012-13 के केंद्रीय बजट में, वास्तव में, पिछले वर्ष के परिशोधित अनुमानों में राजकोषीय घाटे को घटा कर 5.9 प्रतिशत से जी डी पी के 5.1 प्रतिशत तक लाने का प्रस्ताव था। बजट में एफ आर बी एम अधिनियम में कुछ संशोधन भी प्रस्तावित थे। 29 अक्तूबर 2012 को वित्त मंत्री ने बारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान एक राजकोषीय सुदृढ़ीकरण योजना अपनाने संबंधी सरकार के निर्णय की घोषणा की जिससे राजकोषीय घाटा 2012-13 में जी डी पी के 5.3 प्रतिशत से क्रमशः घट कर 2016-17 में जी डी पी का 3.0 प्रतिशत हो जाएगा। उसके बाद से सरकार द्वारा उठाये गये अधिकांशतः ईंधन सब्सिडी घटाने के महत्वपूर्ण कदमों से एक महत्वपूर्ण संकेतन प्रभाव पड़ा है यद्यपि 2012-13 के राजकोषीय घाटे पर उनका प्रभाव नगण्य होने की अपेक्षा है।

5.6 इस पृष्ठभूमि के सामने, इस अध्याय के खंड ।। में सुधार-पश्चात् अवधि में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच संस्थापित संबंध का निर्धारण किया गया है तथा मध्यावधि में उनके विकासवादी पथ के लिए कुछ निहितार्थों की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है। यह प्रयोग, जो जॉली (2005) पर आधारित है, मांग दर के साथ एक आनुक्रमिक कार्य का अनुमान लगाता है- जो मौद्रिक नीति का परिचालन लक्ष्य है और सामान्यतया मौद्रिक नीति दर के लिए एक परोक्षी के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है- चूंकि आश्रित परिवर्ती और मुद्रास्फीति अंतराल (अर्थात् थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति दर और उसके प्रवृत्ति घटक), उत्पादन अंतराल (अर्थात् जी डी पी का डी- टेंडेड अथवा चक्रीय घटक), जी डी पी में केंद्र के राजकोषीय घाटे का अनुपात (एक अवधि अंतराल के साथ) और एक -अवधि विलंबित मांग दर को व्याख्यात्मक परिवर्तियों के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। सुधार-पश्च अवधि के अधिकांशतः वार्षिक आंकड़े अनुमान लगाने के लिए प्रयुक्त होते हैं। अनुमानित समीकरण मध्यावधि में मौद्रिक नीति के लिए राजकोषीय घाटे, उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल के विकसित होते हुए पथ के निहितार्थों पर व्यापक दिशा-निर्देश प्रदान करता है।

5.7 इस अध्याय के खंड III में कर्ज प्रबंध नीतियों के क्रम-विकास तथा राजकोषीय और मौद्रिक-नीतियों के साथ, विशेष रूप से हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के संदर्भ में, उनके गुंथे होने पर चर्चा की गई है, जिसने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सुसंस्थापित प्रतिमानों के लिए चुनौतियां प्रस्तुत की हैं। जहाँ तक भारत का संबंध है, केंद्र सरकार के कर्ज प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं में एक महत्वपूर्ण जल-विभाजक (वाटर शेड) के रूप में, केंद्र सरकार की कर्ज प्रबंध रणनीति बनाने के लिए 2008 में वित्त मंत्रालय में एक मध्यवर्ती कार्यालय की स्थापना किया जाना था। केंद्र सरकार के ऋण प्रबंध का कार्य संविधि द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक को सौंपा गया है। इसे आगे ले जाते हुए, फरवरी-अंत 2011 में प्रस्तुत केंद्रीय बजट में कहा गया है, ''सरकार, वित्त मंत्रालय में एक स्वतंत्र कर्ज प्रबंध कार्यालय की स्थापना करने की प्रक्रिया में है। एक मध्यवर्ती कार्यालय ने पहले ही कार्य करना प्रारंभ कर दिया है। अगले कदम के रूप में, मैं अगले वित्त वर्ष में भारतीय सार्वजनिक कर्ज प्रबंध बिल

लाने का प्रस्ताव करता हूँ।'' (वित्तमंत्री का बजट भाषण, पैराग्राफ 20) । मध्य -मार्च 2012 में 2012-13 के लिए प्रस्तुत केंद्रीय बजट में, वास्तव में, संसद के बजट सत्र में भारतीय सार्वजनिक कर्ज प्रबंध एजेंसी बिल प्रस्तुत करने का प्रस्ताव रखा गया था। हालांकि, इस प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण पुनर्विचार भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर सुब्बाराव द्वारा पहले, अंतर्राष्ट्रीय निपटान के लिए बैंक में 9 मई 2011 को केंद्रीय बैंक अभिशासन दल की बैठक में प्रस्ताव के रूप में प्रस्तुत कर दिया गया था जहाँ उन्होंने निश्चयपूर्वक कहा, ''जहाँ तक मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता प्राप्त करने के ओवर आर्चिंग उद्देश्य के भीतर प्रस्तुत संदर्भ में विभिन्न ताल-मेल के साथ सामंजस्य बिठाने के संस्थागत तंत्र हैं, केंद्रीय बैंक से कर्ज प्रबंध को अलग किया जाना एक उप-इष्टतम विकल्प होना प्रतीत होता है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी, संकट के बाद उभरती हुई बुद्धिमानी मौद्रिक नीति कार्यों, वित्तीय स्थिरता और राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध के बीच स्वतंत्रता तथा राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध के साथ केंद्रीय बैंक की निकट संबद्धता की आवश्यकता को स्वीकार करती है।'' पश्च-वैश्विक वित्तीय संकट के संदर्भ में, इस खंड में उन मुददों पर चर्चा की जा रही है जो मध्यावधि में मौद्रिक और कर्ज प्रबंध के समन्वय की संस्थागत व्यवस्थाओं पर अतिक्रमण कर सकते हैं। अंतिम खंड उक्त चर्चा का समाहार करता है।

II. राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय: मध्यावधि के लिए दृष्टिकोण

पिछली प्रवृत्तियों का पुनः समर्पण

5.8 प्रारंभ करने से पूर्व, 1991-92 के बाद से राजकोषीय और मौद्रिक प्रबंध की कहानी का पुनः समर्पण आवश्यक है, क्योंकि मध्यावधि दृष्टिकोण का निर्धारण करने के लिए विकसित होती हुई प्रवृत्तियों का इस्तेमाल किया जायगा।

राजकोषीय प्रवृत्तियां

5.9 1990-91 में बाह्य भुगतान संकट के परिणामस्वरूप राजकोषीय सुधारों सहित संरचनात्मक सुधारों के प्रारंभ के पश्चात्, 1990 के दशक के प्रथमार्ध के दौरान राजकोषीय असंतुलन सामान्यतया कम हो गया किन्तु अधिकांशतः संवृद्धि में गिरावट और बढ़ते हुए ब्याज भुगतानो तथा मजदूरी और वेतन द्वारा उत्पन्न कर राजस्व की शिथिलता के कारण द्वितीयार्ध के दौरान फिर बढ़ना शुरू हो गया था (चार्ट V.1)। बाद में, चूंकि जी डी पी के सापेक्ष ब्याज भुगतान कम होने शुरू हो गये (सामान्य मौद्रिक सुलभता के कारण) और काफी अधिक इस कारण से कि 2004-05 में राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) अधिनियम के अधिनियमन एवं कार्यान्वयन होने के अतिरिक्त 2007-08 में समाप्त तीन लगातार वर्षों के दौरान 9 प्रतिशत से अधिक की सुदृढ़ संवृद्धि हुई थी, जिसने राजस्वों को बढ़ाने में मदद की थी, राजकोषीय असंतुलन फिर से कम होने शुरू हो गये थे। एक प्राथमिक अधिशेष, वास्तव में, 2003-04, 2004-05, 2006-07 और 2007-08 के दौरान प्राप्त किया गया था। वास्तविकता में, राजकोषीय घाटा 2007-08 में कम होकर जी डी पी का 2.5 प्रतिशत रह गया जो सुधार की शुरुआत के बाद से सबसे कम स्तर था। हालांकि 2008-09 और 2009-10 के दौरान संवृद्धि पर वैश्विक वित्तीय संकट का प्रतिकूल अप्रत्यक्ष प्रभाव टालने के लिए किये गये राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों का परिणाम घाटा उपायों में तीव्र वृद्धि के रूप में सामने आया था। अर्थव्यवस्था में शीघ्र सुधार होने के साथ, 2010-11 में राजकोषीय सुदृढ़ीकरण प्रयास किये गये, जिन्हें दूर-संचार सेवाओं से राजस्व में काफी अधिक एकल आदेश उत्पादन द्वारा समर्थन मिला था। भारी मात्रा में प्रत्यक्ष कर वापसियों और उच्चतर सब्सिडियों के साथ 2011-12 में संवृद्धि में तीव्र गिरावट के परिणामस्वरूप राजकोषीय असंतुलनों में तीव्र वृद्धि हुई। निरर्थक रूप से, पूंजीगत व्यय का अंश, जैसा कि परंपरागत

चार्ट V. I : केंद्र सरकार के मुख्य घाटा संकेतक

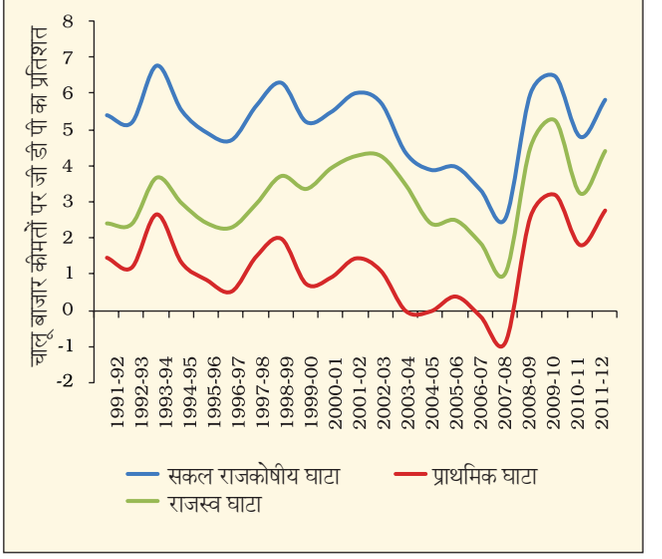

रूप से परिभाषित किया गया है, सामान्यतः कुल सरकारी व्यय में 1991-92 के लगभग 26 प्रतिशत से घट कर 2011-12 में 12 प्रतिशत के आस पास रह गया ।

मौद्रिक नीति रुख का क्रम-विकास

5.10 1991-92 में शुरू संरचनात्मक सुधार के वातावरण में मौद्रिक नीति निर्माण की सुविधा राजकोषीय असंतुलनों में कमी तथा तदर्थ खजाना बिलों के माध्यम से सरकार के बेलगाम अतिरिक्त मुद्रीकरण को सीमित करने की संस्थागत व्यवस्था द्वारा प्रदान की गई थी। दो अंकीय दरें रिकार्ड करने के बाद 1990 के दशक के प्रथमार्ध में मुद्रास्फीति काफी कम हो गई थी जो वैश्विक प्रवृत्ति को प्रतिबिंबित करती है तथा देशी सुधारों की ओर संकेत करती है। मौद्रिक नीति रुख की सुलभता को प्रतिबिंबित करते हुए, बैंक दर क्रमशः अक्तूबर 1991 के 12 प्रतिशत से घट कर अप्रैल 2003 में 6 प्रतिशत रह गई; जून 2000 में संपूर्ण चलनिधि समायोजन सुविधा (एल ए एफ) के संस्थापन के बाद बैंक दर अप्रैल 2003 और जनवरी 2012 के बीच 6 प्रतिशत पर अपरिवर्तित रखी गई, जब उसे सीमांत स्थायी सुविधा (एम एस एफ) के साथ पंक्तिबद्ध कर दिया गया था, जिसे क्रमशः एल ए एफ रेपो दर के साथ संबद्ध कर दिया गया था। दूसरी तरफ, एल ए एफ रेपो दर को अप्रैल 2001 के 9 प्रतिशत से घटा कर मार्च-अंत 2004 में 6 प्रतिशत कर दिया गया था। आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सी आर आर) को भी क्रमशः घटा कर 1991-92 के 15 प्रतिशत से अगस्त 2003 में 4.5 प्रतिशत कर दिया गया। तद्पश्चात्, संवृद्धि दर में महत्वपूर्ण वृद्धि तथा पूंजी आगमन में उछाल की वजह से नवंबर 2007 तक सी आर आर में 7.5 प्रतिशत की उल्लेखनीय वृद्धि हुई । खुला बाजार परिचालनों, एल ए एफ तथा बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) (अप्रैल 2004 में प्रारंभ) ने भी सुदृढ पूंजीगत आगमनों के समक्ष देशी चलनिधि की संवृद्धि को नियंत्रित करने में सहायता की।

5.11 एल ए एफ रेपो दर मार्च-अंत 2004 के 6 प्रतिशत से बढ़कर मार्च-अंत 2007 में 7.75 प्रतिशत हो गई थी, चूंकि मुद्रास्फीति में इस अवधि के दौरान कुछ वृद्धि हुई थी। 2008-09 के प्रथमार्ध के दौरान अंतर्राष्ट्रीय पण्य कीमतों में सख्ती के दबाव के कारण मुद्रास्फीति में तीव्र वृद्धि हुई जिससे यह आवश्यक हो गया था कि सी आर आर और एल ए एफ रेपो दर में जुलाई/अगस्त 2008 तक 9.0 प्रतिशत (प्रत्येक) की वृद्धि के रूप में एक मुद्रास्फीति निवारक नीतिगत अनुक्रिया की जाए। देशी चलनिधि में कमी तथा वैश्विक वित्तीय संकट द्वारा उत्पन्न संवृद्धि में गिरावट का सामना करने के लिए अक्तूबर 2008 में मौद्रिक नीति रुख को अचानक बदलना पड़ा था। इसे प्रतिबिंबित करते हुए अक्तूबर 2008 में सी आर आर में तीव्र कमी करके उसे 6.5 प्रतिशत करना पड़ा तथा आगे और जनवरी 2009 में घटा कर 5.0 प्रतिशत किया गया। एल ए एफ रेपो दर को भी क्रमशः नीचे लाकर अप्रैल 2009 तक 4.75 प्रतिशत किया गया। देशी चल निधि को बढ़ाने के लिए गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति उपाय भी किये गये। निभावशील मौद्रिक नीति के साथ, जैसा कि पहले संकेत किया गया है, वसूली प्रक्रिया के समर्थन में राजकोषीय नीति भी स्फीतिकारी बन गई थी।

5.12 चूंकि वैश्विक वित्तीय संकट के अप्रत्यक्ष प्रभावों से अर्थव्यवस्था में शीघ्र सुधार हो गया था तथा मुद्रास्फीतिकारी दबावों ने जड़ें जमाना शुरू कर दिया था, एल ए एफ रेपो दर क्रमशः बढ़ कर अक्तूबर 2011 में 8.5 प्रतिशत हो गई और अप्रैल 2010 तक सी आर आर को 6.0 प्रतिशत तक बढ़ा दिया गया था। 2011-12 में संवृद्धि के तेजी से घट कर प्रवृत्ति से कम हो जाने के साथ और मुद्रास्फीति दर से सामान्य हो जाने के साथ मार्च 2012 तक सी आर आर को घटा कर 4.75 प्रतिशत कर दिया गया था और एल ए एफ रेपो दर को अप्रैल 2012 में (अर्थात्, 2012-13 के दौरान) घटा कर 8.0 प्रतिशत कर दिया गया था। उसके बाद एल ए एफ रेपो दर में आगे और कमी को स्थगित रखा गया क्योंकि राजकोषीय समायोजन के लिए अपेक्षित सम्पूरक नीतिगत कार्रवाई तथा निवेश वातावरण में सुधार का अभाव था। किन्तु, जुलाई 2012 में एस एल आर में 100 आधार बिन्दु की कटौती तथा सितंबर-अक्तूबर 2012 में सी आर आर में संचयी 50 आधार बिन्दु की कटौती के माध्यम से ऋण और चलनिधि स्थितियां आसान हो गई थी। सितंबर 2012 से शुरू करते हुए सरकार द्वारा सुधारों की एक श्रृंखला की घोषणा और मुद्रास्फीति दर में गिरावट के साथ, यद्यपि संवृद्धि में प्रवृत्ति से कम महत्वपूर्ण गिरावट हुई, एल ए एफ रेपो दर और सी आर आर में, प्रत्येक में 25 आधार अंक की कमी करते हुए उन्हें जनवरी 2013 में तीसरी तिमाही की मौद्रिक नीति की समीक्षा के दौरान क्रमशः 7.75 प्रतिशत और 4.0 प्रतिशत कर दिया गया।

आरक्षित मुद्रा और मुद्रा आपूर्ति के स्रोतों में परिवर्तन

5.13 1991-92 से 2007-08 तक की अवधि में आरक्षित मुद्रा की बकाया राशि में केंद्र सरकार को आर बी आई के निवल ऋण के

अंश में निरंतर गिरावट तथा आर बी आई के निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों के अंश में तदनुरूपी वृद्धि स्पष्ट रूप से दिखाई दी थी (चार्ट V.2) । इससे राजकोषीय असंतुलनों में सामान्य कमी तथा एक तरफ सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास तथा दूसरी ओर विदेशी मुद्रा बाजारों और पूंजी आगमनों के उदारीकरण की ओर लक्ष्य करके की गई पहल के साथ बजट घाटों के मुद्रीकरण को सीमित करने के लिए की गई संस्थागत व्यवस्था का प्रभाव प्रतिबिंबित होता है। वास्तव में, 1999-2000 और आगे से आरक्षित मुद्रा के प्रमुख स्रोत के रूप में सरकार को निवल आर बी आई ऋण के स्थान पर निवल विदेशी मुद्रा आस्तियां आ गई है। इसके अतिरिक्त, 2004-05 से 2007-08 तक की अवधि को इस बात के लिए चिह्नित किया गया था कि इसमें सुदृढ़ पूंजी प्रवाहों के समक्ष एम एस एस परिचालनों के माध्यम से अलग रखे गये सरकारी खाते में अतिरिक्त देशी चलनिधि का काफी अधिक मात्रा में सफाया किया गया था। वैश्विक वित्तीय संकट के अप्रत्यक्ष प्रभाव के अंतर्गत 2008-09 में प्रारंभ होकर केंद्र को निवल आर बी आई ऋण के अंशों तथा आरक्षित मुद्रा में आर बी आई की विदेशी मुद्रा आस्तियों की प्रवृत्तियों में तेजी से उलटाव आया है।

5.14 पूंजी प्रवाहों के उलटाव से उत्पन्न संकट तथा परिणामी विदेशी मुद्रा बाजार दबावों ने विदेशी मुद्रा विनिमय दर में अस्थिरता का सामना करने के लिए आर बी आई के बाजार परिचालनों को प्रेरित किया, जिससे देशी चलनिधि स्थितियों पर दबाव बढ़ गया। अनुक्रिया में निम्नलिखित के माध्यम से देशी चलनिधि में वृद्धि की गई थी: (i) ओ एम ओ के माध्यम से सरकार के राजकोषीय प्रोत्साहन-जनक बड़े बाजार उधार कार्यक्रम को मौद्रिक समर्थन; (ii) एम एस एस शेष राशियों का निवेश-मोचन और उनका अवपृथक्करण और (iii) एल ए एफ के माध्यम से बैंकिंग प्रणाली में बहुत अधिक चलनिधि इंजेक्शन। 2011-12 में केंद्र को निवल आर बी आई ऋण तथा आरक्षित मुद्रा में निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों, दोनों में ही वृद्धि हुई थी; निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों के अंश में वृद्धि मुख्य रूप से रुपया मूल्यहास के कारण मुद्रा पुनर्मूल्यन की वजह से हुई थी।

5.15 जहाँ तक सरकार को बैंक ऋण के अंश तथा बैंकिंग प्रणाली की विदेशी मुद्रा आस्तियों का संबंध है, व्यापक मुद्रा स्रोतों में भी इसी प्रकार की प्रवृत्ति दिखाई दी (चार्ट V.3)। हालांकि वाणिज्य क्षेत्र को बैंक ऋण, 2003-04 के पश्चात् उनके अंशों में महत्वपूर्ण वृद्धि के साथ सम्पूर्ण अवधि में व्यापक मुद्रा के प्रमुख घटक बने रहे।

मांग दर, जी डी पी संवृद्धि तथा मुद्रास्फीति में प्रवृत्तियां

5.16 सुधार के पश्चात्, ब्याज दरों के संबंध में बाजार के निर्णय के साथ, मांग दर सामान्यतया चलनिधि और मुद्रास्फीति स्थितियों

चार्ट V.2: आरक्षित मुद्रा के स्रोत

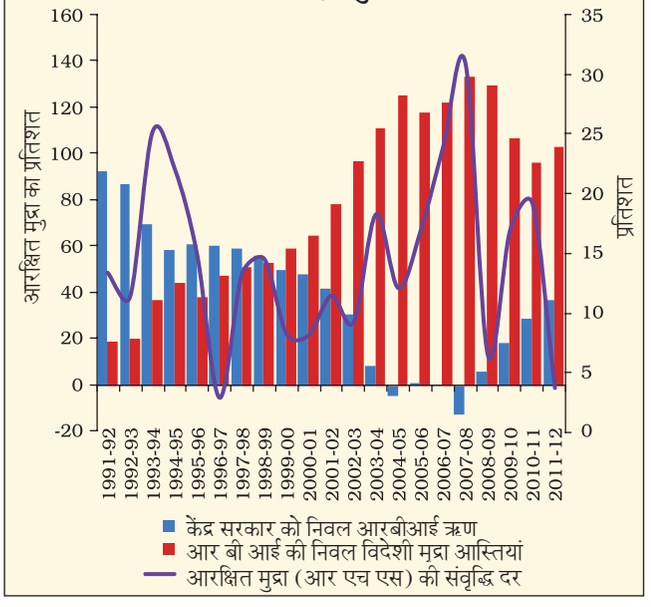

चार्ट V.3: व्यापक मुद्रा के स्रोत

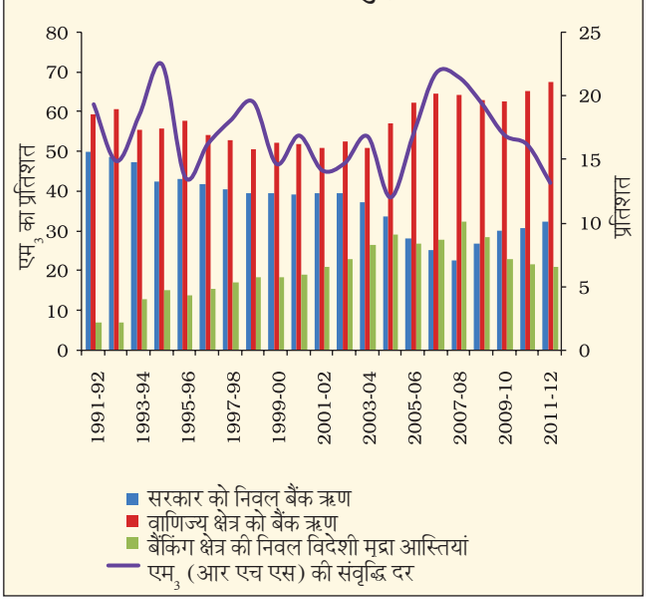

की अनुक्रिया में मौद्रिक नीति दर के अनुरूप चली है (चार्ट V.4)। 2000 में एल ए एफ के संस्थापन के पश्चात्, मांग दर की अस्थिरता में महत्वपूर्ण कमी हुई। मध्य-1990 के दशक के बाद मुद्रास्फीति दर में महत्वपूर्ण कमी हुई, यद्यपि, वर्ष के दौरान आपूर्ति और मांग की तरफ पर विभिन्न तत्वों के मिश्रण को प्रतिबिंबित करते हुए, 2010-11 के पश्चात् तीव्र वृद्धि हुई थी। 1991-92 में ढांचागत सुधारों के लिए की गई पहल के परिणामस्वरूप वास्तविक जी डी पी संवृद्धि दर में सुधार हुआ, किन्तु 1990 के दशक के अंतिम वर्षों के दौरान उसमें शिथिलता आ गई थी, जिसका मुख्य कारण औद्योगिक सुधार प्रक्रिया में गतिशीलता का अभाव था। राजकोषीय सुदृढ़ीकरण, सामान्य मुद्रास्फीति, काफी अधिक पूंजी का आगमन और बचत तथा निवेश की उच्च दर के समर्थन से 2003-04 के बाद संवृद्धि दर में फिर और काफी अधिक सुधार हुआ। संवृद्धि दर, 2008-09 में वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप कम हो गई किन्तु बाद के दो वर्षों में समन्वित राजकोषीय नीति कार्रवाइयों द्वारा समर्थन प्राप्त होने से उसमें तुरंत सुधार हो गया। 2011-12 के दौरान वैश्विक आर्थिक स्थितियों के बिगड़ने तथा ढांचागत बाधाओं के बने रहने के कारण संवृद्धि प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा ।

5.17 1990 के दशक के प्रारंभ में ढांचागत सुधारों की पहल करने के बाद से राजकोषीय-मौद्रिक पारस्परिक क्रिया में व्यापक प्रवृत्तियों की समीक्षा करते हुए, इस प्रकार की पारस्परिक क्रियाओं में

चार्ट V. 4: संवृद्धि दर, मुद्रास्फीति दर और मांग दर

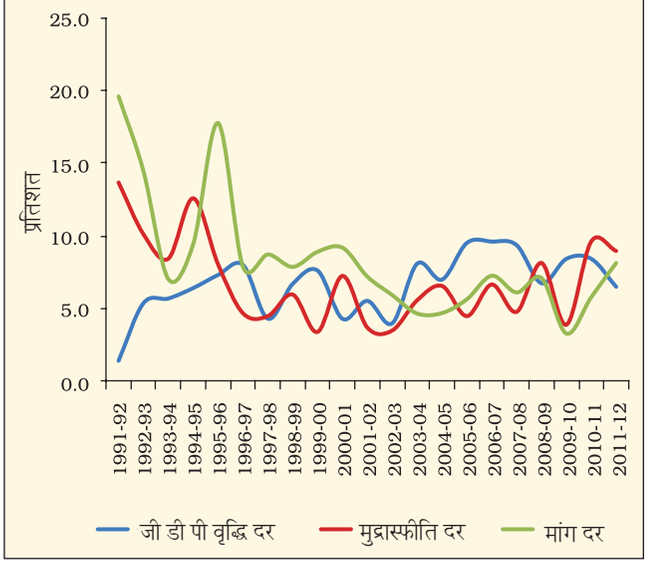

अंतर्निहित सैद्धांतिक व्याख्या और इस विषय पर कुछ अनुभवजन्य साहित्य पर भी आगे संक्षेप में चर्चा की गई है।

राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच पारस्परिक क्रिया के माध्यम-सैद्धांतिक और अनुभवजन्य मुद्दों की सारग्राही समीक्षा

5.18 राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों ही नीतियां समष्टि आर्थिक स्थिरीकरण के उपकरण हैं। संवृद्धि, कीमत स्थिरता और वित्तीय स्थिरता के उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयासों में न्यायोचित ढंग से सामंजस्य स्थापित करने के लिए इन दो नीतियों के बीच समन्वय आवश्यक है। उक्त स्थितियां राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों द्वारा इन उद्देश्यों को सौंपे गये विभेदक भार द्वारा तथा विकासशील समष्टि आर्थिक और वित्तीय स्थितियों के बारे में अनिश्चितता द्वारा प्रायः जटिल हो जाती हैं। उदाहरण के लिए, संवृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिए एक (अतिरिक्त) स्फीतिकारी राजकोषीय नीति के माध्यम से लाई गई कुल मांग में वृद्धि मौद्रिक प्राधिकारियों की सुविधानुसार मुद्रास्फीति दर में परिवर्तन कर सकती है। उसी प्रकार, एक कठोर मौद्रिक नीति उच्चतर बाजार ब्याज दरों में परिवर्तित हो सकती है तथा ब्याज भुगतानों के व्यय एवं बजट घाटे में वृद्धि हो सकती है।

5.19 इन दो नीतियों के बीच की पारस्परिक क्रिया का विश्लेषण बजट घाटे के वित्तपोषण पक्ष से भी किया जा सकता है, अर्थात्, मोटे तौर पर बांडों और मुद्रा के अनुसार। बजट घाटों का बांड वित्तपोषण ब्याज दरों पर सामान्य दबाव डाल सकता है जिससे निजी क्षेत्र के निवेशों का बहिर्गमन बढ़ सकता है और एक बिन्दु से परे, संवृद्धि संभावनाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। निजी निवेश के बहिर्गमन का प्रभाव निजी संस्थाओं की ओर से गैर-रिकार्डियन व्यवहार के मामले में ही पड़ता है, अर्थात् वे यह महसूस नहीं करते हैं कि, उदाहरण के लिए, आज के बजट घाटे की वृद्धि में भविष्य के कर भार की वृद्धि अंतर्निहित है और तदनुसार चूंकि सार्वजनिक बचत में गिरावट आ जाती है, उनकी बचत में उस सीमा तक वृद्धि नहीं होती है। फ्लिप साइड पर, इस सीमा तक कि (बड़े) बजट घाटों का वित्तपोषण (गैर आनुपातिक रूप से) मुद्रा निर्माण के माध्यम से किया जाता है, ये यदि समझौता नहीं करते हैं तो अवश्यंभावी रूप से कीमत स्थिरता के घोषित मौद्रिक नीति उद्देश्यों में हस्तक्षेप करते हैं।

5.20 उसी समय, चूंकि हाल के वैश्विक संकट के साथ भारतीय अनुभव ने बजट घाटे में काफी अधिक वृद्धि दर्शायी है, राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों द्वारा उत्पन्न घाटे को एक निभावशील मौद्रिक नीति रुख द्वारा समर्थन प्रदान किया गया था ताकि प्रारंभ में मुद्रास्फीति

दर के कम रहने के बावजूद वित्तीय बाजार अस्थिरता को रोका जा सके तथा अधिक सामान्य रूप से सुधार प्रक्रिया को जारी रखा जा सके। एक अन्य माध्यम जिससे राजकोषीय घाटे मौद्रिक नीति का अतिक्रमण कर सकते हैं, वह उनके चालू खाता घाटे पर प्रभाव के माध्यम से है (उच्चतर आयातों के माध्यम से) और देश जोखिम प्रीमियम तथा क्रमशः विदेशी मुद्रा विनिमय दर पर प्रभाव है (मोहन्ती और स्कैटिग्ना, 2003) ।

5.21 एक सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य से, सार्जेंट और वालेस के ''अन्प्लेजेंट मोनेटरिस्ट अर्थमेटिक'' (1981) ने दर्शाया है कि जब कभी अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर से ब्याज की वास्तविक दर अधिक हो जाती है तो अल्पावधि में (कीमत स्थिरता बनाये रखने के दृष्टिकोण से) मौद्रिक प्राधिकारियों द्वारा बजट घाटे के मौद्रिक वित्तपोषण में कटौती का कोई प्रयास अन्ततः भविष्य में अधिक मौद्रिक वित्तपोषण और उच्चतर मुद्रास्फीति परिणाम के रूप में सामने आएगा। ऐसा इसलिए कि अल्पावधि में मौद्रिक वित्तपोषण में कटौती से निहितार्थ में अधिक बांड वित्तपोषण होगा जो ब्याज दरें बढ़ाएगा। इससे क्रमशः उच्चतर ब्याज भुगतान करने पड़ेंगे और इस प्रकार कुछ समय के बाद भारी बजट घाटा होगा। क्रमशः उच्चतर क्रम में बांड देयताओं की चुकौती संबंधी सरकार की योग्यता की महसूस की गई सीमाओं को देखते हुए मौद्रिक वित्तपोषण अवश्यंभावी तथा अंततः बड़ा होगा, जिसके परिणाम मुद्रास्फीतिकारी होंगे।

5.22 दूसरी तरफ, भले ही केंद्रीय बैंक घाटे के मौद्रिक वित्तपोषण के लिए मौन स्वीकृति न देता हो, कीमत स्तर के राजकोषीय सिद्धांत (एफ टी पी एल) का यह तर्क है कि मुद्रास्फीति नियंत्रण पर फिर भी समझौता किया जा सकता है (उदाहरण के लिए, कॉक्रेन, 1999, वुडफोर्ड, 1995) । यह इसलिए कि एफ टी पी एल के अनुसार सरकार का अंतर-कालिक बजट दबाव एक संतुलन स्थिति है और मूल्य स्तर एकमात्र परिवर्ती है जो बहिर्जात रूप से दिये गये प्राथमिक अधिशेषों के वर्तमान मूल्य के साथ बांडों के वर्तमान स्टॉक के नाममात्र मूल्य को समीकृत करने के लिए समायोजन कर सकता है। इस प्रकार, वह राजकोषीय नीति है जो मूल्य स्तर का निर्धारण करती है। एफ टी पी एल की, यद्यपि सैद्धांतिक आधार पर आलोचना की गई है और अनुभवजन्य समर्थन भी मिश्रित हो गया है (जॉली, 2005)।

5.23 एक अनुभवजन्य दृष्टिकोण से अनेक अध्ययनों द्वारा वी ए आर ढांचे में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच पारस्परिक क्रिया का विश्लेषण किया गया है। उदाहरण के लिए मस्कैटली और अन्य (2002) ने दर्शाया है कि चयनित ओ ई सी डी देशों के एक सेट में एक राजकोषीय नीति आघात के प्रति मौद्रिक नीति की अनुक्रिया एक समान नहीं थीः जहाँ यू के और यू एस में इस प्रकार के आघात से पहली ही तिमाही में ब्याज दर में महत्वपूर्ण कमी हो गई थी (निभावशील मौद्रिक नीति दर्शाते हुए), वहीं जर्मनी और फ्रांस में कोई स्पष्ट मौद्रिक प्रतिक्रिया नहीं हुई थी। राज और अन्य (2011) ने 2000 से 2010 तक की अवधि के तिमाही आंकड़ों का इस्तेमाल करते हुए भारत में राजकोषीय-मौद्रिक पारस्परिक क्रिया का निर्धारण किया और अन्य बातों के साथ-साथ यह पाया कि जब कि मौद्रिक नीति ने उत्पादन और मुद्रास्फीति आघातों के प्रति प्रतिचक्रीय विधि से प्रतिक्रिया की, राजकोषीय नीति की प्रतिक्रिया प्राथमिक रूप से प्रचक्रीय थी। उत्पादन पर स्फीतिकारी राजकोषीय नीति का सकारात्मक प्रभाव अस्थायी पाया गया, जो मध्यावधि से दीर्घावधि में महत्वपूर्णता से नकारात्मक प्रभाव में परिवर्तित हो गया। एक राजकोषीय नीति आघात (अर्थात् राजकोषीय घाटे में वृद्धि) ने मौद्रिक नीति रुख को कठोर बनाने की ओर प्रेरित किया, जो तीन तिमाहियों के बाद ऊँचाई पर पहुँच गया और सात तिमाहियों के बाद संतुलन पर लौट आया। एक मौद्रिक नीति आघात (अर्थात् मांग दर में वृद्धि) ने प्रारंभ में, उसी प्रकार राजकोषीय घाटे में वृद्धि की ओर प्रेरित किया, जिसका प्रभाव चौथी तिमाही के बाद क्रमशः समाप्त हो गया।

5.24 मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य राजकोषीय मौद्रिक पारस्परिक क्रिया के अनुभवजन्य निर्धारण की ओर अधिक परंपरागत दृष्टिकोण है। जैसा कि पहले संकेत किया गया है, जॉली (2005) ने सात उभरते हुए बाजार देशों के एक सेट के लिए अनुभव के आधार पर यह पता लगाया कि क्या राजकोषीय रुख सदैव मौद्रिक नीति निर्णयों को प्रभावित करता है अथवा, अधिक तकनीकी रूप से, क्या राजकोषीय परिवर्ती केंद्रीय बैंक के प्रतिक्रिया कार्य में महत्वपूर्णता के साथ प्रवेश करते हैं। एक आनुक्रमिक-प्रकार में (टेलर, 1993) आश्रित परिवर्ती के रूप में केंद्रीय बैंक की नीति दर के साथ-मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य और स्वतंत्र परिवर्तियों के रूप में उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति दर-एक अतिरिक्त परिवर्ती, अर्थात् राजकोषीय रुख के एक माप के रूप में वास्तविक प्राथमिक संतुलन को शामिल किया गया था। इस समावेशन के पीछे तर्काधार औद्योगीकृत देशों के लिए मेलिज़ (1997, 2002) और वाइपोल्ज़ (1999) द्वारा किये गये पिछले अनुभवजन्य कार्य पर आधारित था।

5.25 हालांकि, जॉली (2005) ने पाया कि सभी सात देशों की मौद्रिक नीति ने प्राथमिक संतुलनों में परिवर्तनों के प्रति अनुक्रिया नहीं की अथवा, अन्य शब्दों में, राजकोषीय नीति ने मौद्रिक नीति का अतिक्रमण नहीं किया था। ऐसन और हानर (2008) ने 1970 से

2006 की अवधि में 60 उन्नत और उभरते हुए बाजार देशों के एक सेट के अपने अध्ययन में पाया कि एक जी एम एम ढांचे में, बजट घाटों का झुकाव ब्याज दरों पर सकारात्मक एवं सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण प्रभाव की तरफ होता है। हालांकि उक्त प्रभाव इस शर्त पर था कि क्या बजट घाटे उच्च थे, उनका निधीयन किस प्रकार किया गया था (अधिकांशतः देशी आधार पर वित्तपोषण किया गया था अथवा क्या उसकी उच्च देशी कर्ज के साथ पारस्परिक क्रिया हुई थी) और क्या वित्तीय खुलापन कम था, ब्याज दरें उदारीकृत की गई थी और क्या वित्तीय गहराई कम थी। सार रूप में, उक्त प्रयोग से ब्याज दरों पर बजट घाटे का गैर-आनुक्रमिक प्रभाव सामने लाया गया था। हाल ही में, टिलमैन (2011) ने पाया कि 1982 से 2004 की अवधि में यू एस आंकड़ों ने गैर-आनुक्रमिक टेलर नियम का समर्थन किया। इस प्रकार की गैर-आनुक्रमिकता फिलिप्स वक्र की गैर-आनुक्रमिकता अथवा गैर द्विघाती केंद्रीय बैंक प्राथमिकताओं से नहीं उठी है बल्कि फिलिप्स वक्र के ढाल (आनुक्रमिक) के बारे में अनिश्चितता के मौद्रिक नीति दृष्टिकोण से उत्पन्न हुई है। व्यवहार में, ''बहुत खराब'' परिणामों को टालने के दृष्टिकोण से, मुद्रास्फीति के प्रति मौद्रिक नीति अनुक्रिया मुद्रास्फीति दर से उच्चतर सुदृढ़ और उत्पादन अंतराल से बड़ी होकर मज़बूत हो जाती है।

भारत में मौद्रिक नीति रुख पर राजकोषीय नीति का प्रभाव-एक अनुभवजन्य निर्धारण

5.26 इस पृष्ठभूमि में, भारत में सुधारों की अवधि में, भारत में मौद्रिक नीति पर राजकोषीय नीति के प्रभाव का निर्धारण जॉली (2005) के दृष्टिकोण का इस्तेमाल करते हुए निर्धारित किया गया है, जो निम्नानुसार प्राक्कलन करता हैः

$$\text{आईएनटी}_{t} = \alpha + \beta\ \text{आईएनटी}_{t-1} + \gamma\text{आइएनएफएल}_{t-1} + \delta\ \text{आउटपुट गैप}_{t-1} + \theta\ \Delta\text{आरपीबी}_{t-1} + \varepsilon_{t}$$

जहाँ आइ एन टी मौद्रिक नीति हस्तक्षेप दर है, आई एन एफ एल वार्षिक मुद्रास्फिति दर है, आउटपुट गैप वास्तविक उत्पादन और संभावित उत्पादन के बीच का अंतर है, Δआर पी बी वास्तविक प्राथमिक संतुलन में परिवर्तन है और ε एरर टर्म है। मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण देशों के लिए समीकरण में ''आइ एन एफ एल'' टर्म के स्थान पर ''मुद्रास्फीति लक्ष्य को छोड़ कर अपेक्षित मुद्रास्फीति'' टर्म को रखा गया था। वास्तविक प्राथमिक संतुलनों को अंतर के रूप में उपर्युक्त समीकरण में शामिल कर लिया गया था, क्योंकि नमूने में उक्त श्रृंखला सभी देशों में अस्थिर पायी गई थी। जॉली ने यह स्वीकार किया है कि यद्यपि मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य का इस प्रकार का विनिर्देशन सैद्धांतिक व्याख्या से प्राप्त नहीं किया गया था, इसके द्वारा मौद्रिक नीति पर राजकोषीय नीति के प्रत्यक्ष प्रभाव का निर्धारण किया जा सका था जो कुल मांग दबाव (उत्पादन अंतराल) तथा मुद्रास्फीति के द्वारा अप्रत्यक्ष प्रभाव को आगे बढ़ाता हे।

5.27 1988-89 से 2011-12 की अवधि के लिए वार्षिक आंकड़ों का इस्तेमाल करते हुए कुछ आशोधनों के साथ भारत के लिए उपर्युक्त दृष्टिकोण अपनाया गया था। यद्यपि व्यापक आधार वाले ढांचागत सुधार 1991-92 में प्रारंभ हो गये थे, मुद्रा बाजार सुधार, 1988 में भारतीय मितीकाटा और वित्त गृह (डी एफ एच आई) की स्थापना के साथ ही कुछ पहले शुरू हो गये थे, उसके बाद 1989 में मांग मुद्रा दरों का अविनियमन हो गया। इस अवधि के अंतर्गत मोटे तौर पर दो मौद्रिक नीति ढांचे भी शामिल हैंः मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण, जो 1985-86 में प्रारंभ हुआ और 1998-99 से प्रारंभ बहुविध संकेतक दृष्टिकोण। भारित औसत मांग दर (कॉल रेट) को, जो मौद्रिक नीति का परिचालन लक्ष्य है, मौद्रिक नीति दर के लिए परोक्षी के रूप में लिया गया था। जून 2000 में संपूर्ण एल ए एफ के प्रारंभ होने के बाद से भारित औसत मांग दर आम तौर पर प्रभावी नीति दर के आस-पास मंडराती रही है, अर्थात् बेंकिंग प्रणाली चलनिधि घाटा के मामले में रेपो दर तथा बैंकिंग प्रणाली चलनिधि अधिशेष के मामले में रिवर्स रेपो दर। इस सीमा तक कि बैंकिंग प्रणाली चलनिधि परिवर्तन सी आर आर जैसे प्रत्यक्ष उपकरण के माध्यम से अथवा ओ एम ओ, एल ए एफ और एम एस एस जैसे अप्रत्यक्ष उपकरणों के माध्यम से मौद्रिक नीति कार्रवाइयों में भी प्रतिबिंबित हुए हैं, उक्त संपूर्ण अवधि में समग्र मौद्रिक नीति को प्रतिबिंबित करने के लिए मांग दर की उचित रूप से अपेक्षा की जा सकती है। (सिंह 2010) ।

5.28 समीकरण में उत्पादन अंतराल परिवर्ती को एच पी फिल्टर का इस्तेमाल करते हुए प्रवृत्ति से अलग (डी-ट्रेंडेड) अथवा जी डी पी के वास्तविक लॉग के चक्रीय घटक के रूप में लिया गया था। उक्त समीकरण में, गैर-मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण वाले देशों के लिए जॉली द्वारा यथा प्रस्तावित मात्र मुद्रास्फीति दर के बजाय एक ''मुद्रास्फीति अंतराल'' परिवर्ती को भी शामिल किया गया था। यद्यपि भारत एक मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण वाला देश नहीं है, मौद्रिक नीति का मुख्य उद्देश्य कीमत स्थिरता (संवृद्धि के साथ) रहा है और रिज़र्व बैंक इस प्रकार की नीति के मार्ग-दर्शक के रूप में मुद्रास्फीति और संवृद्धि के निर्देशात्मक पूर्वानुमान उपलब्ध कराता है; वर्ष के प्रारंभ में (आम तौर पर अप्रैल में) निर्धारित इन निर्देशात्मक पूर्वानुमानों का विकसित होती हुई गतिविधियों के प्रकाश में आवधिक

आधार पर पुनर्निर्धारण किया जाता है। इसके अलावा विकसित होती समष्टि आर्थिक स्थिति पर निर्भर करते हुए कीमत स्थिरता और संवृद्धि उद्देश्य के बीच जोर वर्ष-दर-वर्ष अलग-अलग होता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए मुद्रास्फीति अंतराल को उसकी (एच पी-फिल्टर-आधारित) प्रवृत्ति दर से वर्ष-दर-वर्ष थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति दर के विचलन के रूप में परिभाषित किया गया था और उसे समीकरण में शामिल किया गया था।

5.29 विशिष्ट टेलर-नियम विनिर्देशों के अनुरूप, समसामयिक उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल समीकरण में शामिल किये गये थे। वास्तविक प्राथमिक संतुलन के स्थान पर जी डी पी में केंद्र के सकल राजकोषीय घाटे का अनुपात (जी एफ डी आर) रखा गया था। (एक अवधि विलंबित), ऐसा केवल मांग दर पर समग्र निवल उधार आवश्यकताओं के प्रभाव का अनुभव प्राप्त करने के लिए नहीं किया गया था बल्कि इसलिए भी कि भारत में बजट में वार्षिक लक्ष्य और एफ आर बी एम वितरण राजकोषीय घाटा जी डी पी अनुपात के अनुसार विर्निर्दिष्ट किये जाते हैं (राजस्व घाटे/प्रभावी राजस्व घाटे से अलग)। यद्यपि यह विनिर्देश एक विशिष्ट नीति प्रतिक्रिया कार्य नहीं है, जैसा कि अनेक उन्नत देशों में प्रचलित है, उसका उद्देश्य मौद्रिक नीति निर्माण के बहुविध संकेतक दृष्टिकोण[1] के कुछ गति-सिद्धांतों का अभिग्रहण करना है, जिसे भारत में 1990 के दशक के आखीर में अपनाया गया था।

5.30 जैसा कि ए डी एफ और के पी एस एस परीक्षणों द्वारा परिपुष्ट हुआ है, सभी परिवर्तियों का स्थिर होना पाया गया था। ग्रेंजर कारणता एफ परीक्षणों ने दर्शाया है कि 1988-89 से 2011-12 की अवधि में जी डी पी अनुपात में राजकोषीय घाटे ने एक ही दिशा में मांग दर में परिवर्तन किया (एक लैग पर, शेवार्ज सूचना मानदंड के आधार पर लैग लेंग्थ तय की जा रही है) (सारणी 5.1)। इसने यह दर्शाया है कि राजकोषीय घाटा-जी डी पी अनुपात के विगत मूल्यों का झुकाव मांग दर को प्रभावित करने के प्रति रहा है। (अथवा मौद्रिक नीति दर को प्रभावित करने के प्रति रहा है)।

सारणी 5.1: ग्रेंजर कारणता जांच

अकृत प्राक्कल्पना	एफ-आंकड़ा	प्रॉब
जी एफ डी आर मांग दर के लिए ग्रेंजर कारणता नहीं है।	3.90	0.06
मांग दर जी एफ डी आर के लिए ग्रेंजर कारणता नहीं है	0.57	0.46

5.31 आगे, मांग दर को अपने लैग, उत्पादन अंतराल, मुद्रास्फीति अंतराल और विलंबित जी एफ डी-जी डी पी अनुपात पर पीछे हटा दिया गया था। वर्ष-विशेष बहिर्वासियों का संज्ञान लेने के लिए दो नकली (डमी) परिवर्तियों को शामिल किया गया था; डमी 1 ने वर्ष 1995-96 के लिए अस्थिरता का डटकर सामना करने के लिए विदेशी मुद्रा बाजार में आर बी आई के परिचालनों के परिणाम के रूप में अस्थायी रूप से दबावग्रस्त देशी चलनिधि स्थितियों के पश्चात् मांग दर में तीव्र वृद्धि को हिसाब में लिया; और डमी 2 ने वर्ष 1996-97 (जिसने पिछले वर्ष के विदेशी मुद्रा बाजार परिचालनों के आधारभूत प्रभाव को प्रतिबिंबित किया) और 2008-09 से 2011-12 (अधिकांशतः जो वैश्विक वित्तीय संकट के अतिरिक्त राष्ट्रिक कर्ज संकट के प्रति नीति अनुक्रिया से उत्पन्न था) के दौरान देशी चलनिधि स्थितियों की काफी अधिक सुलभता का अभिग्रहण किया। अनुमान के परिणाम नीचे दिये गये हैं :

मांग दर = 0.58+0.50 मांग दर (-1) + 0.88 मुद्रास्फीति अंतराल + 0.72 उत्पादन अंतराल
(0.79) (0.00) (0.00) (0.03)

+ 0.72 जीएफडीआर (-1) + 7.89 डमी1 - 2.37 डमी 2
(0.07) (0.00) (0.06)

ए डी जे आर- स्क्वायर: 0.75
प्रॉब (एफ-आंकड़ा): 0.00
एलएम-स्टेट: 0.96

टिप्पणी: लघु कोष्ठक में दिये गये आंकड़े पी - मूल्य हैं।

5.32 एडजस्टेड आर-स्कवायर मूल्य मॉडल की अच्छी व्याख्यात्मक शक्ति दर्शाता है, विशेष रूप से उभरते बाजार के संदर्भ में । स्वतंत्र परिवर्तियों के सभी गुणांक, अर्थात्, विलंबित मांग दर, मुद्रास्फीति अंतराल, उत्पादन अंतराल और राजकोषीय घाटा-जी डी पी अनुपात अलग-अलग रूप से, के अतिरिक्त संयुक्त रूप से भी सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण पाये गये थे तथा उनमें अपेक्षित संकेत थे। सांख्यिकीय जांच (कुसुम और कुसुम स्क्वायर्स) ने, जैसा कि चार्ट V.5 में दर्शाया गया है, अनुमानित समीकरण में पैरामीटरों की स्थिरता की पुष्टि की है।

5.33 अनुमानित समीकरण में, उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल, दोनों के समसामयिक गुणांक सकारात्मक थे और उत्पादन अंतराल की तुलना में मुद्रास्फीति अंतराल का महत्व अधिक था जो इस बात का द्योतक है कि मुद्रास्फीति परिणामों के प्रति मौद्रिक नीति की संवेदनशीलता काफी अधिक है। अनुमानित गुणांक भी इस बात की ओर संकेत करता है कि जी एफ डी-जी डी

1 बहुविध संकेतक दृष्टिकोण के एक भाग के रूप में मात्रा परिवर्तियों जैसे मुद्रा, ऋण, उत्पादन, व्यापार, पूंजी प्रवाह तथा राजकोषीय स्थिति के एक समूह से सूचना सार के अतिरिक्त दर परिवर्तियों जैसे विभिन्न बाजारों में प्रतिफल की दरें, मुद्रास्फीति दर और विनिमय दर का मौद्रिक नीति परिप्रेक्ष्य निकालने के लिए विश्लेषण किया जाता है।

चार्ट V. 5: पैरामीटर स्थिरता जांच

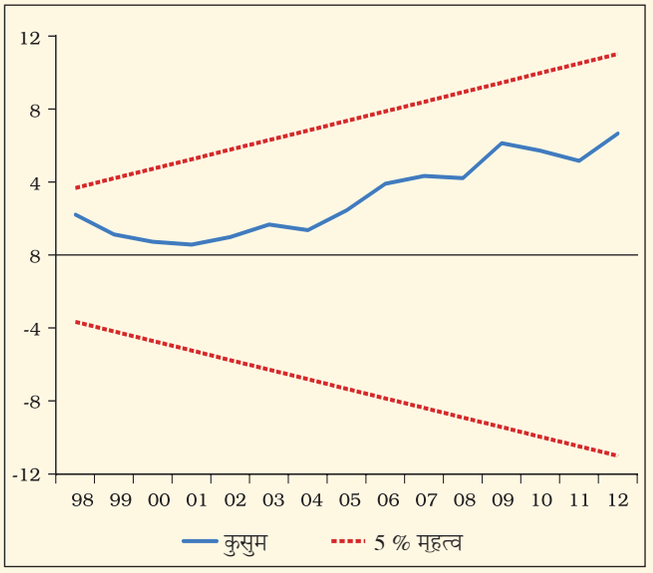

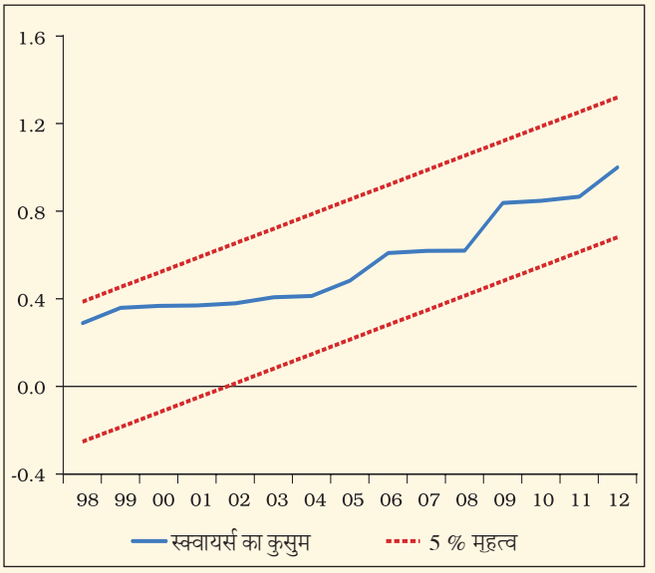

पी अनुपात में औसतन एक प्रतिशत अंक की वृद्धि से मांग दर में एक अवधि विलंब के साथ 0.72 प्रतिशत अंक की प्रत्यक्ष वृद्धि हो जाती है जो मांग दर पर राजकोषीय घाटे में वृद्धि के अप्रत्यक्ष प्रभाव के अतिरिक्त होता है, जिसे मुद्रास्फीति दर और उत्पादन अंतराल के माध्यम से महसूस किया जा सकता है। मांग दर और जी एफ डी-जी डी पी अनुपात के बीच सकारात्मक संबंध अपेक्षित रेखाओं के समानांतर है चूंकि एक उच्चतर राजकोषीय घाटा उधारयोग्य संसाधनों के स्तर पर दबाव डालेगा, जिससे क्रमशः मुद्रा बाजार चलनिधि प्रभावित होगी। इस संदर्भ में, इस बात पर ध्यान आकर्षित किया जा सकता है कि चूंकि बजट व्यय में पूंजी व्यय का अंश विगत वर्षों में आम तौर पर कम हुआ है, संभाव्य उत्पादन संवृद्धि दर पर राजकोषीय घाटे का प्रभाव उत्पादन अंतराल को विस्तार देते हुए कुछ-कुछ मंदित हो गया हो सकता है। डमी 2 का नकारात्मक गुणांक वैश्विक वित्तीय के अतिरिक्त राष्ट्रिक कर्ज संकट के परिणामस्वरूप आम तौर पर रिज़र्व बैंक द्वारा चलनिधि बढ़ाने के उपायों के महत्व को रेखांकित करता है।

5.34 परिणामों (अर्थात् मुद्रास्फीति अंतराल और उत्पादन अंतराल के गुणांकों का आकार) को इस तथ्य के प्रकाश में देखे जाने की आवश्यकता है कि उक्त विनिर्देश विशिष्ट मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य नहीं है क्योंकि उसमें राजकोषीय परिवर्ती को शामिल करने के द्वारा वृद्धि की जाती है। इसके अलावा, चूंकि समीकरण का अनुमान समान्य लीस्ट स्क्वायर्स का इस्तेमाल करते हुए लगाया जाता है, उसे साहित्य में प्रयुक्त की जा रही अधिक उन्नत अनुमान तकनीकों के प्रकाश में एक अनुमान के रूप में देखा जा सकता है। इन मुद्दों के होते हुए भी, मौद्रिक नीति के परिप्रेक्ष्य से यह प्रयोग सुझाव देता है कि भारत जैसी अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक नीति के संचालन के लिए उक्त राजकोषीय संदर्भ महत्व रखता है।

III. कर्ज और नकदी प्रबंध से संबंधित संस्थागत व्यवस्था-क्वो वैडिस

5.35 भारतीय रिज़र्व बैंक संविधि (रिज़र्व बैंक अधिनियम) द्वारा केंद्र सरकार का कर्ज और नकदी प्रबंधक है। रिज़र्व बैंक उसी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार आपसी सहमति द्वारा राज्य सरकारों के कर्ज और नकदी का भी प्रबंध करता है। मौद्रिक और कर्ज प्रबंध को अलग करने संबंधी मुद्दे पर तथा और अधिक विनिर्दिष्ट रूप से कर्ज प्रबंध कार्य को रिज़र्व बैंक से बाहर करने के संबंध में आधिकारिक मंचो पर कम से कम मध्य 1990 के दशक से दोनों ओर से प्रभावशाली तर्क-वितर्क किये जा रहे है। (बॉक्स V.I)। हाल के वैश्विक वित्तीय संकट ने इस वाद-विवाद पर पुनर्विचार करने की ओर प्रेरित किया।

वैश्विक संकट पूर्व का दर्शनशास्त्र

5.36 सार्वजनिक क्षेत्र के कर्ज प्रबंध को एक अलग समष्टि आर्थिक नीति के रूप में उसके अपने उद्देश्यों तथा उपकरणों के साथ लिया जाना तथा मौद्रिक और राजकोषीय नीति के एक विस्तार के रूप में ही नहीं समझा जाना आम तौर पर 1980 के दशक में प्रारंभ

बॉक्स V.I

भारत में कर्ज और मौद्रिक प्रबंध के पृथक्करण के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं संबंधी दृष्टिकोण विकसित करना

संस्थागत, समष्टि आर्थिक और वित्तीय गतिविधियों के साथ आगे-पीछे के क्रम में विगत वर्षों में कर्ज और मौद्रिक प्रबंध के पृथक्करण के मुद्दे पर नीति रुख विकसित हुआ है। विशेष रूप से, 1991-92 में व्यापक संरचनात्मक सुधार का आगमन, राजकोषीय सुदृढ़ीकरण और सरकारी प्रतिभूतियों के लिए एक नियंत्रित से बाजारोन्मुख कीमत खोज तंत्र में परिवर्तन ऐसे महत्वपूर्ण उपक्रमण थे जिन्होंने मौद्रिक और कर्ज प्रबंध की पारस्परिक क्रिया को प्रभावित किया।

पूंजीगत लेखा परिवर्तनीयता संबंधी समिति, 1996 (अध्यक्षः श्री एस. एस. तारापोर) संभवतः भारत में स्थापित पहली ऐसी समिति थी, जिसने भारत में पश्च-सुधार अवधि में मौद्रिक और कर्ज प्रबंध के पृथक्करण एवं सरकार द्वारा लोक ऋण कार्यालय की स्थापना किये जाने की विशिष्ट रूप से सिफारिश की ।

मार्च 1997 में, तदर्थ खजाना बिलों के निर्गम के माध्यम से केंद्र सरकार द्वारा बजट घाटे के स्वतः मुद्रीकरण की व्यवस्था समाप्त कर दी गई थी तथा उसके स्थान पर अर्थोपाय अग्रिम प्रणाली अपनाई गई। इसने मौद्रिक नीति को एक बृहत् शीर्षांतर (हेड रूम) प्रदान किया।

आर बी आई के एक आंतरिक कार्य दल ने भी दिसंबर 1997 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में सुझाव दिया कि उक्त दो कार्यों को अलग कर दिया जाए एवं कंपनी अधिनियम के अंतर्गत आर बी आई के संपूर्ण स्वामित्व के अधीन एक सहायक संस्था के रूप में एक स्वतंत्र निगम द्वारा कर्ज प्रबंध का अधिग्रहण किया जाना चाहिए।

जून 2000 में आर बी आई द्वारा प्रारंभ की गई एक संपूर्ण चलनिधि समायोजन सुविधा मौद्रिक नीति के एक प्रमुख परिचालन उपकरण के रूप में उभरी है। इसने मौद्रिक नीति के संचालन में एक बृहत् लचीलापन प्रदान किया है।

भारतीय रिज़र्व बैंक की 2000-01 की रिपोर्ट में कहा गया है ''कर्ज प्रबंध और मौद्रिक प्रबंध के कार्यों का पृथक्करण वांछित मध्यावधि उद्देश्य, सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास पर सशर्त, टिकाऊ राजकोषीय सुधार तथा एक समर्थकारी वैधानिक ढांचे के रूप में माना गया है .....रिज़र्व बैंक ने भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम 1934 में संशोधन प्रस्तावित किये हैं जिनके अनुसार रिज़र्व बैंक द्वारा लोक ऋण प्रबंध के अधिदेशात्मक प्रकार को हटा दिया जायगा तथा केंद्र सरकार के पास यह विवेकाधीन शक्ति निहित होगी कि वह लोक ऋण का प्रबंध स्वयं संभाले अथवा यदि वह चाहे तो किसी अन्य स्वतंत्र निकाय को सौंप दे।'' (पैराग्राफ ।।.25)।

आर बी आई के वार्षिक नीति वक्तव्य 2001-02 में उल्लेख किया गया है ''.....जब कि कार्यान्वयन के ब्योरे के संबंध में कोई विचार नहीं लिया गया था, दोनों कार्यों को अलग करने संबंधी निर्णय को सिद्धांत रूप में वांछित समझा गया था .....राजकोषीय उत्तरदायित्व बिल के संबंध में एक बार वैधानिक कार्रवाई किये जाने और भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम के संबंध में संशोधन पूरे हो जाने के बाद उसकी संभाव्यता तथा सरकारी कर्ज प्रबंध कार्य को आर बी आई से अलग करने के लिए अगले कदम हेतु मामले को सरकार के पास भेजने का प्रस्ताव है,'' (पैराग्राफ 90)।

वित्त मंत्रालय के एक आंतरिक विशेषज्ञ दल, 2001 (अध्यक्षः श्री ए. विरमानी) ने इन दोनों कार्यों को अलग करने के लिए एक द्वि-चरणीय प्रक्रिया की सिफारिश की, अर्थात् एक व्यापक जोखिम प्रबंध ढांचा विकसित करने के लिए वित्त मंत्रालय में केंद्रीकृत मध्यवर्ती कार्यालय की स्थापना किया जाना एवं उसके बाद एक स्वायत्त लोक ऋण कार्यालय की स्थापना किया जाना।

राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) अधिनियम ने जो जुलाई 2004 में लागू हुआ था, केंद्र सरकार के राजकोषीय घाटे और राजस्व घाटे में अधिदेशात्मक और समय-बद्ध कटौती के लिए प्रावधान किया। उसने अप्रैल 2006 से प्रभावी, सरकारी प्रतिभूतियों के लिए प्राथमिक बाजार में रिज़र्व बैंक द्वारा भाग लिये जाने पर रोक लगाने का भी प्रावधान किया था। इसने, 2000 में एल ए एफ के संस्थापन के साथ तथा 1990 के दशक के शुरू में लागू प्राथमिक बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री के लिए नीलामी आधारित तंत्र के साथ मिलकर कर्ज प्रबंध और मौद्रिक प्रबंध के बीच हित-संघर्ष में काफी अधिक कमी की, यद्यपि, ये दोनों आर बी आई की सीमा के अंतर्गत ही रहे।

एफ आर बी एम अधिनियम के संदर्भ में, वर्ष 2005-06 के आर बी आई के वार्षिक नीति वक्तव्य में कर्ज प्रबंध और मौद्रिक परिचालनों के कार्यात्मक अलगाव की ओर बढ़ने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक के भीतर मौद्रिक परिचालनों को सुदृढ़ बनाने के साथ-साथ सरकारी कर्ज प्रबंध परिचालनों का पुनराभिमुखीकरण दर्शाया गया है। इस उद्देश्य की ओर, रिज़र्व बैंक के लिए एक समन्वित बाजार अंतरापृष्ठ उपलब्ध कराने एवं मौद्रिक परिचालनों के बैंक के संचालन में समाकलन को संपादित करने के लिए 6 जुलाई 2005 को आर बी आई में वित्तीय बाजार विभाग (एफ एम डी) का गठन किया गया था। एफ एम डी कार्यात्मक रूप से आर बी आई के आंतरिक ऋण प्रबंध विभाग से अलग है।

संपूर्ण पूंजीगत लेखा परिवर्तनीयता संबंधी समिति, जुलाई 2006 (अध्यक्षः श्री एस. एस. तारापोर) ने अधिक सक्षम कर्ज प्रबंध में समर्थ होने तथा साथ ही मौद्रिक प्रबंध के लिए प्रभावी कार्यात्मक पृथक्करण के लिए आर बी आई से बाहर स्वतंत्र रूप से परिचालन हेतु लोक ऋण कार्यालय की स्थापना की सिफारिश की।

केंद्रीय बजट 2007-08 में घोषणा की गई, ''सम्पूर्ण विश्व में कर्ज प्रबंध मौद्रिक प्रबंध से भिन्न है। सरकार में कर्ज प्रबंध कार्यालय (डी एम ओ) की स्थापना की वकालत काफी समय से की जा रही है। अब तक प्राप्त किये गये राजकोषीय सुदृढ़ीकरण ने हमें पहला कदम उठाने के लिए प्रोत्साहित किया है। तदनुसार, मैं एक स्वायत्त डी एम ओ स्थापित करने का प्रस्ताव रखता हूँ और प्रथम चरण में एक संपूर्ण डी एम ओ में अंतरित करने की सुविधा के लिए एक मध्यवर्ती कार्यालय की स्थापना की जाएगी।'' (बजट भाषण, पैराग्राफ 106)।

बाद में, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार ने 2008 में इस बात का विश्लेषण करने के लिए कि किस प्रकार सर्वोत्तम डी एम ओ की स्थापना की जाए, एक आंतरिक कर्ज प्रबंध संबंधी कार्यदल (अध्यक्षः डॉ. जहॉगीर अज़ीज़) स्थापित किया। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत सर्वोत्तम प्रथाओं को विशिष्टता

(जारी...)

(...समाप्त)

प्रदान करते हुए (अन्य बातों के साथ-साथ, आई एम एफ और विश्व बैंक द्वारा 2003 में सार्वजनिक कर्ज प्रबंध संबंधी दिशा-निर्देशों का उद्धरण देते हुए) कि कर्ज प्रबंध को मौद्रिक नीति से भिन्न होना चाहिए और उसे केंद्रीय बैंक के क्षेत्र से बाहर रखा जाना चाहिए, कार्यदल ने भारत में केंद्र और राज्य सरकारों के कर्ज और नकद प्रबंध के निष्पादन हेतु एक सांविधिक निकाय (राष्ट्रीय राजकोष प्रबंध एजेंसी) की स्थापना किये जाने की सिफारिश की। कार्यदल ने एक अलग कर्ज प्रबंध एजेंसी के लिए निम्नलिखित तर्काधार प्रस्तुत किये :-

- जैसा कि भारत सहित अनेक उभरते बाजार वाले देशों के मामले में है कि कर्ज प्रबंध कार्य अनेक विभागों में बँटे होने के कारण कार्रवाई की रूपरेखा और जवाबदेही धुंधली हो जाती है, अतः इसके बजाय कर्ज प्रबंध कार्यों का समेकन तथा परिणामी सूचनाओं का एक ही एजेंसी में एकीकरण करने से महत्वपूर्ण लाभ प्राप्त होंगे।
- यदि केंद्रीय बैंक भी सरकारी कर्ज का प्रबंध करता है तो हितों का संघर्ष सामने आ सकता है और उस मामले में वह मुद्रास्फीति दबावों को देखते हुए भी कर्ज की लागत को न्यूनतम करने के लिए ब्याज दरों को अपेक्षाकृत कम करने की ओर प्रेरित हो सकता है। हित-संघर्ष इसलिए भी हो सकता है कि बैंकिंग प्रणाली के एक विनियामक तथा पर्यवेक्षक के रूप में केंद्रीय बैंक को यह प्रोत्साहन प्राप्त है कि वह बैंकों को भारी मात्रा में सरकारी प्रतिभूतियां धारित करने संबंधी अधिदेश जारी करे।
- हित-संघर्ष उस स्थिति में उठ सकता है, यदि केंद्रीय बैंक, जो सरकारी प्रतिभूति बाजार का स्वामी/नियंत्रक होने के साथ-साथ बाजार में सहभागी भी है।

डॉ. राकेश मोहन, अध्यक्ष, वित्तीय क्षेत्र आकलन समिति ने एक मध्यवर्ती कार्यालय स्थापित करने के प्रस्ताव पर सहमति व्यक्त की, जो यू एस राजकोष में डी एम ओ की भूमिका के सदृश है, किन्तु व्यक्तिगत तौर पर उनके विचार से स्वतंत्र डी एम ओ की स्थापना तथा ऋण प्रबंध को रिज़र्व बैंक से पूरी तरह से अलग करने संबंधी निर्णय के संबंध में अनेक आधारों पर पुनरीक्षण करने की आवश्यकता है, जैसेः

- जैसी कि राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान के अंतर्गत परिकल्पना की गई है, जी डी पी का 6 प्रतिशत संयुक्त (केंद्र और राज्य) राजकोषीय घाटा भी प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में उच्चतम घाटों में गिना जाएगा और 80 प्रतिशत से अधिक के समग्र कर्ज-जी डी पी अनुपात के साथ मिलाने पर भविष्य में राजकोषीय और मौद्रिक प्रबंध के बीच समग्र सामंजस्य बनाए रखना आवश्यक होगा।
- एस एल आर में कटौती संयुक्त राजकोषीय घाटे में आगे और कटौती पर सशर्त होगी और तब तक मौद्रिक प्रबंध, कर्ज प्रबंध और बैंक विनियम का परस्पर जुड़े रहना जारी रहेगा।
- अस्थिर पूंजी प्रवाहों के संदर्भ में, आर बी आई के विदेशी मुद्रा बाजार परिचालनों का उचित रूप से जारी रहना आवश्यक होगा। यदि कर्ज प्रबंध परिचालन आर बी आई से अलग कर दिये जाते हैं तो एम एस एस के माध्यम से इन परिचालनों का सहवर्ती अवरोधीकरण तथा सरकार के बाजार उधार कार्यक्रम के साथ उनका सामंजस्य स्थापित करना कठिन होगा।
- चूंकि बैंकिंग आस्तियों का 70 प्रतिशत सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों से संबंधित है, वित्त मंत्रालय में डी एम ओ की स्थापना किया जाना एक कर्ज प्रबंधक के रूप में सरकार की भूमिका और बैंकिंग क्षेत्र के एक बहुत बड़े भाग के स्वामी के रूप में उसकी हैसियत के बीच एक संघर्ष में परिणत हो सकता है।
- यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता बनाए रखने के साथ सरकारी प्रतिभूति बाजार (जो क्रमशः कर्ज प्रबंध के लिए आवश्यक है) को आगे और गहन बनाने का कार्य प्रारंभ किया जाता है।
- केंद्र ओर राज्य सरकारों के बाजार उधार कार्यक्रमों में सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता है। इसके अलावा, एक केंद्र सरकार के प्राधिकारी के लिए यह उपयुक्त नहीं होगा कि वह राज्य सरकार के कर्ज प्रबंध को भी अपने हाथ में ले।
- जहाँ वित्त मंत्रालय में डी एम ओ की स्थापना से समग्र कर्ज प्रबंध नीति (बाह्य और आंतरिक) के लिए एक समन्वित दृष्टिकोण सुलभ होगा, रिज़र्व बैंक, यू एस राजकोष की ओर से फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ न्यूयार्क के कार्यों की तरह ही सरकार के एजेंट के रूप में समस्त बाजार उधार परिचालनों का संचालन जारी रख सकेगा।
- नये सरकारी प्राधिकरणों की स्थापना करना हमेशा कठिन रहा है। सेवा में सरकारी नियमों के कारण इन संस्थाओं में आम तौर पर अधिकारी स्टाफ विभिन्न सरकारी विभागों से प्रतिनियुक्ति पर होता है, जिससे एक उपयुक्त विशेषज्ञता विकसित करना कठिन हो जाता है।
- आर बी आई कर्ज प्रबंध कार्यों को संभालने में सक्षम है, क्योंकि इसके पास बहुत बड़ी संख्या में स्टाफ है और जिसे बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण मुद्रा बाजार परिचालनों तथा कर्ज बाजार परिचालनों का प्रबंध करने के लिए विकसित विशेषज्ञता प्राप्त है। डी एम ओ के स्टाफ के लिए यह आवश्यक होगा कि वह वित्तीय बाजारों से परिचित हो और बाजार खिलाड़ियों के साथ निरंतर पारस्परिक क्रिया भी कर सकता हो। इसके अलावा, अन्य बातों के साथ-साथ निर्गम और व्यापार के लिए तकनीकी बुनियादी संरचना की भी स्थापना करनी होगी, जिसमें टालने योग्य व्यय निहित होगा।

वित्तीय क्षेत्र वैधानिक सुधार आयोग (एफ एस एल आर सी), भारत सरकार द्वारा जिसका गठन मार्च 2011 में भारतीय वित्तीय क्षेत्र की समसामयिक आवश्यकताओं के अनुरूप कानूनी और संस्थागत ढांचे की समीक्षा तथा उसे नया रूप देने के लिए किया गया था। आयोग ने अक्तूबर 2012 के अपने दृष्टिकोण पत्र में उल्लेख किया है कि सार्वजनिक कर्ज प्रबंध के लिए विशेषज्ञ निवेश बैंकिंग योग्यता की आवश्यकता होती है। एफ एस एल आर सी ने अनेक विशेषज्ञ समितियों के इन विचारों का समर्थन किया कि इस कार्य को एक व्यावसायिक कर्ज प्रबंध एजेंसी द्वारा अधिगृहीत किया जाना चाहिए, क्योंकि (i) सरकार की तटीय और अपतटीय देयताओं पर एकीकृत सूचना जो वर्तमान में आर बी आई और वित्त मंत्रालय में बँटी हुई है, से अधिक सक्षम कर्ज प्रबंध हो सकेगा; और (ii) आर बी बाई के उद्देश्यों का संघर्ष है कि उसे सार्वजनिक कर्ज का प्रबंध करने के साथ कीमत स्थिरता को बनाए रखना होता है। एफ एस एल आर सी ने भी प्रस्तावित किया है कि नकदी प्रबंध के कार्य को एकीकृत किया जाए तथा सरकार की आकस्मिक देयताओं के एक व्यापक चित्र को एक नये कर्ज प्रबंध कानून में प्राप्त किया जाए।

हुआ, जिसका मुख्य कारण यह था कि तीन नीतियों के बीच वर्धमान रूप से तालमेल महसूस किया जाने लगा था (टोगो, 2007)। जहाँ विचारधारा में यह परिवर्तन मुद्रास्फीति और राजकोषीय निरंतरता पर विगत दशकों की राजकोषीय सक्रियता के हानिकर प्रभावों द्वारा उत्पन्न हुआ था, इसे वित्तीय बाजारों के विकास तथा उदारीकरण द्वारा सरल बना दिया गया था (हूगदुइन और अन्य, 2010)।

5.37 मौद्रिक नीति और कर्ज प्रबंध नीति के बीच आदर्श संघर्ष, नीति ब्याज दर निर्धारित करने संबंधी निर्णय से संबद्ध है। इसी प्रकार, राजकोषीय नीति और कर्ज प्रबंध नीति के बीच का संघर्ष अल्पावधि में (जो आम तौर पर निर्वाचक चक्र में आता है) अथवा मध्यावधि/दीर्घावधि में कर्ज चुकौती लागत को कम रखने के विकल्प से संबंधित है (और इसलिए घाटा लक्ष्य को पूरा कर रहे हैं) नीतियों के पृथक्करण से यह अपेक्षा थी कि इस प्रकार के संघर्षों से बचा जाए और नीति विश्वसनीयता में सुधार किया जाए। तद्नुसार, न्यूज़ीलैंड, बेल्जीयम, फ्रांस, आयरलैंड, पुर्तगाल, स्वीडन डेन्मार्क और युनाइटेड किंग्डम जैसे देशों ने कर्ज प्रबंध को परिवर्ती सीमाओं तक विकेंद्रीकृत करने का निर्णय लिया है।

5.38 यह भी समझा गया है कि नीति विकेंद्रीकरण की प्रभावोत्पादकता और उसकी विश्वसनीयता निम्नलिखित पर निर्भर थी (i) टिन्बर्गन नियम, अर्थात् अधिक से अधिक स्वतंत्र नीति उपकरण जितने अधिक उद्देश्य थे, एक ऐसी आवश्यकता जिसे अभ्यास में पूरा करना कठिन है; और (ii) समग्र नीति मिश्रण में सुसंगति । इस प्रकार नीति समन्वय 'वांछित' नीति मिश्रण पाने के लिए आवश्यक हो गया। राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान और यूरो क्षेत्र में स्थिरता और संवृद्धि समझौता, जिसने घाटे और/अथवा कर्ज की उच्चतम सीमा प्रदान की, इस प्रकार के समन्वय तंत्र के उदाहरण हैं।

5.39 आई एम एफ और विश्व बैंक द्वारा, नीतियों का इस प्रकार का पृथक्करण भी वांछित समझा गया था, जैसा कि 2003 में सार्वजनिक कर्ज प्रबंध पर उनके द्वारा जारी दिशा निर्देशों में प्रतिबिंबित हुआ है और, विशेष रूप से ''जहाँ वित्तीय विकास का स्तर अनुमति देता है, वहाँ कर्ज प्रबंध और मौद्रिक नीति उद्देश्यों तथा उत्तरदायित्वों का पृथक्करण होना चाहिए।'' (दिशा-निर्देश 1-3)। उसी दिशा-निर्देश में इस बात पर जोर दिया गया है ''कर्ज प्रबंधकों, राजकोषीय नीति परामर्शदाताओं और केंद्रीय बैंकरों को उनके विभिन्न नीति उपकरणों के बीच अंतर-निर्भरताओं को देखते हुए कर्ज प्रबंध, राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के उद्देश्यों की एक समझ में हिस्सा बँटाना चाहिए और कर्ज प्रबंधन, राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों को सरकार की वर्तमान तथा भविष्य की चलनिधि आवश्यकताओं पर सूचना को साझा करना चाहिए। ''

5.40 वित्तीय विकास के स्तर पर उक्त दो कार्यों का अनुशंसित सशर्त पृथक्करण महत्वपूर्ण है। जैसा कि ब्लोमेंस्तें और टर्नर (2011) व्याख्या करते हैं, जब मौद्रिक नीति और कर्ज प्रबंध ढांचे अधिक विवेकी हो जाते हैं, केंद्रीय बैंक अन्तर-बैंक बाजार के बहुत ही कम स्तर में ही कार्य करते हुए ब्याज दरों के स्पेक्ट्रम को प्रभावित करने में समर्थ होता है। स्थानीय पूंजी बाजार के विकास के साथ, सरकारी प्रतिभूति बाजार विकसित करने में केंद्रीय बैंक की भूमिका कम हो गई है। दीर्घावधि बाजार-आधारित निधीयन की जोखिम-समायोजित लागत को न्यूनतम करने के सार्वजनिक कर्ज प्रबंध के प्रधान उद्देश्य के साथ, उक्त दो कार्यों का पृथक्करण वांछित होने के अतिरिक्त व्यावहारिक भी हो जाता है।

संकट के बाद का अनुभव: क्या बदला ?

5.41 वैश्विक वित्तीय संकट के संदर्भ में सरकारी कर्ज प्रबंध के बारे में प्रत्यक्ष ज्ञान में परिवर्तन हो गया हैं। वैश्विक वित्तीय प्रणाली संबंधी समिति द्वारा अधिकृत एक अध्ययन दल (अध्यक्षः श्री पॉल फिशर) ने मई 2011 में पाया कि निम्नलिखित कारणों से वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध, मौद्रिक नीति तथा वित्तीय स्थिरता के बीच पारस्परिक क्रिया की शक्ति में वृद्धि हुई है (i) आर्थिक सुधार को समर्थन देने के लिए राजकोषीय प्रोत्साहन कार्यक्रमों को प्रतिबिंबित करते हुए सरकारी घाटे और कर्ज में तीव्र वृद्धि । इसके अलावा, अधिसंख्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बकाया कर्ज की औसत परिपक्वता कम हो गई है; (ii) केंद्रीय बैंक द्वारा परिवर्ती अवशिष्ट परिपक्वता वाली सरकारी प्रतिभूतियों की मुख्य रूप से बड़े पैमाने पर खरीद में गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति का प्रयोग, उसके द्वारा मौद्रिक प्राधिकारी और कर्ज प्रबंधक के परिचालन क्षेत्रों को धूमिल किया गया; (iii) नई विवेकपूर्ण चलनिधि अपेक्षाओं को लागू किया जाना जिनसे सरकारी प्रतिभूतियों के लिए बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा मांग में वृद्धि हो गई, जबकि कुछ देशों में सरकारी प्रतिभूतियों की जोखिम-प्रवणता में वृद्धि हुई है; और

उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की सामान्य प्रक्रिया द्वारा सुलभ कराये गये सरकारी कर्ज के विदेशी स्वामित्व में वृद्धि ।

5.42 परिणाम के रूप में, राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध (एस डी एम) के भाग के रूप में परिपक्वता, अनुसूचीकरण और निर्गम के संबंध में निर्णयों ने, जिनका पहले अन्य नीति क्षेत्रों पर सीमित प्रभाव था, मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता पर महत्वपूर्णता से प्रभाव डालना प्रारंभ कर दिया था।

वित्तीय स्थिरता पर कर्ज प्रबंध का प्रभाव

5.43 अल्पावधि कर्ज के अंश में वृद्धि (जिसे दीर्घावधि कर्ज से भिन्न, आसानी से विस्तारित नहीं किया जा सकता है), पुनर्वित्तीयन और विस्तार जोखिमों में वृद्धि की ओर प्रेरित करती है, विशेष रूप से जब निवेशकों (अधिकांशतः बैंक) के पास अपने संविभाग में परिपक्वता अवधि वाले सरकारी बांडों का बहुत ही कम भाग होता है। यह, क्रमशः प्रणालीगत और वित्तीय स्थिरता जोखिमों की ओर प्रवृत्त करता है। जब कर्ज का स्तर अपने आप में राजकोषीय निरंतरता चिंताओं का आह्वान करता है तो समस्याएं बढ़ जाती हैं। सरकारी कर्ज के विदेशी स्वामित्व के परिणामस्वरूप देशी जी-सेक, बाजार को समुद्रपारीय आघात का संचारण होता है, जिससे निवेशकों को मार्क टू मार्केट (एम टी एम) हानियों का सामना करना पड़ सकता है। विदेशी मुद्राओं में राष्ट्रिक बांडों के निर्गम से सरकार को अपनी देशी मुद्रा में मूल्यवर्गित आस्तियों तथा आंशिक रूप से, विदेशी मुद्रा में मूल्यवर्गित देयताओं के बीच मुद्रा बेमेलपन का सामना करना पड़ता है जिसका वित्तीय स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

मौद्रिक नीति पर कर्ज प्रबंध का प्रभाव

5.44 अल्पावधि कर्ज निर्गमों में वृद्धि का परिणाम मुद्रा बाजार में सरकार द्वारा अधिक गहन सहभागिता के रूप में होता है, जो मौद्रिक नीति के लिए एक परिचालन क्षेत्र है। यह नीति ब्याज दरों (अल्पावधि) के निर्धारण में हस्तक्षेप कर सकती है। इसके अलावा, चूंकि केंद्रीय बैंकों द्वारा खरीदे गये सरकारी बांड वित्तीय संकट के प्रति उनकी मौद्रिक नीति अनुक्रिया के भाग के रूप में थे, बाजार के दीर्घावधि स्तर पर मौद्रिक नीति पर कर्ज प्रबंध का प्रभाव भी महसूस किया गया था। इससे कर्ज के उच्च स्तर के अलावा, जो राष्ट्रिक जोखिम चिंताओं को बढ़ा देता है, (जैसा कि कुछ यूरो क्षेत्र देशों में हुआ था), वह मौद्रिक नीति परिचालनों में संपार्श्विक के रूप में सरकारी बांडों की पात्रता को कम कर सकता है तथा इस प्रकार, मौद्रिक नीति संचारण को बाधित कर सकता है।

5.45 इस संदर्भ में, फिशर अध्ययन दल (2011) ने पाया कि अन्य नीति कार्यों से राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध (एस डी एम) का पृथक्करण सामान्यतया गहन वित्तीय बाजारों वाली अर्थव्यवस्थाओं में रेखांकित होता है। यह विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में प्रचलित प्रथा से भिन्न है, जहाँ केंद्रीय बैंक अवरुद्धता प्रयोजन से प्रतिभूतियां जारी कर सकता है अथवा सरकारी कर्ज नकदी जमाराशियों को नियंत्रित कर सकता है जिसमें केंद्रीय बैंक द्वारा नीति समन्वय अथवा कर्ज प्रबंध आम तौर पर मानक रहा है। उक्त अध्ययन दल ने एस डी एम और मौद्रिक नीति कार्यों की परिचालन स्वतंत्रता के लिए वर्तमान व्यवस्थाओं द्वारा उत्पन्न वास्तविक बाधाओं का पता नहीं लगाया है। ऐसी व्यवस्थाओं को उलटना अध्ययन दल की राय में जोखिम प्रवण होगा। इसके बजाय उक्त दल ने महसूस किया है कि वर्तमान वातावरण में अथवा जहाँ वित्तीय प्रणालियां अब भी विकासशील हैं, यह उपयोगी होगा कि कर्ज प्रबंधक लागत एवं जोखिम का व्यापक दृष्टिकोण अपनाएं तथा केंद्रीय बैंक एस डी एम क्रियाकलापों को साथ-साथ रखें।

5.46 हाल के अनुभव ने इस बात का समर्थन किया है कि बकाया कर्ज के परिपक्वता ढांचे तथा जोखिम विशेषताओं के लिए मध्यावधि रणनीतिक परिणाम वित्तीय स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण हैं। इस संदर्भ में, उक्त अध्ययन दल ने पाया है, ''यह प्रासंगिक एजेंसियों के बीच पारस्परिक संप्रेषण के महत्व को रेखांकित करता है, तथापि प्रत्येक एजेंसी अपनी-अपनी भूमिका के लिए स्वतंत्रता और जवाबदेही का निर्वाह कर रही है। इस प्रकार का दृष्टिकोण स्टॉकहोम सिद्धांतों के सिद्धांत 6 से सुसंगत है। स्टॉकहोम सिद्धांत राष्ट्रिक जोखिम और सार्वजनिक कर्ज के उच्च स्तर को नियंत्रित करने हेतु मार्गदर्शी सिद्धांत है, जो हाल ही में 33 उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के कर्ज प्रबंधकों और केंद्रीय बैंकरों द्वारा जारी किये गये थे।''

5.47 यह सुस्पष्ट है कि फिशर अध्ययन दल (2011) तथा स्टॉकहोम सिद्धान्तों (2010) ने कर्ज प्रबंध को केंद्रीय बैंक से अलग करने के सिवाय सिफारिश करना बन्द कर दिया है। यद्यपि आई एम एफ-विश्व बैंक द्वारा 2003 में (अर्थात् संकट-पूर्व की अवधि में) जारी सार्वजनिक कर्ज प्रबंध संबंधी दिशा-निर्देशों में इस पृथक्करण को अर्थव्यवस्था में वित्तीय विकास के स्तर पर सशर्त अनुशंसित

किया गया था। विचारधारा के इन दो सेटों के बीच अंतर अब सरकारी कर्ज प्रबंध, मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता के बीच गहन अन्तर्संबंधों तथा कर्ज प्रबंधकों और केंद्रीय बैंकों के बीच पारस्परिक संप्रेषण पर बढ़े हुए जोर को मान्यता प्रदान करता है, तथापि, प्रत्येक एजेंसी अपनी स्वतंत्रता और जवाबदेही का निर्वाह करती है।

5.48 इसी प्रकार का मामला ब्लोममेंस्तें और टर्नर (2011) द्वारा बनाया गया है। वे तर्क प्रस्तुत करते हैं कि जहाँ वैश्विक वित्तीय संकट के प्रति नीति अनुक्रियाओं ने सार्वजनिक कर्ज प्रबंध तथा मौद्रिक नीति के बीच संबंध को थोड़ा धुंधला किया है और यह कि कर्ज प्रबंध के प्रति परंपरागत व्यष्टि आर्थिक दृष्टिकोण का समष्टि आर्थिक विचारों के साथ संघर्ष होने की संभावना है, वे केंद्रीय बैंकरों, कर्ज प्रबंधकों तथा राजकोषीय प्राधिकारियों के वर्तमान उत्तरदायित्वों में परिवर्तन करने के ऐसे किसी निहितार्थों के आहरण के खिलाफ सचेत करते हैं जिनसे स्पष्ट उत्तरदायित्वों को सौंपने तथा अल्प दृष्टि वाली नीतियों को रोकने का (अच्छा) लाभ प्राप्त होता हो। वे बताते हैं कि वर्तमान व्यवस्थाओं में किसी प्रकार के अपेक्षित परिवर्तन से, हालांकि सरकारी कर्ज प्रबंध की समष्टि अर्थशास्त्र को पूर्ण रूप से समझने से लाभ मिलेगा तथा उस पर सर्वसम्मति बनाने में सहायता मिलेगी एवं राजनैतिक अथवा संस्थागत दवावों के अतिरिक्त उपयुक्त अभिशासन तंत्र के बारे में समझा जा सकेगा।

5.49 हालांकि एक भिन्न मामला गुडहार्ट (2010) द्वारा बनाया गया है, जो कहता है ''किन्तु अब अनेक देश कर्ज स्तरों के तेजी से बढ़ने की संभावना का सामना एक ऐसे बिन्दु तक करते हैं, जहाँ से वे एक बार और बाजार सहभागियों के विश्वास को जांच सकते हैं। कर्ज प्रबंध फिर से नीति के समग्र संचालन में एक महत्वपूर्ण तत्व बनता जा रहा है, जैसा कि यूनान की घटनाओं से सुस्पष्ट है। कर्ज प्रबंध को अब लम्बे समय तक एक नेमी कार्य के रूप में नहीं देखा जा सकता है जिसे एक अलग, स्वतंत्र निकाय को प्रत्यायोजित किया जा सके। इसके बजाय, इस प्रकार का प्रबंध मौद्रिक नीतियों (मुद्रास्फीति लक्ष्यों तथा प्रणालीगत स्थिरता दोनों) और राजकोषीय नीति के बीच चौराहे (क्रोस रोड्स) पर पड़ता है। जब बाजार कठिनाई में होता है तथा सरकारी बांड बाजारों में ऐसी संभावना होती है, तब उच्च मानसिक क्षमता वाली बाजार युक्ति के साथ समग्र राजकोषीय रणनीति को संयुक्त करने की आवश्यकता होती है। उच्च मानसिक क्षमता वाली बाजार युक्ति को केंद्रीय बैंक अपने पेशे के रूप में अपना सकते हैं। केंद्रीय बैंकिंग के आने वाले युग के दौरान, उन्हें राष्ट्रीय कर्ज के प्रबंध की उनकी भूमिका की ओर लौटने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।''

भारतीय मामला

5.50 गवर्नर सुब्बाराव (मई 2011) ने तर्क प्रस्तुत किया है कि जहाँ संकट-पूर्व के वर्षों में राजकोषीय सुदृढ़ीकरण और संस्थागत विकास की ओर प्रगति ने केंद्रीय बैंक से एक डी एम ओ को कर्ज प्रबंध के पृथक्करण से भावी क्षमता लाभ की ओर संकेत किया था, संकट के बाद के परिदृश्य में, इस प्रक्रिया के अंश और गति पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में, यह दोहराना उचित होगा कि सार्वजनिक कर्ज प्रबंध के मामले में आर बी आई का रिकार्ड प्रभावी रहा है। जैसा कि गवर्नर सुब्बाराव ने कहा, ''10 वर्ष के आस-पास सरकारी कर्ज की औसत परिपक्वता के साथ, विश्व में सबसे लंबी-परिपक्वता रूपरेखा वाले देशों में भारत का स्थान है, जिसने संकट के दौरान प्रमुख शक्ति तथा सहजता का स्रोत होना प्रमाणित किया था।''

5.51 2008-09 और 2009-10 के दौरान कर्ज प्रबंध कार्यों में रिज़र्व बैंक की दक्ष कार्य प्रणाली ने अपने पिछले रिकार्ड को दोषमुक्त कर दिया है, जब भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक वित्तीय संकट के अप्रत्यक्ष प्रभावों का सामना करना पड़ा था। वास्तव में, चलनिधि प्रबंध परिचालनों को, विदेशी मुद्रा दर प्रबंध तथा गैर-विघटनकारी आंतरिक कर्ज प्रबंध कार्यों के साथ तुल्यकालिक करते हुए आर बी आई यह सुनिश्चित करने में समर्थ था कि प्रणाली में उपयुक्त चलनिधि बनाए रखी जाती थी ताकि ऋण की समस्त तर्क संगत आवश्यकताओं को विशेष रूप से, कीमत तथा वित्तीय स्थिरता के उद्देश्य के अनुरूप उत्पादक प्रयोजनों के लिए पूरा किया जा सके। रिज़र्व बैंक के चलनिधि इंजेक्शन प्रयास, बड़ी मात्रा में होते हुए भी, अन्य अनेक केंद्रीय बैंकों से भिन्न, पात्र प्रतिपक्षियों के साथ अथवा रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में आस्ति गुणवत्ता पर समझौता किये बिना प्राप्त किये जा सके।

5.52 एम एस एस के निवेश मोचन (शोधन, वापसी-खरीद और अवपृथक्करण) और आरक्षित निधि आवश्यकताओं (सी आर आर) में कटौती के माध्यम से प्राप्त चलनिधि विस्तार ने सुनिश्चित किया कि अन्य अनेक केंद्रीय बैंकों से भिन्न रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में फिर विस्तार न हो। इसके अलावा, सरकारी बाजार उधार कार्यक्रम के निर्बाध संचालन तथा अधिक प्रभावी चलनिधि प्रबंध के

लिए फरवरी 2009 में सरकारी प्रतिभूतियों की नीलामी आधारित खुला बाजार खरीद प्रारंभ की गई थी। विशेष रूप से दबाव की अवधि के दौरान चलनिधि प्रबंध, विदेशी मुद्रा विनिमय दर प्रबंध और आंतरिक कर्ज प्रबंध की यह समकालिकता अत्यधिक सुसाध्य हो गई थी क्योंकि ये परिचालन एक ही संगठन के भीतर स्थित थे, यद्यपि मौद्रिक और कर्ज प्रबंध कार्यात्मक रूप से अलग रहे थे।

5.53 आम तौर पर, भारत में सरकारी, उधार कार्यक्रम के महत्व को देखते हुए, कर्ज प्रबंध, संसाधन जुटाने में प्रयोग करने के बजाय समग्र समष्टि आर्थिक प्रबंध का भाग बन जाता है। परिणामस्वरूप, केंद्रीय बैंक, जिनके पास समग्र प्रत्यक्ष ज्ञान, आवश्यक विशेषज्ञता तथा उपकरण होते हैं, डी एम ओ के बजाय, जिनके पास सीमित अधिदेश होते हैं, कर्ज प्रबंध का संचालन करने की दृष्टि से बेहतर स्थान पर होते हैं। दूसरी ओर, यदि कर्ज प्रबंध को केंद्रीय बैंक से बाहर अंतरित किया गया होता तो संघर्ष का समाधान और भी अधिक कठिन हो गया होता क्योंकि केंद्रीय बैंक से बाजार अस्थिरता तथा सरकारी उधार कार्यक्रम से उत्पन्न बाजार अपेक्षाओं को नियंत्रित करने की अपेक्षा की जाती। अन्ततः जैसा कि सी एफ एस ए के अध्यक्ष द्वारा तर्क प्रस्तुत किया गया है, राज्य सरकारों के बाजार उधार कार्यक्रम में सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता-इसके महत्व को देखते हुए-भारतीय संघीय ढांचे के केंद्र और राजनैतिक अर्थव्यवस्था के विचारों के साथ, कर्ज प्रबंध कार्य को केंद्रीय बैंक से अलग करने का मामला कमज़ोर हो जाता है।

5.54 इसलिए, आगे बढ़ते हुए इस चरण पर कर्ज प्रबंध को रिज़र्व बैंक से पृथक करने के प्रस्ताव पर शायद पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। इसके बजाय, वित्त मंत्रालय में पहले से ही स्थापित मध्यवर्ती कार्यालय की विशेषज्ञता की उचित रूप से स्तर-वृद्धि करते हुए, उसे अंतर्राष्ट्रीय अनुभव और अनुसंधान साहित्य द्वारा विशिष्टता के साथ प्रस्तुत की गई चुनौतियों से निपटने के कार्य में लगा दिया जाए। कर्ज प्रबंध संबंधी विषयों पर आर बी आई और मध्यवर्ती कार्यालय के बीच घनिष्ठ सहयोग बढ़ाये जाने की भी आवश्यकता है।

नकदी प्रबंध

5.55 हाल के वर्षों में, सुदृढ़ नकदी प्रबंध का महत्व बढ़ता जा रहा है। अर्थात् एक किफायती विधि से सरकार के अल्पावधि नकद आगमन के समय और उसकी प्रमात्रा का प्रबंध करना जिससे विभिन्न जोखिम न्यूनतम हो सके जैसे परिचालन संबंधी, ऋण और बाजार जोखिम । सरकारें, तदनुसार अधिक परिष्कृत नकदी प्रबंध कार्य का विकास कर रही हैं, और विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में, अपेक्षाकृत रूप से निष्क्रिय से अधिक सक्रिय नकदी प्रबंध की ओर परिवर्तन की ओर झुकाव बढ़ गया है। सक्रिय नकदी प्रबंध का लक्ष्य केंद्रीय बैंक में रखे गये राजकोष एकल खाता (टी एस ए) में अप्रयुक्त जमा नकदी को न्यूनतम करना तथा केंद्रीय बैंक में रखे गये मुख्य राजकोष परिचालन खाते में अतिरिक्त जमा रकम पर प्रतिलाभ में अधिकतम वृद्धि करना है। सक्रिय नकदी प्रबंध में सरकारी नकदी प्रबंधक (जो केंद्रीय बैंक भी हो सकता है) द्वारा वित्तीय बाजार हस्तक्षेप निहित होता है, जिसका लक्ष्य निवल नकदी प्रवाह में दैनिक बेमेल स्थिति को दूर करना और लचीलेपन को इस प्रकार से जोड़ना है कि सरकारी नकदी आगमन तथा बहिर्वाहों के समय को मैच किया जा सके। भारत में केंद्र सरकार के नकदी प्रबंध कार्यों में भी मध्य-1990 के दशक से काफी अधिक सुधार हुए हैं (बॉक्स V.2) ।

5.56 कर्ज प्रबंध संबंधी भारत सरकार के आंतरिक कार्यदल, 2008 (अध्यक्षः डॉ. जहाँगीर अज़ीज़) ने नकदी प्रबंध और मौद्रिक नीति के बीच घनिष्ठ संबंध को रेखांकित किया है कि सरकारी खातों में भारी मात्रा में नकदी का आगमन/और खातों से बहिर्गमन का मुद्रा बाजार पर महत्वपूर्ण प्रभाव हो सकता है। इसके अलावा, खजाना बिल, जो नकदी प्रबंध के आम लिखत हैं, निम्नलिखित के संभाव्य स्रोत होना पाये गयेः (i) अल्पावधि ब्याज दरों में अतिरिक्त अस्तिरता और (ii) मौद्रिक नीति के संकेतक प्रभाव के साथ हस्तक्षेप। कार्य दल ने यह भी पाया है कि भारत में सरकारी नकदी प्रबंध, ''दिन के अंत में शेष राशि प्रबंध का अभाव, अप्रयुक्त जमा राशियों के रूप में अधिशेष निधियों की उपस्थिति, और नकदी शेष की सूचना बजट डिविजन को प्रेषित करने में विलंब'' की वजह से अधिकांशतः निष्क्रिय था।

5.57 नीति संघर्ष और नकदी प्रबंध की निष्क्रिय प्रकृति को इस बात के लिए जिम्मेवार ठहराया गया कि सरकारी नकदी प्रबंध का अंतरण राष्ट्रीय राजकोष प्रबंध एजेंसी (एन टी एम ए) में हो रहा था। हालांकि, अंतर्राष्ट्रीय अनुभव से यह उद्घाटित हुआ है कि सरकारी नकदी प्रबंध आम तौर पर, विशेष रूप से कार्य की दैनिक

बॉक्स V.2
भारत में केंद्र सरकारी नकदी प्रबंध

सरकार के वर्तमान नकदी प्रबंध कार्य द्वि-स्तरीय प्रणाली के माध्यम से किये जा रहे हैं, जिसमें वाणिज्य बैंक प्रथम स्तर के रूप में कार्य कर रहे हैं और रिज़र्व बैंक [केंद्रीय लेखा अनुभाग (सी ए एस), नागपुर] इस प्रणाली का द्वितीय स्तर है। उक्त व्यवस्था अधिकृत वाणिज्य बैंकों की एक प्रणाली के माध्यम से कार्य करती है (नियंत्रक और महालेखा परीक्षक द्वारा अधिकृत) जिसके साथ भारत सरकार के विभिन्न विभाग/मंत्रालय अपने लेखा रखते हैं। विभाग/मंत्रालय की समस्त प्राप्तियों को अधिकृत बैंक द्वारा रखे गये लेखा में जमा किया जाता है और क्रम से संबंधित बैंक से अपेक्षित है कि वह उन्हें भारत सरकार द्वारा सी ए एस, नागपुर में रखे गये राजकोष एकल खाता (टी एस ए) में अंतरित करे। नकदी प्राप्तियों को उसी दिन जमा किया जाता है, जबकि चेक द्वारा प्राप्तियों को निम्नांकित आधार पर जमा किया जाता हैः इलेक्ट्रॉनिक विधि से टी+।, स्थानों (जहाँ शाखा समाशोधन क्षेत्र के भीतर है) टी +3 और टी+5 (बाहर के स्थानों के लिए)।

6 मार्च 1997 को रिज़र्व बैंक और भारत सरकार द्वारा हस्ताक्षर किये गये द्वितीय अनुपूरक करार के अनुसार सरकार के घाटे का स्वतः मुद्रीकरण बंद कर दिया गया था और उसके स्थान पर 1 अप्रैल 1997 से प्रभावी सरकार की अल्पावधि निधीयन आपवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अर्थोपाय अग्रिम (डब्ल्यू एम ए) और ओवर ड्राफ्ट (ओडी) योजना शुरू की गई। यदि सरकार की नकदी जमा उसके द्वारा किसी एक दिन बनाए रखने के लिए अपेक्षित न्यूनतम नकदी जमा (किसी दिन के लिए 100 मिलियन रुपये, प्रत्येक शुक्रवार, 31 मार्च और 30 जून को छोड़ कर, जब वह 1 बिलियन रुपये होनी चाहिए) से कम हो जाती है तो न्यूनतम निर्धारित स्तर तक नकदी जमा को पुनः बनाए रखने के लिए आम तौर पर छः माही आधार पर निर्धारित पूर्व घोषित सीमा तक अर्थोपाय अग्रिम सुविधा के अंतर्गत रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को एक अल्पावधि अग्रिम राशि स्वतः प्रदान की जाती है। डब्ल्यू एम ए प्रणाली के अंतर्गत अग्रिम पारस्परिक सहमति से निर्धारित ब्याज दर पर दिये जाते हैं जो वर्तमान में रेपो दर पर है और उनकी चुकौती तीन महीने के भीतर सरकार द्वारा पूर्ण रूप से करनी होती है। रिज़र्व बैंक सरकार को एक ओवर ड्राफ्ट सुविधा भी प्रदान करता है जिसके अंतर्गत डब्ल्यू एम ए सीमा के अतिरिक्त एक उच्चतर ब्याज दर पर अतिरिक्त अग्रिम उपलब्ध कराये जाते हैं जो वर्तमान में रेपो दर से दो प्रतिशत अंक अधिक है। सरकार को निरंतर 10 कार्य-दिवसों से अधिक के लिए ओ डी की समय सीमा में विस्तार करने की अनुमति नहीं है।

विलोमतः, 2003-04 तक, जब कभी सरकार के खातों में अधिशेष की स्थिति दिखाई दी, न्यूनतम निर्धारित नकदी जमा से अधिक की राशि स्वतः ही रिज़र्व बैंक द्वारा उसके अपने संविभाग से उपलब्ध कराई गई केंद्र सरकार की दिनांकित प्रतिभूतियों में निवेश कर दी जाती थी। रिज़र्व बैंक के अवरुद्धता परिचालनों के कारण उसके संविभाग से सरकारी प्रतिभूतियों के निःशेषण के साथ, रिज़र्व बैंक ने सरकार के साथ परामर्श करके भारत सरकार की अधिशेष जमाराशियों के निवेश पर एक सीमा निर्धारित कर दी थी। उक्त उच्चतम सीमा चलनिधि समायोजन सुविधा (एल ए एफ) के अंतर्गत बैंक के मौद्रिक नीति परिचालनों से उत्पन्न प्रतिभूतियों की आवश्यकता को पूरा करने के बाद रिज़र्व बैंक के संविभाग में प्रतिभूतियों की उपलब्धता की शर्त के अधीन है। सीमा से अधिक की सरकारी अधिशेष जमाराशियां रिज़र्व बैंक के सी ए एस. नागपुर में एक अप्रयुक्त नकदी जमा राशि के रूप में रखी जाती है और उस पर कोई ब्याज अर्जित नहीं होता है।

खजाना बिलों का इस्तेमाल करने के अतिरिक्त, केंद्र सरकार ने नकदी प्रबंध प्रयोजनों के लिए 2010-11 में नकदी प्रबंध बिल (सी एम बी एस) प्रारंभ किये । सी एम बी एस. खजाना बिलों की समस्त प्रजातिगत विशेषताओं के साथ अमानत परिपक्वता वाले लिखत हैं। 2011-12 के दौरान भारी मात्रा में सी एम बी एस जारी किये गये थे।

और गतिशील प्रकृति के कारण बाद के चरण में कर्ज प्रबंध के बजाय कर्ज प्रबंध कार्यालय में स्थानांतरित हो जाते हैं । इस संदर्भ में, यह देखते हुए कि ''एन टी एम ए द्वारा नकदी प्रबंध अल्पावधि में कठिन हो सकता है, क्योंकि परिचालन की दृष्टि से वह गहन है, उसके लिए अधिक स्टाफ तथा विभिन्न एजेंसियों और प्रणालियों के बीच घनिष्ठ सहयोग की आवश्यकता होती है,'' कार्य दल ने यह सिफारिश की कि भारत में सरकारी नकदी प्रबंध के लिए वर्तमान व्यवस्था को अल्पावधि में रखा जाए और इस कार्य को धीरे-धीरे मध्यावधि में एन टी एम ए को अंतरित कर दिया जाना चाहिए।

5.58 जब सरकारी नकदी प्रबंध का कार्य कुछ समय के लिए आर बी आई के पास रहना जारी रहेगा, आगे और सुधार पर विचार किया जा रहा है। जैसा कि मौद्रिक नीति की परिचालन क्रियाविधि संबंधी कार्य दल, 2011 (अध्यक्षः श्री दीपक मोहंती) ने कहा, ''चलनिधि प्रबंध पर सरकार की नकद जमाराशियों के प्रभाव को देखते हुए, आर बी आई और राजकोषीय प्राधिकारी के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता है। इस संदर्भ में उक्त दल यह समझता है कि सरकारी नकद जमाराशियों की नीलामी का मामला सरकार और आर बी आई के विचाराधीन है। इसलिए यह दल अनुशंसा करता है कि प्रणाली

बॉक्स V.3
सरकारी नकदी प्रबंध और चलनिधि प्रबंध के बीच संघर्ष

यदि सरकार अपनी अधिशेष नकदी जमाराशियां एक ऐसे बाजार में निवेश करती है जो अधिशेष चलनिधि वाला है और केंद्रीय बैंक के पास अतिरिक्त चलनिधि को खपाने के लिए अपने संविभाग में पर्याप्त प्रतिभूतियां न हो अथवा केंद्रीय बैंक पर केंद्रीय बैंक तुलन पत्र के लिए निहितार्थों तथा सरकार को अंतरित करने के लिए अधिशेष की उपलब्धता के साथ उसकी अपनी प्रतिभूतियां जारी करने का दबाव डाला जाता है (उदाहरणार्थ केंद्रीय बैंक के बिल), तो नकदी प्रबंध तथा चलनिधि प्रबंध के बीच तनाव उभर सकता है। नकदी प्रबंध और मौद्रिक नीति के बीच प्रभावी समन्वय में केंद्रीय बैंक के पास अप्रयुक्त अधिशेष नकद जमाराशियां रखा जाना निहित होगा, जो चलनिधि की निष्क्रिय अवरुद्धता को सुसाध्य बनाता है।

यदि सरकार नकद घाटे में है, जब कि बाजार में अधिशेष राशियां हैं और केंद्रीय बैंक तथा सरकार चलनिधि प्रबंध और नकदी प्रबंध के लिए क्रमशः दो भिन्न लिखतों का इस्तेमाल करते हैं (किन्तु समान परिपक्वता के) तो बाजार चलनिधि विखंडित हो सकती है, जिससे चलनिधि प्रीमियम बढ़ सकता है। उदाहरण के लिए, 2004 से पूर्व क्रोएशिया के वित्त मंत्रालय और केंद्रीय बैंक ने अपने-अपने बिल जारी किये। समान परिपक्वता वाले बिलों के लिए टी-बिल्स के लिए बट्टा 8 प्रतिशत था, जब कि केंद्रीय बैंक (सी बी) बिलों के लिए वह केवल 1 प्रतिशत था (म्यू 2006)।

बाजार विखंडन को टालने के लिए अधिक उपयुक्त विकल्प यह होगा कि खजाना बिल नीलामियों में एड-ओन्स का इस्तेमाल मौद्रिक नीति कार्यान्वयन के लिए उपयुक्त लिखत के रूप में किया जाए (विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, 2001)। विकल्पतः अथवा अनुपूरक के रूप में बाजार उधार कार्यक्रम के अंतर्गत पूर्व में जारी वर्तमान सरकारी दिनांकित प्रतिभूतियों के पुनः जारीकरण पर विचार किया जा सकता है, यदि अधिशेष चलनिधि अधिक टिकाऊ प्रकृति की महसूस होती हो। बाजार सहभागियों में असमंजस को टालने के लिए, प्रत्येक खजाना बिल की नीलामी के लिए केंद्रीय बैंक द्वारा एड-ओन्स की राशि की घोषणा की जाने के द्वारा पारदर्शिता सुनिश्चित करना आवश्यक है। इसके अलावा, यह सुनिश्चित करने के लिए कि चलनिधि प्रबंध के प्रयोजन से जारी प्रतिभूतियों की बिक्री से प्राप्त आय सरकारी व्यय के वित्तपोषण के लिए उपलब्ध नहीं होनी चाहिए बल्कि वह केंद्रीय बैंक में अवरुद्ध रहेगी, सुस्पष्ट और सुपरिभाषित व्यवस्था की जानी चाहिए। यह सुस्पष्ट रूप से विनिर्दिष्ट करने की आवश्यकता होगी कि क्या एक लागत हिस्सेदारी करार होना चाहिए अथवा क्या सरकार अपने बजट स्रोतों से व्यय को पूरा करेगी। उन अपवादात्मक परिस्थितियों को भी विनिर्दिष्ट करने की आवश्यकता होगी जिनके अंतर्गत राजकोष का वित्तपोषण करने के लिए सरकारी जमा राशियों का इस्तेमाल किया जा सकेगा।

अनेक देशों ने विगत समय में चलनिधि प्रबंध के प्रयोजन के लिए केंद्रीय बैंक प्रतिभूतियों के स्थान पर सरकारी प्रतिभूतियां जारी की हैं। इन देशों में ब्राज़ील (2002 से), भारत (2004 से एम एस एस के अन्तर्गत; वे अपवादात्मक परिस्थितियां 2008-9 में विनिर्दिष्ट की गई थी, जिनके अंतर्गत राजकोष के वित्तपोषण के लिए अलग रखी गई सरकारी जमा राशियों का इस्तेमाल किया जा सकता था), मैक्सिको, क्रोएशिया और मैसीडोनिया। यू के में डी एम ओ और बैंक ऑफ इंग्लैंड इस प्रकार के एक करार पर सहमत हो गये हैं (यद्यपि वह प्रयुक्त नहीं हुआ है) (विलियम्स, 2010)। मोज़ाम्बिक में इस प्रक्रिया के उलट हुआ, चूंकि केंद्रीय बैंक अपने स्वयं के तुलन पत्र से केंद्रीय बैंक बिल जारी करता है, किंतु कुछ स्टॉक सरकार के पास दृष्टिबंधक रखा जा सकता है। न्यूज़ीलैंड में केंद्रीय बैंक सरकार के खाते में सीधे पास की गई आय से अपनी स्वयं की विवेकाधीन शक्तियों से (राजकोष के साथ सहमत ढांचे के भीतर) खजाना बिल जारी कर सकता है। सभी देशों का अनुभव यह बताता है कि कुछ देशों में इस प्रकार की व्यवस्था ने संतोषजनक रूप से कार्य नहीं किया है चूंकि सरकार हमेशा मौद्रिक नीति प्रयोजनों के लिए अतिरिक्त खजाना बिल जारी करने की इच्छुक नहीं हो सकती है।

भिन्न परिपक्वताओं वाली प्रतिभूतियां जारी करने के लिए केंद्रीय बैंक और राजकोष के लिए एक वैकल्पिक ऑप्शन यह होगा कि जहाँ केंद्रीय बैंक चलनिधि के अवशोषण के लिए अल्पावधि पेपर्स जारी कर सकता है, राजकोष अपने घाटे का निधीयन करने के लिए दिनांकित प्रतिभूतियां जारी कर सकता है। उस घटना में, अस्थाई चलनिधि बेमेल स्थितियों का निधीयन करने के लिए सरकार के पास कोई साधन नहीं होता है। उदाहरण के लिए चीन और इंडोनेशिया में मुद्रा बाजार में सी बी बिलों का प्रभुत्व है और खजाना बिल नहीं के बराबर हैं। (विलियम्स, 2010)। कम लागत पर अल्पावधि और दीर्घावधि प्रतिभूतियां जारी करने के विकल्प से यह माना जाता है कि व्यापक, गहन और तरल सरकारी प्रतिभूति बाजार का विकास होगा। फिर भी, यदि बाजार विखंडन को प्रेरित करते हुए सी बी बिलों के प्राथमिक जारीकरण के प्रति सरकारी प्रतिभूतियों की अवशिष्ट परिपक्वता कम होती है तो संघर्ष को पूरी तरह से नहीं टाला जा सकता है।

जब बाजार अधिशेष स्थिति में कार्य करता है तो केंद्रीय बैंक के चलनिधि अवशोषण कार्यों के साथ केंद्रीय बैंक से सरकारी उधार का भी संघर्ष हो सकता है। सरकार अपनी अस्थायी नकदी बेमेल स्थिति का निधीयन करने के लिए खजाना बिलों के नीलामी आकार को घटा-बढ़ा सकती है अथवा नकदी प्रबंध बिल जारी कर सकती है। अतः केंद्रीय बैंक के लिए नीति विकल्प यह होगा कि वह चलनिधि प्रबंध के लिए उसी लिखत का इस्तेमाल करे जो सरकार द्वारा नकदी प्रबंध कार्यों के लिए किया गया, अपनी वित्तपोषण योजना के संबंध में सरकार के साथ सूचना शेयर करे और तदनुसार चलनिधि अवशोषण के प्रयोजन के लिए जारी करने योग्य खजाना बिलों की राशि में कमी-बेशी करे।

सरकारी नकदी जमाराशियों का नकदी प्रबंध और अस्थिरता

नकदी और चलनिधि प्रबंध के बीच सफल समन्वय का एक संकेतक केंद्रीय बैंक में सरकारी जमाराशियों की अस्थिरता को सीमित करने की डी एम ओ और केंद्रीय बैंक की योग्यता हो सकता है।

(जारी...)

(...समाप्त)

यू के में बैंक ऑफ इंग्लैंड से डी एम ओ को, जो राजकोष की एक कार्यपालक एजेंसी है, सरकार के दैनंदिन स्टर्लिंग नकदी प्रबंध का 2000 में अंतरण से पूर्व बकाया दैनिक शेष राशियों में महत्वपूर्ण भिन्नता थी। अंतरण के पश्चात्, 'अर्थोपाय अग्रिम' सुविधा के अंतर्गत बैंक ऑफ इंग्लैंड से लिये गये उधार का दैनिक आधार पर नकदी प्रबंध को सुसाध्य बनाने के लिए कोई इस्तेमाल नहीं किया गया था और 2008 के दौरान उक्त सुविधा की चुकौती होने तक जमा राशि लगभग 13.4 बिलियन पाउंड पर स्थिर थी (क्रॉस और अन्य, 2010)। दिसंबर 2008 के अंत में, जब वैश्विक वित्तीय संकट ऊँचाई पर था, एच एम राजकोष ने अस्थायी आधार पर बैंक ऑफ इंग्लैंड से राशियां उधार ली थी।

यूरो क्षेत्र में, यूरो क्षेत्र स्तर पर संकलित सरकारी जमाराशियां अत्यधिक अस्थिर स्वायत्त कारक रही है, जिसके कारण चलनिधि आवश्यकताओं के एक बहुत बड़े भाग के पूर्वानुमान में त्रुटियाँ हुई थी। 2006 में सरकारी जमाराशियों की उच्चतम अस्थिरता इटली में अनुभव की गई थी और उसके बाद स्पैन, आयरलैंड और यूनान में अनुभव की गई। इन देशों में, इटली और स्पैन में कर्ज प्रबंध का संचालन वित्त मंत्रालय (एम ओ एफ) में विभागीय आधार पर किया जाता है। यूनान में कर्ज प्रबंध का संचालन वित्त मंत्रालय की एक कार्यपालक एजेंसी द्वारा किया जाता है, जब कि आयरलैंड में एक सांविधिक डी एम ओ है। बेल्जीयम, जर्मनी, फ्रांस, लक्ज़ंबर्ग, दि नीदरलैंड्स, ऑस्ट्रिया, पुर्तगाल और फिन्लैंड में सरकारी जमाराशियों की अस्थिरता कम है। इन देशों में जहाँ ऑस्ट्रिया, जर्मनी और पुर्तगाल में सांविधिक डी एम ओ है, बेल्जीयम, फ्रांस, लक्ज़ंबर्ग, नीदरलैंड्स और फिन्लैंड में, डी एम ओ वित्त मंत्रालय में अवस्थित हैं। जिन देशों ने सांविधिक डी एम ओ स्थापित किये हैं (अर्थात् ऑस्ट्रिया, आयरलैंड, पुर्तगाल, स्वीडन, जर्मनी, हंगरी, स्लोवाकिया और आयर लैंड) वे यूरोपीय संघ के भाग हैं, यूरो क्षेत्र के सभी देशों में सांविधिक डी एम ओ/स्वतंत्र एजेंसियां नहीं हैं। इसके अलावा, डी एम ओ द्वारा नकदी प्रबंध का कार्य निष्पादन कर्ज प्रबंध के संस्थागत ढांचे से स्वतंत्र प्रतीत होता है।

में घर्षणात्मक तरलता में अस्थिरता के प्रमुख स्रोत का समाधान करने के लिए सरकार के साथ परामर्श करते हुए आर बी आई की विवेकाधीन शक्ति से सरकार की अधिशेष जमाराशियों की नीलामी की एक योजना प्रारंभ की जाए।''

5.59 सरकार की नकद जमाराशियों की प्रस्तावित नीलामी पर भी, सरकार और आर बी आई के बीच अधिक गहन समन्वय की आवश्यकता हो सकती है, वह केवल इसलिए नहीं कि रिज़र्व बैंक के पास सरकार की अधिशेष जमाराशियां चलनिधि के (बहुत उपयोगी) लिखत के रूप में प्रभावी रूप से कार्य करती हैं, किंतु इसलिए भी कि अंतर-संस्थागत संघर्ष के बढ़ने की संभावना हो सकती है, जैसा कि अंतर्राष्ट्रीय अनुभव द्वारा दर्शाया गया है (बॉक्स V.3)।

5.60 जहाँ सरकार की ओर से व्यक्त विचारों से ऐसा प्रतीत होता है कि वह अल्पावधि में आर बी आई के पास नकदी प्रबंध रखने के पक्ष में है, अंतर्राष्ट्रीय अनुभव तथा भारत जैसे एक उभरते बाजार देश में चलनिधि प्रबंध की अनिवार्यता, इस विषय पर आर बी बाई और सरकार के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं, जैसा कि कर्ज प्रबंध के मामले में है।

IV. समापन टिप्पणी

5.61 सुधारों के प्रारंभ के बाद से भारत में राजकोषीय मौद्रिक नीति गति-सिद्धांत में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। जहाँ अर्थोपाय अग्रिम संबंधी करार (1997) ने राजकोषीय घाटे का मुद्रीकरण और वित्तीय दमन के प्रतिकूल परिणाम को प्रतिबाधित किया, एफ आर बी एम अधिनियम के कार्यान्वयन ने इसे सरकारी प्रतिभूतियों के लिए प्राथमिक बाजार में आर बी आई की सहभागिता पर रोक लगा कर, और अधिक सामान्य रूप से राजकोषीय असंतुलनों में कटौती पर एक समय-सीमा लगा कर और आगे बढ़ाया। इसी प्रकार, जून 2000 में पूर्ण रूप से एल ए एफ के संस्थापन तथा अप्रैल 2004 में बाजार स्थिरीकरण योजना ने मौद्रिक नीति उपकरणों के परंपरागत शस्त्रागार में वृद्धि की है, जैसे खुला बाजार परिचालन और देशी आधार पर उत्पन्न दबावों तथा स्वाभाविक रूप से अस्थिर पूंजी प्रवाहों से निपटने के लिए सी आर आर (राजकोषीय पक्ष सहित)। राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों ओर से किये गये इन संस्थागत प्रबंधों के अनुसरण में, 2007-08 तक राजकोषीय असंतुलनों में सामान्य कमी के साथ काफी अधिक संवृद्धि, संतुलित मुद्रास्फीति तथा मांग मुद्रा दर में कम अस्थिरता थी, यद्यपि पूंजी आगमन में तीव्र वृद्धि हुई थी। हालांकि, वैश्विक वित्तीय संकट और यूरो क्षेत्र संकट के परिणामस्वरूप, राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के प्रति चुनौतियां अधिक जटिल हो गई हैं, चूंकि ऐसा महसूस किया जा रहा है कि आगे से केंद्रीय बैंकों को कम से कम आंशिक रूप से, कीमत स्थिरता के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी होने के अतिरिक्त, वित्तीय स्थिरता और राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता का सामना करना होगा (सुब्बाराव, 2012)।

5.62 उसी समय, वित्तीय बाजारों के उदारीकरण के साथ नीति उपकरणों (कभी-कभी गैर-परंपरागत) का अधिक प्रयोग और

प्रत्याशाओं द्वारा निभाई गई भूमिका में वृद्धि का संज्ञान लेते हुए, मौद्रिक और राजकोषीय परिवर्तियों सहित समष्टि आर्थिक के बीच पारस्परिक क्रिया जटिल हो गई है। फिर भी, इस अध्याय में किये गये अनुभवजन्य प्रयोग ने यह दर्शाया है कि राजकोषीय घाटे में वृद्धि, यद्यपि कुछ बाधा के साथ तथा उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल के लिए नियंत्रण के पश्चात् भी मौद्रिक नीति दर पर उर्ध्वमुखी दबाव डालने की ओर प्रेरित करती है। इस संदर्भ में, मध्यावधि में संवृद्धि और कीमत स्थिरता उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौद्रिक नीति को अधिक शीर्षांतर (हेड रूम) उपलब्ध कराने के लिए राजकोषीय असंतुलनों में एक टिकाऊ और गुणात्मक रूप से उत्कृष्ट सुधार की आवश्यकता है।

5.63 सरकार के कर्ज और नकदी प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्था पर विचार करना भी वैश्विक वित्तीय संकट के संदर्भ में एक ताजा बहस का विषय रहा है। जैसा कि अंतर्राष्ट्रीय अनुभव द्वारा प्रकट हुआ है, केवल मौद्रिक नीति के साथ ही नहीं, बल्कि वित्तीय स्थिरता बनाए रखने के साथ भी कर्ज प्रबंध के आपस में गुंथे हुए होने से, सरकारी कर्ज प्रबंध को केंद्रीय बैंक से पृथक करने संबंधी कार्रवाई पर अनेक मंचों से सवाल उठे हैं। संकट से मिले सबक स्पष्ट रूप से इस बात पर जोर देते हैं कि कर्ज/नकदी और मौद्रिक प्रबंध के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता है। इसके अलावा, भारी मात्रा में केंद्र सरकार के बाजार उधार, मौद्रिक प्रबंध के लिए, विशेष रूप से यदि निजी निवेश मांग बढ़ जाती है तो चुनौतियां उपस्थित करेंगे। उभरती हुई आर्थिक स्थिति तथा वैश्विक वित्तीय संकट से मिले सबक को ध्यान में रखते हुए, मध्यावधि में, भारत में सरकारी कर्ज प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्था को सरकार के साथ अधिक गहन समन्वय सहित केंद्रीय बैंक की अनवरत संलग्नता की आवश्यकता होगी।

6 पाठ (लेसन्स) और भावी चुनौतियां

ऐतिहासिक रूप से, आर्थिक संकटों/आघातों ने राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के लिए मूल्यवान पाठ प्रदान किये हैं। 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट ने संबद्धता में स्फीतिकारक राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों का आह्वान किया। संकट के बाद का मूल्यांकन यह सुझाव देता है कि राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के संदर्भ में संवृद्धि और कीमत स्थिरता के अलावा, वित्तीय स्थिरता को एक अलग उद्देश्य के रूप में लेने की आवश्यकता है, जब कि वास्तविक अर्थव्यवस्था पर वित्तीय क्षेत्र से सम्बद्ध जोखिमों का अंतर्जात रूप से विश्लेषण करना होगा। संकट के पश्चात् की अन्य चुनौतियों में वित्तीय स्थिरता नीति में केंद्रीय बैंकों की प्राथमिक संलग्नता शामिल है जो कीमत स्थिरता की उनकी मुख्य जिम्मेवारी के अतिरिक्त है, इसके अलावा वित्तीय स्थिरता मुद्दों पर विचार करने के लिए सरकारों और अन्य प्राधिकारियों तथा केंद्रीय बैंकों, के बीच बृहत् सक्रिय पारस्परिक क्रिया, राष्ट्रिक कर्ज संबंधी प्रतिष्ठानों से नकारात्मक प्रतिसूचना के जोखिम, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संकलित मांग और बृहत राजकोषीय मौद्रिक समन्वय की विफलता से बचने के लिए राजकोषीय सुदृढ़ीकरण का अंशांकन जैसी चुनौतियां हैं। भारत में, जहाँ स्वतः मुद्रीकरण को रोकने और प्राथमिक सरकारी प्रतिभूति बाजार में रिज़र्व बैंक की सहभागिता को बंद करने से राजकोषीय प्रभुत्व की मात्रा में कमी हुई है हालांकि वहीं चलनिधि प्रबंध के उद्देश्य द्वारा अधिकांशतः प्रेरित रिज़र्व बैंक की खुला बाजार खरीद का परिणाम कभी कभी घाटे के वास्तविक मुद्रीकरण के रूप में होता है। राजकोषीय घाटों के पश्च-संकट उछाल के परिणामस्वरूप, जिसने भारत में संकट पूर्व नियम-बद्ध चरण के दौरान निर्मित कुशन को उधेड़ दिया था, पुनः राजकोषीय सुदृढ़ीकरण के विश्वसनीय पथ पर लौटने के लिए एक टिकाऊ विधि से सरकारी वित्त में ढांचागत दबावों का समाधान करने की आवश्यकता होगी। इससे आगे बढ़ते हुए, विशेष रूप से संवृद्धि कीमत स्थिरता और वित्तीय स्थिरता के आसन्न उद्देश्यों को पूरा करने में एक ऐसे ढांचे में बृहत राजकोषीय -मौद्रिक समन्वय वांछित है जहाँ केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता के साथ कोई समझौता न करना पड़े।

6.1 अंतर्राष्ट्रीय और भारतीय अनुभवों का विश्लेषण यह दर्शाता है कि समष्टि आर्थिक कल्याण में सुधार करने के लिए राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों में सभी समय समन्वय की आवश्यकता है, यद्यपि समन्वय का स्वरूप आर्थिक संकट/आघात के भिन्न-भिन्न ऐपीसोड्स के दौरान भिन्न भिन्न होता है। 2008 में वैश्विक वित्तीय द्रवीकरण ने इस प्रचलित दृष्टिकोण को चुनौती दी है कि अर्थव्यवस्था को अल्पावधि में स्थिर बनाने के लिए मौद्रिक नीति का इस्तेमाल किया जाना चाहिए, जब कि राजकोषीय नीति का इस्तेमाल आय-वितरण संबंधी चिंताओं का निवारण करने तथा दीर्घावधि संवृद्धि के आधार की स्थापना के लिए किया जाना चाहिए। वैश्विक वित्तीय संकट ने एक निभावशील मौद्रिक नीति के साथ अभूतपूर्व राजकोषीय प्रोत्साहन का आह्वान किया। ब्याज दरें उनके निम्न स्तरों से और भी कम कर दी गई थी, और अनेक उन्नत देशों ने गैर-परंपरागत विस्तारकारी उपायों का आश्रय लिया, क्योंकि मौद्रिक नीति परिचालन उनकी निम्न ब्याज दर सीमाओं द्वारा निरुद्ध थे। पश्च-वैश्विक वित्तीय संकट के पश्चात्, संवृद्धि और कीमत स्थिरता के अलावा वित्तीय स्थिरता मौद्रिक नीति के एक अन्य महत्वपूर्ण नीति उद्देश्य के रूप में उभर कर आ गई। इससे आगे बढ़ते हुए, राजकोषीय और राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता से संबंधित प्रतिष्ठानों से उभरने वाले प्रतिसूचना लूप के साथ वित्तीय स्थिरता के मुद्दे ने अन्य आयाम ग्रहण किया है। भारत में, यद्यपि एफ आर बी एम अधिनियम, 2003 के कार्यान्वयन ने मौद्रिक नीति के राजकोषीय प्रभुत्व को कम किया है, बहुत अधिक बाजार उधार कार्यक्रमों के आधार पर राजकोषीय दबावों का केंद्रीय स्थान पर बने रहना जारी है, जिसकी वजह से चलनिधि चिंताओं के निवारण के लिए खुला बाजार परिचालन आवश्यक हो गये हैं। इस पृष्ठभूमि के सामने यह अध्याय उन प्रमुख नीति पाठों (लेसन्स) और चुनौतियों की ओर संकेत करता है जिनका नीति निर्माताओं को, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर और साथ ही भारतीय संदर्भ में भी राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के क्षेत्र में सामना करना पड़ सकता है।

वित्तीय अस्थिरता के खिलाफ रक्षा के लिए समष्टि आर्थिक स्थिरता एक पर्याप्त स्थिति नहीं है

6.2 वैश्विक वित्तीय संकट से पूर्व, विद्वानों तथा केंद्रीय बैंकों, दोनों में इस बात पर मतैक्य था कि कीमत और उत्पादन स्थिरता की प्राप्ति से वित्तीय स्थिरता को बढ़ावा मिलता है। विरोधाभासी रूप

में, 2007 तक व्याप्त स्थिर समष्टि आर्थिक वातावरण जोखिमों की अंडर-प्राइसिंग के लिए एक पथ-प्रदर्शक के रूप में उपस्थित हो गया; उसने प्रचक्रीय राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के अनुसरण की अनुमति दी और वित्तीय असंतुलनों में वृद्धि को प्रेरित किया। इसने संकट से पूर्व की नीति-संरचना में हुई त्रुटियों की ओर संकेत किया। विशेष रूप से मौद्रिक और वित्तीय नीतियां, विशेष रूप से राष्ट्रीय सीमाओं के पार, वित्तीय लीवरेजिंग और जोखिम उठाने में शीघ्र प्रचक्रीय संवृद्धि के निहितार्थों को पूर्ण रूप से समाविष्ट करने में असफल रही, जबकि राजकोषीय नीति, संकट की स्थिति में दिशा परिवर्तित करने वाली नीति के लिए पर्याप्त स्थान का निर्माण करने में असफल रही। संकट के दौरान, उद्देश्यों के प्रति नीति उपकरणों का सुस्पष्ट संकट-पूर्व समनुदेशन फीका पड़ गया। वैश्विक वित्तीय संकट से प्राप्त हाल के अनुभवों ने यह प्रदर्शित किया है कि बहुविध और कभी-कभी मौद्रिक स्थिरता, राजकोषीय स्थिरता और वित्तीय स्थिरता के परस्पर विरोधी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समष्टि आर्थिक नीति निर्माण से उत्तम संतुलनकारी कार्य करने की अपेक्षा की जाती है।

6.3 वित्तीय क्षेत्र को समाकलन के लिए वर्तमान मॉडल प्रदान करने की यथेष्ट रूप से आवश्यकता है, ताकि वह आर्थिक परिणामों को प्रभावित करने के लिए वित्तीय मध्यवर्ती संस्थाओं के तुलन पत्र चेनल तथा जोखिम प्रीमिया को अनुमति दे सके। वित्तीय मध्यवर्ती संस्थाओं के यथेष्ट समावेशन से ये मॉडल पूर्वानुमान लगा सकेंगे कि किस प्रकार आस्ति कीमतें तथा वित्तीय घर्षण वास्तविक (रीयल) क्षेत्र के साथ पारस्परिक क्रिया करते हैं और उस प्रक्रिया में वे किस प्रकार बहिर्जात रूप से तेजी/मंदी उत्पन्न करते हैं। नीति प्राधिकारियों को, ऋण, आस्ति मूल्यों तथा बाध्यकर वित्तीय दबावों के बीच प्रतिसूचना के लिए सतर्क रहना होगा। उन्हें अपनी मौलिकताओं से, भले ही वे समन्वय असफलताओं से उत्पन्न हुई हो और विवेकी एजेंटों में एकत्र हो रही हो अथवा आशावाद और निराशावाद की स्वयं प्रबलित लहरों से उत्पन्न जोखिमों के अविवेकी मूल्यन से, आस्ति मूल्यों के निरंतर विचलन के अवांछित समष्टि आर्थिक परिणामों के खिलाफ नज़र रखनी होगी।

6.4 निरंतर चल रहे राष्ट्रिक कर्ज संकट, वित्तीय और राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता के बीच प्रतिसूचना लूप्स का उचित ढंग से निर्धारण करने की आवश्यकता है। यह बात उभर कर सामने आई है कि वित्तीय स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना समष्टि आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए राजकोषीय, मौद्रिक और समष्टि विवेकी नीतियों के एक उपयुक्त मिश्रण का प्रयोग करने की आवश्यकता है। सन्निकट शब्दावली में, यह महत्वपूर्ण हो सकता है कि सुधार प्रक्रिया को समर्थन दिया जाए, मुद्रास्फीति को कम रखा जाए और अंतर्राष्ट्रीय रूप से समन्वित वित्तीय और संरचनात्मक सुधारों का अनुसरण किया जाए जो वित्तीय बाजार के लचीलेपन को बढ़ाएगा तथा समष्टि आर्थिक स्थिरता की संभावनाओं को सुदृढ़ करेगा। मध्यावधि में नीति की प्रथमिकता यह सुनिश्चित करना होना चाहिए कि संकट से पूर्व की स्थिति की तुलना में समग्र नीति ढांचा अधिक सुदृढ़ है, जिसे राजकोषीय मौद्रिक नीति समन्वय के लिए पर्याप्त गुंजाइश के साथ संस्थागत सुधारों की आवश्यकता हो सकती है।

वित्तीय स्थिरता, यद्यपि केंद्रीय बैंकों के लिए एक प्राथमिक अधिदेश, राजकोषीय प्राधिकारियों के साथ बृहत समन्वय आवश्यक बनाता है

6.5 वैश्विक वित्तीय संकट के पश्चात् यह महसूस किया जा रहा है कि यदि इस प्रकार की नीति को प्रभावी बनाया जाना है तो वित्तीय स्थिरता नीति के निर्माण तथा निष्पादन में केंद्रीय बैंक की संलग्नता में वृद्धि की जानी चाहिए। यद्यपि संकट के पश्चात् की अवधि में केंद्रीय बैंक अब भी एक अनिश्चित वैश्विक वातावरण में कीमत स्थिरता और वित्तीय स्थिरता की मांग को संतुलित करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं, राजकोषीय और राष्ट्रिक कर्ज की निरंतरता के बारे में चिंताओं ने उनकी चुनौतियों में वृद्धि कर दी प्रतीत होती है। इस संदर्भ में, वित्तीय संकट को रोकने, उसका प्रबंधन करने तथा समाधान करने में केंद्रीय बैंक की भूमिका में अनेक जटिल मुद्दे शामिल हैं। केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता और अभिशासन पर बढ़ते हुए राष्ट्रिक कर्ज के प्रभाव को हिसाब में लेते हुए, वित्तीय स्थिरता में योगदान देने के एक सुस्पष्ट अधिदेश के साथ, अभिशासन व्यवस्थाओं से संबंधित इन मुद्दों के लिए एक प्रभावी ओर धारणीय मुख्य मौद्रिक नीति कार्यों के संचालन की आवश्यकता है।

6.6 संक्षेप में, ऐसा प्रतीत होता है कि वैश्विक वित्तीय संकट ने केंद्रीय बैंक के अधिदेश को कीमत स्थिरता के एकल उद्देश्य से बढ़ाकर कीमत स्थिरता, वित्तीय स्थिरता और राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता के बहु-उद्देश्यों तक करने की आवश्यकता को रेखांकित किया है। हालांकि, इन उद्देश्यों को प्राप्त करना किसी असमंजस (ट्रिलेमा) से कम नहीं है, क्योंकि इन नीति-उद्देश्यों के बीच तालमेल की व्यापक गुंजाइश है। ऐसा हो सकता है कि केन्द्रीय बैंक अलग-अलग परिस्थितियों के अंतर्गत तीन में से प्रत्येक उद्देश्य को दी

जाने वाली पारस्परिक प्राथमिकता के लिए यथार्थता की मात्रा निश्चित करने में समर्थ न हों। उन्नत देशों में हाल के भारी सरकारी बजट घाटे तथा भावी अधिकारों पर लगाम लगाने के प्रति अनिच्छा से यह संकेत मिलता है कि वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय बैंकों के सामने राजकोषीय प्रभुत्व बहुत बड़ी चुनौतियां उपस्थित कर सकता है। इसलिए, संघर्षों को टालने तथा इष्टतम समष्टि आर्थिक परिणाम प्राप्त करने के लिए निर्णय लेने वाले विभिन्न प्राधिकारियों के बीच उच्च स्तरीय समन्वय की आवश्यकता है।

एक नीति समन्वय ढांचा तैयार करने की आवश्यकता

6.7 भारी महामंदी की अवधि से भिन्न, हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के प्रति केंद्रीय बैंकों की अनुक्रिया बहु-आयामी रही है तथा प्रभावी सिद्ध हुई है। फिर भी, केंद्रीय बैंकों ने अपने चलनिधि प्रबंध परिचालनों और ऋण-वर्धन नीतियों के माध्यम से अपने तुलन पत्रों पर महत्वपूर्ण ऋण जोखिमों को लिया है। इसके अलावा, एक राजकोषीय तत्व के साथ, केंद्रीय बैंकों द्वारा शुरू किये गये गैर-परंपरागत उपायों के इस्तेमाल से सार्वजनिक कर्ज प्रबंध और मौद्रिक नीति परिचालनों के अधिदेशों के बीच की सीमा-रेखाएं मिट गई हैं। जबकि राष्ट्रीय कर्ज प्रबंध कार्यालयों ने प्रतिफल वक्र के अंतिम छोर पर अधिक व्यापकता से कार्य किया, केंद्रीय बैंक सरकारी बांड बाजारों के दीर्घावधि खंड में सक्रिय हो गये। अनेक अध्ययन (उदाहरणार्थ ब्लोममेंस्तें और टर्नर, 2012) तर्क प्रस्तुत करते हैं कि इन परिवर्तनों से राजकोषीय प्रभुत्व की स्थिति आ सकती है और, उसके द्वारा मौद्रिक नीति में हस्तक्षेप हो सकता है। इसलिए, आगे जाकर, केन्द्रीय बैंकों के नीति कार्यों और उद्देश्यों की राजकोषीय/कर्ज प्रबंध प्राधिकारियों के साथ बृहत पारस्परिक क्रिया होने की संभावना है। इस वातावरण में, विभिन्न प्राधिकारियों के नीति निर्णय वर्धमान रूप से अन्योन्याश्रित हो जाएंगे, उनके बीच गहन पारस्परिक क्रिया तथा समन्वय आवश्यक हो जाएगा, तथापि इसका अर्थ यह नहीं है कि केंद्रीय बैंकों की स्वतंत्रता को कोई हानि होगी। विभिन्न देशों में समन्वय ढांचे भिन्न-भिन्न हो सकते हैं और अन्य विशेषज्ञों द्वारा उत्तरदायी एजेंसी को दी जाने वाली औपचारिक सूचना उसमें शामिल हो सकती है। हालांकि, क्या केंद्रीय बैंकों के लिए वित्तीय स्थिरता एक अनन्य अधिदेश होना चाहिए अथवा क्या एक औपचारिक निकाय को प्रणालीगत जोखिमों और वित्तीय स्थिरता मुद्दों पर ध्यान देना चाहिए, अभी भी वाद-विवाद के विषय बने हुए हैं। इसी प्रकार, इस बात पर भी कोई मतैक्य नहीं है कि 'आर्म्स लेंग्थ' समन्वय अथवा फेस टू फेस चर्चा में से कौन सा मुख्य समन्वय तंत्र होना चाहिए।

6.8 समन्वय तंत्र का विकल्प भी इस बात पर निर्भर कर सकता है कि क्या राजकोषीय प्राधिकारी मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य के प्रति उचित समझ रखते हैं और जहाँ तक राजकोषीय नीति नियमों का संबंध है, क्या वही मौद्रिक प्राधिकारियों पर लागू होते हैं। यदि यह मामला है तो प्रत्येक प्राधिकारी फेस टू फेस चर्चा किये बिना अन्य के प्रतिफलों का खाता मौन रूप से ले सकता है। इस प्रकार के समन्वय तंत्र ने सामान्य अवधियों में प्रभावी रूप से कार्य किया है। किन्तु, संकट के बाद की अवधि के दौरान, अत्यधिक प्रतिकूल स्थितियों के वर्तमान चरण के अंतर्गत, जिसे सार्जेंट के ''अन्प्लेज़ेंट मोनेटरिस्ट अर्थमैटिक'' रूप में पहचाना जा सकता है, नीति-निर्माताओं को संयुक्त रूप से निर्णय लेने की अधिकतम स्थिति की ओर बढ़ना होगा। चूंकि विभिन्न नीतियों के बीच पारस्परिक क्रिया जटिल होने का अनुमान है, नीति क्षेत्र में इस बात का भी संकेत किया गया है कि अस्थायी अथवा स्थायी आधार पर, राजकोषीय प्राधिकारियों/कर्ज प्रबंधकों और केंद्रीय बैंकों के बीच नयी कार्यात्मक व्यवस्थाओं की आवश्यकता है। राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध के लिए वर्तमान संस्थागत व्यवस्थाओं की, नीतियों में मुख्य रूप से अंतरणों और/अथवा नीति प्रतिफलों (उदाहरणार्थ, गैर-परंपरागत उपाय, उच्च राजकोषीय घाटे, इत्यादि) की स्थितियों में इन समन्वय समस्याओं से निपटने में उनकी क्षमता निश्चित करने हेतु जांच की आवश्यकता है।

6.9 एक सुसमन्वित नीति दृष्टिकोण यह सुनिश्चित करेगा कि देश के स्तर पर बल दिये जा रहे और अपनाये जा रहे राजकोषीय सुदृढ़ीकरण से समग्र संवृद्धि प्रक्रिया में बाधा उपस्थित नहीं होती है। एक सुविनिर्दिष्ट समन्वय ढांचा संवृद्धि के प्रति गिरावट जोखिमों को निष्क्रिय करने के लिए नीति निर्माताओं को, राजकोषीय और मौद्रिक नीति स्थान पुनर्निमित करने तथा देशी नीतियां अंशांकित करने की सुविधा प्रदान करेगा। संवृद्धि के प्रति गिरावट के जोखिम अधिकांश अर्थव्यवस्थाओं में अविरत रूप से विद्यमान हैं।

राष्ट्रिक कर्ज प्रतिष्ठानों से नकारात्मक प्रतिसूचना से वित्तीय क्षेत्र को पृथक करना

6.10 कुछ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में राष्ट्रिक कर्ज संकट का मार्ग प्रशस्त करने वाले वित्तीय संकट ने विशेष रूप से वित्तीय स्थिरता और राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता के बीच एक प्रतिसूचना लूप के अस्तित्व को हाइलाइट किया है। विशेष रूप से, यूरो क्षेत्र में प्रमुख चुनौती

बैंकिंग क्षेत्र की चिरकालिक कमजोरी से उत्पन्न होती है। बैंकिंग क्षेत्र की सुभेद्यता, क्रमशः राष्ट्रिक जोखिमों में वृद्धि करती है, क्योंकि, निवेशक संवेदनशील वित्तीय संस्थाओं के लिए सदस्य राज्यों को अंतिम बैकस्टॉप के रूप में महसूस करते हैं। इस प्रकार के प्रतिष्ठानों ने राष्ट्रिक और वित्तीय संस्थाओं, दोनों के लिए उधार की उच्च लागत के लिए प्रेरित किया, यदि ऐसी स्थिति दीर्घावधि तक रहती है तो वह धारणीय नहीं हो सकती है। इसके अलावा, सार्वजनिक क्षेत्र का झुकाव डीलिवरेज की ओर चाहे विकल्प से अथवा बाध्यकारी स्थितियों के अंतर्गत हो सकता है जो संवृद्धि संभावनाओं को प्रभावित करते हुए क्रमशः कर्ज निरंतरता को दुर्बल बनाएगा।

6.11 यूरो क्षेत्र में हाल ही में किये गये कुछ उपाय जैसे, मार्च 2012 में बजटरी यूनियन की ओर कदम और यूपरोपीय वित्तीय स्थिरता सुविधा/यूरोपीय स्थिरता तंत्र (ई एफ एस एफ/ई एस एम) को सुदृढ़ बनाना राजकोषीय निरंतरता तथा बैंकों और राष्ट्रिकों के बीच प्रतिकूल लूप सुनिश्चित करने के आशाजनक उपाय हैं। इसके अलावा, 6 सितंबर 2012 को ई सी बी द्वारा घोषित 'एकमुश्त मौद्रिक लेन-देन' से ई एफ एस एफ/ई एस एम के साथ समष्टि आर्थिक समायोजन अथवा एहतियाती कार्यक्रम के अंतर्गत आने वाले देशों के लिए उधार लागत की कम नीति दरों का संचारण सुनिश्चित होना चाहिए।

6.12 बैंकिंग, राष्ट्रिक और संवृद्धि समस्याओं के बीच सहबद्धता को सुदृढ़ बनाने के लिए, यूरो क्षेत्र की नीतियां ऐसी होनी चाहिए कि वे सार्वजनिक और निजी तुलन पत्रों में सुधार के लिए तथा प्रतियोगीक्षमता पुनः प्राप्त करने के लिए ढांचागत सुधारों के कार्यान्वयन में अलग-अलग देशों के प्रयासों का समर्थन करे। इसके अलावा, ऐसा प्रतीत होता है कि देशी आधार पर प्रणालीगत बैंकों में अधिक पूंजी के इंजेक्शन द्वारा बैंकों के तुलन पत्रों में सुधार तथा अव्यवहार्य बैंकों का समाधान अपरिहार्य है। उसी समय, यह भी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि निजी क्षेत्र के तुलन पत्रों के बिगड़ जाने से राजकोषीय सुदृढ़ीकरण का पूर्ण रूप से प्रतितुलन नहीं होता है।

मौद्रिक नीति के स्वतंत्र संचालन के लिए राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की आवश्यकता

6.13 वैश्विक वित्तीय संकट के पश्चात् राष्ट्रिक कर्ज स्तरों में अभूतपूर्व उछाल ने अनेक अर्थव्यवस्थाओं में सरकारी वित्त को सुभेद्य बना दिया है। जहाँ राजकोषीय सुभेद्यता के समाधान की आवश्यकता है, सकल मांग को समाप्त हो जाने से बचाने के लिए राजकोषीय सुदृढ़ीकरण का सुनियोजन तथा अंशांकन होना आवश्यक है। इसके अलावा, इस प्रक्रिया की पूरक के रूप में अन्य नीतियों का होना आवश्यक है जो राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध और मौद्रिक नीतियों के बीच नयी और जटिल पारस्परिक क्रियाओं के सावधानीपूर्वक निर्धारण को आवश्यक बनाता है। उच्च राष्ट्रिक कर्ज स्तर राजकोषीय स्थान को कम करते हैं, जिनसे, क्रमशः मौद्रिक नीति उपकरणों का इस्तेमाल निरूद्ध हो सकता है तथा भावी ब्याज दरों के बारे में भी काफी अधिक अनिश्चितता का निर्माण होता है।

6.14 बढ़ी हुई अनिश्चितता के बीच, जब सार्वजनिक कर्ज/जी डी पी अनुपात बढ़ते हैं तो राजकोषीय-मौद्रिक प्रतिसूचनाओं के उच्च कर्ज सुदृढ़ होने की संभावना होती है। इसके अलावा उच्च कर्ज निम्नलिखित के माध्यम से संवृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है: (i) पूंजी की उच्च लागत, (ii) विकृतिकारक कर (iii) मुद्रास्फीति, और (iv) एक निम्नतर पूंजी-श्रम अनुपात, जो उत्पादकता को कम कर सकता है। ऊपर मंडराते उच्च कर्ज से उत्पन्न इस प्रकार की अस्थिरताएं अन्य नीति विकल्पों पर भी, जिसमें मौद्रिक नीति भी शामिल है, अतिरिक्त भार डाल सकती है। इस संदर्भ में, जॉर्डन (2012) तर्क प्रस्तुत करता है, ''अन्य संस्थाओं की निष्क्रियता के कारण जहाँ केंद्रीय बैंकों को स्वयं कार्रवाई करने के लिए बाध्य होना पड़ता है, उन्हें ऐसी स्थिति से बचने के उपाय करने चाहिए।''

6.15 उच्च राष्ट्रिक कर्जों के निहितार्थों को देखते हुए भारी कर्ज से आक्रांत सभी देशों में एक विश्वसनीय मध्यावधि राजकोषीय सुदृढ़ीकरण में तेजी लाने की संभावना को बढ़ावा देने वाली कार्रवाई में शीघ्रता करने की आवश्यकता है। राष्ट्रिक कर्ज स्तरों तथा मध्यावधि राजकोषीय उद्देश्यों के बीच सुस्पष्ट सहबद्धता जोड़ी जा सकती है जो राजकोषीय नीति की प्रत्याशाओं को आश्रय देने में सहायता करेगी। मौद्रिक नीति परिचालनों के साथ राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया का तालमेल बिठाना भी महत्वपूर्ण है। राजकोषीय सुदृढ़ीकरण के प्रारंभिक चरण में, अनेक देशों में निम्न नीति दरों के प्रचलन के कारण, ऐसा हो सकता है कि मौद्रिक नीति राजकोषीय सुदृढ़ीकरण के लिए अधिक समर्थन न दे सके। किन्तु, जैसे ही संवृद्धि में सुधार प्रारंभ होता है और मौद्रिक नीति पर नगण्य न्यूनतर सीमा द्वारा नियंत्रण कम हो जाता है तो राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की गति में तीव्रता आ सकती है। राजकोषीय सुदृढ़ीकरण, नीति पहल द्वारा प्रेरित होना चाहिए जो दीर्घावधि संवृद्धि को सुलभता प्रदान करेगी और मौद्रिक नीति पर भार को कम करेगी।

राजकोषीय मौद्रिक समन्वय केवल राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं बल्कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी

6.16 वैश्विक वित्तीय संकट के पश्चात् वैश्विक मौद्रिक और वित्तीय प्रणालियों में बहुत सी कमजोरियां सामने आ गई हैं। ये कमजोरियां क्रमशः तेजी से संकट को सीमा-पार संप्रेषित कर देती हैं। इसलिए राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय की केवल राष्ट्रीय स्तर पर ही आवश्यकता नहीं है, बल्कि इन कमजोरियों को दूर करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी वह आवश्यक है। तदनुसार, विश्व की विशालतम अर्थव्यवस्थाओं को एक ऐसा समन्वय तंत्र विकसित करना होगा जो मूलभूत आर्थिक नीतियों का मार्गदर्शन कर सके तथा विशेष रूप से राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच बृहत् सहक्रिया प्राप्त कर सके।

6.17 वैश्विक स्तर पर वित्तीय अंतर-संबद्धता और सीमा-पार लगभग कहीं भी और सर्वत्र किसी आर्थिक/वित्तीय आघात के असीमित विस्तार की संभावना को समझते हुए, विभिन्न मंचों जैसे जी-20, वित्तीय स्थिरता बोर्ड (एफ एस बी), अंतर्राष्ट्रीय निपटान बैंक (बी आई एस) और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आई एम एफ) के माध्यम से अधिक प्रभावी अंतर्राष्ट्रीय नीति समन्वय लाने के प्रयास किये जा रहे हैं। इस बात की बृहत आधार पर अभिस्वीकृति है कि राष्ट्रीय नीतियों को एकल आधार पर नहीं लिया जा सकता है और यह कि सीमा पार वित्तीय संकट के समाधान के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग आवश्यक है।

6.18 राजकोषीय, वित्तीय, ढांचागत, मौद्रिक और विदेशी मुद्रा विनिमय दर, व्यापार और विकास नीतियों में जी 20 की पारस्परिक निर्धारण योजना (एम ए पी) के अंतर्गत वैश्विक स्तर पर मजबूत, धारणीय तथा संतुलित संवृद्धि के लिए जी 20 ढांचा परिचालन समन्वित कार्रवाई पर प्रगति कर रहा है। जहाँ इस बात पर सहमति है कि यूरो क्षेत्र और यू एस में महत्वपूर्ण नीति कार्रवाई को प्रतिबिंबित करते हुए सामान्येतर जोखिम कम हो गये हैं, इस बात पर मतैक्य है कि मुख्य रूप से नीति अनिश्चितता, सार्वजनिक और निजी डीलिवरेजिंग, अपर्याप्त ऋण मध्यस्थता और वैश्विक मांग पुनः संतुलित किये जाने पर अपर्याप्त प्रगति के कारण वैश्विक अर्थव्यवस्था का कम निष्पादन जारी है।

6.19 जी-20 का आसन्न फोकस वैश्विक मांग को चिरस्थायी रूप से सुदृढ़ता प्रदान करने तथा उसी के साथ ऐसे उन्नत देशों में जहाँ अभी तक विश्वसनीय और सख्त मध्यावधि राजकोषीय योजनाओं का अस्तित्व नहीं है, उन्हें विकसित और कार्यान्वित करने के लिए अनुकूल स्थितियों के निर्माण की ओर होगा। जहाँ कुछ मामलों में राजनैतिक दृष्टि से ढांचागत सुधार कठिन हैं, उनका होना भी, धारणीय संवृद्धि के लिए आवश्यक है।

6.20 आई एम एफ ने, विशेष रूप से 25 प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण देशों के लिए अपने वित्तीय क्षेत्र निर्धारण को सुदृढ़ बनाया है। इसके अलावा, नये प्रणालीगत जोखिमों को टालने के लिए, जी-20 देशों के नेताओं ने मास्को में फरवरी 2013 में आयोजित बैठक में एफ एस बी के कार्यान्वयन निगरानी के लिए समन्वय ढांचा (सी एफ आई एम) के माध्यम से वित्तीय क्षेत्र सुधार एजेंडा के पूर्ण, समय पर तथा निरंतर कार्यान्वयन के प्रति अपनी बचनबद्धता की पुनः पुष्टि की। इस एजेंडा में बासेल III, II.5[1] और II, काउंटर पर डेरीवेटिव्ज़ बाजार सुधार (ओ टी सी), प्रणालीगत महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थाएं तथा छाया बैंकिंग शामिल है। इसके अतिरिक्त, इन अंतर्राष्ट्रीय निकायों की सक्रियता जारी रहने की आशा है, क्योंकि प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में सुसंगत और निरंतर समायोजन उपायों के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय समष्टि आर्थिक स्थिरता पर राष्ट्रीय नीतियों से विचलन को न्यूनतम करने की आवश्यकता है।

भारतीय अनुभव दर्शाता है कि यद्यपि राजकोषीय नियम आवश्यक हैं, वे राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के परिणामों को आशावादी बनाने में पर्याप्त नहीं हैं।

6.21 विगत वर्षों में भारत में संस्थागत सेट अप और प्रथाओं को विकासशील नीति उद्देश्यों के साथ पंक्तिबद्ध करने के लिए शुरू किये गये विभिन्न सुधार उपायों की पृष्ठभूमि में प्रयुक्त राजकोषीय मौद्रिक समन्वय का निर्धारण यह दर्शाता है कि राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) अधिनियम, 2003 के कार्यान्वयन के बाद मौद्रिक नीति के राजकोषीय प्रभुत्व को कम करने के लिए कदम बढ़ाया गया है। किन्तु, कभी-कभी, एक दूसरे पर घाटों और मुद्रास्फीति का प्रभाव डालने, आरक्षित मुद्रा निर्माण को प्रभावित करते हुए कर्ज-घाटा गति-सिद्धांतों के साथ राजकोषीय प्रभुत्व ने उच्च घाटों के माध्यम से एक नया रूप धारण कर लिया है। भारी खुला बाजार परिचालन (ओ एम ओ) अधिकांशतः मौद्रिक कार्यक्रम के अनुरूप ही रहे हैं, किन्तु कभी-कभी सरकार के बहुत बड़े

1 बी सी बी एस विनियम की अपेक्षानुसार बैंकों को अपने व्यापार परिचालनों में बाजार जोखिमों के खिलाफ पूंजी रखनी होती है।

बाजार उधार चलनिधि और मौद्रिक स्थितियों पर प्रभाव डालते हैं तथा परिणामतः ओ एम ओ के आकार और समय को भी प्रभावित कर सकते हैं। इससे मौद्रिक नीति क्षीणता की ओर बढ़ सकती है। बहुत बड़ी सब्सीडियों से उभरने वाले राजकोषीय घाटे अल्पावधि में मुद्रास्फीति को दबा देंगे किन्तु मध्यावधि में वे स्फीतिकारी रूप में परिवर्तित हो सकते हैं। भारतीय संदर्भ में वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप 2008-09 के दौरान महत्वपूर्ण प्रतिचक्रीय प्रोत्साहन प्रदान करने के बावजूद, दीर्घावधि में सरकारी व्यय का प्रचक्रीय होना पाया गया है। यह, चक्रीय गिरावट में प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए राजकोषीय स्थान की उपलब्धता को प्रभावित करता है। इसके अलावा केंद्र और राज्यों के संयुक्त कर्ज रिज़र्व बैंक द्वारा किये गये वित्तपोषण की सीमा तक आरक्षित मुद्रा में परिवर्तन कर देते हैं और इस प्रकार उनके मौद्रिक निहितार्थ होते हैं।

6.22 भारतीय अनुभव से अनेक मुख्य पाठ सामने आये हैं। शुद्ध राजकोषीय प्रभुत्व के एक युग से विकसित होकर नियम आधारित राजकोषीय अनुशासन स्पष्ट रूप से राजकोषीय मौद्रिक समन्वय की प्रकृति और मात्रा पर संस्थागत व्यवस्थाओं में परिवर्तनों का प्रभाव चित्रित करता है। यह नोट करने योग्य है कि राजकोषीय घाटों के स्वतः मुद्रीकरण की प्रथा को बंद करने तथा प्राथमिक सरकारी प्रतिभूति बाजार में रिज़र्व बैंक की सहभागिता पर रोक लगाने से मौद्रिक नीति के राजकोषीय प्रभुत्व की मात्रा में कुछ-कुछ कमी हुई है। तथापि, रिज़र्व बैंक ने अर्थोपाय अग्रिमों के माध्यम से सरकार को अस्थायी सहायता प्रदान करना जारी रखा है। इसके अलावा, रिज़र्व बैंक अक्सर द्वितीयक बाजार में सरकारी पेपर खरीदता है, यद्यपि ये परिचालन प्रायः वित्तीय प्रणाली को चलनिधि समर्थन प्रदान करने के उद्देश्य द्वारा प्रेरित होते हैं। भारत में, सामान्य तौर पर राजकोषीय घाटे 2008-09 से बढ़े हैं। जहाँ सरकार 2012-13 के द्वितीयार्ध से राजकोषीय सुदृढ़ीकरण के पथ पर लौटी है, यह महत्वपूर्ण है कि एक टिकाऊ तरीके से सरकारी वित्त में ढांचागत दबावों का समाधान करने के लक्ष्य को लेकर नीति पहल करते हुए इस प्रवृत्ति को सुदृढ़ बनाया जाए ताकि मध्यावधि में नियम आधारित राजकोषीय अनुशासन प्रभावी और विश्वसनीय बन सके।

6.23 2008-09 के बाद जिस प्रकार से ढांचागत असंतुलन जारी हैं, कर्ज संसाधनों का आश्रय लिया जाना आवश्यक हो गया है, जिसके द्वारा मौद्रिक नीति परिचालनों को नियंत्रित किया जा रहा है। जहाँ राजकोषीय नीति के पास पहले कदम बढ़ाने का लाभ प्राप्त है और मौद्रिक नीति राजकोषीय प्रभुत्व द्वारा नियंत्रित होने के कारण मौद्रिक प्राधिकारियों के पास इस बात के कम विकल्प रहते हैं कि वे समष्टि आर्थिक परिणामों को रोकने के लिए राजकोषीय नीतियों की प्रतिक्रिया में जो कार्रवाई करेंगे वह घटिया होगी, यदि वे राजकोषीय नीतियों को हिसाब में नहीं लेते हैं। चूंकि मौद्रिक नीति परिचालन क्रियाविधि मौद्रिक नियंत्रण के अप्रत्यक्ष उपकरणों पर अधिक निर्भरता की ओर विकसित होती है और राजकोषीय नीतियां अधिक नियम-बद्ध हो गई हैं, यह संभव है कि मौद्रिक नीति के राजकोषीय प्रभुत्व को कम किया जाय, यद्यपि उक्त नियम मौद्रिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त न हों। सार रूप में, राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच समन्वय को नियंत्रित करने वाली कमज़ोर संस्थागत व्यवस्थाएं राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों नीतियों को प्रभावित करना जारी रख सकती हैं।

6.24 ढांचागत बाधाएं भी प्रति-चक्रीय साधन के रूप में राजकोषीय नीति की भूमिका को नियंत्रित करती हैं। भारी मात्रा में राजकोषीय घाटे प्रत्यक्ष रूप से अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति बढ़ाते हैं, यदि उनका वित्तपोषण आरक्षित मुद्रा विस्तार के माध्यम से किया जाता है। अन्यथा, वे दमित कीमतों के माध्यम से आपूर्ति अनुक्रियाओं को प्रभावित करते हैं और मांग प्रबंध साधन के रूप में मौद्रिक नीति की प्रभावोत्पादकता को नियंत्रित करते हैं जहाँ राजकोषीय नीति के पीछे मंशा यह होती है कि वह प्रतिचक्रीय हो, किन्तु व्यवहार में वह अक्सर प्रचक्रीय हो जाती है, इस प्रकार वह आर्थिक गिरावट की स्थितियों में प्रोत्साहन प्रदान करने की अपनी योग्यता खो देती है और तेजी के समय में कुछ मांग को दबा देती है। अंततः, भारतीय अनुभव दर्शाता है कि सरकारी कर्ज का मुद्रा-निर्माण के साथ काफी लम्बे समय से संबंध चला आ रहा है और कभी-कभी कर्ज वित्तपोषित राजकोषीय विस्तार के कारण मौद्रिक प्रबंध पर दबाव पड़ता है।

6.25 इन पाठों का बड़ा महत्व है, क्योंकि भारत में उच्च राजकोषीय घाटों और उच्च मुद्रास्फीति की पृष्ठभूमि में राजकोषीय और मौद्रिक प्रबंध के लिए चुनौतियां काफी बड़ी हैं। इस विषय में आगे की ओर कदम बढ़ाते हुए, संस्थागत सुधारों की एक श्रृंखला के माध्यम से इन चुनौतियों का सामना करना महत्वपूर्ण है। राजकोषीय पक्ष की ओर, ढांचागत घाटों पर फोकस करते हुए राजकोषीय नियमों के एक उन्नत अभिशासन की आवश्यकता है। यह सुनिश्चित करते हुए कि राजकोषीय नियमों में सन्निहित लचीलेपन से चक्रीय प्रतिफलों के नाम पर राजकोषीय असावधानी प्रेरित नहीं होती है, चक्रीय कारकों के लिए समायोजन की अनुमति देने के लिए नियमों को लचीला बनाया जा सकता है।

6.26 बहु-राष्ट्रीय क्षेत्र-पार अनुभव देश-विशिष्ट परिस्थितियों को हिसाब में लेते हुए राजकोषीय नियम बनाने की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं। उदाहरण के लिए, सिंगापुर में बजट घाटा नियम इन सिद्धांतों पर आधारित हैं कि सरकार को उसके शासन की अवधि में संतुलित बजट रखना चाहिए, जिसका आशय यह है कि एक वर्ष में किसी घाटे को उसके कार्यकाल के दौरान पिछले वर्षों में संचित अधिशेष द्वारा संतुलित किया जाना चाहिए। भारतीय स्थितियों के लिए, विशेष रूप से चूंकि वे प्रतिचक्रीय प्रोत्साहन की राह में भी आ सकते हैं, इस प्रकार के कठोर नियमों की उपयुक्तता के लिए बहस की गुंजाइश है। प्रथम, भारतीय मामले में, किसी भी वर्ष में एक संतुलित बजट स्थिति प्राप्त करने के बारे में सोचना कठिन हो सकता है। द्वितीय, एक ऐसी राज्य-व्यवस्था में, जो गठबंधनों पर निर्भर है, कार्यकाल शब्द को परिभाषित करना कठिन बन गया है। तृतीय, यह समस्या है कि यदि सरकार को उसके सत्ता में आने के पहले ही वर्ष में एक विस्तारकारी अनुक्रिया की आवश्यकता होती है तो उक्त नियम को किस प्रकार कार्यान्वित किया जा सकता है।

6.27 नियम-आधारित राजकोषीय अनुशासन को लौटाने की एक आसन्न आवश्यकता की पृष्ठभूमि के समक्ष, यह जांच करना आवश्यक है कि भारत में कौन से नियम कार्य कर सकते हैं एक आर बी एम अभिशासन में एक मुख्य कमी यह है कि वहाँ अक्सर राजकोषीय नियमों से विचलन होते हैं। एफ आर बी एम अधिनियम राष्ट्रीय सुरक्षा आवश्यकता, राष्ट्रीय आपदा और अन्य अपवादात्मक परिस्थितियों के मामले में लक्ष्यों का उल्लंघन करने के लिए सुस्पष्ट रूप से प्रावधान करता है। इस वजह से अर्थ निकालने में काफी गुंजाइश रह जाती है। एफ आर बी एम अधिनियम में 2012-13 में संशोधन ने राजकोषीय नियमों के अभिशासन की पुनः स्थापना की और एक मध्यावधि व्यय ढांचा प्रारंभ किया। इससे आगे बढ़ते हुए, घाटा नियमों में व्यय नियम जोड़ते हुए और राजकोषीय सदृश क्रियाकलापों को शामिल करने के लिए घाटे की व्यापक परिभाषा अपनाने के द्वारा किसी अपवाद के बारे में अस्पष्टता के एक बड़े भाग को हटाने की आवश्यकता है।

6.28 मुद्रास्फीति पर भारी राजकोषीय घाटों के प्रभाव और घाटों के मुद्रीकरण से संबंधित मुद्दे का समाधान केवल टिकाऊ राजकोषीय सुदृढ़ीकरण के माध्यम से हो सकता है जो चक्रीय रूप से जांच का मुकाबलना कर सकता है। यह, हालांकि दूरगामी राजकोषीय सुधारों के कार्यान्वयन के अधीन संभव होगा जिसमें राजस्व बढ़ाने तथा व्यय घटाने संबंधी, दोनों ही उपाय शामिल होंगे। व्यय पक्ष की ओर, सब्सिडी व्यय को चरणबद्ध रूप से घटाने की ओर कदम बढ़ाना सार्वजनिक व्यय को, चालू खाते से लेकर पूंजी खाते तक को पुनः संतुलित करने तथा मध्यावधि में संवृद्धि की उच्चतर दर प्राप्त करने एवं उसे बनाये रखने में मदद करेगा। सार्वजनिक व्यय की गुणवत्ता में सुधार से अधिक कर संग्रहण की स्वीकार्यता में वृद्धि हो सकती है, जैसा कि स्कैन्डीनेवियन देशों के मामले में हुआ है। उचित सार्वजनिक उपयोगिता कीमत निर्धारण और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में सुधार के माध्यम से अधिक टिकाऊ तरीके से सरकार के करेतर राजस्वों को भी बढ़ाने की आवश्यकता है।

6.29 मौद्रिक पक्ष की ओर, मौद्रिक नीति उद्देश्यों के साथ ओ एम ओ के बेहतर तालमेल को संस्थागत सुधारों में फोकस किया जाना चाहिए। रिजर्व बैंक द्वारा प्रतिभूतियों की एकमुश्त खरीद/बिक्री के माध्यम से प्राथमिक रूप से ओ एम ओ किये जाने की आवश्यकता है। चलनिधि समायोजन सुविधा का इस्तेमाल सामान्यतया घर्षणात्मक तरलता की बेमेल स्थिति के निवारण के उसके अभिप्रेत उद्देश्य को प्राप्त करने के अनुरूप किया जाना चाहिए। हाल के वर्षों में ओ एम ओ की एकमुश्त खरीद में वृद्धि हुई है । जहाँ वर्तमान समय में, पूंजी आगमन सामान्य हैं, ओ एम ओ समग्र मौद्रिक प्रबंध की राह में नहीं आ रहे हैं क्योंकि आरक्षित मुद्रा विस्तार पूर्वानुमानित स्तरों से कम है; हालांकि, प्रसंग रूप से, वे ब्याज-दरों और बाजार कार्यों पर अतिक्रमण कर सकते हैं। वास्तव में, 2008-09 के दौरान, सरकार द्वारा काफी अधिक अतिरिक्त बाजार उधार ने ऐसे समय में आय पर ऊर्ध्वमुखी दबाव का निर्माण किया, जब मौद्रिक नीति ने कम ब्याज दर व्यवस्था को समर्थन दिया था। भारी मात्रा में ओ एम ओ खरीद के अभाव में यह बाजार-विघटनकारी सिद्ध हो सकता था। इस संभावना के साथ कि कभी-कभी ओ एम ओ का मुद्रा निर्माण प्रभाव मौद्रिक नीति परिचालनों के संचालन की राह में बाधा उपस्थिति करता है, ओ एम ओ के लिए उद्देश्यों तथा परिचालन क्रियाविधियों को बेहतर ढंग से परिभाषित करने की आवश्यकता है और वे सार्थक केंद्रीय बैंक प्रतिक्रिया कार्य द्वारा नियंत्रित होने चाहिए।

6.30 हाई हेल्ड-टू-मैच्योरिटी (एच टी एम) प्रावधान की भी पुनः जांच करने की आवश्यकता है जो सार्वजनिक कर्ज वित्तपोषण को समर्थन देता है तथा वास्तव में निजी ऋण के बहिर्गमन को प्रेरित करता है। इसके अलावा, सांविधिक चलनिधि अनुपात (एस एल आर) पर निर्भरता को कम करने के लिए वित्तीय क्षेत्र सुधार को उस

स्थिति में आगे ले जाने की आवश्यकता है जब एक बार एक उन्नत नियम-आधारित राजकोषीय और मौद्रिक व्यवस्था लागू हो जाती है। समग्र रूप से, एक नयी व्यवस्था को, राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के निर्माण तथा कार्यान्वयन के लिए एक बेहतर समन्वय तंत्र के माध्यम से समर्थन दिया जा सकता है।

वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान देखे गये विभिन्न जोखिमों के प्रकाश में प्रभावी राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय को जारी रखने तथा रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र को मज़बूत बनाने की आवश्यकता

6.31 मौद्रिक नीति परिचालनों की व्यवस्था में परिवर्तनों और राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विभिन्न चरणों के अनुरूप विगत वर्षों में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में काफी अधिक रूपांतरण हुए हैं। विशेष रूप से सुधार-पूर्व अवधि में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के विकास के विश्लेषण से कुछ पाठ प्रकट होते हैं।

6.32 प्रथम, सुधार-पश्च अवधि के दौरान, तदर्थ खजाना बिलों से अर्थोपाय अग्रिम (डब्ल्यू एम ए) की ओर बढ़ने तथा एफ आर बी एम ढांचे को अपनाये जाने से मौद्रिक नीति स्वतंत्र हो गई है और इसलिए केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र भी राजकोषीय घाटे के जकड़-जामे से मुक्त हो गया है। समग्र मौद्रिक आधार में केंद्र सरकार को दिये गये निवल आर बी आई ऋण का अंश 1980 से संकट के समय तक क्रमशः कम होता गया है, जिसके बाद उसमें कुछ वृद्धि हुई। 2000 के दशक में, जब मौद्रिक विस्तार में राजकोषीय विस्तार की प्रमुख भूमिका क्रमशः क्षीण हो गई, पूर्वानुमानित और वास्तविक एम 3 संवृद्धि के बीच विचलनों को महत्वपूर्ण रखते हुए, यद्यपि वह 1980 और 1990 के दशक की मौद्रिक व्यवस्था की तुलना में कम था, पूंजी प्रवाहों ने केंद्रीय स्थान ग्रहण कर लिया था।

6.33 द्वितीय, 2000 के दशक के प्रारंभ में उच्च पूंजी प्रवाह व्यवस्था के दौरान अवरुद्धता मुद्दों में प्रभावी राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय और संकट के दौरान चलनिधि समस्याओं ने रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। मध्य-2000 के दशक से 2007-08 तक भारत की ओर पूंजी प्रवाहों में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। चालू खाता घाटों के वित्तपोषण की आवश्यकता से भी अधिक भारी अतिरिक्त पूंजी-प्रवाहों का परिणाम विदेशी मुद्रा आस्तियों के संचयन के रूप में हुआ। विदेशी मुद्रा आस्तियों में भारी वृद्धि से 2001 और 2007 के बीच रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के आकार में महत्वपूर्ण वृद्धि हो गई। निवल देशी आस्तियों के संबंध में भारी निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों के पक्ष में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र की संरचना में भी रूपांतरण हो गया। हालांकि, अप्रैल 2004 में बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) ने देशी आस्तियों के प्रति विदेशी आस्तियों के अनुपात में वृद्धि पर कुछ सामान्यकारी प्रभाव डाला था। एम एस एस, जिसके अंतर्गत सरकार ने अवरुद्धता प्रयोजनों के लिए प्रतिभूतियां जारी की थी, वह राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच अंतरापृष्ठ में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर था, जिसमें राजकोष भी अवरुद्धता की लागत में शेयर कर रहा था। संकट की अवधि के दौरान भी राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय चलनिधि समस्याओं के निवारण की दृष्टि से सर्वोत्तम था। आगे बढ़ते हुए, विशेष रूप से केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र की मजबूती और विश्वसनीयता में वृद्धि करते हुए एक ऐसे ढांचे में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय वांछित है, जहां केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता के साथ कोई समझौता नहीं किया जाता है।

6.34 तृतीय, देशी और विदेशी आस्तियों की कीमतों में परिवर्तनीयता, नीति हस्तक्षेप के कारण संभावित हानियों, बाह्य आघातों और अन्य अप्रत्याशित प्रणालीगत जोखिम के खिलाफ रक्षा के लिए रिज़र्व बैंक, सांविधिक लेखा परीक्षकों के सुझाव के अनुरूप आरक्षित और पुनर्मूल्यन खातों को मज़बूत बनाने की एक अति सक्रिय नीति का अनुसरण कर रहा है और तदनुसार उसने अपनी कुल आस्तियों के 12 प्रतिशत का एक संकेतक लक्ष्य निर्धारित किया है जिसके अंतर्गत यह राशि आकस्मिक और आस्ति विकास आरक्षित निधियों के रूप में अलग रख ली जाएगी। आज के बाजारोन्मुख और वैश्वीकृत वातावरण में बढ़ते हुए मूल्यन और प्रणालीगत जोखिमों के प्रकाश में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र को और मज़बूती प्रदान करने की आवश्यकता है, जिसमें इसके अधिशेष सरकार को अंतरित करने के लिए निहितार्थ हैं। तुलन पत्र पर फॉरवर्ड वचनबद्धताओं और संबंधित विदेशी मुद्रा विनिमय दर जोखिमों के संभावित प्रभाव को ध्यान में रखते हुए विदेशी मुद्रा समकरण खाता (ई ई ए) जैसे कुछ पुनर्मूल्यन खातों को वर्धित करने की आवश्यकता है। यह विशेष रूप से संकट के बाद के परिदृश्य में प्रांसगिक है जिसमें अनेक केंद्रीय बैंक पूंजी-मोर्चे पर समस्याओं का सामना कर रहे थे। जहाँ ब्याज और ऋण जोखिम को उन्नत देशों के केंद्रीय बैंक तुलन पत्र में महत्वपूर्ण माना गया है, भारत सहित ई एम डी ई एस में केंद्रीय बैंक, जिनके पास भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा आस्तियां हैं, विदेशी मुद्रा विनिमय दर जोखिम का सामना करते हैं और अल्पावधि अवरुद्धता बांडों की लागत से कम पड़ने वाली विदेशी आस्तियों पर प्रतिलाभ-जोखिम का भी सामना करते हैं, यदि वे केंद्रीय बैंक द्वारा जारी किये जाते हैं अथवा देशी आस्तियों पर ब्याज आय को छोड़ दिया गया है।

राजकोषीय सुदृढ़ीकरण पर लौटने की ओर सावधानीपूर्वक अंशांकन और भारत में राजकोषीय मौद्रिक कर्ज प्रबंध समन्वय के दृष्टिकोण के लिए मुख्य अनिवार्यताओं को संघटित करने वाले सार्वजनिक कर्ज प्रबंध में किन्हीं संभावित संस्थागत परिवर्तनों का उचित निर्धारण

6.35 पिछला अध्याय भारत में मध्यावधि में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के लिए दृष्टिकोण प्रदर्शित करता है। सुधार के बाद की अवधि में अध्याय में वर्णित अनुभवजन्य प्रयोग यह दर्शाता है कि एक बाधा के बाद राजकोषीय घाटा उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल को नियंत्रित करने के बाद भी मांग दर पर ऊ र्ध्ववर्ती दबाव डालने की ओर प्रेरित होता है (मौद्रिक नीति दर के लिए जिसे परोक्षी के रूप में इस्तेमाल किया जाता है)। यह, संवृद्धि, कीमत स्थिरता और वित्तीय स्थिरता के ओवरआर्चिंग उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बृहत् समन्वय की आवश्यकता को रेखांकित करता है। वास्तव में, 2008-09 और 2009-10 के दौरान वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के समन्वय से संवृद्धि को पुनर्जीवित करने तथा वित्तीय बाजार में स्थिरता बनाये रखने में काफी अधिक सफलता मिली है। अभी हाल की अवधि में हुए परिवर्तनों में भी, जब राजकोषीय घाटा और मुद्रास्फीति उच्च स्तर पर थे और निवेश तथा संवृद्धि कम हो गये थे, समन्वित नीति कार्रवाई की अनिवार्यता प्रतिबिंबित हुई। मुद्रास्फीति के साथ, जो अब कम होने के संकेत दर्शा रही है और उत्पादन अंतराल नकारात्मक हो गया है, अर्थव्यवस्था की वृद्धि की प्रवृत्ति दर को लौटाने के साधन के रूप में निवेश को प्रोत्साहित करना अब वास्तव में आवश्यक हो गया है। वास्तव में, निवेश क्रियाकलाप का पुनर्जीवन ब्याज दरों के अतिरिक्त विभिन्न ढांचागत तत्वों पर निर्भर करता है। भविष्य की ओर दृष्टिपात करते हुए बारहवीं योजना का प्रलेख, 8.0 प्रतिशत की लक्ष्यित औसत दर प्राप्त करने की दृष्टि से अपेक्षित संसाधनों का उत्पादन करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र बचत में सुधार के महत्व का विशिष्टता के साथ उल्ल्sख करता है। उक्त प्रलेख में, योजना अवधि के दौरान एक ट्रिलियन अमरीकी डॉलर के कुल बुनियादी संरचनागत निवेश का भी अनुमान लगाया गया है जिसमें 50 प्रतिशत से अधिक भाग सार्वजनिक क्षेत्र का होगा। इस संदर्भ में, जैसा कि अनुभव और अनुभवजन्य प्रयोग द्वारा पुष्ट हुआ है, व्यवस्थित और गुणात्मक राजकोषीय समायोजन प्रक्रिया न केवल बारहवीं योजना के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सुलभता प्रदान करेगी बल्कि सामान्य रूप से समष्टि आर्थिक और वित्तीय स्थिरता और विशेष रूप से संवृद्धि उद्देश्य पर विचार करने के लिए मौद्रिक नीति को अधिक शीर्षांतर (हेडरूम) भी प्रदान करेगी।

6.36 सरकारी कर्ज प्रबंध के लिए जहाँ तक संस्थागत व्यवस्थाओं का प्रश्न है, वैश्विक वित्तीय प्रणाली-समिति द्वारा अधिकृत पॉल फिशर अध्ययन दल (2011) ने प्रत्येक एजेंसी द्वारा अपनी-अपनी भूमिका के लिए स्वतंत्रता और जवाबदेही बनाये रखने के साथ कर्ज प्रबंध और मौद्रिक प्रबंध के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता को रेखांकित किया है। उक्त दल ने वर्तमान व्यवस्थाओं में परिवर्तन किये जाने के खिलाफ भी चेतावनी दी है, जिसमें कुछ ऐसी विकासशील अर्थव्यवस्थाएं शामिल हैं जहाँ केंद्रीय बैंक कुछ राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध (एस डी एम) कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं अथवा एस डी एम निरीक्षण में शामिल हैं। उक्त दल के विचारों को हाल के वैश्विक वित्तीय संकट से प्राप्त अनुभव द्वारा आकार दिया गया है, जो यह प्रकट करते हैं कि कर्ज प्रबंध केवल मौद्रिक प्रबंध को ही नहीं बल्कि वित्तीय स्थिरता बनाये रखने को भी प्रभावित करता है। भारत में, यद्यपि केंद्रीय बैंक द्वारा संचालित कर्ज प्रबंध का दीर्घ रेकार्ड प्रभावी रहा है, हाल की अवधि में वैश्विक वित्तीय संकट के अप्रत्यक्ष प्रतिकूल प्रभावों को सफलतापूर्वक टालने का श्रेय कर्ज, चलनिधि/मौद्रिक और विदेशी मुद्रा विनिमय दर प्रबंध के बीच घनिष्ठ समन्वय को जाता है। इस संबंध मे प्रक्रियाएं अधिक अच्छी तरह से इसलिए सुसाध्य बन सकीं कि ये कार्य अलग अलग होते हुए भी एक ही संगठन के भीतर टिके हुए थे। ऐसे स्थानों पर जहाँ केंद्रीय बैंक की निभाने योग्य भूमिका यदि एक मात्र नहीं किन्तु सुस्पष्ट रूप से महत्वपूर्ण है, वहाँ सरकार द्वारा लिए गये बहुत अधिक उधारों की मौजूदगी के समष्टि आर्थिक, मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता संबंधी निहितार्थ हैं। समस्त राज्य सरकारों का कर्ज प्रबंध इस मुद्दे पर एक अतिरिक्त एवं सुस्पष्ट आयाम रखता है। इस पृष्ठभूमि के समक्ष, इस बात की आवश्यकता है कि कर्ज प्रबंध कार्य को केंद्रीय बैंक से सरकार को अंतरित किये जाने के प्रस्ताव की विषय-वस्तु और गति की समीक्षा की जाए।

चयनित संदर्भ

।।. राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय : सिद्धान्त और अंतर्राष्ट्रीय अनुभव

औएरबच, ए., और एम. ओब्स्फेल्ड (2005), "द केस फार ओपन-मार्किट पर्चेजेज इन ए लिक्विडिटी ट्रैप." *अमेरिकन इकोनोमिक रिव्यु,* वॉल.95 (1)।

बैंक ऑफ़ इंग्लैंड, "मोनेटरी पॉलिसी राउण्डटैबल", *क्वार्टरली बुलेटिन* 2010 क्यू3।

बैंक ऑफ़ इंटरनेशनल सेट्लमेंट्स (2011), एनुअल रिपोर्ट 2010 -11, जून

बीन, चार्ल्स (2003), "एसेट प्राइसेस, फाइनेंसियल इम्बैलेंसेस एंड मोनेटरी पॉलिसीः आर इन्फ्लेशन टार्गेट्स एनफ?" *बी आई एस वर्किंग पेपर नं.* 140।

बर्नेक, बी.एस. (2003), "कन्स्ट्रैन्ड डिस्क्रीशन और मोनेटरी पॉलिसी". *बीआईएस रिव्यु,* 5 /2003।

बेर्नेक, बी.एस और एम.गर्टलर (2001), "शुड सेंट्रल बैंक्स रेस्पोंद टू मूवमेंट्स इन एसेट प्राइसेस?" *अमेरिकन इकोनोमिक रिव्यु,* वो. 91 (2), 253 -257।

बर्नेक, बी.एस. (2012), "फाइव क्यूश्चन्स अबाउट द फ़ेडरल रिज़र्व एंड मोनेटरी पॉलिसी" रिमार्क्स एट द इकनोमिक क्लब ऑफ़ इंडियाना इंडियाना पोलिस, इंडिआना अक्टूबर 1।

ब्लांचार्ड ओ.जे. और एफ.गिआवाज़्ज़ी (2004), "इम्प्रोविंग द एसजीपी थ्रू ए प्रॉपर एकाउंटिंग ऑफ़ पब्लिक इन्वेस्टमेंट", *सीईपीआर डिस्कशन पेपर सीरीज नं.* 4220।

ब्लाइन्डर, ए.एस. (1983), "इश्यूज इन द कोआर्डिनेशन ऑफ़ मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसी." मोनेटरी पॉलिसी इश्यूज इन द 1980ज, फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ केंसास सिटी।

बोरिओ, कालुदीओ एंड पी.लोवे (2002), "एसेट प्राइसेस, फाइनेंसियल एंड मोनेटरी स्टेबिलिटी : एक्सप्लोरिंग द नेक्सस". *बीआईएस वर्किंग पेपर नं.* 114।

ब्यूटर, डब्लू.एच. (2000), "द फिस्कल थ्योरी ऑफ़ द प्राइस लेवलः ए क्रिटिक", *इकनोमिक जर्नल,* वो.112 (481), 459 -480।

ब्यूटर, डब्लू.एच. एंड निकोलोस पनिगिरतजोगौ (1999), "लिक्विडिटी ट्रैप्सः हाउ टू अवॉयड देम एंड हाउ टू एस्केप देम," *सीईपीआर डिस्कशन पेपर्स* 2203।

ब्यूटर, डब्लू.एच.एंड ऐनी सी. सिबेर्ट (2001), "डिजाइनिंग ए मोनेटरी अथॉरिटी", इन एंथोनी एम, सैंटोमेरो, स्टफ्फन वीओटी, एंड एंडर्स व्रेदिन (एड्स.), *"चैलेंजेज फॉर सेंट्रल बैंकिंग"*, कलुवेर ऐकेडेमिक पब्लिशर्स, बोस्टन।

कंजोनेरी, एम.आर. कम्बी एंड बी. डिबा (2001), "इज़ द प्राइज लेवल डिटर्मिंड बाई द नीड्स ऑफ फिसकल सोलवेन्सी?" *अमेरिकन इकनोमिक रिव्यु,* वो.91 (5), 1221 -38।

कारुआना, जैमे (2011), "फाइनेंसियल एंड रियल सेक्टर इंटरेक्शन्स, एंटर द सॉवरेन एक्स मचिना", स्पीच एट द फर्स्ट सीएएपआरएएल-बीआईएस इंटरनेशनल कांफ्रेंस ओन फाइनेंसियल सेक्टर रेगुलशन फॉर ग्रोथ, इक्विटी एंड स्टेबिलिटी इन द पोस्ट-क्राइसिस वर्ल्ड, नवंबर।

सच्चेट्टी, एस.जी. (2002), "द प्रॉब्लम विथ फिस्कल पॉलिसी", ऑकेज़नल एसेज ओन करंट पॉलिसी इश्यूज नं. 18, जनवरी।

सच्चेट्टी, एस.जी., एच.गेंबेर्ग, जे.लिप्स्की एंड एस. वाधवानी (2000). "एसेट प्राइसेस एंड मोनेटरी पॉलिसी".आईसीएमबीसीईपीआर रिपोर्ट नं.2।

सच्चेट्टी, स्टेफेन जी, एम.एस.मोहंती एंड फैब्रिजिओ ज़ाम्पोली (2011), "द रियल इफेक्ट्स ऑफ़ डेब्ट".बीआईएस वर्किंग पेपर नं.352।

क्रिस्टिनो, लॉरेंस, मार्टिन ईचेंबॉम, एंड सर्जियो रेबेलो (2009), व्हेन इज़ द गवर्नमेंट स्पेंडिंग मल्टीप्लायर लार्ज, नॉर्थवेस्टर्न यूनिवर्सिटी, अगस्त 2009।

कोचराने, जे.(1998), "ए फ्रिक्शनलेस व्यू ऑफ़ यूएस इन्फ्लेशन".इन बी.बर्नेक एंड जे.रोटेम्बेर्ग (एड्स.)ए *नबीइआर मैक्रोइकोनोमिक्स एनुअल,* पीपी323 -84।

कोचराने, जोन. एच (2011), "अंडरस्टैंडिंग पॉलिसी इन द ग्रेट रिसेशनः सम अनप्लेजेन्ट फिस्कल अर्थमेटिक". *यूरोपियन इकनोमिक रिव्यु,* वो.55, 2 -30।

कोगन, जॉन एफ.,टोबीयास क्विक, जॉन बी. टेलर, एंड वोल्केर विलंड (2010), "न्यू कीनेसियन वर्सेस ओल्ड कीनेसियन गवर्नमेंट स्पेंडिंग मल्टिप्लिएर्स," *जर्नल ऑफ़ इकनोमिक डायनामिक्स एंड कंट्रोल,* 34 (3), 281 -295। रिवाइज्ड वर्शन ऑफ़ एनबीइआर वर्किंग पेपर नं. 14782, मार्च 2009।

कमिटी ओन द ग्लोबल फाइनेंसियल सिस्टम (2011), "द इम्पेक्ट ऑफ़ सॉवरेन क्रेडिट रिस्क ओन बैंक फंडिंग कंडीशंस, *सीजीएफएस पेपर्स* नं. 43, जुलाई।

कट्टरेल्ली, कार्लो (2009), "फिस्कल रूल्स--एंकरिंग एक्सपेक्टेशंस फॉर सस्टेनेबल पब्लिक फिनान्सेसः, दिसंबर 16, आईएमएफ।

क्रॉकेट, एंड्रू (2001), "मोनेटरी पॉलिसी एंड फाइनेंसियल स्टेबिलिटी", बीआईएस स्पीचेस, फरवरी 13।

कुकेरमैन, ए. (1992), "सेंट्रल बैंक स्ट्रेटेजीज, क्रेडिबिलिटी एंड इंडिपेंडेंस", द एमआईटी प्रेस।

डैविग, ट्रॉय एंड एरिक एम, लीपर(2009), "मोनेटरी-फिस्कल पॉलिसी इंट्रेक्शन्स एंड फिस्कल स्टिमुलस". *एनबीईआर वर्किंग पेपर* नं. 15133।

दिक्षित, ए. एंड एल.लम्बर्टिनि (2000), "फिस्कल डिस्क्रेशन डेस्ट्रॉयस मोनेटरी कमिटमेंट", http://dipeco.economia.unimib.it/workemu/workingpapers/pdf/lambertinifiscdisc.pdf

ड्रेगुटिनोविक, डायना, (2009), "मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसी मिक्स इन सर्बिआः 2002 -2007 इन गिल हम्मांड, रवि कंबर एंड ईश्वर प्रसाद (एड्स.) मोनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क्स फॉर इमर्जिंग मार्केट्स, चेलटेनहम, यूकेःएडवर्ड एल्गर पब्लिशिंग।

यूरोपियन सेंट्रल बैंक (2012), "मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसी इंट्रेक्शन्स इन ए मोनेटरी यूनियन", *ईसीबी बुलेटिन* जुलाई 2012।

फिलार्डो, ए.(2004), "मोनेटरी पॉलिसी एंड एसेट प्राइस बबल्सः कैलिब्रेटिंग द मोनेटरी पॉलिसी ट्रेड-ओफ्फ्स. *बीआईएस वर्किंग पेपर्स* नं. 155, जून 2004।

फ्रीडमैन, एम, (1968), "द रोल ऑफ़ मोनेटरी पॉलिसी", *अमेरिकन इकनोमिक रिव्यु* वो.58 (1)।

गगनों, जोसफ इ. एंड मार्क हिनतेरसच्वैगेर (2011), "द ग्लोबल आउटलुक फॉर गवर्नमेंट डेब्ट ओवर द नेक्स्ट 25 इयर्सः इम्प्लिकेशन्स फॉर द इकॉनमी एंड पब्लिक पॉलिसी", पॉलिसी एनालाइसिस इन इंटरनेशनल इकोनॉमिक्स 94, पीटरसन इंस्टिट्यूट फॉर इंटरनेशनल इकोनॉमिक्स, वाशिंगटन, डीसी (जून)।

गैदर, येगोर (1999), "लेसंस ऑफ़ द रुस्सियन क्राइसिस फॉर ट्रांजीशन एकोनोमिएस", *फाइनेंस एंड डेवलपमेंट,* वो.36, नं.2, इंटरनेशनल मोनेटरी फण्ड।

गमेइरो, इसाबेल मार्क्वेस, कार्ला सोअर्स एंड जोआओ सौसा (2011), "मोनेटरी पॉलिसी एंड फाइनेंसियल स्टेबिलिटीः अन ओपन डिबेट", इशू ऑफ़ डिस्कशन 7, अवेलेबल एट http://www.bportugal.pt/en-US/BdP%20Publications%20Research/AB201100_e.pdf

चयनित संदर्भ

गिअन्नोने, डी., एम.लेंज़ा एंड एल. रैचलिं (2010), "नॉन-स्टैण्डर्ड मोनेटरी पॉलिसी मेश्जर्स एंड मोनेटरी डेवलपमेंट्स", सेंटर फॉर इकनोमिक पॉलिसी रिसर्च, *डिस्कशन पेपर सीरीज* नं.8125, नवंबर।

गुडफ्रैंड,एम, (2000), "ओवरकमिंग द जीरो बाउंड ओन इंटरेस्ट रेट पॉलिसी," *जर्नल ऑफ़ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग,* वो.32 (4), 1007 -35।

गुडफ्रैंड, मार्विन (2004), "अंडरस्टैंडिंग द ट्रांसमिशन ऑफ़ मोनेटरी पॉलिसी," मैनुस्क्रिप्ट, फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ रिचमंड, प्रेसेंतेद एट जॉइंट चाइना-आईएमएफ हाई लेवल सेमिनार ओन चाइनाज़ मोनेटरी पॉलिसी ट्रांसमिशन मैकेनिज्म, बीजिंग, मई 2004।

गुडफ्रैंड, मार्विन एंड ईश्वर प्रसाद (2005), "मोनेटरी पॉलिसी इम्प्लीमेंटेशन इन चाइना", *बीआईएस पेपर्स* नं.31।

गुडफ्रैंड, मार्विन एंड ईश्वर प्रसाद (2006), "ए फ्रेमवर्क फॉर इंडिपेंडेंट मोनेटरी पॉलिसी इन चाइना", *आईएमएफ वर्किंग पेपर* 06 /11।

गुडहार्ट, सी.ए.ई. (2010), "द चेंजिंग रोल ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स", *बीआईएस वर्किंग पेपर्स नं.326*, नवंबर।

गॉरडन, डेविड बी. एंड एरिक एम.लीपर (2005), "आर काउंटरसाइक्लिकल फिस्कल पॉलिसीस काउंटरप्रॉडक्टिव?," *एनबीआर वर्किंग पेपर्स* 11869, नेशनल ब्यूरो ऑफ़ इकनोमिक रिसर्च, इंक।

हेगन, जुर्गें वोन एंड सुसनने मुँड़चेन्क (2002), "फिस्कल एंड मोनेटरी पॉलिसी कोआर्डिनेशन इन ईएमयू", *सेंट्रल बैंक ऑफ़ चिली वर्किंग पेपर* नं.194 दिसंबर।

इंटरनेशनल मोनेटरी फण्ड (2009 ए), "फिस्कल इम्प्लिकेशन्स ऑफ़ द ग्लोबल इकनोमिक एंड फाइनेंसियल क्राइसिस". *आईएमएफ स्टाफ पोजीशन नोट एसपीएन/09 /13,* जून 9।

इंटरनेशनल मोनेटरी फण्ड (2009 बी). आर्टिकल IV कंसल्टेशन विथ द पीपुलज़ रिपब्लिक ऑफ़ चाइना, पब्लिक इनफार्मेशन नोटिस, पीआईएन नं.09 /87, जुलाई 22।

इंटरनेशनल मोनेटरी फण्ड (2011), रुस्सियन फेडरेशन--कंक्लूडिंग स्टेटमेंट फॉर द 2011, आर्टिकल iv कंसल्टेशन मिशन।

इस्सूइंग, ओ.(2005), "द रोल ऑफ़ फिस्कल एंड मोनेटरी पॉलिसीस इन द स्टेबिलाइज़ेशन ऑफ़ द इकनोमिक साइकिल". स्पीच एट द इंटरनेशनल कांफ्रेंस ओन "स्टेबिलिटी एंड इकनोमिक ग्रोथः द रोल ऑफ़ द सेंट्रल बैंक" एट मैक्सिको सिटी, 14 नवंबर।

इस्सूइंग, ओ. (2003), "मोनेटरी एंड फाइनेंसियल स्टेबिलिटीः इज़ देअर ए ट्रेड-ऑफ?" *बीआईएस पेपर नं.18,* सितम्बर 2003।

खातिवाड़ा, एस. (2009), "स्टिमुलस पैकेजेस टू काउंटर ग्लोबल इकनोमिक क्राइसिसः ए रिव्यु", इंटरनेशनल इंस्टिट्यूट फॉर लेबर स्टडीज, *डिस्कशन पेपर* नं.डीपी/196 /2009।

क्रुगमैन, पॉल (1998), *"जापान'स ट्रैप"*, एट http://web.mit.edu/krugman/www/japtrap.html

लीपर, ई. (1991), "एक्विलिब्रिअ अंडर'एक्टिव' एंड 'पैसिव' मोनेटरी पॉलिसीस, *जर्नल ऑफ़ मोनेटरी इकोनॉमिक्स 27* (1), 129 -147।

लेवी, जोआक्विम विएरा (2010), "द फर्स्ट टाइम यू नेवर फॉरगेटः द सक्सेस ऑफ़ ब्राज़ील इन द 2009 क्राइसिस एंड द नीड फॉर थर्ड-जनरेशन रिफॉर्म्स", पेपर प्रेसेंतेद अत बंका डी'इटालिया वर्कशॉप हेल्ड इन पेरूग्वे, 25 -27 मार्च, 2010।

लिपस्की, जॉन (2011), "यूएस फिस्कल पॉलिसी एंड द ग्लोबल आउटलुक".स्पीच बाई द फर्स्ट डिप्टी मैनेजिंग डायरेक्टर, इंटरनेशनल मोनेटरी फण्ड एट द अमेरिकन इकनोमिक एसोसिएशन एनुअल मीटिंग्स, राउंडटेबल ओन "द यूनाइटेड स्टेट्स इन द वर्ल्ड इकॉनमीः डेन्वेर, जनवरी 8, 2011।

लॉम्बार्डो, ज़ी एंड ए.सुथरलैंड (2004), "मोनेटरी एंड फिस्कल इंट्रेक्शन्स इन ओपन एकोनोमिएस", *जर्नल ऑफ़ मैक्रोइकॉनॉमिक्स,* वो.26, 319 -347।

मैकफारले, हेलेन एंड पॉल मोर्टीमर-ली (1994), "इन्फ्लेशन ओवर 300 इयर्स", *क्वार्टरली बुलेटिन,* बैंक ऑफ़ इंग्लैंड, मई।

मिश्किन, ऍफ़. (1996), "अंडरस्टैंडिंग फाइनेंसियल क्राईसेसः ए डेवलपिंग कंट्री'ज पर्सपेक्टिव", *एनबीईआर वर्किंग पेपर* नं.5600।

मोहंती,एम. एंड टर्नर, पी.(2011), "मोनेटरी पॉलिसी इन ओवर-इन्डेबटेड एकोनोमिएस", http://www.hkimr.org/cms/upload/seminar_app/sem_paper_0_424_Paper_2011%2011%2021.pdf।

मोहंती, एम.एस. एंड कलआउ, एम. (2004), "मोनेटरी पॉलिसी रूल्स इन इमर्जिंग मार्किट एकोनोमिएसः इश्यूज़ एंड एविडेंस", *बीआईएस वर्किंग पेपर,* नं.149 मार्च।

नोर्डास, डब्ल्यू.डी.सी.एल., स्कूल्ज़, एंड फीस्चेर (1994), "पॉलिसी गेम्सः कोर्डिनेशन एंड इंडिपेंडेंस इन मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसीस", ब्रोकिंग्स पेपर्स ओन इकनोमिक एक्टिविटी, 1994 (2)।

ओमेल्लस, आर. एंड एम. एस. पुर्तगाल (2011), "फिस्कल एंड मोनेटरी इंटेरेक्शन इन ब्राज़ील", एट http://www.bcu.gub.uy/Comunicaciones/Jornadas%20de%20Economa/t_portugal_marcelo_2011_.pdf।

पीगू, ए.सी.(1943),"द क्लासिकल स्टेशनरी स्टेट." *इकनोमिक जर्नल,* वो. 53 (212), पीपी.343 -351

प्लोसेर, चार्ल्स I. (2011), "सम ओब्जरवेशन्स ऑफ़ फिस्कल इम्बैलेंसेस एंड मोनेटरी पॉलिसी", द फ़िलेडैल्फ़िया फेड पॉलिसी फोरम ओन "बजट्स ओन द ब्रिंकः पर्स्पेटिवेस ओन डेब्ट एंड मोनेटरी पॉलिसी", फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ फ़िलेडैल्फ़िया, दिसंबर 2।

रेड्डी, व्हाई. वी. (2009), इंडिया एंड द ग्लोबल फाइनेंसियल क्राइसिसः मैनेजिंग मनी एंड फाइनेंस, ओरिएंट ब्लैकस्वान पब्लिकेशन।

रोमर, सी. एंड जे.बेमस्टीन (2009),"द जॉब इम्पैक्ट ऑफ़ द अमेरिकन रिकवरी एंड रीइन्वेस्टमेंट प्लान."जनवरी 8, 2009।

सार्जेंट, थॉमस जे. एंड नील वालेस (1981), "सम अन्प्लेज़ेट मोनेटरिस्ट अरिथमेटिक," *क्वार्टरली रिव्यु,* फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ मिनियापोलिस, 5 (फॉल)।

स्च्वाट्र्ज़, अन्ना जे. (1995), "व्हाई फाइनेंसियल स्टेबिलिटी डिपेंड्स ओन प्राइस स्टेबिलिटी". *इकनोमिक अफेयर्स,* ऑटम।

सिम्स, सी.ए. (1994), "ए सिंपल मॉडल फॉर स्टडी ऑफ़ द डिटरमिनेशन ऑफ़ द प्राइस लेवल एंड द इंटरेक्शन ऑफ़ मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसी". *इकनोमिक थ्योरी,* वो.4 (3), 381 -399।

स्टार्क, जुर्गेन (2009), "मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसीः क्राइटेरिया एंड टाइमिंग फॉर द फेज़िंग आउट ऑफ़ क्राइसिस मेजर्स", स्पीच एट 80 थ कैलेर कोनजून्कतूर्गेसप्राच इन बर्लिन, 15 सितम्बर।

सुब्बाराव, डी. (2009), "ग्लोबल फाइनेंसियल क्राइसिस क्यूस्चनिंग द क्यूश्चन्स" जेआरडी टाटा मेमोरियल लेक्चर डिलिवर्ड एट द मिटिंग ऑफ द एसोसिएटेड चेम्बर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री ऑफ इंडिया, न्यू देहली, *आरबीआई बुलेटिन,* अगस्त।

टेलर, जॉन बी. (2009), "द फाइनेंसियल क्राइसिस एंड द पॉलिसी रेस्पोन्सेसः एन एम्पिरिकल एनालिसिस ऑफ़ व्हाट वेंट रॉंग". *एनबीईआर वर्किंग पेपर* नं. 14631।

टेलर, जॉन बी. (1982 ए), "एस्टेब्लिशिंग क्रेडिबिलिटीः ए रैशनल एक्सपेक्टेशंस व्यूपोइन्ट," *अमेरिकन इकनोमिक रिव्यु,* वो. 72 (मई)।

वुड्फोर्ड, एम. (1994), "मोनेटरी पॉलिसी एंड प्राइस लेवल डेटर्मिनस्य इन ए कॅश-इन-एडवांस इकॉनमी", *इकनोमिक थ्योरी,* वो.4, नं.3।

वुड्फोर्ड, माइकल (2003), "कमेंट ओन 'मल्टीपल-सोलुशन डिटर्मिनेसी इन मोनेटरी पॉलिसी एनालिसिस," *जर्नल ऑफ़ मोनेटरी इकोनॉमिक्स,* वो.50(6), 1177-1188।

वर्ल्ड बैंक (1990), फाइनेंसियल सेक्टर पॉलिसीस एंड इंस्टीटूशनल डेवलपमेंटः चाइना. ए वर्ल्ड बैंक कंट्री स्टडी।

येल्लेन, जेनेट एल. (2011), "द फ़ेडरल रिज़र्व'स एसेट परचेस प्रोग्राम", बीआईएस सेंट्रल बैंकर्स' स्पीचेस, जनवरी 8,

जोली, ई..(2005),"हाउ डज़ फिस्कल पॉलिसी एफेक्ट मोनेटरी पॉलिसी इन इमर्जिंग मार्किट कन्ट्रीज?" *बीआईएस वर्किंग पेपर्स* नं. 174।

III. भारत में राजकोषीय - मौद्रिक समन्वय : एक निर्धारण

आघेवली एंड खान (1978), "गवर्नमेंट डेफिसिट्स एंड द इन्फ्लेशनरी प्रोसेस इन डेवलपिंग कन्ट्रीज",*आईएमएफ स्टाफ पेपर्स,* वो.25, 383 -416।

आशरा, सुनील, सौमेन चट्टोपध्याय एंड कौसिक चौधुरी (2004), "डेफिसिट, मनी एंड प्राइसः द इंडियन एक्सपीरियंस", *जर्नल ऑफ़ पॉलिसी मॉडलिंग,* वो.26, 289 -299।

बारू, आर., (1978), 'अनएंटीसिपेटेड मनी, आउटपुट, एंड द प्राइस लेवल इन द यूनाइटेड स्टेट्स."जर्नल ऑफ़ पोलिटिकल इकॉनमी, वो.86, इशू 14।

बेविलाक्वा, अफोंसो एस. एंड मर्सिओ जी.पी.गार्सीअ (2002), "डेब्ट मैनेजमेंट इन ब्राज़ीलः इवैल्यूएशन ऑफ़ द रियल प्लान एंड चैलेंजेज अहेड", *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ फाइनेंस एंड इकोनॉमिक्स,* वो.7, 15 -35।

बोहन, हेननिंग (1998),"द बिहेवियर ऑफ़ यु.एस.पब्लिक डेब्ट एंड डेफिसिटस", द *क्वार्टरली जर्नल ऑफ़ इकोनॉमिक्स,* वो.113, नं.3 949 -963।

कैगन पी. (1965): *डिटरमिनेशन एंड इफेक्ट्स ऑफ़ चेंजेज इन द स्टॉक ऑफ़ मनी,* एनबीईआर, न्यूयार्क।

ढोलकिया, रविन्द्रा एच., जीवन के.कुंद्राकपम एंड धीरेन्द्र गजभिये (2009), "एन आउटलाइन ऑफ़ पोस्ट 2009 एफआरबीएम फिस्कल आर्किटेक्चर ऑफ़ द यूनियन गवर्नमेंट इन द मीडियम टर्म", *डीआरजी स्टडी नं.31,* रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया।

ईटन, जोनाथन (1981), "फिस्कल पॉलिसी, इन्फ्लेशन एंड द अक्कुमुलेशन ऑफ़ रिस्की कैपिटल", द रिव्यु ऑफ़ इकनोमिक स्टडीज वो.48, नं.3, 435 -445।

फोसु, ओटंग-अबयी एरिक एंड फ्रीमपोंग जोसफ मान्नुस (2006), "बाउन्ड्स टेस्टिंग एप्रोच टू कोइंटेग्रेशनः एन एग्जामिनेशन ऑफ़ फॉरेन डायरेक्ट इन्वेस्टमेंट, ट्रेड एंड ग्रोथ रिलेशनशिप्स", *अमेरिकन जर्नल ऑफ़ एप्लाइड साइंसेज,* वो.3, नं.11,2079 -2085।

जाएन्नारोस, डी.एस. एंड बी.आर.कोल्लुरी, (1985), "डेफिसिट स्पेंडिंग, मनी एंड इन्फ्लेशनः सम इंटरनेशनल एम्पिरिकल एविडेंस', जर्नल ऑफ़ मैक्रो इकोनॉमिक्स, वो.7, इशू 3।

ग्रिल्ली, विट्टोरिओ, दोनतो मस्किएण्डरो, गुइदो टबेलिनी, एड्मोंड मलिनवुड एंड मार्कोपगणों (1991),"पोलिटिकल एंड मोनेटरी इंस्टीटूशन्स एंड द पब्लिक फाइनेंसियल पॉलिसीस इन द इंडस्ट्रियल कन्ट्रीज", *इकनोमिक पॉलिसी,* वो.6, नं.13, 341 -392।

गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया (2010), 'रिपोर्ट ऑफ़ द एक्सपर्ट ग्रुप ओन ए वाइएबल एंड सस्टेनेबल सिस्टम ऑफ़ प्राइसिंग ऑफ़ पेट्रोलियम प्रोडक्ट्स' चेयरमैन : किरीट एस. पारीख, न्यू देल्ही।

गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया (जीओआइ) (2011), 'इकनोमिक सर्वे 2010-11' न्यू देल्ही।

हैमबर्गर, एम.जे.एंड बी.ज़्विक (1981), 'डेफिसिट, मनी एंड इन्फ्लेशन',जर्नल ऑफ़ मोनेटरी इकोनॉमिक्स, वो.7, इशू1।

जाधव, नरेंद्र एंड बी.सिंह (1990), "फिस्कल मोनेटरी डायनामिक नेक्सस इन इंडियाः एन एकोनोमेट्रिक मॉडल", *इकनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली,* जनवरी 20 :159 -165।

जोइनेस, डीएच, (1985),'डेफिसिटस एंड मनी ग्रोथ इन द यूनाइटेड स्टेट्सः1872 -1983 ', जर्नल ऑफ़ मोनेटरी इकोनॉमिक्स, वो.16, इशू 3।

कररस, जी. (1994), मैक्रोइकनॉमिक इफेक्ट्स ऑफ़ बजट डेफिसिट : फरदर इंटरनेशनल एविडेंस, *जर्नल ऑफ़ इंटरनेशनल मनी एंड फाइनेंस,* वो.13, इशू 2।

किआ, ए, (2006),'डेफिसिट्स, डेब्ट फाइनेंसिंग, मोनेटरी पॉलिसी एंड इन्फ्लेशन इन डेवलपिंग कन्ट्रीज - इंटरनल और एक्सटर्नल फैक्टर्सः एविडेन्सेस फ्रॉम ईरान', जर्नल ऑफ़ एशियाई इकोनॉमिक्स वो.17, इशू 5।

किंग, आरजी एंड प्लोसेर, सीएल (1985) मनी, डेफिसिट एंड इन्फ्लेशन, इन अंडरस्टैंडिंग मोनेटरी रिज़ाइम्स, कार्नेगी-रोचेस्टर कोन्फेरेंस सीरीज ओन पब्लिक पॉलिसी, 22,

किंग रोबर्ट जी.(1985),"मनी, डेफिसिट्स एंड इन्फ्लेशन", *कार्नेगी-रोचेस्टर कांफ्रेंस सीरीज ओन पब्लिक पॉलिसी* वो.22, 147 -196।

किरसानोवा, टी.सी. लैथ एंड एस रेन-लेविस, (2009), "मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसी इंटरेक्शनः दि करंट कन्सेंसस असाइनमेंट इन द लाइट ऑफ़ रीसेंट डेवलपमेंट्स", *दि इकनोमिक जर्नल* वो.119 :482 -496।

खुन्द्रकपम, जीवन के.एंड राजन गोयल (2008),"इज़ दि गवर्नमेंट डेफिसिट इन इंडिया स्टिल रेलेवेंट फॉर स्टेबिलाइजेशन?'' रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया ओकेज़नल पेपर्स, वॉ.29, नं.3, 1-21।

लोंबार्डो, जियोवानी एंड एलन सुदर लैंड (2004), ''मोनेटरी एंड फिस्कल इंटरेक्शन इन ऑपन इकोनोमीज़'', जर्नल ऑफ मैक्रोइकोनॉमिक्स, वॉल्यूम 26, 319-347।

मेटिन, के. (1998), 'रिलेशनशिप बिटवीन इन्फ्लेशन एंड बजट डेफिसिट इन टर्की', जर्नल ऑफ़ बिज़नेस एंड इकनोमिक स्टेटिस्टिक्स, वो.16, इशू 4।

मिश्रा, पी.के., यु.एस.मिश्रा एंड एस.के.मिश्रा (2010), "मनी, प्राइस एंड आउटपुटः ए काज़ैलिटी टेस्ट फॉर इंडिया". *इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ़ फाइनेंस एंड इकोनॉमिक्स,* इशू 53, 26-36।

मित्रा, पृथा (2006), "हेज गवर्नमेंट इन्वेस्टमेंट क्राउडेड आउट प्राइवेट इन्वेस्टमेंट इन इंडिया?", *दि अमेरिकन इकनोमिक रिव्यु,* वो. 96, नं.2, 337 -341।

मोहंती, डी. (2010), "पर्सपेक्टिव्स ओन इन्फ्लेशन इन इंडिया", स्पीच डेलिवर्ड एट द बैंकर्स क्लब, चेन्नई, *आरबीआई बुलेटिन,* अक्तूबर।

निस्कनें, डब्लू.ए., (1978), 'डेफिसिट्स, गवर्नमेंट स्पेंडिंग एंड इन्फ्लेशनः व्हाट इज़ एवीडन्स', जर्नल ऑफ़ मोनेटरी इकोनॉमिक्स, वो.4।

नोर्दौस, विलियम डी., चार्ल्स एल.स्कुल्ट्ज़, एंड स्टैनले फीस्चेर (1994)"पॉलिसी गेम्सः कोआर्डिनेशन एंड इंडिपेंडेंस इन मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसीस", *ब्रूकिंग्स पेपर्स ओन इकनोमिक एक्टिविटी,* वो.1994, नं.2, 139 -216।

परिदा, पूर्ण चन्द्र, हृषिकेश मल्लिक एंड माथै के.मठियाज़हगां (2001), "फिस्कल डेफिसिट्स, मनी सप्लाई एंड प्राइस लेवलः एम्पिरिकल एविडेंस फ्रॉम इंडिया", *जर्नल ऑफ़ इंडियन स्कूल ऑफ़ पोलिटिकल इकॉनमी,* वो.13, नं.4, 583 -593।

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (2010), *एनुअल रिपोर्ट 2009 -10,* मुंबई।

रोथर, पी. (2004), "फिस्कल पॉलिसी एंड इन्फ्लेशन वोलैटिलिटी" *इसीबी वर्किंग पेपर सीरीज नं.*317/2004, मार्च एक्सेस्ड फ्रॉम *<<www.ecb.int/pub/pdf/scpwps/ecbwp317.pdf >>*।

सार्जेंट, टी.एंड एन. वालेस (1981),"सम अनप्लेजेंट मोनेटरिस्ट अरिथमेटिक", *फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ मिनियापोलिस क्वार्टरली रिव्यु,* फॉल, 1-17।

षणमुगम, बाला, महेंदीरण नायर एंड ओंग वी ली (2003), "द एंडोजीनस मनी हाइपोथिसिसः एम्पिरिकल एविडेंस फ्रॉम मलेशिया (1885 -2000), *जर्नल ऑफ़ पोस्ट कीनेसियन इकोनॉमिक्स,* वो.25, नं.4,599 -611।

शर्मा आर.(1984),"कॉज़ेलिटी बिटवीन मनी एंड प्राइसेज़ इन इंडिया", *इंडियन इकनोमिक रिव्यु,* वो.19 (2):213 -221।

सिक्के, बीजे एंड जे डे हाँ, (1008), 'बजट डेफिसिट्स, मोनेटाइजेशन एंड सेंट्रल बैंक्स' इंडिपेंडेंस इन डेवलपिंग कन्ट्रीज', ऑक्सफ़ोर्ड इकनोमिक पेपर्स, वो.50, इशू 3।

स्पवेंटा, लुइगी (1987), "द ग्रोथ ऑफ़ पब्लिक डेब्टः सस्टेनेबिलिटी, फिस्कल रूल्स एंड मोनेटरी रूल्स", *आईएमएफ स्टाफ पेपर्स,* बो.34 नं.2, 374 -399।

टेकिन-कोरू, एका एंड एर्दल ओज़में (2003), "बजट डेफिसिट, मनी ग्रोथ एंड इन्फ्लेशनः द टर्किश एविडेंस", *एप्लाइड इकोनॉमिक्स,* वो.35, नं.5, 591 -596।

तोबिन, जे (1963): "एन एस्से ओन प्रिंसिपल्स ऑफ़ डेब्ट मैनेजमेंट", इन *एसेज इन इकोनॉमिक्स - वो. 1 मैक्रोइकॉनॉमिक्स,* नार्थ हॉलैंड।

IV राजकोषीय परिचालन और रिजर्व बैंक का तुलन पत्र

एडलर गुस्तावो, पेड्रो वस्त्रो एंड कमिलो ई. टॉवर (2012), "डज़ सेंट्रल बैंक कैपिटल मैटर फॉर मोनेटरी पॉलिसी?, *आईएमएफ वर्किंग पेपर,* फरवरी।

अल-जस्सेर, एम. एंड ए. बनफ़े (2002), "द डेवलपमेंट ऑफ़ डेब्ट मार्केट्स इन इमर्जिंग इकोनॉमीज़ः द सऊदी अरेबियन एक्सपीरियंस", *बीआईएस पेपर्स नं.*11, 178 -182।

बाल्टेनस्पेर्गेर, एम्स्ट एंड थॉमस जे. जॉर्डन (1998), "सेन्योरेज़ एंड द ट्रांसफर ऑफ़ सेंट्रल बैंक प्रॉफ़िट्स टू द गवर्नमेंट", *क्य्क्लोस,* वो.51, 73 -88।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेट्लमेंट्स (2009), इश्यूज इन द गवर्नेंस ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स, बासेल।

कोटार्रेल्ली (1993), "लिमिटिंग सेंट्रल बैंक क्रेडिट टू गवर्नमेंट - थ्योरी एंड प्रैक्टिस", *आईएमएफ ऑकेज़नल पेपर* (110), दिसंबर।

ड्राजेन ए.(1985), "ए जनरल मेश्जर ऑफ़ इन्फ्लेशन टैक्स रेवेन्यूज़", *इकोनॉमिक्स लेटर्स,* 17, 327 -330।

यूरोपियन सेंट्रल बैंक (2011), कन्वर्जेन्स रिपोर्ट 2011, अवेलेबल एट http://www.ecb.int.

हॉनाउन एच (2010), "द एक्सपैंडिंग रोल ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स सिंस द क्राइसिसः व्हाट आर द लिमिट्स?" स्पीच एट द 150 टीथ एनिवर्सरी ऑफ़ द सेंट्रल बैंक ऑफ़ द रस्सियन फेडरेशन, मास्को, 18 जून, अवेलेबल एट http://www.bis.org/speeches।

हॉकिंस, जॉन (2003), "सेंट्रल बैंक बैलेंस शीट्स एंड फिस्कल ऑपरेशंस", *बीआईएस वर्किंग पेपर्स,* नं.20।

होराक्वा, मार्टिना (2011), "सेंट्रल बैंक कैपिटल लेवल्सः डू दे मैटर एंड व्हाट कैन बी डन?", *सेंट्रल बैंकिंग जर्नल,* जून 2।

होक्रेटर, एडुआर्ड एंड रिकर्डो रोवेल्ली, (2002), "द जनरेशन एंड डिस्ट्रीब्युशन ऑफ़ सेंट्रल बैंक सेन्योरेज़ इन द चेक रिपब्लिक, हंगरी एंड पोलैंड", बंका नज़ीओनेल देल लवरो, *क्वार्टरली रिव्यु* नं.223, दिसंबर, पीपी. 391 -415।

जाधव, नरेंद्र, पार्थ रे, धृतिद्युति बोस एंड इन्द्रनील सेनगुप्ता (2003), द रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया'स बैलेंस शीट, एनालिटिक्स एंड डायनामिक्स ऑफ़ ईवोलूशन, *आरबीआई ऑकेज़नल पेपर्स*।

जाधव, नरेंद्र, पार्थ रे, धृतिद्युति बोस एंड इन्द्रनील सेनगुप्ता (2005), "फाइनेंसियल सेक्टर रिफॉर्म्स एंड द रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया", *इकनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली,* वो.40, नं. 12, मार्च 19-25।

कुर्तज़िग, जे. एंड बी. मंदर (2003), "सर्वे ऑफ़ सेंट्रल बैंक एकाउंटिंग प्रैक्टिसेज़", इन एन. कॉर्टिस एंड बी मंदर (एड्स.), एकाउंटिंग स्टैंडर्ड्स फॉर सेंट्रल बैंक, लंदन सेंट्रल बैंकिंग पब्लिकेशन्स।

मोहंती, दीपक(2011), "लेसंस फॉर मोनेटरी पॉलिसी फ्रॉम द ग्लोबल फाइनेंसियल क्राइसिसः एन इमर्जिंग मार्किट पर्सपेक्टिव", पेपर प्रेसेंन्टेड इन द सेंट्रल बैंक्स कांफ्रेंस ऑफ़ बैंक ऑफ़ इजराइल, जेरूसलम, अप्रैल 1।

मोहंती दीपक एंड ए.के.मित्र (1999), "एक्सपीरियंस विथ मोनेटरी टारगेटिंग इन इंडिया'', *इकनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली,* जनवरी 16 -23,

मोहंती, दीपक (2010), "मोनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क इन इंडियाः एक्सपीरियंस विथ मल्टीपल इंडीकेटर्स एप्रोच", *आरबीआई बुलेटिन,* फरवरी।

क्विर्क, पी.,जी. हच्चे, वी. स्कूफ्ज़ एंड एल. वेनिगर (1988), "पॉलिसीस फॉर डेवलपिंग फॉरवर्ड फॉरेन एक्सचेंज मार्केट्स", *आईएमएफ ऑकेज़नल पेपर्स,* नं.60 जून।

रेड्डी, वाय.वी.(1997), *फाइनेंसियल सेक्टर रिफॉर्म्स एंड आरबीआई'स बेलेंस शीट मैनेजमेंट,* स्पीच गिवन एट द वैश्य बैंक 11 थ एनुअल लेक्चर ओन बैंकिंग एट बैंगलोर, नवंबर 14।

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (2004), रिपोर्ट ऑफ़ द वर्किंग ग्रुप ओन इंस्ट्रूमेंट्स ऑफ़ स्टरलाईजेशन।

रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया (2006), *रिपोर्ट आन करेंसी एंड फाइनेंस,* 2004 -05, मुम्बई।

रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया (2010), *रिपोर्ट आन करेंसी एंड फाइनेंस,* 2008 -09, मुम्बई।

सिंह, ए., एस.एल. शेट्टी एंड टी.आर.वेंकटाचलम (1982), "मोनेटरी पॉलिसी इन इंडियाः इश्यूज एंड एविडेंस". सप्लीमेंट टू द *आरबीआई ओकेजनल पेपर्स,* 3।

सेचेचटर एंड्रिया तिदिआने किन्दा, नीना बुदीना एंड अंके वेबर (2012), "फिस्कल रूल्स इन रिस्पांस टू द क्राइसिस --टुवर्ड द "नेक्स्ट-जनरेशन"रूल्स. ए न्यूडेटासेट, *आईएमएफ वर्किंग पेपर,* डब्ल्यूपी/12/187

सुब्बाराव, दुव्वुरी (2011), "इम्प्लिकेशन्स ऑफ़ द एक्सपेंशन ऑफ़ सेंट्रल बैंक बेलेंस शीट्स", कमेंट्स बाई गवर्नर ऑफ़ द रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया एट द स्पेशल गवर्नर्स' मीटिंग, क्योटो, जनवरी 31।

स्वेदन, ओसामा डी. (2011), "सेंट्रल बैंक लोस्सेसः कॉसेस एंड कंसीक्वेन्सेस", *एशियन-पैसेफिक इकनोमिक लिटरेचर,* वॉल्यूम 25, मई।

वन'टी डाक जे (1999), "इम्प्लीमेंटिंग मोनेटरी पॉलिसी इन इमर्जिंग मार्किट इकोनॉमीज़ः एन ओवरव्यू ऑफ़ इश्यूज", इन *बीआईएस पॉलिसी पेपर्स* नं. 5, पीपी 3-72।

V. राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय और सरकारी कर्ज और नकदी प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्थाएँ - एक मध्यावधि दृष्टिकोण

ऐसेन, ए. एंड डी. हुनर (2008), "बजट डेफिसिट्स एंड इंटरेस्ट रेट्सः ए फ्रेश पर्सपेक्टिव" *आईएमएफ वर्किंग पेपर* डब्ल्यूपी/08 /42।

ब्लोममेंस्तें, एच. एंड पी. टर्नर (2011), "इंटरेक्शन्स बिटवीन सॉवरेन डेब्ट मैनेजमेंट एंड मोनेटरी पॉलिसी अंडर फिस्कल डोमिनान्स एंड फाइनेंसियल इन्स्टेबिलिटी". *ओईसीडी वर्किंग पेपर्स* ओन सॉवरेन बोरोविंग एंड पब्लिक डेब्ट मैनेजमेंट नं. 3।

कचरने, जे. (1999), "लॉन्ग टर्म डेब्ट एंड ऑप्टीमल पॉलिसी इन द फिस्कल थ्योरी ऑफ़ द प्राइस लेवल", *एकोनोमेट्रिका।*

कमिटी ओन द ग्लोबल फाइनेंसियल सिस्टम (2011), "इंटरेक्शन्स ऑफ़ सॉवरेन डेब्ट मैनेजमेंट विथ मोनेटरी कंडीशंस एंड फाइनेंसियल स्टेबिलिटी", *सीजीएफएस पेपर्स* नं. 42,बीआईएस, मई।

क्रॉस, एम.,पी. फीस्चेर एंड क्यू. वीकें (2010), "द बैंक'स बैलेंस शीट ड्यूरिंग द क्राइसिस", *बैंक ऑफ़ इंग्लैंड क्वार्टरली बुलेटिन,* क्यु1।

गुडहार्ट, सी. (2010), "द चेंजिंग रोल ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स", *बीआईएस वर्किंग पेपर्स* 326, नवंबर।

गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया (2008), "रिपोर्ट ऑफ़ द इंटरनल वर्किंग ग्रुप ओन डेब्ट मैनेजमेंट", अक्तूबर 31।

हूगदुइन, एल., बी.ओजतुरक एंड पी. विंट्र्स (2010), "पब्लिक डेब्ट मेनेजर्स 'बिहेवियरः इंटरेक्शन्स विथ मैक्रो पॉलिसीस", *डीएनबी वर्किंग पेपर्स,* 273।

इंटरनेशनल मोनेटरी फण्ड (2012), फिस्कल मॉनिटर, अक्तूबर।

मेलिट्ज़, जे. (1997), "सम क्रॉस-कंट्री एविडेंस अबाउट डेब्ट, डेफिसिट एंड द बिहेवियर ऑफ़ मोनेटरी एंड फिस्कल अथॉरिटीज", *सीईपीआर डिस्कशन पेपर नं. 1653।*

मेलिट्ज़, जे.(2002), "डेब्ट, डेफिसिट्स एंड द बिहेवियर ऑफ़ मोनेटरी एंड फिस्कल अथॉरिटीज", इन एम. बूटी, जे. वोन हगें एंड सी. मार्टिनेज-मोंगे, *"द बिहेवियर ऑफ़ फिस्कल अथॉरिटीज - स्टेबिलाइजेशन, ग्रोथ एंड इंस्टीटूशन्स", पालग्रेवे।*

मोहन्ती, डी.(2012), "एविडेंस ओन इंटरेस्ट रेट चैनल ऑफ़ मोनेटरी पॉलिसी ट्रांसमिशन इन इंडिया", पेपर प्रेजेंटेड एट द सेकंड इंटरनेशनल रिसर्च कांफ्रेंस ओर्गेनाइज्ड बाय द आरबीआई ओन फेब्रुअरी 1-2, 2012, एट मुंबई।

मोहन्ती, एम.एस. एंड एम. सेटिंगा (2003), काउंटरसाइक्लिकल फिस्कल पॉलिसी एंड सेंट्रल बैंक्स", इन "फिस्कल इश्यूज एंड सेंट्रल बैंकिंग इन इमर्जिंग कन्ट्रीज, *बीआईएस पेपर* नं. 20, अक्टूबर।

म्यू, व्हाई. (2006), "गवर्नमेंट कॅश मैनेजमेंटः गुड प्रैक्टिस एंड कैपेसिटी-बिल्डिंग फ्रेमवर्क", *फाइनेंसियल सेक्टर डिस्कशन सीरीज,* वर्ल्ड बैंक, मई।

मुस्कातेल्ली, वी. ए., पी. तिरेल्ली एंड सी ट्रेक्रोसि (2002), "मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसी इंटरेक्शन्स ओवर द साइकिलः सम एम्पिरिकल एविडेंस", *सीईएसइफो वर्किंग पेपर नं.* 817, दिसंबर।

राज, जे., जे.के. खुंद्राकपम एंड डी.दास (2011), "एन एम्पिरिकल एनालिसिस ऑफ़ मोनेटरी एंड फिस्कल पॉलिसी इंटरेक्शन इन इंडिया", *आरबीआई वर्किंग पेपर* नं. 15।

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (2005), *रिपोर्ट ओन करेंसी एंड फाइनेंस,* मुंबईः रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया।

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (2009), *रिपोर्ट ऑफ़ द कमिटी ओन फाइनेंसियल सेक्टर असेसमेंट।*

सार्जेंट टी.जे. एंड एन. वॉलेस (1981), "सम अन्प्लेज़ेंट मोनेटरिस्ट अरिथमेटिक", *क्वार्टरली रिव्यु* नं. 521, फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ मिनियापोलिस।

सिंह, बी.(2010), "मोनेटरी पॉलिसी बिहेवियर इन इंडियाः एविडेंस फ्रॉम टेलर-टाइप पॉलिसी फ्रेमवर्क्स", *आरबीआई स्टाफ स्टडीज* नं.2

सुब्बाराव, डी. (2011)"सेंट्रल बैंक गवर्नेंस इश्यूज - सम आरबीआई पर्सपेक्टिव्स", कमेंट्स एट द मीटिंग ऑफ़ दी बैंक गवर्नेंस ग्रुप, बैंक फॉर इंटरनेशनल सेट्लमेंट्स, बासेल, 9 मई 2011

सुब्बाराव, डी. (2012), "प्राइस स्टेबिलिटी, फाइनेंसियल स्टेबिलिटी एंड सॉवरेन डेब्ट सस्टेनेबिलिटी-पॉलिसी चैलेंजेज फ्रॉम द नई त्रिलेम्मा", इनऑगरल स्पीच एट दी सेकंड इंटरनेशनल सेट्लमेंट्स, बासेल, 9 मई 2011।

सुब्बाराव, डी., (2012), "प्राइस स्टेबिलिटी, फाइनेंसियल स्टेबिलिटी एंड सॉवरेन डेब्ट सस्टेनेबिलिटी--पॉलिसी चैलेंजेज फ्रॉम द न्यू त्रीलेम्मा", इनऑगरल स्पीच एट द सेकंड इंटरनेशनल रिसर्च कांफ्रेंस ऑफ़ द रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया एट मुंबई ओन फेब्रुअरी 1, 2012।

टेलर, जे. (1993), "डिस्क्रेशन वेर्सेस पॉलिसी रूल्स इन प्रैक्टिस", *कार्नेगी-रोचेस्टर कांफ्रेंस सीरीज ओन पब्लिक पॉलिसी* 39, नवंबर।

दी वर्ल्ड बैंक एंड द इंटरनेशनल मोनेटरी फण्ड (2001), "डेवलपिंग गवर्नमेंट बांड मार्केट्सः ए हैंडबुक"।

टिलमैन, पी. (2011), "पैरामीटर अनसर्टेनिटी एंड नॉनलाइनियर मोनेटरी पॉलिसी रूल्स", *मैक्रोइकनॉमिक डायनामिक्स,* 15।

टोगो, ई.(2007), "कोऑर्डिनटिंग पब्लिक डेब्ट मैनेजमेंट विथ फिस्कल एंड मोनेटरी पॉलिसीस : एन एनालिटिकल फ्रेमवर्क", *पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर* नं. 4369, दी वर्ल्ड बैंक।

विलियम्स, एम (2010), "गवर्नमेंट कॅश मैनेजमेंटः इट्स इंटरेक्शन विथ अदर फाइनेंसियल पॉलिसीस," *इंटरनेशनल मोनेटरी फण्ड, टेक्निकल नोट एंड मैनुअल्स,* जुलाई।

वुड्फोर्ड, एम. (1995), "प्राइस लेवल डिटरमिनेसी विदाउट कंट्रोल ऑफ़ ए मोनेटरी एग्रीगेट", *कार्नेगी-रोचेस्टर कांफ्रेंस सीरीज ओन पब्लिक पॉलिसी।*

वीपलॉज़, सी. (1999), इकनोमिक पॉलिसी कोआर्डिनेशन इन ईएमयू स्ट्रेटेजीज एंड इंस्टीटूशन्स", इन *"फाइनेंसियल सुपरविज़न एंड पॉलिसी कोआर्डिनेशन इन दी ईएमयू", जेडईआई (सेंटर फॉर यूरोपियन इंटीग्रेशन स्टडीज), वर्किंग पेपर नं.बी11-1999।*

जोली, ई (2005), "हाउ डज़ फिस्कल पॉलिसी एफेक्ट मोनेटरी पॉलिसी इन इमर्जिंग मार्किट कन्ट्रीज?" *बीआईएस वर्किंग पेपर* नं. 174, अप्रैल।

VI. पाठ (लेसन्स) और भावी चुनौतियां

ब्लोममेंस्तें, एच. एंड पी. टर्नर (2011), "इंटरेक्शन्स बिटवीन सॉवरेन डेब्ट मैनेजमेंट एंड मोनेटरी पॉलिसी अंडर फिस्कल डोमिनान्स एंड फाइनेंसियल इन्स्टेबिलिटी", *ओईसीडी वर्किंग पेपर्स* ओन सॉवरेन बोरोंविंग एंड पब्लिक डेब्ट मैनेजमेंट नं.3।

जॉर्डन, थॉमस जे. (2012), "सम लेसंस फॉर मोनेटरी पॉलिसी फ्रॉम द रीसेंट फाइनेंसियल क्राइसिस", *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग,* वो. नं.8. सप्लीमेंट 1, जनवरी.